Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

MARYADA 1918

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

G. K. V. LIB. HARDWAR

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

111Y68

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

111168

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

RT-0914

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Regd. No. A. 533.
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

111168

भाग १६ संख्या १

मासिक मर्यादा पत्रिका

जुलाई सन् १९१८

111168

पुस्तकालय गुरुकुल कांगड़ी

विषय-सूची ।

विषय	पृष्ठ
१-व्यर्थ है (कविता)-श्रीयुत श्रीकान्त कुसुमाकर	१
२-भारतवर्ष के शिलालेख-श्रीयुत भवानीशंकर याज्ञिक	२-१०
३-प्रोत्साहन (कविता)-पं० नृसिंहनाथ त्रिपाठी	१०
४-भारतीय शासन-सुधार	११-१८
५-शासन-सुधारों की स्कीम-(भारतमित्र)	१८-२४
६-मांटेगू चेम्सफ़ोर्ड सुधार-स्कीम (अभ्युदय)	२४-२८
७-शासन-सुधार (प्रताप)	२९-३४
८-मजाल होता (कविता)-'कुसुमाकर'	
९-मांटेगू सुधार-व्यवस्था (मराठा)	
१०-शासन-सुधार-स्कीम	
११-सुधार-योजना पर श्री० गां...	
१२-सुधारों पर मान० डा०... सप्रू	
१३-सुधारों पर मान... शास्त्री	
१४-सुधारों ...	
१५-सुध...	

वार्षिक मूल्य ३॥)

ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः
पुस्तक सं०.................
आगत सं०.................
तिथि०.................
गुरुकुल ग्रन्थालय कांगड़ी.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संगीतप्रिय लोगों के लिए

केवल थोड़े दिन के लिए आधे दाम तबला जोड़ी इनाम।

हारमोनियम के काम में हमको विशेष अनुभव है इसलिए हम साहस के साथ कहते हैं कि सुरीलापन, टिकाऊपन और सस्तेपन में हमारे 'आनन्द फ्लूट" हारमोनियम से बराबरी न तो आजतक किसी ने की न आगे कोई कर सकेगा। यही बात दिखाने के लिए हम बिना लाभ उठाये ही आधे दाम और इनाम के साथ आपको आनन्दफ्लूट देने को तैयार हैं। प्रत्येक हारमोनियम के साथ तबला जोड़ी इनाम मुफ्त देते हैं।

सिंगलरीड दाम	५०)	६०)	७०)
अभी आधा दाम	२५)	३०)	३५)
डबलरीड दाम	७२)	८८)	१००)
अभी आधा दाम	३६)	४४)	५०)

गारंटी ४ बरस। बाजे की मांग के साथ चौथाई कीमत पेशगी भेज अपना नाम, पता, स्टेशन साफ़ २ लिखियेगा।

जोशी एण्ड कम्पनी, पोस्ट बाक्स ७०४, बड़ा बाज़ार--कलकत्ता।

...राज्य का सरकारी मसविदा।

...रत को स्वराज्य मिलेगा और हिन्दु-
...मि० मांटेगू व भारत सरकार ने
...तैयार भी किया है जो ८
...ा है। यह अंगरेज़ी
...पंडल काशी से
...करें और
...जितना

प्रचारित :—स्वर्गवासी अध्यापक लक्ष्मीचन्द जी कृत।

- रोशनाई बनाने की पुस्तक ॥)
- सुगन्धित साबुन बनाने की पुस्तक १)
- तेल की पुस्तक १)
- ४ हिन्दी केमिस्ट्री १)
- ५ सरल रसायन १)
- ६ वार्निश और पेंट १)

श्रीमुकुन्दलाल जी कृत: मानस मुक्तावली मूल्य ।=)

उक्त मूल्य में डाक व्यय सम्मिलित नहीं। ...जो सज्जन १) भेजकर स्थायी ग्राहकों में ...ा लेंगे उन्हें मण्डल द्वारा प्रकाशित ...मूल्य पर मिलेंगी।

...शिवप्रसाद गुप्त
सञ्चालक
...ल कार्यालय, काशी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मर्यादा' की नियमावली।

'मर्यादा' का अग्रिम वार्षिक मूल्य डाक महसूल सहित ३।।) है। एक संख्या का मूल्य डाक महसूल सहित ।।) ... यही मूल्य है। जन... वर्षगणना होती ... का मूल्य लिया जा... होनेवालों से भी... जायगा किन्तु जो ... से भी ग्राहक हो ...

लेख, प्रबन्धा... लौटा दिये जायँगे ... का आना आवश्यक...

किसी लेख क... सम्पादक की रुचि... छापा गया इस... जायगा।

पत्रोत्तर के लिए ... आना चाहिये नहीं तो जवाब न दिया जायगा।

MARYADA
1918
HARDWAR

'मर्यादा' में विज्ञापन की छपाई।

कवर पेज पर	...	१५) प्रतिमास
१ पृष्ठ या २ कालम की छपाई	...	१२) „
आधा पृष्ठ या १ कालम „	...	७) „
$\frac{1}{3}$ या आधे कालम „	...	५) „
$\frac{1}{4}$ या चौथाई कालम की „	...	४) „

१—विज्ञापन के बिना देखे छापने की स्वीकृति नहीं दी जाती।

२—एक कालम या इससे अधिक विज्ञापन छपानेवाले को 'मर्यादा' बिना मूल्य भेजी जाती है। औरों को नहीं।

३—विज्ञापन की छपाई पेशगी देनी होगी।

पत्रव्यवहार इस पते से करना चाहिये:—

मैनेजर 'मर्यादा', प्रयाग

नकलों से सावधान रहिये

सुधासिन्धु

...ी हुई एक ...बल जानी ...ी, हैजा, ...बालकों ... पटक ...क में ...शी ।।) ... ...फ के ...दवा है। कीमत फी शीशी ।) एक ... से २।) में घर बैठे देंगे।

बालसुधा

यदि आपको दुबले पतले और सदैव रोगी रहनेवाले बच्चों को मोटा ताजा और तन्दुरुस्त बनाना है तो हमारी इस आयुर्वेदिक दवा को मंगाकर पिलाइये कीमत फी शीशी ।।) डा० ख० ।=)

पूरा हाल जानने के लिए चार आने का चित्र सहित सूचीपत्र मुफ्त मंगाकर देखिये।

मँगाने का पता—

सुखसंचारक कम्पनी, मथुरा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संगीतप्रिय लोगों के लिए

केवल थोड़े दिन के लिए आधे दाम तबला जोड़ी इनाम।

हारमोनियम के काम में हमको विशेष अनुभव है इसलिए हम साहस के साथ कहते हैं कि सुरीलापन, टिकाऊपन और सस्तेपन में हमारे 'आनन्द फ्लूट" हारमोनियम से बराबरी न तो आजतक किसी ने की न आगे कोई कर सकेगा। यही बात दिखाने के लिए हम बिना लाभ उठाये ही आधे दाम और इनाम के साथ आपको आनन्दफ्लूट देने को तैयार हैं। प्रत्येक हारमोनियम के साथ तबला जोड़ी इनाम मुफ्त देते हैं।

सिंगलरीड दाम	५०)	६०)	७०)
अभी आधा दाम	२५)	३०)	३५)
डबलरीड दाम	७२)	८८)	१००)
अभी आधा दाम	३६)	४४)	५०)

गारंटी ४ बरस। बाजे की मांग के साथ चौथाई कीमत पेशगी भेज अपना नाम, पता, स्टेशन साफ़ २ लिखियेगा।

जोशी एण्ड कम्पनी, पोस्ट बाक्स ७०४, बड़ा बाज़ार--कलकत्ता।

...ज्य का सरकारी मसविदा।

...ान को स्वराज्य मिलेगा और हिन्दु-
...मि० मांटेगू व भारत सरकार ने
...तैयार भी किया है जो ८
...ा है। यह अंगरेज़ी
...पंडल काशी से
...ा करें और
...जितना

प्रचारित :—स्वर्गवासी अध्यापक लक्ष्मीचन्द जी कृत।

रोशनाई बनाने की पुस्तक	॥)
सुगन्धित साबुन बनाने की पुस्तक	१)
तेल की पुस्तक	१)
४ हिन्दी केमिस्ट्री	१)
५ सरल रसायन	१)
६ वार्निश और पेंट	१)

श्रीमुकुन्दलाल जी कृत : मानस मुक्तावली मूल्य।=)

उक्त मूल्य में डाक व्यय सम्मिलित नहीं ...ो सज्जन १) भेजकर स्थायी ग्राहकों में ...ा लेंगे उन्हें मण्डल द्वारा प्रकाशित ...ल्य पर मिलेंगी।

...शिवप्रसाद गुप्त
सञ्चालक
...ल कार्यालय, काशी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मर्यादा' क

'मर्यादा' का अ
सूल सहित ३॥) है,
महसूल सहित ॥)
यही मूल्य है। जन
वर्षगणना होती
का मूल्य लिया जा
होनेवालों से भी
जायगा किन्तु जो सज्जन चाहें व जुलाई मास से भी ग्राहक हो सकते हैं।

लेख, प्रबन्धादि यदि स्वीकृत न होंगे तो लौटा दिये जायँगे किन्तु इसके लिए टिकट का आना आवश्यक है।

किसी लेख का प्रकाश करना या न करना सम्पादक की रुचि पर है। कोई लेख क्यों नहीं छापा गया इसका कोई कारण नहीं दिया जायगा।

पत्रोत्तर के लिए टिकट या जवाबी कार्ड आना चाहिये नहीं तो जवाब न दिया जायगा।

'मर्यादा' में विज्ञापन की छपाई।

कवर पेज पर	... १५)	प्रतिमास
१ पृष्ठ या २ कालम की छपाई	... १२)	,,
आधा पृष्ठ या १ कालम ,,	... ७)	,,
$\frac{1}{3}$ या आधे कालम ,,	... ५)	,,
$\frac{1}{4}$ या चौथाई कालम की ,,	... ४)	,,

१—विज्ञापन के बिना देखे छापने की स्वीकृति नहीं दी जाती।

२—एक कालम या इससे अधिक विज्ञापन छपानेवाले को 'मर्यादा' बिना मूल्य भेजी जाती है। औरों को नहीं।

३—विज्ञापन की छपाई पेशगी देनी होगी।

पत्रव्यवहार इस पते से करना चाहियेः—

मैनेजर 'मर्यादा', प्रयाग

ये

एक
वाली
, हैजा,
दमा, शूल, संग्रहणी, अतिसार, बालकों के हरे पीले दस्त, कै करना, दूध पटक देना आदि रोगों को एक ही खुराक में फायदा दिखाती है। कीमत फी शीशी ॥) डा० ख० १ से ६ तक ≡)

दद्रुगजकेसरी

बिना किसी जलन और तकलीफ के दाद को जड़ से खोनेवाली यही एक दवा है। कीमत फी शीशी ।) १२ लेने से २।) में घर बैठे देंगे।

बालसुधा

यदि आपको दुबले पतले और सदैव रोगी रहनेवाले बच्चों को मोटा ताजा और तन्दुरुस्त बनाना है तो हमारी इस आयर्वेदिक दवा को मंगाकर पिलाइये कीमत फी शीशी ।।) डा० ख० ।=)

पूरा हाल जानने के लिए चार भाग का चित्र सहित सूचीपत्र मुफ्त मंगाकर देखिये।

मँगाने का पता—

सुखसंचारक कम्पनी, मथुरा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुप्रसिद्ध डोंगरे का बालामृत पीने से

छोटे बच्चे ताक़तवर होकर उनका वज़न बढ़ जाता है] और [वह मधुर होने के कारण बच्चे बहुत खुशी से पीते हैं।

शीशी का दाम १२ आना, डाक म० ४ आना। } के० टी० डोंगरे कं० गिरगाँव-बम्बई।

हिन्दी में स्वराज्य।

स्वराज्य-सम्बन्धी पुस्तकें, साहित्यिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक, जीवनी, उपन्यास, जिस प्रकार की पुस्तकों की आपको आवश्यकता हो "मर्यादा पुस्तक-भंडार" को लिखिये, हिंदी की सभी प्रेसों की प्रसिद्ध पुस्तकें घर बैठे आपको पहुंच जायँगी। कुछ पुस्तकों के नाम :—

गोखले के व्याख्यान १) स्वराज्य-माला २)
जापान रहस्य ।।=) चतुर जापानी १।।=)
कर्मक्षेत्र ।।।=) अरण्य-बाला १)
लो० तिलक की जीवनी ≡) मोहिनी ।।=)
देवी एनी बेसेन्ट ।=) आर्थिक सफलता ।=)
तिलक के १२ व्याख्यान १)

'मर्यादा पुस्तक-भंडार,' प्रयाग।

रेचनवटी।

आजकल ऐसे मनुष्य बहुत कम होंगे जिन्हें कब्ज़ की शिकायत न हो। दस्त साफ न होने से सिर व पेट में दर्द अथवा भारीपन, चित्त में म्लानता, भूख व स्मरणशक्ति कम हो जाना आदि बहुत से रोग उत्पन्न हो जाते हैं। एक गोली रात को खालेने से प्रातःकाल एक दस्त साफ हो जाता है। दाम एक डिब्बी ।।) वी० पी० से ।।।)।

पं० धरणीधर वैद्य,

सदर, सागर (सी० पी०)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गृहस्थमात्र के काम की तत्काल फ़ायदा करनेवाली अमूल्य दवा।

वर्षों से दुनियाँ में विख्यात सरकार से रजिस्टरी की हुई हज़ारों प्रशंसापत्र प्राप्त !

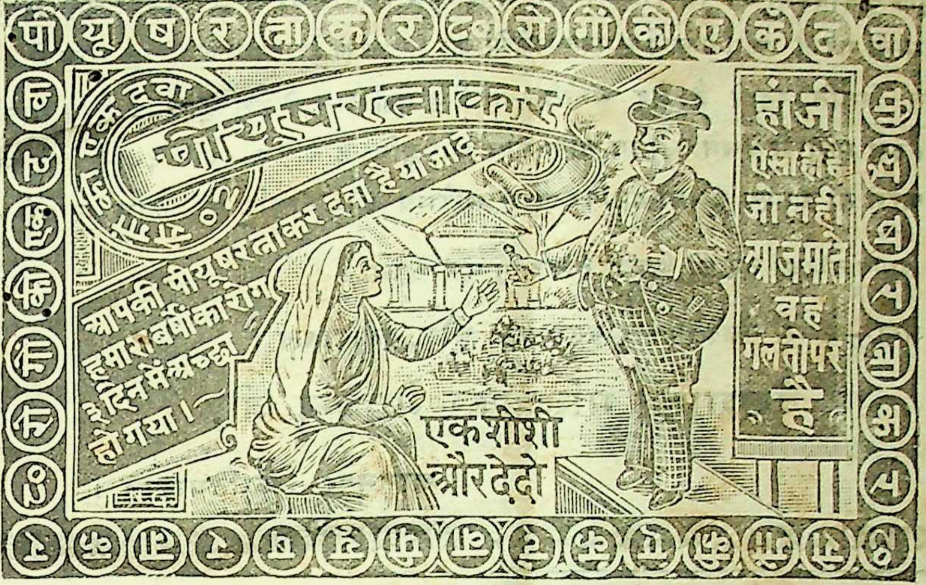

सिर से लेकर पांव तक किसी रोग में देदो, जादू का असर करती है बूढ़ों, बच्चों, जवानों, पुरुषों तथा स्त्रियों के कुल रोगों को जो घरों में होते रहते हैं तत्काल फायदा करती है बल्कि पशु पक्षियों के रोगों को भी अच्छा करती है। की० १) रु०। बड़ी शीशी १॥) वी० पी० ।)। तीन लेने से वी० पी० माफ। १२ लेने से ६) रु०। बड़ी शीशी १५॥) रु०। वी० पी० माफ। २४ लेने से रोशनी वाच इनाम।

खिज़ाब ! खिज़ाब !!

न्यू ईजाद मनमोहन केशकल्प

एक दफ़े के लगाने से भूरे और सफेद बाल भौंरे के रंग के समान काले चमकीले हो जाते हैं। जिल्द पर धब्बा नहीं आता। हाथ काले नहीं होते। विशेष तारीफ यह है कि एक दफा लगाने से जो बाल काले हो जायँगे फिर वह उमर भर सफेद नहीं होंगे। बराबर इस्तेमाल कीजिये कीमत १।) वी० पी० ।-)। तीन लेने से ४) वी० पी० माफ।

गोरे और खूबसूरत बनने की दवा

सुगंधित फूलों का दूध।

यह दवा विलायती खुशबूदार फूलों का अर्क़ है। इसे विलायत के एक प्रसिद्ध डाक्टर ने बनाकर अभी भेजा है। इसको ७ दिन बदन और चेहरे पर मालिश करने से चेहरे का रंग गुलाब के समान हो जाता है। बदन से खुशबू निकलने लगती है। गालों के स्याह दाग, मुहासे, झींप, झुर्रियां, फोड़ा फुन्सी, खुजली आदि दूर होकर एक ऐसी खूबसूरती आजाती है कि काली रंगत चांद सी चमकने लगती है। जिल्द मुलायम हो जाती है। लगाकर देखो, अपनी प्राणप्यारी को चंद्रमुखी बना लो। दाम एक शीशी १।) वी० पी० ।-) तीन लेने से ४) रु० वी० पी० माफ़।

सुगंधित बालों को उड़ानेवाला साबुन।

बिना किसी तरह के कष्ट के बालों को ५ मिनट में उड़ाकर साफ़ कर देता है। की० २ बट्टी के १ बक्स का ॥) वी० पी० ।) । १२ लेने से २) वी० पी० माफ। तीन दर्जन लेने से रोशनी वाच इनाम।

पता—जसवन्त ब्रादर्स नं० ९, मथुरा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृत्यु के दो भेद—बचने का उपाय।

पूर्ण वृद्धावस्था को पहुंचकर संसार के अन्तिम किनारे पर उतर पड़ना यह मृत्यु सुखप्रद मानी गई है क्योंकि वहां समस्त क्लेशों का निवारण हो जाता है परन्तु मध्य में ही रोगाक्रान्त स्थिति रहती है वह अनन्त क्लेशों से पूर्ण होने के हेतु दुःखप्रद मृत्यु मानी जाती है। इस मृत्यु से बचने के लिए यदि आप आतङ्कनिग्रह वटिका रूपी दयालु देवी का उपासन करेंगे तो अवश्य उसके हटाकर परम आरोग्य और दीर्घायु का लाभ उठायेंगे।

मूल्य वटिका ३२ की डिब्बी १ का १) एक रुपया।

एजेन्ट—मेसर्स बलदेवप्रसाद एण्ड को० चौक, इलाहाबाद।

वैद्यशास्त्री मणिशंकर गोविन्द जी,

जामनगर—काठियावाड़।

बाटलीवाले की स्वदेशी।

असली कुनैन की १ ग्रेनवाली १०० गोलियों की शीशी, असली कुनैन की २ ग्रेनवाली २०० गोलियों की शीशी बुखार, मैलेरिया और जुक़ाम के लिए, एग मिक्सचर, कमज़ोर और थके हुए लोगोंके लिए ताकत की गोलियाँ, दांतों की जड़को मज़बूत करनेवाला दन्तमंजन, दाद की और खुजली का मलहम, ये दवाएँ सब दवाफरोशों से या डाक्टर एच० एल० बाटलीवाला सन्स एन्ड०, को० लिमिटेड वारली, १८ बम्बई से मिल सकती हैं।

Dr. H. L. Batliwalla Sons & Co. Ltd

Warli, 18 Bombay,

'मर्यादा' के पुराने अङ्कों में छपे हु

रंगीन २० चित्र।

१–गणेश जननी... ।)	२–लैलामजनू ... ।)
३–शिव-पार्वती ... ।)	४–एक ललना ... ।)
५–प्रेमी ... ।)	६–वर्षा ... ।)
७–चिन्ता ... ।)	८–कांचन जंघा ... ।)
९–फाग-लीला ... ।)	१०–काला पहाड़ ... ।)
११–सुखनिंदिया ... ।)	१२–कृष्ण राधिका... ।)
१३–महात्मा बुद्ध ।)	१४–उत्कंठिता ... ।)

१३–एक बङ्गाली रमणी ...
१४–उपासिका (पांच रङ्ग का) ...
१५–रावण, सीता, मंदोदरी ... ।
१७–अभिमन्यु और सुभद्रा ... ।
१८–तपोबन में सीता और लवकुश ...
२०–भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र (सादा)...

जो सज्जन सब चित्र इकट्ठे मंगावेंगे उनक रङ्गीन चित्र =) आने में दिये जायँगे। डाक मह सूल ग्राहकों को देना होगा।

मैनेजर 'मर्यादा', प्रयाग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मर्यादा ।

मासिक पत्रिका ।

भाग १६] जूलाई, सन् १९१९ । [संख्या १

व्यर्थ है ।

[लेखक—श्रीयुत श्रीकान्त—कुसुमाकर ।]

भीखवत् निज स्वत्व को
यद्यपि लिया तो क्या लिया ।
दान भी यद्यपि मलिन
मन से दिया तो क्या दिया ॥
आँख के रहते हुए
देखा न जिसने न्यायपथ ।
दास रहकर ही सदा
उन्नति किया तो क्या किया ॥
धाम, धन, व्यापार अथवा
ज्ञान उसका है वृथा ।
हीन होकर विश्व में
यद्यपि जिया तो क्या जिया ॥
धर्म कुछ जिसने न साधा
कर्म नीचा हो किया ।
दूध के रहते हुए
यदि मद पिया तो क्या पिया ॥
हार सद्व्यवहार का जिसने
न पोहा ध्यान से ।
स्वार्थरत हो ढोंग की
गुदड़ी लिया तो क्या लिया ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतवर्ष के शिलालेख।

[लेखक—श्रीयुत भवानीशंकर याज्ञिक ।]

भारतवर्ष के प्राचीन इतिहास का अभाव है। यह कहना युक्ति-संगत नहीं कि भारतवासी इतिहास के महत्व से अनभिज्ञ थे वा उनको ऐसे गम्भीर विषय में रुचि नहीं थी। हमारे पूर्वजों ने इतिहास अवश्य लिखा है किन्तु इस विषय को उन्होंने अन्य विषयों की तरह सर्वाङ्गों से पूरित नहीं किया। कल्हण की राजतरंगिणी, जिसमें आठ अध्यायों में कश्मीर के राजाओं की वंशावली तथा उस प्रदेश का और कुछ कुछ भारत का भी इतिहास दिया गया है तथा ईसा की सातवीं शताब्दी में लिखा हुआ बाण कृत हर्षचरित्र और बिल्हण का विक्रमाङ्क देव-चरित तथा तामील में कलावली आदि कई ऐतिहासिक ग्रन्थ अवश्य हैं, किन्तु भारतवर्ष जैसे प्राचीन और सभ्य देश के लिए यह सामग्री बहुत थोड़ी है।

कुछ पुराणों में भी कलियुग के राजाओं की वंशावली दी है। किन्तु भारत के अन्य समकालीन राजाओं का उनसे कुछ भी पता नहीं चलता। भारत को अपने प्राचीन इतिहास के लिए विदेशी जाति ग्रीक तथा चीन की ओर ताकना पड़ता है। मेगास्थनीज़, फाहियान तथा हुएनत्संग आदि विदेशी इतिहासकारों के लिखे हुए भारतीय इतिहास से ही हमको सच्ची ऐतिहासिक घटनाओं का पता चलता है। ऐसे ऐतिहासिक ग्रन्थों के अभाव में हमको इतिहास की अन्य सामग्रियों पर अवलम्बित होना पड़ता है और उन्हीं को आधार मानते हुए इतिहास की रचना की जाती है।

इतिहास की अन्य सामग्रियों में शिलालेख, ताम्रपत्र, दानपत्र तथा प्राचीन सिक्के आदि हैं। इनका महत्व ऐतिहासिक ग्रन्थों के अभाव से बहुत बढ़ जाता है। यह ऐतिहासिक घटना का सत्य प्रमाण देते हैं। यह समय निश्चित करने में भी सहायता देते हैं। कुछ शिलालेखों में तो ज्योतिष की इतनी बातों का समावेश है कि उनसे घटनाओं के घड़ी पल तक का हिसाब लगाया जा सकता है। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है कि प्राचीन लेख मुख्यतः भारत के लिए बड़े महत्व के हैं।

प्राचीन लेखों की संख्या अधिक है। यह पेशावर से ट्रावंकोर तक और आसाम से काठियावाड़ तक सब जगह मिलते हैं। पुरातत्व विभाग के नित्य नये आविष्कारों से इनकी संख्या खूब बढ़ रही है। इससे हमको प्राचीन इतिहास में बहुत सी नवीन घटनाओं का पता चलता है और हमारे पूर्वजों का गौरव पाश्चात्य सभ्य जातियों को विदित होता है। उत्तर में मुसलमानों के आक्रमण के कारण इनका पता दक्षिण की अपेक्षा कम चलता है किन्तु पटना, सारनाथ, तक्षशिला, राजगृह, उज्जैन, गया आदि बौद्ध तथा जैन नगरों में यह बहुतायत से मिलते हैं।

प्राचीन लेखों में लिखे हुए विषयों के संबंध में जानना परमावश्यक प्रतीत होता है। बहुत से लेखों में तो केवल ऐतिहासिक घटना का ही उल्लेख है। राजाओं के जनसाधारण के लाभार्थ किये गये कार्यों का कथन, युद्ध का वृत्तान्त, राजाओं के मृत्यु लेख, उनका यशगान, वीरों, महापुरुषों तथा संन्यासियों की उक्तियां इत्यादि विषयों का भी समावेश है। धार्मिक उपदेश, सदाचार सम्बन्धी उक्तियां और राजाज्ञा तो बहुत से शिलालेखों पर लिखी मिलती हैं। अधिकतर लेखों में दाता और दान का वर्णन किया गया है। जागीरों और अन्य राजकीय दान वा सम्मान का भी उल्लेख किया गया है। कूप, जलाशय, धर्मशाला, अनाथालय, चिकि-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्सालय आदि लोकहितकारिणी इमारतों के बनानेवाले का नाम पता आदि कई शिलालेखों में दिया गया है। सम्मान और अधिकारसूचक पत्रों में मुख्यतः राजाओं के नाम, यश और महत्कार्य आदि का गान किया गया है। कई शिलालेखों में जो राजा के प्रतिनिधि वा अन्य अधिकारीवर्ग की ओर से खुदवाये गये हैं उनमें सम्राट्, मंत्री आदि राज के उच्चकर्मचारीगणों के और सेठ, धनी, मानी, पंडितों के भी नाम और कार्य के वर्णन किये गये हैं। अधिकतर शिलालेखों में तो दानी का सकुटुम्ब विस्तृत हाल लिखा गया है। लगभग प्रत्येक लेख में राजा, निर्माणकर्ता का नाम, निर्माणकारण, स्थान, समय आदि का वर्णन अवश्य मिलता है। भारत के

प्राचीन लेखों का संक्षिप्त दिग्दर्शन

कराने के पूर्व यह आवश्यक है कि हम यह जानलें कि ऐतिहासिक दृष्टि से भारत दो भागों में बटा हुआ है। एक आर्यावर्त वा उत्तर पथ और दूसरा दक्षिण पथ। प्राचीन लेखों में उत्तर तथा दक्षिण पथ का नाम बहुत आया है। संस्कृत साहित्य में इन दोनों को पृथक करनेवाली रेखा कहीं तो विन्ध्याचल पर्वत को और कहीं नर्मदा नदी को माना है। किन्तु नर्मदा नदी ही अधिकतर माननीय है। नर्मदा नदी के निकास स्थान के पूर्व में इन दोनों भागों की सीमा मनिआरी तथा महानदी है। मनियारी भी नर्मदा की तरह अमरकंटक के समीप से निकली है। थोड़ी दूर बह कर यह नदी शिवनाथ से मिलती है फिर शिवरी नारायण (विलासपुर ज़िला) के समीप मनियारी महानदी से मिलती है जो कटक के पास बंगाल की खाड़ी में गिरती है। इसलिए ऐतिहासिक दृष्टि से नर्मदा, मनियारी और महानदी यह तीन नदियां उत्तर पथ और दक्षिण पथ को अलग करती हैं।

भारत के शिलालेखों का पता मुख्यतः महाराज अशोक के समय से चलता है। महाराज अशोक चन्द्रगुप्त के पौत्र थे और इन्होंने २६३ से २२७ ई० पू० तक अर्थात् ३७ वर्ष राज्य किया। उस समय की लिपि से ज्ञात होता है कि भारतवासी अशोक काल के भी बहुत पहले लेखन-कला को जानते थे। अशोक के पूर्व के लेखों की संख्या बहुत कम है और जो हैं उनका ऐतिहासिक मूल्य बहुत थोड़ा है। अशोक के पूर्व के लेखों में से एक लेख एक कलश पर लिखा हुआ मिला है। यह लेख बस्ती ज़िले के ईशान कोण में मिला है। यह बुद्ध के सजातीय मनुष्यों की हत्या का स्मारक लेख है। दूसरा लेख गोरखपुर ज़िले से प्राप्त हुआ है। इसपर प्रजा के लाभार्थ अन्न वा अन्य आवश्यक वस्तुओं के दो एक भंडारों का एक मुख्य राजपथ पर स्थापना करने का वर्णन है। सम्राट् अशोक के पूर्व के लेखों का पता अभी अच्छी तरह नहीं लगा है। पुरातत्व विभाग के कर्मचारीगण इस समय के लेखों के आविष्कार करने में बड़ा यत्न कर रहे हैं।

अशोक के समय के लेख बहुतायत से मिलते हैं। इनका महत्व भौगोलिक, ऐतिहासिक और धार्मिक दृष्टियों से बहुत बढ़ गया है। इस लेख में मुख्य ऐतिहासिक लेखों का ही संक्षेप से वर्णन करना अधिक युक्तिसंगत होगा।

अशोक के समय के लगभग ३५ भिन्न लेख मिले हैं। उनमें से मुख्य सात स्तम्भ-लेख और चौदह चट्टानों पर खुदे हुए लेख हैं। यह चट्टानों पर खुदे हुए लेख पेशावर, चम्पारन, कटक, गंजाम, गिरनार (जूनागढ़) थाना आदि ज़िलों में मिले हैं। ये लेख मंदिरों के समीप, राजपथ पर, तीर्थों आदि उचित स्थानों पर रक्खे गये थे जिससे यात्री आदि उनको देखें और पढ़ें। इन लेखों में अशोक ने प्रजा का उचित रूप से पालन करने की दृढ़ प्रतिज्ञा की है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धार्मिक उक्तियां और सदाचार-विषयक नियम भी लिखे गये हैं। इनमें देश के इतिहास की भी कहीं कहीं झलक है जैसे पाटलीपुत्र को राजधानी बनाना, उज्जैन और तक्षशिला में अपना प्रतिनिधि नियुक्त करना आदि। भारत के कुछ नेताओं, पंडितों और सेठों के भी नाम दिये गये हैं और कुछ प्राचीन राज्य जैसे पांड्यु, चोल, अन्ध्र आदि का भी वर्णन है। कलिंग युद्ध का भी सविस्तार हाल दिया गया है। सब से अधिक महत्व के लेख वे हैं जिनमें उसका मृत्यु-लेख है। ये लेख सहसराम, रूपनाथ, ब्रह्मगिरि सिद्धिपुर, जतिंग रामेश्वर आदि कई स्थानों से प्राप्त हुए हैं। अशोक मृत्यु के तीन वर्ष पूर्व बौद्ध हो गया था, प्राचीन हिन्दू राजाओं की तरह यह संन्यासी हो गया था। सन्यास लेने पर इस प्रतापी राजा ने शेष जीवन सुवर्णगिरि की गुफा में रहकर व्यतीत किया था। सुवर्णगिरि पटना ज़िले में राजगृह के समीप है। वहां रहकर उसने यह घोषणा की कि गौतम-बुद्ध का चलाया हुआ बौद्ध मत ही सब मतों से अच्छा है। उसने बुद्ध के अन्त समय के शब्द "उद्यम से मुक्ति पाओ" का प्रचार किया। इस मृत्यु लेख में यह और विशेषता है कि अन्य लेखों में तो तिथि और संवत् अशोक के राज्यासन से कितने वर्ष बीते इस हिसाब से दिये गये हैं किन्तु इस लेख में बुद्ध के निर्वाण संवत् के हिसाब से दिया गया है। यह मृत्यु-लेख बुद्ध की मृत्यु के २५६ वर्ष बाद का है। अशोक के समय के शिलालेखों का विस्तार पूर्वक वर्णन Sir A. Cuningham की Corpus Inscriptionum Indicarum (vol. 1) में दिया गया है।

अशोक की मृत्यु के दो शताब्दी बाद तक के लेखों का हमको अच्छी तरह पता चलता है। इस काल के अनेक छोटे २ लेख मिले हैं जिनका ऐतिहासिक मूल्य कुछ कम नहीं है। इस काल के निम्नलिखित लेख अधिक महत्व के हैं—

१—गया ज़िले के नागार्जुनी पहाड़ी से एक लेख महाराज दशरथ का मिला है। इस पहाड़ी से तीन लेख महाराजा अशोक के भी मिले हैं। विष्णु पुराण में दशरथ को अशोक का पौत्र बताया गया है।

२—नागोड़ राज्य के स्तूप से एक लेख मिला है जिसमें भारत के मध्य भाग में सुंग वंश का राज होना लिखा है। पुराणों में इस राजवंश का उल्लेख है और इस वंश का राज्य काल १८३-७१ ई० पू० दिया गया है।

३—मद्रास प्रान्त के कृष्णा ज़िले से एक लेख प्राप्त हुआ है जिसमें २०० ई० पू० के लगभग कुबीरक वा खुबीरक नामी राजा का वर्णन है। इसका राज्य मद्रास प्रान्त में था।

४—बेसनजर (ग्वालियर राज्य) से प्राप्त १७५-१३५ ई० पू० के एक लेख का पता चलता है जिसमें भागभद्र नामी एक मध्य भारत के राजा का वर्णन है। इसी लेख में पंजाब के एक समकालीन युनानी राजा Antialkidas का नाम दिया गया है। इस युनानी राजा के सिक्के भी मिले हैं।

५—प्रयाग ज़िले के पभोसा से दो लेख मिले हैं। इनमें अहिछत्र वा अधिछत्र के राजाओं का वर्णन है।

६—भूपाल राज्य के साची स्थान के स्तूप के एक लेख में इस काल के श्री सातकरणी नामक राजा का उल्लेख है। कदाचित् यह राजा दक्षिण के सातवाहन सातकरणी नामक राजवंश का हो।

इसके बाद कुशन जाति के कनिष्क और उसके उत्तराधिकारियों का समय आता है। इस काल के लेख भी बहुतायत से मिलते हैं। इन लेखों के लिए हम बौद्ध और मुख्यतः जैन धर्मावलंबियों के ऋणी हैं।

कनिष्क ने ५८ ई० पू० से राज करना आरम्भ किया और इसी राजा ने विक्रम संवत्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का प्रचार किया। कनिष्क के समय में और विक्रम संवत के बारे में बड़ी गड़बड़ी है। कुछ इतिहासकार कनिष्क का राजगद्दी पर बैठना ७८ ई० में मानते हैं और कुछ १२२ ई० भी मानते हैं किन्तु ५८ ई० पू० ही अधिक माननीय है। कारण कि इसके प्रमाण में ऐतिहासिक सामग्री का हाल में पता चला है। कनिष्क और उसके वंशज वसिष्क, वासुदेव आदि के समय के भी लगभग ८० लेख प्राप्त हुए हैं। इन लेखों का समय ५४ ई० पू० से ४२ ई० पू० तक है। ये लेख काबुल से बंगाल तक के प्रान्तों में पाये गये हैं।

कनिष्क के उत्तराधिकारियों के पश्चात् एक विदेशी राजा गोंडो फरनीस (Gondo phernes) हुआ। इसके सिक्के भी मिलते हैं। इसका राज्य सिन्ध और उत्तर-पश्चिमीय भारत के अतिरिक्त काबुल कंधार आदि देशों में था। इस राजा का वर्णन सीमा प्रान्त से प्राप्त एक लेख में है। उसमें इस राजा का काल ४७ ई० पू० दिया गया है।

इसके पश्चात् कुशन जाति की शाखा ने राज्य किया। इस जाति का राज मथुरा तक बढ़ा और इस वंश ने लगभग ७५ वर्ष तक राज किया। इसके समय से और गुप्त वंश के समय तक (३२० ई०) के लेखों का कम पता चलता है। वैसे कुछ लेख प्राप्त हुए हैं किन्तु उनसे भारत के प्राचीन राजनैतिक इतिहास को बहुत कम सहायता मिलती है। इस काल के इतिहास के लिए हमको सिक्कों पर निर्भर होना पड़ता है।

सिक्कों से पता चलता है कि उस समय में भारत में बहुत से छोटे राज्य थे। एक लेख जो सीमाप्रान्त में मिला है उससे पता चलता है कि उस भाग में कुशन जाति का राज्य था। इस लेख पर किसी राजा का नाम नहीं लिखा गया। लेख का समय ६६ ई० है। दूसरा लेख मथुरा से मिला है जिससे प्रगट होता है कि २४२ ई० में कुशनजाति मथुरा में राज्य करती थी।

इसी समय के लगभग काठियावाड़ में नहपान नामक राजा का राज्य था। प्राचीन लेखों में इसका नाम नहरात तथा छहरात भी दिया गया है। इसी राजा ने शक् संवत् का प्रचार किया जो ७८ ई० से प्रारम्भ हुआ और जिसका प्रचार उत्तर की अपेक्षा दक्षिण में बहुत है। शिला लेखों से जाना जाता है कि इसका राज्यकाल १२० ई० वा १२४ ई० में अवश्य था। इसका राज्य नासिक और नर्मदा के दक्षिण की ओर बढ़ गया था। किन्तु १२५ के पश्चात् दक्षिण के एक प्रतापी राजा ने जिसका नाम गौतमी पुत्र श्रीसातकरणी था इसके राज्य और वंश का समूल नष्ट कर दिया और नर्मदा के दक्षिण का भाग ले लिया। नर्मदा के उत्तर में नहपान का एक विदेशी राजप्रतिनिधि छाशतन राज करने लगा। इसके नाम से और इसके पिता का नाम, यसमोतिक से प्रगट होता है कि यह विदेशी था। किन्तु छाशतन का पुत्र जयदामन हिन्दू हो गया। तब से उसके उत्तराधिकारी भी हिन्दू कहलाने लगे। सिक्कों से ज्ञात होता है कि उसके उत्तराधिकारियों ने ३८८ ई० तक राज्य किया। ३८८ ई० में गुप्तवंश के राजाओं ने इनको हराकर राज छीन लिया। इनके समय के बहुत थोड़े लेख मिले हैं। इन लेखों में जूनागढ़ का लेख बहुत महत्व का है। इसमें १५० ई० में छाशतन के पौत्र रुद्रदमन का राजा होना लिखा है। इस लेख में यह विशेषता और है कि यह लेख शुद्ध संस्कृत में है। इससे पहिले का कोई लेख संस्कृत में नहीं मिला।

इस समय के दक्षिण के लेखों में से एक लेख जो नासिक से प्राप्त हुआ है उसमें ऊपर वर्णित गौतमी पुत्र श्री सातकरणी का वर्णन है। उसी लेख में उसका पुत्र वशिष्ठपुत्र श्री पुलमायी का और गौतमी पुत्र श्रीयज्ञसातकरणी का भी कुछ वृत्तान्त दिया गया है। गौतमीपुत्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीयज्ञसातकरणी का वर्णन बम्बई के पास के और कृष्णा ज़िले से प्राप्त लेखों में भी है। इससे अनुमान किया जा सकता है कि उसका और उसके वंशज का राज्य कितना फैला हुआ था। ये लेख ईसा की तीसरी शताब्दी के प्रारम्भ काल के हैं। इसी समय में सातवाहन वंशीय राजाओं का राज्य नष्ट हो गया था।

नासिक से एक लेख और मिला है जिसमें आभरिवंश के शिवदत्त का पुत्र ईश्वरसेन का उल्लेख है। कदाचित इसी राजा ने कलचुरी या चेदी संवत् चलाया हो। यह संवत् २४८ या २४९ ई० से प्रारम्भ होता है। यह संवत् पश्चिम भारत में चलता था और फिर मध्य भारत में चलने लगा। हम इस संवत् का प्रयोग त्रिकूटक वंश के राजाओं के लेख में पाते हैं। इस नाम की उत्पत्ति कदाचित् अहमदनगर ज़िले में त्रिकुटक नामक पर्वत से निकला हो। दक्षिण भारत के अन्य मुख्य लेख निम्न-लिखित हैं।

१—उत्तरी कनारा ज़िले से (बम्बई प्रान्त) और मैसूर राज्य से दो लेख प्राप्त हुए हैं जिनमें हारीत-पुत्र सातकरणी का वर्णन है। यह राजा विजयंती अर्थात् वनवासी में राज्य करता था।

२—यह लेख भी मैसूर राज से मिला है। इससे प्रगट होता है कि सातकरणी वंश के पश्चात् कदम्ब वंश का राज्य हुआ जिसने ६५० ई० तक राज किया।

३—कृष्णा ज़िले के एक स्तूप से एक लेख मिला है जो ईसा की तीसरी शताब्दी का है। इसमें माधरीपुत्र श्रीवीरपुरुष नामी इक्ष्वाकु वंश के एक राजा का नाम है।

४—कुछ प्राकृत के लेख भी कृष्णा ज़िले से मिले हैं जिनमें ईसा की चौथी शताब्दी के पल्लव राजाओं का वर्णन है। इनकी राजधानी काञ्ची थी।

इस समय के बाद के दक्षिण के लेखों की अपेक्षा उत्तरी भारत के लेखों का महत्व कहीं अधिक है। कुछ लेख सीमा प्रान्त से प्राप्त हुये हैं जिनका समय ५८ ई० पू० से ३२० ई० पू० तक का है। इसके बाद के जो लेख हैं उनमें गुप्त वंश का वर्णन है। इनकी राजधानी पाटलीपुत्र (पटना) थी। ३२० ई० के लगभग इनके राज्य का विस्तार अशोक और कनिष्क के राज्य के बराबर हो गया था। इनके भी लेख अधिक संख्या में मिलते हैं जिनमें का एक मुख्य लेख समुद्रगुप्त का लेख है। यह लेख ३७५ ई० के लगभग प्रयागवाले अशोक के स्तम्भ में लिख दिया गया था। यह लेख हमको राजनैतिक बातों का विस्तृत हाल बताता है। इसमें दक्षिण और उत्तर के अन्य समकालीन राजाओं के नाम लिखे हैं इस लेख से और सागर ज़िले से प्राप्त समुद्रगुप्त के दूसरे लेख से जान पड़ता है कि संस्कृत में शिला लेखों के लिखने की रीति इसी समय से (३७५ ई०) आरम्भ हुई। गुप्त वंश के अन्य लेख ५३० ई० तक के मिले हैं। किन्तु इस समय इनका राज्य बहुत कुछ क्षय हो चुका था। इस क्षय का मुख्य कारण तूरामण और मिहिर कुल के आधीन होकर हुण जाति का इनपर आक्रमण करना है। कुरु में जो सिआलकोट (प्राचीन साकल) के समीप है इन दोनों के लेख मिले हैं। इसके पश्चात् मालवा से भी दो लेख कीर्ति-स्तम्भों पर खुदे हुए मिले हैं। ये लेख विष्णु-वर्धन-यशोधर्मण के हैं। इनसे प्रगट होता है कि इस राजा ने मिहिरकुल को हराया और उत्तरीय भारत में एक बड़े राज्य की स्थापना की।

हमने इस लेख में भारतवर्ष के ईसा की छटी शताब्दी तक के लेखों का बहुत ही सूक्ष्मता से दिग्दर्शन कराया है। इसके बाद इस देश में बहुत से छोटे छोटे राज्य हो गये जिनमें मुख्य मुख्य नीचे लिखे जाते हैं:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. बल्लभी का मैत्रक वंश	काठियावाड़ में
२ मुखरी वंश, फिर कुछ समय के बाद हर्षवर्धन वाली जाति	कन्नौज में
३ गुप्त वंश की शाखा जो मगध के गुप्त कहलाते थे	बिहार में
४ चालुक्यवंश	दक्षिणीय भारत के उत्तरी भाग में। कालान्तर में इस राज्य के दो भाग हो गये। एक पश्चिमी चालुक्य और दूसरा पूर्वी चालुक्य।
५ पल्लवजाति	दक्षिणीय भारत के दक्षिणी भाग में।

इन सब राज्यों के लेख बहुत बड़ी संख्या में हैं। इस छोटे से लेख में इनका वर्णन करना अनावश्यक ही नहीं किन्तु असंभव प्रतीत होता है। यदि किसी को इस विषय को अध्ययन करने की रुचि हो तो उसे Corpus Inscriptonum Indicarum (Vol. iii) by Fleet तथा Asiatic Socities के Journals वा Reports of the Various Archaeological Surveys इत्यादि ग्रन्थों को अवश्य पढ़ना चाहिये। अब हमको इन लेखों की लिपि तथा भाषा के विषय में विचार करना आवश्यक है।

महाराज अशोक के लेखों से हमें दो लिपियों का पता चलता है। इन दोनों लिपियों में बहुत अन्तर है। इन लिपियों के नाम खरोष्ठी (वा खरोष्ट्री) और ब्राह्मी हैं। इन दोनों लिपियों की सम्पूर्ण वर्णमाला खोज निकाली गई है किन्तु खरोष्ठी लिपि में अभी कुछ अक्षरों के विषय में गड़बड़ी है। प्रमाणपूर्वक उन अक्षरों के विषय में अभी कुछ नहीं कहा जा सकता।

खरोष्ठी लिपि उर्दू की तरह सीधे हाथ से बाएँ हाथ की ओर लिखी जाती थी। पाश्चात्य विद्वानों का दृढ़ मत है कि यह लिपि अवश्य सेमेटिक लिपि की एक शाखा है। इस मत का आधार यह है कि सिन्धुनद तक डारियस के समय में (५२१–४८५ ई० पू०) ईरानी लोगों का राज्य था और उसी समय में एशिया माइनर की प्राचीन लिपि तथा सेमेटिक की प्रधान शाखा एरामिक लिपि का प्रचार भारत के पञ्जाब प्रान्त में हुआ है। खरोष्ठी लिपि इसी एरामिक लिपि का एक रूपान्तर है। बहुत सम्भव है कि अजमेर के प्रसिद्ध इतिहासज्ञ और "सिरोही राज्य का इतिहास" के कर्ता पंडित गौरीशङ्कर हीराचन्द ओझा के लिपि-विषयक आविष्कारों से यह मत समूल नष्ट किया जा सके और भारतवासी ही इस खरोष्ठी लिपि के जन्मदाता प्रमाणित हो जायँ।

खरोष्ठी लिपि का प्रचार पञ्जाब प्रान्तों में सतलज और व्यास नदी तक ही था। जालन्धर ज़िले से प्राप्त सिक्कों से प्रगट होता है कि सतलज और व्यास नदियों के समीप दोनों ही लिपियों का प्रचार था। कारण कि उन सिक्कों पर दोनों ही लिपियों का प्रयोग है। काँगड़ा से प्राप्त हुए दो शिलालेखों में दोनों लिपियों में लिखे हुए लेख हैं। भारत के पञ्जाब प्रान्त के अतिरिक्त इस लिपि का प्रचार अफगानिस्तान में भी था। अभी हाल में चीनी तुर्किस्तान से इसी लिपि में लिखे हुए कुछ लेख मिले हैं। भारत में ३४३ ई० तक इस लिपि का प्रयोग अवश्य हुआ है।

इस देश के अन्य प्रान्तों में ब्राह्मी लिपि का प्रचार था। पंजाब के विद्वानों तथा कुलीन जातियों में भी इसका प्रचार था। यह लिपि बाएँ हाथ से सीधे हाथ की ओर लिखी जाती थी। इस लिपि के जन्म के विषय में मतभेद है। किन्तु अधिकतर पाश्चात्य विद्वान भी इसकी जन्मभूमि भारतवर्ष ही मानते हैं। कुछ लोगों का मत है कि यह लिपि सब से पुरानी उत्तरी सेमेटिक लिपि की एक शाखा है। इस सेमेटिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिपि का प्रचार फिनीशिया से मेसोपोटामिया तक था। और यह अनुमान किया जाता है कि ८०० ई० पू० के लगभग व्यापारियों द्वारा इसका प्रचार भारत में हुआ। उनकी राय यह भी है कि इस लिपि का भारतवासियों ने केवल संस्कार किया है। संस्कार करने पर उसमें संस्कृत भाषा लिखी जाने लगी। इस मत के प्रमाण में सागर ज़िले से प्राप्त एक सिक्का पेश किया जाता है। इस सिक्के पर ब्राह्मी लिपि में कुछ शब्द उर्दू की तरह उलटी ओर से लिखे गये हैं। और यह अनुमान किया जाता है कि प्राचीन ग्रीक की तरह ब्राह्मी लिपि भी पहले उलटी ओर से, फिर दोनों ओर से, और फिर सीधी लिखी जाने लगी। यह केवल अनुमान है इसका कोई दृढ़ प्रमाण नहीं।

इस बात के कई उदाहरण दिये जा सकते हैं कि प्राचीन सिक्कों पर नाम छापनेवाले शब्दों के उलटे छपजाने के विषय में बिलकुल लापरवाह थे। कहीं कहीं तो अक्षर ही उलटे नहीं छपे किन्तु शब्द भी उलटे छप गये हैं। इसके अतिरिक्त यह भी सम्भव है कि सागर वाले सिक्के को छापने के समय छापनेवाली मुहर पर उलटे शब्दों की जगह सीधे अक्षर खोद दिये गये हों। उलटे अक्षर से सीधे अक्षर छपते हैं। मुहरपर उलटे अक्षर होने चाहिये। यह भूल हो जाना अधिक सम्भव है। कारण कि केवल एक ही ऐसा सिक्का मिला है। इस सिक्के से पुराना भी कोई सिक्का अभी तक प्राप्त नहीं हुआ। सागर से प्राप्त एक ही सिक्के पर से यह मत सत्य मानना कदापि योग्य नहीं है। जब तक कि इसी प्रकार का कोई अन्य शिलालेख वा ताम्रपत्र न मिले तब तक केवल पाँच अक्षर लिखे हुए सिक्के पर किसी मत को सच्चा मानना कदापि योग्य नहीं है। इन कारणों से यह अनुमान कि ब्राह्मी लिपि भी कभी उलटी लिखी जाती थी सर्वथा त्याज्य है और जब तक कोई अन्य दृढ़ प्रमाण न मिले तब तक यह माननीय नहीं हो सकता। इन सब कारणों के अतिरिक्त यह भी विचारने योग्य बात है कि यदि ब्राह्मी लिपि में और सेमेटिक लिपि में कोई सम्बन्ध है तो ब्राह्मी लिपि के प्राचीन रूप में और सेमेटिक लिपि में कुछ समता अवश्य होनी चाहिये और ब्राह्मी लिपि का क्रम से रूपान्तर होने का कोई प्रमाण भी मिलना चाहिये। इन प्रमाणों के अभाव से सिद्ध होता है कि ब्राह्मी लिपि का सेमेटिक से कोई सम्बन्ध नहीं है। व्यापारियों द्वारा कुछ अक्षरों की समता होना सम्भव है किन्तु इन दोनों लिपियों में कोई अधिक समता नहीं जान पड़ती।

किन्तु अन्य विद्वानों का मत है कि भारत की प्राचीन सभ्यता पर ध्यान रखते हुए यह अवश्य अनुमान किया जा सकता है कि ब्राह्मी लिपि के निर्माणकर्ता भारतवासी ही थे कारण कि अशोक के पितामह चन्द्रगुप्त के समय में भी भारतवर्ष में एक निर्दोष लिपि थी और संसार के अन्य देशों में इस बीसवीं शताब्दी में भी एक भी निर्दोष लिपि का प्रचार नहीं है। हमारे यहां तो २००० वर्ष से भी पहिले एक सर्वगुण नागरी लिपि प्रचलित थी। फिर यह क्यों न अनुमान किया जाय कि हम ही ब्राह्मी लिपि के जन्मदाता थे। इस विषय के कुछ दृढ़ प्रमाण भी पंडित गौरीशंकर हीरचन्द ओझा ने ढूंढ़ रक्खे हैं। इनसे आशा की जाती है कि वह जल्दी ही अपने खोज से असत्य सिद्धान्तों का अवश्य खण्डन करेंगे। नागरी, गुजराती, बङ्गाली और अन्य दक्षिण की वर्तमान लिपियां भी इसी ब्राह्मी लिपि से निकली हैं।

बहुत प्राचीन लेखों में हमको संस्कृत भाषा का पता नहीं मिलता। किन्तु यह अनुमान करना कि उस समय में संस्कृत भाषा नहीं थी वा उसका प्रचार नहीं था कदापि माननीय नहीं है। कारण कि रामायण महाभारत आदि अनेक संस्कृत ग्रन्थ उस समय वर्तमान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थे और उनका पठन-पाठन भी अवश्य होता था। उस समय में संस्कृत का प्रचार अवश्य था किन्तु यह साधारण बोलचाल की भाषा नहीं थी। इसका प्रचार विद्वानों में ही था। यह उचित नहीं प्रतीत होता कि उस समय में सर्व-साधारण के लिए जो धार्मिक उक्तियां वा सदाचार-विषयक नियम आदि संस्कृत में जिसका प्रचार संकुचित था लिखे जायँ। जनसाधारण के लिए वह प्राकृत आदि बोलचाल की भाषा में लिखे जाते थे। गौतमबुद्ध ने भी अपने मत का प्रचार इसी कारण प्राकृत भाषा में किया था। और अधिकतर बौद्ध व जैन धर्मग्रन्थ प्राकृत ही में हैं। प्राकृत बहुत काल तक बोलचाल की भाषा रही है।

उत्तर भारत के ५८ ई० पू० से लेखों की भाषा प्राचीन प्राकृत के विशेष रूपान्तर हैं। ५८ ई० पू० से लेखों में कुछ संस्कृत का प्रयोग होने लगा था। किन्तु यह बात अवश्य जाननी चाहिये कि संस्कृत ही प्राकृत की जननी है। उस समय भी अधिकतर लेखों की भाषा संस्कृत और प्राकृत मिश्रित है। वह भाषा न तो शुद्ध संस्कृत ही थी और न शुद्ध प्राकृत ही। उस भाषा में प्राकृत रूपों में संस्कृत प्रत्ययों का अधिकतर सम्मिलन था। मथुरा से प्राप्त ३३ ई० पू० के लेख में शुद्ध संस्कृत का ही प्रयोग है। प्राकृत-संस्कृत-मिश्रित भाषा का प्रयोग उत्तरी भारत में ३२० ई० तक अवश्य रहा है किन्तु जूनागढ़ का लेख (१५० ई०) जिसका वर्णन ऊपर किया गया है वह शुद्ध संस्कृत का गद्य लेख है, यह लेख रुद्रदमन का है और इसी राजा के १८१ से २०५ ई० तक अन्य लेखों की भाषा प्रायः संस्कृत ही है। इससे यह अनुमान किया जाता है कि रुद्रदमन के समय से संस्कृत में लेख लिखने की रीति पड़ी। सागर और प्रयाग के समुद्र गुप्त के दो लेखों की जिनका समय ३४० से ३७५ ई० के बीच का है भाषा भी शुद्ध संस्कृत है। इस समय से अब तक लेखों में संस्कृत का ही प्रयोग होता आया है। किन्तु कहीं कहीं कुछ लेखों में प्राकृत का भी अंश है। जोधपुर राज्य से एक लेख मिला है जिसकी भाषा महाराष्ट्री प्राकृत है।

दक्षिण के लेखों की भाषा पहिले संस्कृत प्राकृत मिश्रित थी। २५७ वा २५८ ई० का नासिक से प्राप्त आभीर राज शिवदत्त का पुत्र ईश्वर सेन का लेख इसी मिश्रित भाषा में है। इसमें सन्देह नहीं कि ४०० ई० तक दक्षिण में लेखों की भाषा प्राकृत वा उसका कोई रूपान्तर था। संस्कृत का पता पहिले ही पहिले हमको नहरात (नहपान) के जामातृ ऋषभदत्त के लेख से चलता है। यह लेख भी नासिक से ही प्राप्त हुआ है। किन्तु इस लेख का केवल प्रस्तावना ही संस्कृत में है जिसमें राजा का यश और दान का वर्णन है। मुख्य लेख प्राकृत ही में है। वसिष्ठि पुत्र श्रीरुपनकरणी की रानी के लेख में जो बम्बई के समीप प्राप्त हुआ है प्रायः शुद्ध संस्कृत का ही प्रयोग है। फिर संस्कृत का प्रयोग चौथी शताब्दी के पल्लव राजाओं के प्राकृत लेखों के नीचे किया गया है। इन लेखों में संस्कृत पद्य लिखे गये हैं जो मुख्यतः अन्य संस्कृत ग्रन्थों से उद्धृत कर दिये गये हैं इनमें ऐतिहासिक महत्व कुछ भी नहीं है। गुजरात प्रान्त का भी एक लेख शुद्ध संस्कृत में मिलता है। यह लेख रुद्रदास (३६७ ई०) का है। ४५६ ई० के त्रिकूटक वंश के दहरसेन का लेख जो बड़ौदा राज्य से प्राप्त हुआ है वह भी संस्कृत ही में लिखा गया है। कदम्ब वंश के राजाओं ने संस्कृत का प्रयोग छठो शताब्दो से किया था। किन्तु पल्लवों ने इसका प्रयोग कदम्बों से पूर्व ही किया था। ५७८ ई० से चालुक्यों ने भी संस्कृत में ही अपने लेख खुदवाये।

दक्षिण में केवल संस्कृत का ही प्रयोग नहीं होता था किन्तु उसके साथ साथ वहां की स्थानीय भाषाओं में भी लेख लिखे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाते थे और इनका प्रयोग बहुत काल तक होता आया है। सब से पहिले कनाड़ी भाषा में लेख लिखे जाने लगे। चालुक्य राज मँगलेश (५६७–६०८ ई०) का लेख कनाड़ी भाषा में लिखा हुआ बीजापुर से मिला है। पल्लव-वंशीय महेन्द्र वर्मन (प्रथम) के लेखों में तामील भाषा का प्रयोग किया गया है। उसके प्रपौत्र परमेश्वर वर्मन (प्रथम) का लेख भी तामील भाषा में है। ये लेख चिंगसहट ज़िला (मद्रास प्रांत) से प्राप्त हुए हैं। उनका समय ६१०–६७५ ई० तक है। पूर्वी चालुक्य वंश के विमलादित्य राजा के १०११ ई० के लेख में तैलंग भाषा का प्रयोग है। मलायलम का प्रयोग सब से पहिले ११५० ई० के लगभग हुआ है। ट्रावंकोर से प्राप्त करेलवंश के राजाओं के लेख मलायलम भाषा में ही लिखे गये हैं। मैसोर राज्य की प्रसिद्ध गौतमेश्वर की मूर्ति में दो पंक्तियाँ मराठी भाषा में लिखी हुई हैं। इस मूर्ति का समय लगभग ११२५ ई० है। इस भाषा का प्रयोग देवगिरि के यादवर राजा सिंघण के १२०७ ई० के लेख में भी है। यह खान्देश ज़िले (बम्बई प्रान्त) से प्राप्त हुआ है।

भारतवर्ष के प्राचीन शिला-लेखों का यह संक्षिप्त वर्णन है। इससे हमको बहुत सी बातें अवश्य मालूम होती हैं परन्तु समस्त देश का एक विस्तृत इतिहास लिखने की यथेष्ट सामग्री अभी प्राप्त नहीं हुई। एक कठिनाई यह भी है कि देश बहुत से छोटे २ राज्यों में विभक्त था और ये एक दूसरे से सदा लड़ा करते थे और अन्त में नाश को प्राप्त होते थे। इन कारणों से यह कम संभव प्रतीत होता है कि समस्त देश का पूरा २ इतिहास कभी तैयार हो सके। पुरातत्व विभाग का परिश्रम जो नई खोजों से प्राचीन इतिहास-संबन्धी नई सामग्री बराबर निकाल रहा है सर्वथा सराहनीय है। प्रायः पश्चिमी विद्वानों ने ऐसी बातें भी मानली हैं जो केवल अनुमान पर ही अवलम्बित हैं इनका दृढ़ प्रमाणों से खण्डन करना हमारे देशी इतिहासज्ञ और पुरातत्व-वेत्ताओं के लिए आवश्यक है। हमको पूरी आशा है कि हमारे पण्डितों का इधर पूरा ध्यान किसी समय आकृष्ट होगा।

प्रोत्साहन।

(१)

हो भारत ! स्वाधीन।
शीघ्र लेहि भगवान तुम्हारी, पराधीनता छीन।
शिल्प कला वाणिज्य आदि में, फिर से बनो प्रवीन

(२)

बृटिश छत्रछाया में रहकर, बनो स्वराज्यासीन।
फिर स्वतन्त्रता कीर्ति पताका, फहरावो प्राचीन॥

(३)

माननीय श्री मालवीयजी, सम निज तनय नवीन।
लखकर जागो जागो भारत, बने रहो मत दीन॥

(४)

मान्य तिलक प्रभु मालवीयजी, गांधीजी यह तीन
ब्रह्मा विष्णु महेश सदृश मिलि, करैं तुम्हें स्वाधीन

(५)

होमरूल का घर घर में अब, करके ख़ूब प्रचार
निश्चय तुम्हें करेंगे भारत ! परतन्त्रता विहीन।

(६)

साहस अरु उत्साह न छोड़ो, मिलिहै अब शिस्वराज
दिखलादो बस कर्मवीरता, त्यागि अवस्था हीन

नृसिंहनाथ त्रिपाठी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय शासन-सुधार ।

मि० मांटेगू और लार्ड चेम्सफ़ोर्ड के प्रस्ताव ।

भारतीय शासन-सुधार सम्बन्धी मि० मांटेगू और लार्ड चेम्सफ़ोर्ड के प्रस्तावों की जिस रिपोर्ट के प्रकाशित होने की बाट लोग बड़ी उत्कण्ठा से जोह रहे थे, वह ८ जुलाई को प्रकाशित हो गई है । यह रिपोर्ट बड़े आकार के १८० पृष्ठों की है । इसके आरंभ में मि० मांटेगू और लार्ड चेम्सफ़ोर्ड द्वारा लिखित ५ पैराग्राफ़ों की एक प्रस्तावना है और इसके दो भाग हैं । एक में साधन और दूसरे में "प्रस्ताव" हैं । पहिले भाग में ७ अध्याय हैं, जिनके शीर्षक ये हैं:—(१) भारत में हाल की घटनाएँ, (२) कार्यनिर्वाहक पद्धति की वृद्धि; (३) व्यवस्थापक कौंसिलों का विस्तार, (४) मार्ले-मिन्टो कौंसिलें, (५) वर्तमान ढांचा, (६) सदस्यों की शर्तें और (७) कांग्रेस-लीग की सुधार-योजना । द्वितीय भाग में आरम्भिक २२ पैराग्राफ़ों के बाद ४ अध्याय दिये गये हैं, जिनमें (१) प्रान्तों (२) भारत सरकार और इण्डिया आफ़िस, (३) देशी रियासतें और (४) विविध प्रश्नों पर विचार किया गया है । अन्त में और ८ पैराग्राफ़ दिये गये हैं । प्रान्तों के सम्बन्ध का अध्याय इन ४ विभागों में बँटा है:—(१) प्रांतिक सरकारों के अधिकारों का हस्तान्तर, (२) प्रान्तिक कार्यकारिणी कौंसिलें, (३) प्रान्तिक व्यव० कौंसिलें और (४) भावी उन्नति । दूसरे अध्याय के विविध प्रश्नों में (१) पब्लिक सर्विसेज़, (२) सेना, (३) उद्योगधन्धे और वाणिज्य कर (४) ग़ैर-सरकारी समाज और (५) सामाजिक सम्बन्ध का वर्णन दिया गया है । रिपोर्ट के अन्त में प्रस्तावों का सार, प्रान्तिक सरकारों को भारत सरकार द्वारा दिये जानेवाले और भारत सरकार के हाथ से निकालकर प्रान्तिक सरकारों को दिये जानेवाले विषयों की दो तालिकाएँ और उक्त मसौदे पर भारत-मंत्री और उनके साथ आये हुए सदस्यों, इण्डिया कौंसिल के मेम्बरों और वाइसराय और उनकी कौंसिल के सदस्यों के किये हुए समर्थन का ज़िक्र है । इसके बाद रिपोर्ट समाप्त हुई है ।

सिफ़ारिशों का सारांश ।

रिपोर्ट में शासन-सुधार के सम्बन्ध में जो सिफ़ारिशें की गई हैं, उनका सारांश यह है:—

पार्लमेंट और इण्डिया आफ़िस ।

(१) पार्लमेंट और भारत-मंत्री के वर्तमान अधिकार परिमित किये जायँ ।

(२) भारत-मंत्री का वेतन भारतीय-कोष से न देकर इङ्गलैंड के ख़ज़ाने से दिया जाय ।

(३) पार्लमेंट से भारतीय मामलों पर विचार करने के लिए एक कमेटी नियुक्त करने को कहा जाय ।

(४) भारतीय कौंसिल और इंडिया-आफ़िस के वर्तमान संगठन की जाँच करके रिपोर्ट देने के लिए एक कमेटी नियुक्त की जाय ।

भारत सरकार ।

(५) उन विषयों पर भारत सरकार का पूर्ण अधिकार रहे, जो उसके निर्णय के अनुसार शान्ति, हुकूमत और अच्छे शासन के दायित्व का निबाहने के लिए आवश्यक हों ।

(६) भारत के लिए एक प्रीवी कौंसिल बनाई जाय ।

कार्यकारिणी कौंसिल ।

(७) वाइसराय की कार्यकारिणी कौंसिल में भारतीय सदस्यों की संख्या बढ़ाई जाय ।

(८) कार्यकारिणी कौंसिल की वर्तमान निर्धारित सदस्य-संख्या और योग्यता की पद्धति उठा दी जाय ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(९) व्यवस्थापक कौंसिल के नियमित संख्यक सदस्यों को ग्रेटब्रिटेन के पार्लामेंटरी अंडर-सेक्रेटरी के सदृश पद पर नियुक्त करने का अधिकार कार्यकारिणी कौंसिल को रहे।

व्यवस्थापक कौंसिल।

(१०) वाइसराय की वर्तमान व्यवस्थापक कौंसिल के स्थान में एक 'स्टेट कौंसिल' और एक 'व्यवस्थापक कौंसिल' का निर्माण किया जाय।

(११) स्टेट कौंसिल में (गवर्नर-जनरल को छोड़ कर, जो सभापति होंगे और जिन्हें एक वाइस प्रेसीडेंट मनोनीत करने का अधिकार होगा) ५० सदस्य होंगे।

इन सदस्यों में २१ निर्वाचित और बाक़ी वाइसराय द्वारा नामज़द किये जायँगे। नामज़द सदस्यों में ४ ग़ैर-सरकारी और २५ से अधिक सरकारी सदस्य (जिनमें कार्यकारिणी कौंसिल के मेम्बर सम्मिलित हैं) न होंगे।

स्टेट-कौंसिल का कार्यकाल ५ वर्ष का होगा और इस कौंसिल के सदस्यों की योग्यता के सम्बन्ध में गवर्नर-जनरल-इन-कौंसिल नियम बनायेंगे।

(१२) व्यवस्थापक कौंसिल में लगभग १०० सदस्य होंगे, जिनमें से दो तिहाई निर्वाचित और एक तिहाई नामज़द होंगे। नामज़द सदस्यों में एक तिहाई से कम ग़ैर-सरकारी सदस्य न होंगे।

इस कौंसिल के सभापति वाइसराय द्वारा नामज़द किये जायँगे।

(१३) स्टेट कौंसिल के सरकारी सदस्य भी व्यवस्थापक कौंसिल के लिए नामज़द किये जा सकेंगे।

(१४) गवर्नर-जनरल को स्टेट कौंसिल और व्यवस्थापक कौंसिल को भङ्ग करने का अधिकार होगा।

(१५) क़ानून बनाने के सम्बन्ध में इस पद्धति से काम किया जायगा :—

(क) सरकारी बिल—साधारण रीति और मामूली पद्धति से व्य० कौंसिल में ये बिल पेश किये जायँगे। यदि व्य० कौंसिल से स्वीकृत होने पर 'स्टेट कौंसिल' में भेजे जायँगे। यदि स्टेट कौंसिल इसमें कोई ऐसा संशोधन करे, जो व्यवस्थापक कौंसिल को मंज़ूर न हो तो उक्त बिल दोनों कौंसिलों के एक सम्मिलित अधिवेशन में पेश किया जायेगा परन्तु यदि वाइसराय कहें कि कौंसिल में जो संशोधन पेश किया गया है, वह शान्ति सुव्यवस्था और सुशासन की दृष्टि से आवश्यक है (जिसमें अच्छी आर्थिक प्रबन्ध भी सम्मिलित हैं) तो व्यवस्थापक कौंसिल को स्टेट कौंसिल के संशोधनों या उपप्रस्तावों को रद्द या परिमित करने का अधिकार न होगा। परन्तु उस दशा में, जब बिल पेश करने की आज्ञा न दी जाय या किसी रूप में वह रद्द कर दिया जाय, तो गवर्नर जनरल-इन-कौंसिल को अधिकार होगा कि वे स्टेट कौंसिल के पास उसे, उपर्युक्त शर्तों के अनुसार नये स्वरूप में भेजें। यदि आकस्मिक प्रयोजन से आरम्भ हो में कोई बिल स्टेट कौंसिल में पेश कर के पास करने की आवश्यकता होगी तो वाइसराय व्यवस्थापक कौंसिल को सिर्फ़ सूचना देकर उसे पास कर सकेंगे।

(ख) ग़ैर सरकारी बिल—यह बिल पेश करने वाला जिस कौंसिल का सदस्य हो, उसी में पेश किये जायँगे और जब उसमें ये स्वीकार हो जाय, तो वह दूसरी कौंसिल में भेजा जायगा। दोनों कौंसिल के मतभेद सम्मिलित अधिवेशन द्वारा मिटाये जायँगे तथापि यदि कौंसिल द्वारा कोई बिल ऐसी शकल में पेश हो, जो सरकार की दृष्टि में सुशासन के लिए हानिकारक हो, तो गवर्नर-जनरल-इन-कौंसिल को उपर्युक्त शर्तों के अनुसार स्टेट कौंसिल में पेश करने या उसे दुबारा पेश कराने का अधिकार होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह बिल उसी स्वरूप में क़ानून बन सकेगा, जिसमें स्टेट कौंसिल इसे बनाये।

(१६) प्रस्तावों का महत्व सिर्फ़ सिफ़ारिश का सा होगा सरकार उसे मानने के लिए बाध्य न होगी।

(१७) गवर्नर जनरल और श्री० सम्राट् को अब का सा सम्मति देने, रख छोड़ने और इन्कार करने का अधिकार होगा।

(१८) गवर्नर-जनरल को क़ानून बनाने का और गवर्नर-जनरल-इन-कौंसिल को व्यवस्था-विधान-विधि-क्रम बनाने का वर्त्तमान अधिकार होगा।

(१९) स्टेट और व्यवस्थापक कौंसिलों के नामज़द सरकारी सदस्यों को व्याख्यान और सम्मति देने की स्वतन्त्रता होगी, यदि सरकार इसके विपरीत आज्ञा न दे।

(२०) स्टेट या व्यवस्थापक कौंसिल के किसी भी सदस्य को न्यूनतापूरक प्रश्न करने का अधिकार होगा। गवर्नर-जनरल इस दलील पर कि जनता के हित की दृष्टि से प्रश्न का उत्तर आवश्यक नहीं, प्रस्ताव को पेश होने से रोक न सकेंगे परन्तु वे यह कह कर किसी प्रस्ताव को रोक सकेंगे कि इसको पेश करना जनता के हित के विरुद्ध है।

(२१) स्टेट और व्यवस्थापक कौंसिलों के कार्यक्रम-सम्बन्धी नियम गवर्नर-जनरल-इन-कौंसिल द्वारा आरम्भ में बनाये जायँगे। स्टेट और व्यवस्थापक कौंसिलों को गवर्नर-जनरल की मंजूरी से अपने नियमों को परिमित करने का अधिकार होगा। इस परिवर्तन में भारत-मंत्री की कौंसिल की मंजूरी लेने या पार्लामेंट के सामने उन्हें रखने की आवश्यकता न होगी।

(२२) स्टेट और व्यवस्थापक कौंसिलों की सम्मिलित स्थायी कमेटियाँ अधिक से अधिक सरकारी मुहकमों में मिल सकेंगी। गवर्नर-जनरल-इन-कौंसिल इसका निश्चय करेंगे कि वे स्थायी कमेटियां मुहकमों में भाग ले सकेंगी और मुहकमों के प्रधान अफ़सर इसका निश्चय करेंगे कि कौन विषय स्थायी कमेटी के पास भेजे जायँ। स्थायी कमेटी के दो तिहाई सदस्य स्टेट और व्यवस्थापक कौंसिलों के ग़ैर-सरकारी सदस्यों में से वोट लेकर चुने जायँगे और बाकी एक तिहाई गवर्नर-जनरल-इन कौंसिल द्वारा नामज़द किये जायँगे।

प्रान्त।

(२३) प्रान्तिक सरकारों को उन क़ानून बनाने, व्यवस्थापक, और आर्थिक विषयों में उस अधिकार से भारत सरकार द्वारा बहुत स्वतन्त्रता दी जायगी, जो उनका दायित्व निबाहने के लिए उपयुक्त है।

(२४) प्रान्तों में दायित्वपूर्ण शासन प्रतिष्ठित करने के लिए कुछ विषयों की ज़िम्मेदारी उन पर छोड़ी जायगी जो आगे हस्तान्तर किये हुए विषय कहे जायँगे (दूसरे विषय रक्षित विषय कहे जायँगे) और ऐसे ही दूसरे विषयों का अधिकार क्रम क्रम से उन्हें तब तक दिया जायगा, जब तक पूरा दायित्वपूर्ण शासन प्रतिष्ठित न हो जाय।

प्रां० कार्यकारिणी गवर्नमेंट।

(२५) कार्यकारिणी गवर्नमेंट में एक गवर्नर और कार्यकारिणी कौंसिल तथा व्यवस्थापक कौंसिल के निर्वाचित सदस्यों में से गवर्नर द्वारा नामज़द किये हुए एक मंत्री या मंत्रिगण और पोर्टफोलियो के सिवा एक या अधिक सदस्य रहेंगे।

(२६) कार्यकारिणी प्रां० कौंसिल दो सदस्यों की होगी, जिनमें एक भारतीय सदस्य होगी।

रक्षित विषय गवर्नर और कार्यकारिणी कौंसिल के सदस्यों के अधिकार में रहेंगे।

(२७) मंत्री या मंत्रीगण व्यवस्थापक कौंसिल के कार्यकाल के समय तक के लिए नियुक्त किये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयँगे और उनपर हस्तान्तर किये हुए विषयों का भार रहेगा।

(२८) अतिरिक्त सदस्य या सदस्यों को गवर्नर केवल विचार करने या सलाह देने के लिए अपने पुराने अफ़सरों में से नियुक्त करेंगे।

(२९) इस तरह से बनी हुई सरकार साधारणतः इकट्ठी होकर विचार करेगी, परन्तु गवर्नर को अपनी सरकार के किसी अंश को अपने साथ अलग विचार करने के लिए बुलाने का अधिकार होगा। रक्षित विषयों के फैसले और उनके लिए बजट में रुपया दिलाने का अधिकार गवर्नर और उनकी कौंसिल को होगा और हस्तान्तर किये हुये विषयों के फैसले और उनके लिए रुपयों का प्रबन्ध कराने का अधिकार गवर्नर और मंत्रियों को होगा।

(३०) ग्रेटब्रिटेन के पार्लामेंटरी अन्डर सेक्रेटरी के नमूने पर व्यवस्थापक कौंसिल के निर्वाचित सदस्यों को वैसे पदों पर नियुक्त करने का अधिकार गवर्नर को होगा।

प्रां० व्यवस्थापक कौंसिलें।

(३१) हर एक प्रांत में वर्तमान व्यवस्थापक कौंसिलों का विस्तार किया जायगा, और उसमें निर्वाचित सदस्यों की संख्या अधिक रक्खी जायगी। इनमें सदस्यों की संख्या इस प्रकार होगी:—(१) वोट का यथासम्भव विस्तृत अधिकार रखकर जनता द्वारा निर्वाचित सदस्य, (२) नामज़द किये हुए सदस्य, जिनमें (क) सरकारी और (ख) गैर-सरकारी सदस्य होंगे, और (३) एक्स आफ़िशियो यानी अधिकार की योग्यता से होनेवाले सदस्य। वोट देने के अधिकार और व्यवस्थापक कौंसिल का संगठन गवर्नर-जनरल-इन-कौंसिल एक कमेटी की सलाह से नियम बनाकर भारत-मंत्री की मंजूरी से निश्चित करेंगे और वह पार्लामेंट के सामने रक्खा जायगा।

(३२) गवर्नर व्यवस्थापक कौंसिल के सभापति होंगे और उन्हें वायस प्रेसीडेन्ट यानी उप-सभापति नियुक्त करने का अधिकार होगा।

(३३) व्यवस्थापक कौंसिल को भङ्ग करने का अधिकार गवर्नर को होगा।

(३४) अन्य प्रस्तावों को (बजेट के सिवा) सिफ़ारिशों का सा ही महत्व रहेगा।

(३५) नामज़द सदस्यों को, यदि सरकार की दूसरी आज्ञा न हो, व्याख्यान देने और स्वतन्त्र सम्मति देने का अधिकार होगा।

(३६) व्यवस्थापक कौंसिल के किसी सदस्य को भी न्यूनतापूरक प्रश्न करने का अधिकार होगा।

(३७) व्यवस्थापक कौंसिल के कार्यक्रम के वर्तमान नियम आगे भी जारी रहेंगे; परन्तु व्यवस्थापक कौंसिल को, गवर्नर की मंजूरी से उसमें परिवर्त्तन करने का अधिकार होगा।

(३८) व्यवस्थापक कौंसिल की स्थायी कमेटियाँ बनाई जाकर हर एक मुहकमे या कई मुहकमों के समूह से सम्मिलित की जायँगी। इनमें व्यवस्थापक कौंसिल के निर्वाचित सदस्य, जिस मुहकमे से कमेटी का ताल्लुक़ हो, उसके प्रधान अफ़सर, कमेटी के सभापति होनेवाले सदस्य या मंत्री इसके सदस्य होंगे!

(३९) सब विषयों के क़ानून साधारणतः व्यवस्थापक कौंसिल में पास किये जायँगे। इसमें जो न पास किये जायंगे, उनका ब्यौरा आगे दिया गया है।

(४०) रक्षित विषयों के सम्बन्ध में यदि कोई बिल पेश किया जाय तो शान्ति स्थापन और प्रबन्ध तथा रक्षित विषयों की अपनी ज़िम्मेदारी निबाहने के लिए यह आवश्यक है, ऐसी सिफ़ारिश करने का अधिकार गवर्नर साहब को होगा। अनन्तर वह बिल उक्त सर्टीफ़िकेट के साथ 'गजट' में प्रकाशित किया जायगा। फिर वह व्यवस्थापक कौंसिल में पेश किया जायगा और इसके प्रधान सिद्धान्तों पर वादविवाद होने के बाद यह बड़ी कमेटी के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पास विचार के लिए भेजा जायगा; परन्तु गवर्नर साहब की इस राय का कि किसी बिल का सम्बन्ध रक्षित विषयों से है या नहीं, निर्णय करने के लिए उसे भारत सरकार के पास भेजने को गवर्नर को मजबूर करने का अधिकार व्यवस्थापक कौंसिल को होगा। इसके सम्बन्ध में भारत सरकार का फ़ैसला अन्तिम निर्णय समझा जायगा।

यदि गवर्नर साहब की यह राय हो कि क़ानून बनाने के प्रश्न का भार व्यवस्थापक कौंसिल पर छोड़ देने में कोई हर्ज नहीं है, तो बिल के साथ सार्टीफ़िकेट पेश करने की कोई आवश्यकता न होगी।

(४१) बड़ी कमेटी में (जिसका संगठन उसके सामने पेश होनेवाले विषयों के महत्व के अनुसार होगा) व्यवस्थापक कौंसिल के सदस्यों की तादाद के अनुसार सैकड़े ४० से ५० तक सदस्य रहेंगे। इसके कुछ सदस्यों का निर्वाचन वोट द्वारा और कुछ का नामज़दी द्वारा किया जायगा। गवर्नर को इतने सदस्य नामज़द करने का अधिकार होगा, जिसमें कमेटी में सरकारी सदस्यों का संख्याधिक्य रहे, परन्तु ऐसे नामज़द सदस्यों की संख्या दो तिहाई से अधिक न होगी।

(४२) बड़ी कमेटी में स्वीकृत बिल की रिपोर्ट व्यवस्थापक कौंसिल में भेजी जायगी और उस बिल की चर्चा के लिए जितना अवसर दिया जायगा उतने में उस पर विचार किया जायगा। कार्यकारिणी कौंसिल के सदस्यों की सूचना के सिवा उसमें फेरबदल करने या उसे रद्द करने का अधिकार व्य० कौंसिल को न होगा। उक्त चर्चा के बाद यह समझा जायगा कि वह कौंसिल में स्वीकृत हो गया, किन्तु चर्चा के समय बिल के किसी सिद्धान्त या ब्योरे के सम्बन्ध में यदि कोई उज्र हो तो उसे प्रस्ताव के रूप में पेश करना चाहिये। इस प्रकार का प्रस्ताव उस ऐक्ट के साथ गवर्नर जनरल और भारत-मंत्री के पास भेजा जाय।

(४३) कार्यकारिणी कौंसिल के किसी भी सदस्य को इस दलील पर कि पेश किये हुए किसी बिल या उसके अंश का सम्बन्ध रक्षित विषयों से है, उस पर आपत्ति करने का अधिकार होगा। इसके बाद बिल पर चर्चा होने या न होने की आज्ञा देना अथवा बिल की किसी धारा को संशोधन करना गवर्नर के आधीन होगा। संशोधन या स्वीकृति देने के बाद गवर्नर या तो बिल पर चर्चा करने की मनाही करेंगे या संशोधित बिल या धारा पर व्यवस्थापक कौंसिल को चर्चा करने की आज्ञा देंगे अथवा व्यव० कौंसिल की प्रार्थना से उस बिल को बड़ी कमेटी के पास भेजेंगे।

(४४) सब प्रान्तिक क़ानूनों पर गवर्नर और गवर्नर-जनरल की सम्मति मिलनी चाहिये। किसी भी बिल को नामंज़ूर करने का अधिकार सम्राट् को सदा रहेगा।

(४५) किसी बिल को अस्वीकार करने का अधिकार गवर्नर को होगा; परन्तु उसी बिल में संशोधन करने के लिए उसे वापस देने का अधिकार भी उन्हें होगा।

(४६) प्रान्तिक ऐक्टों को रक्षित रखने यानी अमल में न लाने देने का अधिकार गवर्नर-जनरल को होगा।

आर्थिक विषय।

(४७) भारतीय और प्रान्तिक सरकारों के आय-मार्ग बिलकुल अलग रक्खे जायँगे।

(४८) प्रान्तिक आय पर पहिला बोझ भारत सरकार को दी जानेवाली निर्द्धारित रकम का होगा।

(४९) प्रान्तिक सरकार को कर बैठाने और ऋण लेने के कुछ अधिकार दिये जायँगे।

(५०) बजेट व्यवस्थापक कौंसिल के सामने पेश किया जायगा, रक्षित विषयों के सम्बन्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में बजेट में जो रक़म हो, उसे यदि व्यव० कौंसिल मंजूर न करे तो गवर्नर-इन-कौंसिल को उस रक़म या उसके अंश को क़ायम रखने का अधिकार होगा, परन्तु ऐसा करने के लिए इसके सम्बन्ध में उन्हें बताना पड़ेगा कि प्रान्त या उसके किसी अंश की शान्ति-रक्षा और प्रबन्ध के लिए यह आवश्यक है। जिस मद के सम्बन्ध में उन्हें ऐसा करने का अधिकार होगा, उसके सिवा अन्य मद्दों के ख़र्च में व्यवस्थापक कौंसिल के फेर बदल के अनुसार परिवर्तन होना चाहिये।

स्थानिक स्वराज्य।

(५१) स्थानिक स्वराज्य (लोकल बोर्ड और म्यूनिसिपैलिटियों) की संस्थाओं में यथा-सम्भव जनता का अधिकार होगा।

प्रान्तिक संगठन में परिवर्तन।

(५२) नई कौंसिल का पांच वर्ष का कार्य-काल समाप्त होने के बाद रक्षित और हस्तान्तर किये हुए विषयों की फ़ेहरिस्त में यदि परिवर्तन करने के लिए प्रान्तिक सरकार या प्रान्तिक कौंसिल की ओर से प्रार्थना की जाय तो उसपर भारत सरकार विचार करके भारत मंत्री की मंजूरी से रक्षित विषयों में से किसी विषय को हस्तान्तरित करने या हस्तान्तर किये हुए किसी विषय में यदि भयानक गड़बड़ी हुई हो तो उसे रक्षित विषयों में लेने का अधिकार भारत सरकार को होगा। उसी तरह मन्त्रियों के वेतन को हर साल व्यवस्थापक कौंसिल को निर्द्धारित करने की आज्ञा देने का अधिकार भी भारत सरकार को होगा। उसी समय या उसके बाद प्रस्ताव द्वारा यह निश्चित करने का अधिकार व्यवस्थापक कौंसिल को होगा कि मंत्रियों का वेतन बहुमत से निश्चित होना चाहिये।

आरम्भिक कार्रवाई।

(५३) एक कमेटी नियुक्त की जाय, जिसके सभापति इङ्गलैन्ड से नियुक्त किये जायँ। इसके सिवा इसमें एक सरकारी और एक गैर-सरकारी भारतीय सदस्य हों। इस कमेटी को यह सलाह देनी चाहिये कि भारत सरकार और प्रान्तिक सरकारों के अधिकार कैसे रहें और उसको यह सिफ़ारिश करनी चाहिये कि प्रान्तिक सरकार के अधिकारों में से कौन से अधिकार जनता को दिये जायँ। जिस प्रान्त के सम्बन्ध में कमेटी विचार करे उस प्रान्त के एक अतिरिक्त सरकारी और एक गैरसरकारी सदस्य कमेटी में सम्मिलित किये जायँ।

(५४) वोट देनेवाली संस्थाओं, वोट देनेवालों के अधिकार, प्रान्तिक व्यवस्थापक कौंसिल आदि के संगठन की जांच करने के लिए एक दूसरी कमेटी नियुक्त की जाय, जिसके सभापति इङ्गलैन्ड से एक सज्जन नियुक्त किये जायं, और इसमें दो सरकारी और दो गैर-सरकारी भारतीय सदस्य हों। जिस प्रान्त में कमेटी की जांच होती हो, उस समय एक अतिरिक्त सरकारी और एक गैरसरकारी भारतीय अफ़सर नियुक्त किये जायँ।

(५५) इन दोनों कमेटियों को अपने अधिवेशन करने और परस्पर सलाह करने का अधिकार होगा।

जांच के कमीशन।

(५६) नई व्यवस्थापक कौंसिल का पहिला अधिवेशन होने के १० वर्ष बाद भारतीय और प्रान्तिक सरकारों की शासन-सम्बन्धी परिस्थिति की जांच करने के लिए एक कमीशन नियुक्त होगा। इस कमीशन के सदस्यों के नाम पार्लामेन्ट की मंजूरी के लिए पार्लामेन्ट में पेश किये जायंगे। इसके बाद फिर अधिक से अधिक १२ वर्ष तक में फिर कमीशन नियुक्त किये जायंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देशी रियासतें।

(५७) देशी राजन्यवर्ग की एक कौंसिल बनाई जाय।

(५८) वह कौंसिल अपनी एक स्थायी कमेटी नियुक्त करे।

(५९) विभिन्न रियासतों में परस्पर कोई झगड़ा होने या किसी रियासत का प्रान्तिक अथवा भारत सरकार से कोई झगड़ा रहे तो उसके सम्बन्ध में सलाह देने के लिए कमीशन नियुक्त करने का अधिकार वाइसराय को होगा। इस कौंसिल में हाईकोर्ट के एक जज और रियासत तथा प्रान्तिक अथवा भारत सरकार के एक एक प्रतिनिधि होंगे।

(६०) किसी देशी रियासत के अधीश्वर के कुछ हक़ूक मान सम्मान या अधिकार छीन लेने या उसके बाद गद्दी पर बैठनेवाले उसकी खानदान के किसी मनुष्य को तख़्तनशीन होने से रोकने के सम्बन्ध में विचार करने की आवश्यकता उत्पन्न हो तो उसके बारे में राय देने के लिए वाइसराय एक कमीशन नियुक्त करें। उसमें हाईकोर्ट के एक जज, दो देशी नरेश और वाइसराय द्वारा नियुक्त दो सज्जन होंगे।

(६१) रियासतों में स्वराज्य के अधिकारों को उपभोग करनेवाली कोई भी रियासत भारत सरकार से अपना प्रत्यक्ष सम्बन्ध रख सकेगी।

(६२) देशी राजाओं से सरकार का कैसा सम्बन्ध रहना चाहिये, इसका निर्णय करने का अधिकार प्रान्तिक व्यवस्थापक कौंसिलों पर नहीं छोड़ा जा सकता।

(६३) सार्वजनिक हित के प्रश्नों पर विचार करने के लिए देशी नरेशों की कौंसिल और स्टेट कौंसिल का सम्मिलित अधिवेशन कराने का प्रबन्ध किया जाय।

सरकारी नौकरियाँ।

(६४) सरकारी नौकरी में नियुक्त करने के संबंध में अब तक जो जातिगत कठिनाइयां हों, वे सब रद्द कर दी जायँ।

(६५) कुछ विभागों के लिए इङ्गलैंड में भर्ती करने का जो वर्त्तमान रिवाज है, उसको क़ायम रखकर उसमें के कुछ पद भारतवर्ष के भीतर ही से भर्ती करने की पद्धति जारी की जाय।

(६६) इन विभागों में जो लोग भर्ती किये जाते हैं, उनमें भारत से कितने मनुष्य भर्ती किये जायँ, और बाद को उनकी वृद्धि किस तरह की जायगी इसका पक्का निश्चय किया जाय।

(६७) इण्डियन सिविल सर्विस के उच्च पदों में फ़ी सैकड़े ३३ पद हिन्दुस्तानियों को दिये जायँ और प्रतिवर्ष उसमें सैकड़े १॥ के हिसाब से वृद्धि की जाय जब तक कि जाँच करनेवाले कमीशन इसमें कोई परिवर्तन न करें।

(६८) मंहगी की वृद्धि के अनुसार और नये लोगों की नियुक्ति की मर्यादा स्थिर रखने के लिए जितनी आवश्यकता होगी, उसके अनुसार वेतन के परिमाण के सम्बन्ध में विचार किया जाय। वेतन वृद्धि के सम्बन्ध में कार्यकाल के अनुसार वृद्धि का जो परिमाण निश्चित किया जाय, वह आम तौर पर प्रचलित हो और अन्तिम दर्जे तक पहुंचने के समय तक वृद्धि का परिमाण वैसा ही जारी रहे। फ़ी रुपये के लिए १ शिलिङ्ग ६ पेन्स के हिसाब से अधिक से अधिक ६,०००) रुपये तक पेन्शन की वृद्धि हो, और उच्च पदों के लिए विशेष पेन्शन लिये जायँ। इन्डिन सिविल सर्विस के लोगों को पेन्शिन देने के लिए उनके मासिक वेतन से रुपये न लिये जायँ और यदि लिए जायँ तो वे अन्त में उन्हें लौटा दिये जायँ। अधिक सुभीता देने के विचार से अधिक समय के लिए दी जानेवाली छुट्टियां कम करने की दृष्टि से और पूरे वेतन पर मिलनेवाली छुट्टियों के कम करने के कारण जो असुविधा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो उसे दूर करने के उद्देश्य से छुट्टी-सम्बन्धी नियमों पर फिर विचार किया जाय। प्रिविलेज लीव (अपने हक़ की छुट्टी) चार महीने तक लेने का नियम बना दिया जाय।

(६९) सब सरकारी नौकरियों के लिए भारत में भर्ती करने की नीव पर वेतन का परिमाण निश्चित कर दिया जाय, परन्तु यूरोप से नौकरी के लिए लाये हुये अथवा यूरोप में योग्यता प्राप्त करनेवाले मनुष्यों को उचित भत्ता दिया जाय। यूरोप में नौकरी करने वाले भारतवासियों के लिए भी यही सिद्धान्त काम में लाया जाय।

शासन-सुधारों की स्कीम।

मि० मांटेगू और लार्ड चेम्सफोर्ड ने भारत की शासनपद्धति में सुधार करने के लिए जो स्कीम बनायी है, उसमें उन्हें कम परिश्रम पड़ा है वा अधिक और उसके लिए उन्हें धन्यवाद देना चाहिये या नहीं इन बातों पर विचार करने में समय नष्ट करने की अपेक्षा यह अच्छा है कि लोग इस बात पर विचार करें कि इस स्कीम का २० अगस्त १९१७ की मि० मांटेगू की घोषणा से सामंजस्य होता है या नहीं और जो हम मागते थे वह हमें मिला या नहीं। यदि हमारी आकांक्षा इस स्कीम से पूरी होती हो तो हमें इसे स्वीकार कर लेना चाहिये और यदि न पूरी हो तो स्पष्ट शब्दों में अस्वीकार कर देना चाहिये। आज हम इसी कसौटी पर इस स्कीम को कसना चाहते हैं। २० अगस्त को भारत सचिव मि० मांटेगू ने कामन्स सभा में कहा था कि ब्रिटिश साम्राज्य के अङ्गस्वरूप भारत में उत्तरोत्तर उत्तरदायित्व-पूर्ण शासन सम्पादन के विचार से शासन को प्रत्येक शाखा में भारतवासियों का अधिकाधिक सहयोग बढ़ाना और क्रमशः स्वराज्य संस्थाओं की उन्नति करना ब्रिटिश सरकार की नीति है। उन्होंने (ब्रिटिश और भारत सरकारों ने) निश्चय किया है कि यथासम्भव शीघ्र ही इस ओर बढ़ाने के लिए वास्तविक उपाय काम में लाये जांय। अब विचारणीय विषय यह है कि शासनसुधारों की सरकारी स्कीम क्या हमें उत्तरदायित्व पूर्ण शासन की ओर ले जायगी? पर इसके पहले यह विचारना चाहिये कि उत्तरदायित्वपूर्ण शासन किसे कहते हैं। जिस शासनपद्धति में शासकमण्डल व्यवस्थापकमण्डल के सामने अपने कार्यों के लिए उत्तरदाता होता है और व्यवस्थापक-मण्डल की अनुकूलता से ही अपने पदपर रह सकता है, उसे उत्तरदायित्वपूर्ण शासन कहते हैं। अथवा जिस पद्धति में व्यवस्थापकमण्डल को शासकमण्डल को नियुक्त वा पदच्युत करने का अधिकार होता है वहां उत्तरदायित्व-पूर्ण शासन कहाता है।

इस रिपोर्ट में बताया गया है कि प्रदेशों में उत्तरोत्तर उत्तरदायित्वपूर्ण शासन साधन की ओर पद बढ़ाने चाहिये। यह स्कीम बनाने-वालों का दूसरा सिद्धान्त है। पहला सिद्धान्त यह है कि स्थानिक संस्थाओं में यथासम्भव पूर्ण लोकनियंत्रण और बाहरी नियंत्रण से सब से अधिक स्वाधीनता होनी चाहिये। इसका सम्बन्ध स्थानिक स्वराज्य से है और स्थानिक स्वराज्य पर सरकार का जो मन्तव्य प्रकाशित हो चुका है, उस पर हम भी अपना मत दे चुके हैं। इसलिए यहां दूसरे सिद्धान्त पर विचार करना चाहिये। इसी सिद्धान्त में कहा गया है कि कुछ उत्तरदायित्व तुरन्त दे देना चाहिये और हमारा उद्देश्य है कि अवस्था

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठीक होने पर पूरा उत्तरदायित्व दे दिया जाय। अब हमें देखना चाहिये कि क्या उत्तरदायित्व दिया गया है। प्रदेशों की व्यवस्थापिका सभा में निर्वाचित सदस्यों का बहुमत होगा, परन्तु शासकों का उत्तरदायित्व क्या होगा? शासक मण्डल में गवर्नर और दो मेम्बर होंगे। ये उसी प्रकार स्वेच्छाचारी होंगे, जैसे आज गवर्नर और उनकी कौंसिल के मेम्बर हैं। पर इनके सिवा एक या दो मंत्री होंगे जो गवर्नर समेत "ट्रैन्सफर्ड सब्जेक्टस" पर अधिकार रक्खेंगे। परन्तु प्रश्न है कि क्या ये व्यवस्थापिका सभा के सामने उत्तरदाता होंगे? क्या सभा इन्हें नियुक्त वा पदच्युत कर सकेगी? नहीं, ये भी व्यवस्थापिका सभा के मेम्बरों के सामने उत्तरदाता न होंगे। फिर उत्तरदायित्व कहां आया? व्यवस्थापिका सभा की आर्थिक स्वतंत्रता न होगी और वह इच्छानुसार कानून न पास कर सकेगी और उसके प्रस्तावों से सरकार बाध्य न रहेगी। जब यह अवस्था है, तब व्यवस्थापिका सभा में निर्वाचित सदस्यों का बहुमत होना न होना समान है। "ट्रैंसफर्ड" विषयों में तो इस सभा की बात माना भी जा सकती है पर 'रिज़र्वड" विषयों में यह आज की तरह चिल्लाती रह जायगी और सरकार की इच्छा ही सर्वोपरि रहेगी। यही नहीं, यदि व्यवस्थापिका सभा में कोई बिल पेश किया जायगा तो शासन सभा का कोई मेम्बर कह सकेगा कि यह रिजर्वड विषयों से सम्बन्ध रखता है! इसके बाद गवर्नर को अधिकार होगा कि यदि उन्होंने सार्टिफिकेट दे दिया कि इसका रिजर्वड विषयों से सम्बन्ध है तो वे या तो इसपर वादानुवाद ही न होने देंगे या या कहेंगे कि संशोधित बिल कौंसिल में पेश किया जाय अथवा कौंसिल के कहने पर बिल ग्रैंड कमिटी में विचारार्थ भेजा जाय। हम नहीं समझते कि इससे प्रादेशिक शासन में उत्तरदायित्व का प्रवेश हुआ। यदि नहीं हुआ है और जैसा हम दिखा चुके हैं सचमुच नहीं हुआ है तो २० अगस्त १९१७ की सूचना के अनुकूल यह स्कीम नहीं है।

प्रादेशिक शासन में उत्तरदायित्व का प्रवेश नहीं हुआ है यह हम ऊपर दिखा चुके हैं। अब देखना चाहिये कि भारत शासन में क्या हुआ है। रिपोर्ट के लेखकों का तीसरा सिद्धांत है कि भारत सरकार को पूर्ण रूप से पार्लामेंट के सामने उत्तरदाता रहना चाहिये और ऐसा उत्तरदायित्व रखते हुए आवश्यक विषय में उसका अधिकार तबतक असंदिग्ध रहना चाहिये जबतक प्रादेशिक परिवर्त्तनों के परिणाम का अनुभव हो।" इससे स्पष्ट है कि भारत सरकार को स्वेच्छाचारी रखने का ही भारत सचिव और वाइसराय का विचार है। इस लिए उसकी शासन व्यवस्था में उत्तरदायित्व के बीज खोजना व्यर्थ है; परन्तु जानना यह है कि आज की अपेक्षा भविष्यत् में भारत सरकार के विषय में हमारी अवस्था और भी बुरी तो न हो जायगी। वाइसराय की शासन सभा में आजकल ६ साधारण सदस्य हैं। कमाण्डर-इन-चीफ या प्रधान सेनापति असाधारण सदस्य हैं। अब इस स्कीम में प्रस्ताव किया गया है कि सदस्यों की संख्या का नियम न रक्खा जाय और एक की जगह दो हिन्दुस्तानी मेम्बर कर दिये जायँ। यदि आज की तरह सात ही मेम्बर रहें तो दो हिन्दुस्तानी और पांच अङ्गरेज़ होंगे। परन्तु मेम्बरों की संख्या बढ़ने से ये दो मेम्बर कुछ भी न कर सकेंगे। अब व्यवस्थापक मंडल की ओर देखते हैं तो एक के बदले दो सभाएं कर दी गई हैं। आजकल व्यवस्थापिका सभा में सरकारी मेम्बरों का आधिक्य है और सरकार उनके वोटों के बलपर जो चाहती है, करती है। पर अब प्रस्ताव हुआ है कि दो सभाएं हों। एक में दोतिहाई निर्वाचित और तिहाई मनोनीत [illegible] तथा दूसरी में मनोनीतों का प्रधा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धिक्य हो। प्रत्येक बिल दोनों सभाओं से पास हो। सरकार जो बिल पास करना चाहेगी वह कौंसिल आफ स्टेट वा राज्यसभा में पास करा लेगी और गवर्नर जेनरल सार्टिफिकेट दे देंगे कि "शान्ति व्यवस्था और सुशासन के लिए इसका पास होना आवश्यक" है, तो फिर इस में किसी प्रकार का परिवर्त्तन न हो सकेगा। आजकल सरकार कोई अप्रिय बिल पास करना चाहती है तो उसे व्यवस्थापिका सभा के ग़ैर-सरकारी सभासदों को भैया बाबू कहकर अपनी ओर मिलाना पड़ता है जिसमें वे विचार के सिद्धान्त का विरोध न करें और नियमों में संशोधन के प्रस्ताव भले ही करें। लार्ड मिण्टो ने १९१० में प्रेसएक्ट और लार्ड हार्डिञ्ज ने १९१५ में भारत-रक्षा कानून पास करते समय यही किया था और इसका फल यही हुआ था कि कानून के सिद्धान्त की समालोचना कौंसिल में नहीं हुई थी। पर राज्यसभा की स्थापना के बाद वाइसराय को किसी को भैया बाबू कहने की आवश्यकता न होगी। गवर्नर जनरल को आर्डिनेंस बनाने और भारत सरकार को रेगुलेशन बनाने के अधिकार पूर्ववत् रहेंगे। इस व्यवस्था से हमारा क्या लाभ हुआ? केवल गवर्नर जनरल और सरकार की स्वेच्छाचारिता बढ़ी। व्यवस्थापिका परिषद् और राज्यसभा के प्रस्तावों को मानना न मानना सरकार की इच्छा पर निर्भर रहेगा। गवर्नर जेनरल को दोनों सभाओं को तोड़ देने या विसर्जन करने का अधिकार होगा। इससे स्पष्ट है कि प्रादेशिक शासन में उत्तरदायित्व ने प्रवेश नहीं किया है और भारत शासन में हमारी अवस्था सुधारने के बदले बिगड़ गई है। इस प्रकार २० अगस्त १९१७ की सूचना के अनुसार यह स्कीम नहीं बनी है, इसलिए अग्राह्य है।

अब हम इसी बात पर विचार करना चाहते हैं कि हमारे देशवासियों की आकांक्षा उससे कहाँ तक पूरी होती है। कांग्रेस लीग स्कीम गत डेढ़ वर्ष से राष्ट्र की कम से कम मांग बताई गई है, इसलिए उस स्कीम के आधारभूत सिद्धान्तों पर हमें विचार कर देखना चाहिये कि वे इस स्कीम में हैं या नहीं और यदि इसमें हों तो हमें इसे स्वीकार कर लेना चाहिये, चाहे यह २० अगस्त की सूचना के अनुकूल हो या प्रतिकूल। कांग्रेस लीग स्कीम में मुख्य तीन बातें हैं (१) व्यवस्थापक मण्डली में निर्वाचित सदस्यों का यथेष्ट मताधिक्य (२) शासक मण्डल का व्यवस्थापक मण्डल के अधीन होना, और (३) व्यवस्थापक मण्डल द्वारा कानून और अर्थ का नियंत्रण। भारत सरकार के विषय में इनका विचार न करके केवल प्रादेशिक व्यवस्था को ही हम इस कसौटी पर कसते हैं। प्रादेशिक व्यवस्थापिका सभा में कांग्रेस लीग स्कीम के अनुसार फी सैकड़े ८० निर्वाचित सभासद होने चाहिये। मांटेगू चेम्सफोर्ड स्कीम निर्वाचितों का यथेष्ट मताधिक्य तो स्वीकार करती है किन्तु किस प्रदेश के सभा में कितने निर्वाचित सदस्य रहेंगे यह पीछे मालूम होगा। पर अनुमान है कि कहीं दो तिहाई से कम निर्वाचित सदस्य न रहेंगे। इस प्रकार हमारी एक बात प्रायः स्वीकार कर ली गई है।

दूसरी बात है शासक मण्डल का व्यवस्थापक मंडल के अधीन रहना। इस विषय में जो व्यवस्था मांटेगू चेम्सफोर्ड स्कीम में है, उससे शासक मण्डल आज का तरह सर्वतंत्र स्वतंत्र ही रहेगा। जो प्रस्ताव व्यवस्थापक मण्डल पास करेगा, उन्हें काम में लाना न लाना शासक मण्डल की इच्छा पर निर्भर होगा। गवर्नर और शासन सभा ही नहीं व्यवस्थापिका सभा के निर्वाचित सदस्यों से जो मंत्री गवर्नर नियुक्त करेंगे, वे भी स्वतंत्र रहेंगे। व्यवस्थापिका सभा उन पर भी कोई प्रभुत्व न दिखा सकेगी। ब्रिटेन में जब कामन्स सभा का कोई मेम्बर मंत्रिमण्डल का सदस्य नियुक्त किया जाता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

पुस्तकालय गुरुकुल कांगड़ी
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तब वह अपने निर्वाचकों के पास जाता और कहता है कि मुझे फिर अपना प्रतिनिधि निर्वाचित कीजिये। यदि वह निर्वाचित हो जाता है तो फिर मंत्रीमण्डल और कामन्स सभा का सदस्य नियुक्त होता है अन्यथा नहीं। क्या प्रदेशों में मंत्री की नियुक्ति के बाद इसे फिर निर्वाचकों के पास जाना होगा ? यदि हां, तो इस निर्वाचन से पता लग जायगा कि उसपर लोगों का कितना विश्वास है। यदि नहीं, तो लोग इसके विषय में कुछ न जान सकेंगे। इस प्रकार न तो शासन सभा के मेम्बर और न गवर्नर के मंत्री ही व्यवस्थापिका सभा के अधीन होंगे। इसके सिवा गवर्नर को अधिकार होगा कि अपने सीनियर अफसरों को गवर्नमेंट का अङ्ग बनाकर उनसे परामर्श और सम्मति लिया करें। इन सब बातों से स्पष्ट है कि शासन कार्य में दो तीन भारतवासियों का होना भी कुछ महत्व नहीं रखता। जब सरकार को अपने मेम्बर बढ़ाने का ऐसा अधिकार दिया गया है तो ऐसी अवस्था में शासन सभा को व्यवस्थापिका सभा के अधीन देखने की आशा दुराशामात्र है।

तीसरी बात है कि व्यवस्थापिका सभा अर्थ का नियन्त्रण करे। अवश्य ही ट्रैन्सफर्ड सब्जेक्ट्स वा हस्तान्तरित विषयों की अर्थ व्यवस्था करने का व्यवस्थापिका सभा को पूरा अधिकार रहेगा और यह हम मानते हैं कि वर्त्तमान व्यवस्था से यह बात अच्छी है पर उत्तरदायित्वपूर्ण शासन का इससे कोई सम्बन्ध नहीं है, इसलिए इसकी अच्छाई या बुराई की परीक्षा इससे उत्तरदायित्वपूर्ण शासन की तुलना करने से ही हो सकती है। रिज़र्व्ड सब्जेक्ट्स वा रक्षित विषयों के सम्बन्ध में सभा को गवर्नर का निश्चय शिरोधार्य मानना पड़ेगा। मान लीजिये कि सरकार पुलिस का खर्च बढ़ाना चाहती है। लोक सभा वा व्यवस्थापिका सभा कहती है कि पुलिस का खर्च यदि घटाया न जाय तो बढ़ाया भी न जाय। सरकार ने सभा में बजट पेश किया। सभा ने खर्च की यह मद नामंजूर की। अब क्या हो ? गवर्नर साहब झट लिख देंगे कि प्रदेश की शान्ति और सुव्यवस्था के लिए यह खर्च बढ़ाना आवश्यक है अथवा रक्षित विषयों का हमारा जो उत्तरदायित्व है उसका पालन इसके बिना नहीं हो सकता। बस, व्यवस्थापिका सभा को मौन साध लेने के सिवा कोई उपाय ही न रह जायगा। इन बातों से सिद्ध है कि आर्थिक विषयों का नियन्त्रण व्यवस्थापिका सभा नहीं कर सकती और कुछ मदों के सम्बन्ध में मन्त्री के अधीन होने पर भी सरकार जो खर्च चाहेगी कर सकेगी।

कानून बनाने की स्वतंत्रता भी व्यवस्थापिका सभा की न होगी क्योंकि एक ग्रैंड कमेटी इसकी सौत होगी। व्यवस्थापिका सभा के सङ्गठन में जो उदारता दिखाई गई है, ग्रैंड कमेटी बनाकर उसपर पानी फेर दिया गया है। जिस प्रकार अर्थ व्यवस्था के विषय में प्रादेशिक सरकार स्वतंत्र रहेगी, उसी प्रकार वह जो कानून चाहेगी, पास कर सकेगी। सब विषयों के कानून व्यवस्थापिका सभा पास करेगी, पर यदि सरकार कोई बिल पेश करेगी और सभा उसे या उसके किसी अंश को न पास करेगी, तो गवर्नर साहब सार्टिफिकेट देदेंगे कि "शान्ति और सुव्यवस्था के लिए इसका पास होना आवश्यक" है। फिर यह बिल सर्टिफिकेट समेत गज़ट में प्रकाशित करदिया जायगा। अनन्तर यह व्यवस्थापिका सभा में पेश होगा और इसके सिद्धान्तों पर विचार होगा और फिर ग्रैंड कमेटी में भेज दिया जायगा। ग्रैंड कमेटी में ४०।५० मेम्बर होंगे और मनोनीत मेम्बरों का बहुमत होगा। ग्रैंड कमेटी का पास किया बिल कौंसिल में फिर पेश होगा और बिना किसी परिवर्त्तन के निर्दिष्ट समय में पास किया जायगा।

111168
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रैंड कमेटी में भेजे जाने के पहले कौंसिल कह सकती है कि यह बिल भारत सरकार को भेज दिया जाय और उसके कहने पर निश्चय होगा कि सरकार के आधीन विषयों से इसका सम्बन्ध है या नहीं और गवर्नर ने जो सार्टिफिकेट दिया है वह ठीक है या नहीं। अब इन बातों से पाठकों को समझ में आ गया होगा कि हम जो अधिकार चाहते थे, उनमें हमें केवल एक मिला है। पर कौंसिल में निर्वाचित सभासदों का मताधिक्य व्यर्थ है यदि उसे कोई यथार्थ अधिकार नहीं है। हम जिन सिद्धान्तों के लिए झगड़ रहे थे, वे इस रिपोर्ट में स्वीकार नहीं किये गये हैं और इसलिए यह रिपोर्ट वर्त्तमान स्वरूप में किसी प्रकार ग्राह्य नहीं है।

इस स्कीम में कांग्रेस-लीग स्कीम का यह प्रस्ताव मान लिया गया है कि भारत-सचिव का वेतन ब्रिटिश खजाने से दिया जाय। चार वर्ष पहले यदि ब्रिटिश सरकार ऐसा निश्चय प्रकट करती, तो उसके जय जयकार से भारत गूंज उठता। आज उसका कोई महत्व नहीं है यह बात नहीं, पर जब भारतवासी उत्तरदायित्व पूर्ण शासन की ओर अग्रसर होने के लिए सरकार से वे निश्चित पद बढ़ाने कहते हैं तब केवल इसी बात से सन्तुष्ट नहीं हो सकते। दूसरी सन्तोषजनक व्यवस्था यह है कि भारतीय विषयों पर विचार करने के लिए कामन्स सभा के मेम्बरों की एक सिलेक्ट कमिटी होगी। पर इसके सदस्यों के निर्वाचन पर बहुत कुछ निर्भर है। भारतवासियों को सरकारी नौकरियां देने के नियमों में यदि जाति-सम्बन्धी कोई बाधा होगी तो दूर कर दी जायगी। इस बात से जान पड़ता है कि रिपोर्ट के लेखकों को पता नहीं है कि नियुक्ति में जाति-सम्बन्धी बाधाएँ हैं, पर उन्होंने दूसरों से सुन सुनाकर यह लिख दिया है। इङ्गलैंड के सिवा भारत में भी सब सरकारी पदों के लिए नियुक्तपद्धति तैयार की जायगी। फी सैकड़े कितने आदमी वहां नियुक्त किये जायँगे इसका भी निश्चय किया जायगा। सिविल सर्विस में फी सैकड़े ३३ उच्चपद भारतवासियों को दिये जायँगे और प्रति वर्ष १॥ फी सैकड़े के हिसाब से इसमें वृद्धि होती जायगी। राज्य-सेवकों में भारतीयों की वृद्धि जिस ढङ्ग से करने का प्रस्ताव किया गया है उसके लिए हम रिपोर्ट के लेखकों की न प्रशंसा कर सकते हैं और न धन्यवाद दे सकते हैं। जिस समय देश के लोगों को उत्तरदायित्वपूर्ण शासन की ओर ले चलने का विचार किया जाता हो, उस समय इस प्रकार भारतीयों को उच्चपद देने का प्रस्ताव किया जाय तो उससे कौन प्रसन्न हो सकता है? इसलिङ्गटन कमीशन ने सिविल सर्विस में चौथाई पद भारतवासियों को देने का प्रस्ताव किया था, पर बड़ी व्यवस्थापिका सभा में भारतवासियों ने आधे पद मांगे थे। इस रिपोर्ट में तिहाई देने का प्रस्ताव है। भारतवासियों की योग्यता और अधिकारों का विचार नहीं किया गया, केवल इस दृष्टि से यह व्यवस्था की गई है कि अधिकारीवर्ग से कितना अधिकार छुड़ाया जा सकता है।

यह स्कीम भारतवासियों की अयोग्यता और उन्हें सन्तुष्ट करने के लिए कुछ कर देने के आधार पर बनाई गई है। संसार में जितने शासन-यंत्र या सरकारें हैं, देश में शान्ति और सुव्यवस्था रखना उनका प्रथम कर्तव्य होता है। यदि कोई सरकार यह काम नहीं कर सकती तो उसकी आवश्यकता नहीं है। इस स्कीम में भारतवासी इस कार्य के अयोग्य समझे गये हैं, क्योंकि शान्ति और सुव्यवस्था रखना गवर्नर और उनकी शासन सभा का काम बताया गया है। मंत्री वा मंत्रियों को इसके लिए कष्ट न दिया जायगा। भारत सरकार में किसी प्रकार के सुधार की व्यवस्था नहीं की गई है। जो भारतवासी शिक्षा, स्वास्थ्य, सड़कों और इमारतों का प्रबन्ध कर सकते हैं, वे नमक, स्टाम्प, कस्टम्स और नहरों का क्यों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न कर सकेंगे यह बात इस रिपोर्ट में नहीं बताई गई है। भारतवासियों की अयोग्यता का प्रश्न यहां नहीं उठता, क्योंकि यदि भारतवासी इन विषयों की व्यवस्था नहीं कर सकते, तो प्रदेशों के उन विषयों की भी नहीं कर सकते जिन्हें मंत्रियों को सौंपने का विचार हो रहा है। कहा जाता है कि भारत सरकार नौकरशाही का गढ़ है, इसलिए उसमें किसी तरह का परिवर्तन न किया जायगा। यदि भारत सरकार में परिवर्तन न होगा और उसके अधिकार बढ़ेंगे जैसा इस स्कीम से स्पष्ट हो रहा है तो थोड़ासा लालच देकर सरकार के अधिकार बढ़ा लिये जायँगे। ऐसी अवस्था में इस रिपोर्ट को यदि हम इसी रूप में स्वीकार कर लेंगे तो देश की और अपनी बड़ी हानि कर लेंगे। शासनपद्धति को ठीक कराने का इस समय जैसा सुयोग आया है, फिर सौ वर्ष तक न आवेगा। इसीसे कहते हैं कि अभी अपनी बात पर डटे रहने से बहुत कुछ उद्देश्यसिद्धि हो सकेगी।

कुछ लोग समझते हैं कि हमारे आन्दोलन के कारण हमको प्रस्तावित शासनपद्धति मिल रही है, पर हम यह नहीं समझते। हमारा अनुमान है कि अमेरिका और रूस जर्मनी के कारण भारत को सन्तुष्ट करने की चेष्टा हो रही है। इङ्गलैंड ने स्वभाग्य-निर्णय के जिस सिद्धान्त की उद्भावना जर्मनी के अफ्रिकन उपनिवेशों के लिए की थी, उसे अमेरिका ने संसार के छोटे बड़े राष्ट्रों के लिए स्वीकार किया है। अब यदि इङ्गलैंड, आयलैंड, भारत और मिश्र के सम्बन्ध में इस सिद्धान्त का प्रयोग नहीं करता, तो अमेरिका समझेगा कि इङ्गलैंड दूसरे को ही उपदेश देना जानता है, उसके अनुसार आप चलना नहीं चाहता। जब कारलैंड, लिवोनिया आदि रूसी प्रदेशों को जर्मनी अपने में मिलाने के अभिप्राय से कहता था कि ये अपने भाग्य का निर्णय करेंगे, तब इङ्गलैंड के मंत्रियों ने कहा था कि जिस समय ये प्रदेश अपने भविष्य का निर्णय करते हो, उस समय वहां जर्मन सेना न रहनी चाहिये। जर्मन राष्ट्र सभा रीख्सटाग में प्रोग्रेसिव दल के नेता हर फिशवीक ने पूछा था "क्या ब्रिटेन भारत को स्वभाग्य-निर्णय का अधिकार देने को तैयार है जो वह अरब, अर्मेनिया और जर्मन उपनिवेशों को दिलाया चाहता है?" साम्यवादी हर शीडमैन ने मिश्र और आयलैंड के विषय में यही प्रश्न किया था। कन्सरवेटिव नेता काउंट वेस्टार्प ने तो यहां तक कहा था कि लोग जब स्वभाग्य-निर्णय पर मत दे रहे हों, तब भारत से ब्रिटिश सैनिक हटा लिये जायँ। ट्रोजकी ने लंदन "डेली न्यूज" के संवाददाता मि० रैन्सम से कहा ही था कि "यदि हम तर्कानुसार चलते तो अब भारत, मिश्र और आयलैंड के लिए इङ्गलैंड से युद्ध घोषणा करते।" इन सब बातों का ब्रिटिश सरकार पर प्रभाव नहीं पड़ा है और यह रिपोर्ट उसका फल नहीं है यह कहने को हम तैयार नहीं हैं। हमारी धारणा यही है कि शान्ति परिषद् में अपना पक्ष पुष्ट करने के लिए ही इस रिपोर्ट की रचना हुई है और इसका समर्थन कराया जा रहा है।

मांटेगू चेम्सफोर्ड रिपोर्ट में कांग्रेस लीग स्कीम की जो टीका की गई है और जिससे यह स्कीम उत्तरदायित्वपूर्ण शासन के प्रतिकूल बताई गई है, उसपर विचार कर देखने की आवश्यकता है कि वह कहां तक ठीक है। सब से पहले इस बात पर ध्यान देना चाहिये कि कांग्रेस लीग स्कीम में ऐसे शासन-मण्डलों की व्यवस्था है, जिनका आधा भाग लोकनिर्वाचित हो और आधा वाइसराय या गवर्नर जेनरल द्वारा नियुक्त किया जाय। शासकमण्डल में सिविल सर्विस वा किसी दूसरी स्थायी सर्विस के लोग न रक्खे जायँ। इस व्यवस्था से शासकमण्डल उत्तरदायित्वपूर्ण नहीं होगा अर्थात् व्यवस्थापिका सभा के विरुद्ध मत प्रकट करने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर वह पदत्याग नहीं करेगा। वह अमेरिकन शासनपद्धति के अनुकरण पर होगा जो कांग्रेस के प्रतिकूल मत पर पदत्याग करने को बाध्य नहीं है।

भारत-सचिव और वाइसराय ने अपनी रिपोर्ट में भारतवासियों को कुछ दिया या नहीं दिया, परन्तु दो बातें की हैं। एक तो पद पद पर भारतवासियों की अनुभवशून्यता और अयोग्यता की बात कही है और दूसरी बात यह स्पष्ट कर दी है कि बिना स्वराज्य वा उत्तर-दायित्वपूर्ण शासन के भारत का निस्तार नहीं है। सच पूछिये तो भारत के लिए स्वराज्य की आवश्यकता का प्रतिपादन जैसा इस रिपोर्ट में किया गया है, वैसा अन्यत्र कहीं देखने में नहीं आता। इन्हीं दोनों बातों के कारण रिपोर्ट के लेखक ऐसी सुधार स्कीम नहीं तैयार कर सके जिसे देखकर भारतवासी प्रसन्न हो जाते। अपनी पहली बात से उन्होंने भारतीय स्वराज्य के विरोधियों को प्रसन्न करने की चेष्टा की और दूसरी बात से स्वराज्यवादियों को, पर सब को सन्तुष्ट करने का कोई उपाय नहीं है और इसलिए मि० मांटेगू और लार्ड चेम्सफोर्ड किसी को सन्तुष्ट न कर सके। हमारे माडरेट नेता और उनके अनुयायी इस स्कीम को "पतली पथ स्वादिली" कह रहे हैं; पर यदि इस स्कीम के अनुसार कार्य हुआ, तो उन्हें उसी तरह पछताना पड़ेगा जिस प्रकार मार्ले मिंटो सुधारों को स्वीकार करने के बाद पछताना पड़ा था। जिन सुधारों की इन्होंने उस समय बड़ी प्रशंसा की थी, आज मांटेगू-चेम्सफोर्ड रिपोर्ट में बताया गया है कि वे सच्चे सुधार नहीं थे। यदि यह स्कीम स्वीकार कर ली जायगी, तो कौन जानता है कि कई वर्ष के बाद ऐसी ही कोई रिपोर्ट यदि निकलेगी तो उसमें न कहा जायगा कि मांटेगू-चेम्सफोर्ड स्कीम में सच्चे सुधारों के बीज न थे जिनसे स्वराज्य वा उत्तरदायित्वपूर्ण शासन का वृक्ष उत्पन्न होता?

(भारत मित्र।)

मांटेगू-चेम्सफ़ोर्ड सुधार-स्कीम।

हमारी दृष्टि में मिस्टर मांटेगू और लार्ड चेम्सफोर्ड के सुधार नेकनीयती पर निर्भर हैं और यदि उन पर अमल किया गया तो वे सामान्यतः

देश की उन्नति

के कारण होंगे। हमारे वर्तमान अधिकारों में तो उनकी बदौलत वृद्धि हो ही जायगी, परन्तु हमारे सामने इससे भी अधिक विचारणीय बात यह है कि ये सुधार हमारे हाथ बतौर हथियारों के होंगे, जिनके द्वारा हम गवर्नमेन्ट पर शीघ्र ही पूरा प्रभाव जमा सकेंगे। किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि सुधार-स्कीम में कुछ

दोष और त्रुटियां

हैं, जिनको दूर करना आवश्यक है। जब तक उनका संशोधन न होगा, तब तक हमें पूर्णतया सन्तोष नहीं हो सकता, और न हम पूर्ण उत्साह के साथ उनसे सहमत हो सकते हैं।

परन्तु सुधार-स्कीम में क्या सुधार होने चाहिये यह बात बताने के पहिले हमको सोचना चाहिये कि हमारी तजवीज़ें किस सिद्धांत पर निर्भर होनी चाहिये। इस बात का प्रयत्न करना कि वर्तमान सुधार-योजना को रद्द करके दूसरी योजना फिर नये सिर से तैयार की जाय, व्यर्थ है। इसी तरह ऐसे संशोधनों का उपस्थित करना, जो सुधार-योजना के रूप ही को नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बल्कि मूल ही को बदल दें, बेफ़ायदा है। हमें सफलता की आशा उसी दशा में हो सकती है, जब हम ऐसे परिवर्तन कराने की चेष्टा करें, जिनसे हमारे अधिकार बढ़ जायँ, परन्तु योजना की नींव क़ायम रहे। अतएव हमको यह सोचना चाहिये कि यह योजना किस सिद्धान्त पर स्थिर की गई है। हमारी समझ में वह सिद्धान्त यह है कि गवर्नमेंट के मुहकमे दो विभागों में विभाजित किये जायँ जिनमें से एक विभाग प्रजा के प्रतिनिधियों को सौंपा जाय, जिससे भविष्य में धीरे धीरे दायित्वपूर्ण शासन प्राप्त हो सके। इस बाट चैंट के लिए प्रथम तो यह पूछना आवश्यक है कि वे कौन से मुहकमे हैं, जो प्रान्तीय गवर्नमेंटों को सौंपने चाहिये, और जिनसे भारतीय गवर्नमेंट का कोई सम्बन्ध न रहना चाहिये। दूसरे यह निश्चित करना चाहिये कि इन मुहकमों में से कौन से मुहकमे

मंत्रियों के अधिकार

में दिये जायँ। इस मामले को तय करने के लिए एक कमेटी नियत की जायगी, जिसका सभापति एक अंगरेज़ होगा, और वह इङ्गलैंड से चुना जायगा। इसके सिवा इस कमेटी में चार सदस्य और रहेंगे जिनमें से दो हिन्दुस्तानी होंगे। यद्यपि इस बात का फ़ैसला उस समय तक मुलतवी रहेगा, जब तक कमेटी अपनी रिपोर्ट गवर्नमेन्ट के सामने उपस्थित न करे, तथापि मिस्टर मांटेगू और लार्ड चेम्सफ़ोर्ड ने अपनी रिपोर्ट में उदाहरण के रूप में जो दो नोट सम्मिलित किये हैं, उनसे पता चलता है कि उनकी राय में किन मुहकमों पर गवर्नमेंट का अधिकार होना चाहिये और किन मुहकमों पर प्रजा के प्रतिनिधियों का। जो मुहकमे गवर्नमेन्ट के हाथ में रहेंगे, हम उनको 'रक्षित' कहेंगे और जो प्रजा को सौंपे जायँगे, वे 'हस्तान्तरित' कहे जायँगे। उस विभाग में, जो रक्षित नहीं है, अन्य बातों के अतिरिक्त ये बातें सम्मिलित की गई हैं—टैक्स लगाना, म्युनिसिपैलिटियों और डिस्ट्रिक्ट बोर्डों का प्रबन्ध करना, प्रारम्भिक शिक्षा, हाई स्कूल एवं उद्योग तथा शिल्प के स्कूल खोलना, अस्पताल और सफाई, आबकारी, खेती और सहयोग-समितियाँ। इससे यह ज्ञात होता है कि

पुलीस

पर प्रान्तीय गवर्नमेंट ही का अधिकार रहेगा। दीवानी और फ़ौजदारी अदालतें भी रक्षित विभाग में सम्मिलित होंगी। ज़िले के हाकिमों की नियुक्ति तथा विश्वविद्यालयों की शिक्षा भी गवर्नमेन्ट ही के हाथ में रहेगी। मिस्टर मांटेगू और लार्ड चेम्सफ़ोर्ड ने रिपोर्ट में यह लिखा है कि कमेटी को चाहिये कि वह ऐसे मुहकमे मंत्रियों के सुपुर्द करे, जिनका प्रबन्ध वे अच्छी तरह कर सकें; जिनमें उन्हें दिलचस्पी है, जिनका उन्हें पूर्णतया अनुभव है, और जो इस तरह के नहीं हैं, जिनके प्रबन्ध में यदि कोई भूल हो जाय तो सारे प्रांत पर उनका बुरा प्रभाव पड़े। इसके प्रतिकूल जिन मुहकमों का कार्य सुख शान्ति को स्थापित रखना है, और प्रजा की भलाई से जिनका घनिष्ठ सम्बन्ध है, जैसे पुलीस और

मालगुज़ारी,

वे गवर्नमेंट के हाथ में रहने चाहिये।

हमारी राय में जो विभाग गवर्नमेंट हमारे सुपुर्द करना चाहती है, वे महत्व के हैं, परन्तु काफ़ी नहीं हैं। कुछ अख़बारों ने यह लिखा है कि गवर्नमेंट को कांग्रेस लीग की सुधार-योजना स्वीकार करके सारे मुहकमे हमारे अधिकार में देने चाहिये, और कुछ ने यह लिखा है कि हम इसके विरोधी नहीं हैं कि मुहकमे दो विभागों में विभाजित किये जायँ; परन्तु यदि अदालतों पर तथा पुलीस और मालगुज़ारी पर हमारा अधिकार न हुआ तो हमारे स्वत्व केवल नाममात्र के होंगे। हमारी समझ में ये दोनों बातें उस सिद्धान्त के विरुद्ध हैं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसका हम पहिले से उल्लेख कर चुके हैं। यदि सभी विभाग हमको दे दिये जायँ, तो गवर्नमेंट को कुछ भी अधिकार न रहेगा, और हमको दायित्वपूर्ण शासन तत्काल ही प्राप्त हो जायगा। इस तरह की दलील वास्तव में सुधार-योजना को रद्द करने के समान है। इसी प्रकार पुलीस और अदालतों पर अधिकार चाहना

सुधार-योजना की जड़

को काटना है। गवर्नमेंट का सब से पहिला काम शान्ति-रक्षा है। जिस गवर्नमेंट के हाथ में यह शक्ति नहीं, उसकी क्या वक़त हो सकती है। सारे प्रान्त के कामों का दारोमदार इन्हीं विभागों पर है। यदि ये हमारे हाथ में आ जायँ तो मुहकमों को विभाजित करने की क्या आवश्यकता रह जायगी? संसार में कोई बात असम्भव नहीं। सम्भव है कि यदि देश में

शक्ति और साहस

हो तो कांग्रेस-लीग की सुधार-योजना से भी अधिक अधिकार वह गवर्नमेंट से ले ले, परन्तु वर्तमान में हमें इसकी कोई सूरत नहीं दिखाई देती। जब हम अपने विरोधियों की शक्ति का अनुमान करते और फिर अपनी ओर देखते हैं, तो हमें यह कहना पड़ता है कि प्रान्तों में तत्काल ही पूर्ण दायित्वपूर्ण शासन प्राप्त करना सर्वथा व्यर्थ है। बुद्धिमत्ता की बात तो यह है कि हम घटनाओं को आंखें खोलकर देखें और व्यवहारिक नीति और दूरदर्शिता से काम लें। हमारे विचार में समय के अनुसार यही उचित है कि हम इस बात को स्वीकार कर लें कि सरकारी मुहकमे दो विभागों में विभाजित होने चाहिये और पुलीस तथा मालगुज़ारी के विभाग फिलहाल 'रक्षित' विभागों में सम्मिलित किये जायँ। परन्तु विश्वविद्यालयों की शिक्षा और मालगुज़ारी ऐसी चीज़ें नहीं हैं, जिनपर देश को उन्नति का दारोमदार है। यदि कालेजों की शिक्षा हमारे हाथ में हो तो हम अपने नवयुवकों को ऐसी शिक्षा दे सकते हैं, जिससे उनके हृदय में जाति की

सेवा का उत्साह

उत्पन्न हो, और वे सच्चे देशभक्त बन सकें। हम अपने देश की दशा और आवश्यकता को देख कर शिक्षा में परिवर्तन कर सकेंगे, अपने शूरवीरों के इतिहास अपने नवयुवकों को पढ़ा सकेंगे, और हर तरह से इस बात को ध्यान में रख सकेंगे कि कालेजों में ऐसी शिक्षा दी जाय, जिससे देश की सच्ची उन्नति हो। शिक्षा में हमें दूसरों के अधीन कदापि न रहना चाहिये। मालगुज़ारी का मुहकमा भी शिक्षा के विभाग से कुछ कम नहीं है, और इसके सम्बन्ध में हम अपनी सम्मति अगले अङ्क में प्रकाशित करेंगे।

हम यह लिख चुके हैं कि शिक्षा हमारे अधिकार में क्यों होनी चाहिये। अब हम यह बतायेंगे कि किस कारण से मालगुज़ारी भी उन विभागों में होनी चाहिये, जो प्रजा के प्रतिनिधियों के हाथ में दिये जानेवाले हैं। मिस्टर मांटेगू और लार्ड चेम्सफ़ोर्ड यह कहते हैं कि मालगुज़ारी का मुहक़मा ऐसा है, जिसमें यदि कोई भूल हो जाय तो सारे प्रान्त पर उसका बुरा प्रभाव पड़ेगा इसलिए यह मुहकमा गवर्नमेंट ही के हाथ में रहना चाहिये, हमारी दृष्टि में यह दलील निहायत कमज़ोर है।

सदा यह क्यों ख़याल किया जाता है कि यदि हमको पूरा पूरा अधिकार प्राप्त हो तो हम ऐसे क़ानून बनायेंगे, जिनसे किसानों को हानि पहुंचेगी? यदि कोई व्यक्ति उन वक्तृताओं को पढ़े, जो साधारण सभाओं और कान्फरेन्सों में दी जाती हैं, तो उसको ज्ञात हो जायगा कि किसानों के सम्बन्ध में हमारे विचार क्या हैं, और हम उनको अपना भाई समझते हैं या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुलाम। कांग्रेस के प्रस्तावों को देखिये, उनमें ऐसे प्रस्तावों की पर्याप्त संख्या मिलेगी, जिनका सम्बन्ध किसानों की भलाई से है। लार्ड चेम्सफ़ोर्ड और मिस्टर मांटेगू ने स्वयम् इस बात को स्वीकार किया है, और अपनी रिपोर्ट में उन्होंने लिखा है कि शिक्षित भारतीय दिन व दिन ऐसे ऐसे कामों की ओर ध्यान देने लगे हैं, जिनसे प्रजा को सहायता मिले। फिर क्या कारण है कि हम पर विश्वास नहीं किया जाता, और

मालगुज़ारी का मुहकमा

हमारे हाथ में नहीं दिया जाता? हम यह मानने के लिए तैयार हैं कि प्रजा और कृषक-समुदाय के लाभों में कभी कभी अन्तर होता है, और जमींदार, जो कौंसिलों के मेम्बर होंगे, सम्भव है कि अपने लाभ के लिए अपनी शक्ति का यथाशक्ति उपयोग करें; परन्तु कौंसिल के सब मेम्बर ज़मींदार न होंगे।

यों तो हर एक देश में आपस में थोड़ा बहुत अन्तर पाया जाता है। यदि इस देश में अन्य देशों की अपेक्षा यह अन्तर अधिक भी हो, तो हम कदापि यह मानने के लिए तैयार नहीं हैं कि सरकारी हाकिम हमारी अपेक्षा

किसानों के स्वत्वों

की अधिक सहानुभूति से रक्षा कर सकते हैं। आजकल मालगुज़ारी का बढ़ाना सरकारी हाकिमों के हाथ में है। छोटे से छोटे टैक्स भी अलग लगाया जाय तो उसके लिए व्यवस्थापक कौंसिल में बिल पेश किया जाता है, और प्रजा के प्रतिनिधियों को इस बात का अवसर मिलता है कि वे उसके सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट करें। मालगुज़ारी बढ़ाकर सरकार प्रजा से लाखों बल्कि करोड़ों रुपये ले सकती है, परन्तु उसके बारे में न तो कोई बिल पेश किया जाता है, और न किसी तरह से हमारी अनुमति ही ली जाती है। हम कई वर्षों से कह रहे हैं कि यह ढंग अनुचित है, और बिना कौंसिलों की आज्ञा के मालगुज़ारी बढ़ाना उचित नहीं है परन्तु सरकार ने इसको अभी तक स्वीकार नहीं किया है।

इसी तरह प्रारंभिक शिक्षा को लीजिये। हम चाहते हैं कि शिक्षा पर जी खोलकर रुपया खर्च किया जाय, जिससे हमारे यहां के लोग भी वैसे ही उन्नति कर सकें, जैसी अन्य देशवासियों ने की है। किन्तु गवर्नमेंट ने अभी तक इसपर पूर्ण रीति से ध्यान नहीं दिया, और जब रुपये की कमी पड़ती है तो प्रायः शिक्षा ही की मद में से सब से पहिले रुपया निकाल लिया जाता है। ऐसी दशा में सरकार का यह कहना कि वह हमारी अपेक्षा

किसानों के कल्याण

का अधिक ख़याल रखती है, भ्रान्तिपूर्ण है।

संभव है, सरकार का यह विचार हो कि यदि हम मालगुज़ारी का मुहकमा प्रजा के सुपुर्द कर दें तो कौंसिलें तत्काल ही मालगुज़ारी घटा देंगी, और खर्च के लिए काफ़ी रुपया न रहेगा। परन्तु ख़र्च के लिए काफ़ी रुपया हो या न हो, सरकार को रक्षित विभागों के लिए प्रत्येक दशा में काफ़ी रुपया न मिल जायगा, क्योंकि मिस्टर मांटेगू और लार्ड चेम्सफ़ोर्ड की तजवीज़ों के अनुसार वार्षिक बजट तैयार करने के समय सरकार अपने विभागों के लिए पहिले रुपया ले लेगी, और जो कुछ बचेगा वह मंत्रियों को दिया जायगा। अतएव यदि रुपये की कमी भी हो तो सरकार पर उसका कुछ प्रभाव न पड़ेगा। यदि मंत्री मालगुज़ारी कम कर दें, जिससे रुपये की कमी हो जाय तो इसकी ज़िम्मेदारी उन्हीं के सिर पर होगी, और उन्हीं को अपने मुहकमों का ख़र्च चलाने के लिए कोई टैक्स लगाना पड़ेगा। सरकार पर इसका कुछ भी उत्तरदायित्व न होगा। इसलिए उसको मालगुज़ारी का मुह-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमा हमारे सुपुर्द करने में कुछ भी आनाकानी न होनी चाहिये।

इसके अतिरिक्त हम यह चाहते हैं कि मालगुज़ारी का मुहकमा चाहे सरकार के हाथ में रहे, चाहे मंत्रियों के भविष्य में मालगुज़ारी उसी तरह बढ़ाई जाय, जिस तरह टैक्स बढ़ाये जाते हैं, अर्थात् कौंसिल में बिल पेश किया जाय, और

प्रजा के प्रतिनिधियों को

उस पर राय देने का अवसर दिया जाय। हम ऊपर लिख चुके हैं कि लार्ड चेम्सफ़ोर्ड और मि० मांटेगू की तजवीज के अनुसार बजट तैयार करने के समय सरकार पहिले रक्षित विभागों के रुपये लेलेगी, और जो कुछ रुपया बचेगा वही सिर्फ़ हस्तान्तरित विभागों पर व्यय किया जायगा। यदि यह रुपया उन विभागों के लिए पूरा न पड़े तो मंत्री अपनी आवश्यकता के अनुसार नया टैक्स लगायेंगे। हमारी दृष्टि में यह ढंग सर्वथा अनुचित है। इससे सरकार को यह अवसर प्राप्त होगा कि वह मनमाना रुपया ले ले और टैक्स लगाने की बदनामी मंत्रियों को उठानी पड़ेगी। सरकार और मंत्रियों की सम्मति में प्रायः अन्तर रहेगा अतएव इस दोष को दूर करने का सब से अच्छा ढंग यह ज्ञात होता है कि रक्षित विभागों में जो विषय सम्मिलित किये जायँ, उनके सम्बन्ध में यह मालूम किया जाय कि पिछले पांच दस साल में प्रतिवर्ष उनपर कितना रुपया ख़र्च होता रहा है। जब हमें यह रक़म मालूम हो जाय तो उससे हम यह अनुमान कर सकते हैं कि भविष्य में उनके लिए कितने रुपयों की ज़रूरत होगी। इसके अनुसार जितने रुपये की आवश्यकता हो, उसकी संख्या पहिले से नियत कर बाक़ी रुपया मंत्रियों को दे दिया जाय। यदि ऐसा प्रबन्ध किया जाय तो रक्षित और हस्तान्तरित विभागों में आसानी से रुपया बट जायगा। इससे किसी को यह सन्देह न होगा कि रुपये को बांटने में

अन्याय और पक्षपात

से काम लिया गया है, और सरकार ने दबाव डालकर मंत्रियों से अधिक रुपया ले लिया है। यदि आगे चलकर किसी विभाग को अधिक रुपये की आवश्यकता हो तो यह स्पष्ट ही है कि उसके लिए नया टैक्स लगाना पड़ेगा। परन्तु यदि रक्षित विभागों के लिए रुपये की आवश्यकता हो तो सरकार को चाहिये कि वह टैक्स लगाने के लिए बिल पेश करे, और यदि हस्तान्तरित विभागों के लिए रुपये की ज़रूरत हो, तो मंत्री बिल पेश करें। यदि ऐसा किया जाय तो सारी बदनामी मन्त्रियों को न उठानी पड़ेगी। वे सिर्फ़ अपने विभाग के ज़िम्मेदार होंगे, और सरकारी विभागों की ज़िम्मेदारी सरकार को उठानी पड़ेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शासन-सुधार ।

रिपोर्ट रोचक है। पाठक उसे पढ़ने के पश्चात् इस धारणा को लिये बिना नहीं उठेंगे कि उसके लेखकों ने जो कुछ लिखा है, उससे हित हो या अहित, परन्तु इसमें संदेह नहीं कि उन्होंने लिखा है हित की दृष्टि से और सहानुभूति के साथ। रिपोर्ट भर में कोई बात ऐसी नहीं है, जिससे भारतीय भावों का अपमान होता हो। उसमें बहुधा ऐसे स्थल हैं जिनमें ऐसे उद्गार प्रकट किये गये हैं जो उदार हैं और प्रकट करनेवालों की उच्चाशयता और जिनके प्रति प्रकट किये गये, उनके प्रति यथेष्ट सन्मान और हितैषिता का भाव प्रकट करते हैं। हम इस बात का दावा नहीं करते कि हमें सभी सरकारी रिपोर्टों के देखने का अवसर प्राप्त हुआ है, परन्तु तो भी हमें ऐसा भासित होता है कि आज तक शायद ही कोई सरकारी रिपोर्ट भारतवासियों के प्रति ऐसे उदार भावों को लेकर निकली हो। यह संभव है कि सदा से अपने देशवासियों के प्रति कहनी अनकहनी बातें सुनते रहने के कारण आज उनके प्रति कुछ साधु भावों का प्रयोग होते हुए देख कर हमारा हृदय ठंढा होता हो; परंतु, यदि ऐसा भी हो तो भी जिसकी जो अच्छी बात है उसको वैसा मान लेने में हमें अपनी प्रकृति पर संदेह करने की आवश्यकता ही क्या है? हमारे देश के बहुत से लोग इस बात से प्रसन्न हैं कि इस सुधार के कारण प्रान्तों से एक आदमी के शासन का युग उठ जायगा, प्रान्तों में लेफ्टिनेंट गवर्नर या चीफ़ कमिश्नर के बजाय गवर्नर हुआ करेंगे; कार्य-कारिणी कौंसिल में एक भारतीय भी हुआ करेगा, क़ानूनी कौंसिलें बड़ी हो जायँगी और उनमें प्रजा के प्रतिनिधियों की अधिकता रहेगी; प्रजा के प्रतिनिधि गवर्नर के मन्त्री-पद को प्राप्त कर सकेंगे और उनके हाथ में कुछ विभागों की बाग-डोर सौंप दी जायगी; सरकारी विभागों के काम में सलाह देने के लिए प्रजा द्वारा चुने गये मेम्बरों की स्थायी कमेटियां बनेंगी, प्रांतिक राजस्व भारत-सरकार के राजस्व से बिलकुल अलग हो जायगा, प्रजा को अपने प्रतिनिधियों के चुनने का विस्तृत और प्रत्यक्ष अधिकार होगा; म्यूनिसिपल बोर्ड और डिस्ट्रिक्ट बोर्ड बिलकुल अपने हो जायँगे, कौंसिल के मेम्बरों को पूरक प्रश्नों के पूछने का अधिकार होगा, गवर्नर जेनरल की कार्यकारिणी कौंसिल में एक के स्थान पर अब दो भारतीय होंगे, बड़ी कौंसिल के १०० मेम्बरों में ६७ प्रजा पक्ष के होंगे, भारत-सचिव की तनख्वाह विलायत के ख़ज़ाने से ही दी जायगी, भारत के मामलों में पार्लामेंट की निगरानी बढ़ाने के लिए पार्लामेंट के मेम्बरों की एक कमेटी संगठित होगी, सिविल सर्विस में ३३ फ़ी सैकड़े पद आरम्भ में, और डेढ़ फी सैकड़े प्रति वर्ष, भारतीयों को मिलते रहेंगे, और अन्य उच्चपदों पर भी भारतीयों की पहुंच अच्छी तरह हो जायगी, इत्यादि, इत्यादि। हम मानते हैं कि यदि रिपोर्ट के अनुसार देश के शासन में सुधार कर दिये जायँ तो वर्तमान शासन से कई अंशों में संस्कृत शासन अच्छा अवश्य होगा। ऐसी अच्छी और चित्त को लुभा लेनेवाली रिपोर्ट के लिखने पर हम आदर के साथ उसके लेखक भारत-सचिव श्रीमान् मि० मांटेगू—और उनके साथी श्रीमान् लार्ड चेम्सफोर्ड को भी—बधाई दिये बिना नहीं रह सकते।

परन्तु, कृतज्ञता प्रकाशन के कार्य के पश्चात् हमारे सामने एक अत्यन्त कठिन काम आता है। इस बात के होते हुए भी कि हमारी ऐसी हीन अवस्था है और हमारे साथ सद्व्यवहार करनेवाले ऐसे कृपालु, हमें यह कहना पड़ता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि इस व्यवस्था से न तो हमारा दुख ही दूर होगा और न इससे यही पता चलता है कि इसके संयोजकों को समय की परख है । इन सुधारों के जंगल में भूल भुलैयां भरी पड़ी हैं। एक स्थान पर मालूम पड़ता है कि बहुत कुछ मिल गया, परन्तु दूसरे स्थान पर पहुंचते ही पता लगता है कि सारा गुड़ गोबर हो गया ! गवर्नर की कार्य-कारिणी कौंसिल में एक यूरोपियन के मुक़ाबले में एक भारतीय का भी होना समझ में आता था, परन्तु गवर्नर का और भी दो यूरोपियन अफ़सरों का अपना साथी बना लेना एक भारतीय के मुक़ाबले में ३ यूरोपियनों को खड़ा कर देना है । प्रान्तिक कौंसिलें बड़ी होंगी, परन्तु उनमें प्रजा के प्रतिनिधियों की 'यथेष्ट अधिकता' की बात अभी समझ में नहीं आती । विभागों के दो भाग किये जायँगे । इस प्रकार दोहरी गवर्नमेंट की सृष्टि होगी । 'रिज़र्वड' विभाग मज़े में रहेंगे, क्योंकि उनके सिर पर गवर्नर का हाथ होगा। 'प्रान्त के सुशासन और शान्ति' के नाम पर वह उनके लिए जितना खर्च चाहेगा, ले लेगा। परन्तु प्रजा के प्रतिनिधियों के हाथों में जानेवाले 'ट्रान्सफर्ड' विभाग कष्ट और ख़्वारी भोगगे, और अन्त में, कुप्रबन्ध का कलङ्क लगा कर हाथ से निकल जाया करेंगे । गवर्नर जिस बात को चाहेगा, 'प्रान्त के सुशासन और शान्ति' के नाम पर कर लेगा और अपनी रची हुई बड़ी कमेटी के सहारे से करा लेगा, परन्तु प्रजा के प्रतिनिधियों के प्रस्ताव महज़ सिफ़ारिश का दर्जा रक्खेंगे । गवर्नर-जनरल की कौंसिल तो आज से भी बदतर हो जायगी। गवर्नर-जनरल के अधिकार और भी बढ़ जायँगे और मनमाने ढंग की भर्ती से भरी हुई स्टेट-कौंसिल नाम की समिति के कारण एक भी उन्नतिशील बात बड़ी कौंसिल में पास न हो सकेगी । आर्म्स ऐक्ट, प्रेस ऐक्ट आदि अत्याचारी क़ानूनों की सत्ता तो बनी ही रहेगी, परन्तु उनके भाई-बन्दों की रचना में, इस स्टेट कौंसिली ढोंग के कारण और भी गहरी सुविधा हो जायगी, वर्तमान व्यापारनीति के कारण देश के धन्धों का बड़ा ह्रास हो रहा है। देश के लोग पनपने नहीं पाते । इन सुधारों के कारण उसमें कोई भी परिवर्तन होता नहीं देखता। यह बात कि उद्योग-धन्धों की तरक्की की जायगी, इस बात से बहुत अन्तर रखती है कि उसकी तरक्की के लिए बाहरवालों की तिजारत को इस देश के खेतों को चर डालने के लिए बे-लगाम ऊँट की भाँति नहीं छोड़ दिया जायगा। हम मानते हैं— यद्यपि अभी तक रिपोर्ट के अस्पष्ट ढंग के कारण हमें यह मालूम नहीं हो सका है कि इस मामले में आगे होगा क्या, तो भी हम मानते हैं कि—म्यूनिसिपैलिटियों और डिस्ट्रिक्ट बोर्डों में प्रजा का पूरा हाथ होगा । हम यह भी मानते हैं कि भारत-सचिव की कार्यप्रणाली में भी कुछ उचित ही सुधार होंगे । परन्तु, जब हम इन सब सुधारों का निष्कर्ष निकालते हैं, तब वह यह निकलता है कि डिस्ट्रिक्ट बोर्ड और म्यूनिसिपैलिटियां ले लो, प्रान्तों के कुछ साधारण विभाग ले लो, परन्तु गवर्नर के अधिकार इतने बढ़ जायँगे कि वह अपने क्षेत्र में और भी स्वेच्छाचारी हो जायगा और दिये हुए विभागों के काम में बाधा पहुंचेगी; भारत-सरकार और भी स्वेच्छाचारिणी हो जायगी। उस समस्त सम्मान के होते हुए भी जो हमें रिपोर्ट के लेखकों के प्रति उनकी सहानुभूति के कारण हैं, हम उनके इन प्रस्तावों में अपना कल्याण देखने में असमर्थ हैं। कांग्रेस ने इन सुधारों की दो बड़ी कसौटियां रची थीं । एक तो यह कि कौंसिल में पास किया गया प्रस्ताव मान्य हो । वाइसराय उसे एक वर्ष रद्द भी कर सकें, परन्तु दूसरे वर्ष दूसरी बार पास हो चुकने पर वह रद्द न हो सके । दूसरी कसौटी यह थी कि कौंसिल की राय से आमदनी का ख़र्च हो, अर्थात्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तिज़ोड़ी की कुञ्जी कौंसिल के हाथों में हो। इन सुधारों से ये दोनों बातें नहीं होतीं। सर्वसाधारण की पुकार यह थी कि ये सुधार तत्व-शून्य न हों। यह अस्पष्ट भाव है। परन्तु जो लोग इन सुधारों के पक्ष में हैं उनसे नम्रतापूर्वक हमारा प्रश्न है कि इनमें तत्व की कौनसी बात है? कुछ ऊँचे पदों या मेम्बरियों को पाकर भारतवर्ष का उद्धार न हो जायगा। कुछ आदमियों के मन्त्री बन जाने और कुछ के सरकारी सलाहकार हो जाने से, भारतवासियों की ज़िल्लत कम न हो जायगी। हम अत्यन्त साधारण आदमी हैं। साधारण आदमी की दृष्टि ही से हम बातों का रंग ढंग देख सकते हैं। हम पूछते हैं कि इन सुधारों के कारण हज़ारों मील दूर पड़े हुए, कुली कहलाने और भारत के नाम पर अपमान सहनेवाले लोगों के दर्जे में क्या अन्तर पड़ सकेगा? देश के मरे हुए व्यवसाय और उठ कर करोड़ों आदमियों को पेट भर अन्न दे सकनेवाले धन्धों पर इनका असर क्या पड़ेगा? देश के साधारण से साधारण सुख से वंचित नहीं, मनुष्य-कोटि में ही न समझे जानेवाले करोड़ों किसानों और गांववालों का इन सुधारों से क्या कल्याण होगा? इस देश में जन्म लेनेवाले नर-नारियों को चलने फिरने, बोलने और लिखने, आत्म-रक्षा और आत्मोन्नति के प्रारम्भिक मानव-अधिकार से भी वंचित रक्खे जाने की जो दीन-हीन, करुणापूर्ण दशा है, क्या हम पूंछ सकते हैं कि इन सुधारों के कारण उसमें क्या अन्तर पड़ेगा? आज पंजाब में ओडायर-शाही, देहली में हेली-शाही और अन्य स्थानों में हाकिमों की जो धांधली निरंकुश रूप से चला करती है, क्या इन सुधारों के कारण गवर्नरों को अब से कुछ कम क्षेत्र परन्तु अधिक अधिकार पा जाने से, उसमें कोई भी कमी हो सकेगी?

मि० मांटेगू के प्रस्तावों के अनुसार प्रान्तों के शासन में बहुत से परिवर्तन होंगे। हमसे कहा गया है कि प्रान्तों ही में पहिले उत्तरदायित्व-पूर्ण शासन का अवतरण होगा। कुछ बातें तो तुरन्त की जानेवाली हैं। यहां पर उनके उल्लेख की आवश्यकता नहीं है। मि० मांटेगू की रिपोर्ट के सार के पढ़नेवाले जानते हैं कि उनका क्या रूप होगा? हम मानते हैं कि उनमें से कई बातें अच्छी हैं, और उनके कारण प्रान्त के शासन में बहुत कुछ सुधार हो जायग। परन्तु हमारा मतालबा न 'बहुत कुछ सुधार का है, और न हमारी परख की कसौटी ही यह बात है। अपने मतालबों को अलग रख कर हमें इस समय यही जानना है कि इन सुधारों के कारण प्रान्त के शासन में जनता को स्वयं कर सकने और शासकों से करा सकने का कितना बल प्राप्त होगा? प्रान्त की क़ानूनी सभाओं में प्रजा के प्रतिनिधियों की संख्या अधिक होगी, परन्तु इस रियायत का निराकरण बहुत मज़बूती के साथ कर लिया गया है। बजट को छोड़ कर अन्य सभी विषयों पर मेम्बरों की राय केवल सिफ़ारिश कि हैसियत रक्खेगी। अन्य बातों में शासक वैसे ही स्वाधीन होंगे जैसा कि वे आज हैं। अब बजट की बात सुनिये। विभागों की दो किस्में बनाई जायँगी 'रिज़र्वड' विभाग गवर्नर और उसकी कार्यकारिणी कौंसिल के हाथों में रहेंगे, और 'ट्रान्सफर्ड' विभाग गवर्नर और उसके मन्त्री के हाथों में। यह मन्त्री निर्वाचित मेम्बरों में से एक होगा। उसे गवर्नर चुना करेगा। प्रान्त की आय में सबसे पहिला भाग भारत-सरकार का होगा। उसके बाद रिज़र्व्ड विभागों का। बचा हुआ धन ट्रान्सफर्ड विभागों को मिलेगा। यदि यह धन कम पड़े तो नये टेक्सों की रचना करो। परन्तु यह नहीं होने का कि रिज़र्व्ड विभागों के ख़र्च में कमी हो। बजट रक्खा जायगा पूरी कौंसिल के सामने। मेम्बरों को अधिकार होगा कि वे रिज़र्व्ड विभागों के ख़र्चों की कमी और ट्रान्सफर्ड विभागों की आय की वृद्धि के लिए प्रस्तावों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की झड़ी बांध दें, परन्तु अपने स्थान से तनिक भी टस से मस होना गवर्नर महोदय की इच्छा पर निर्भर होगा। कौंसिल भर मिलकर उन्हें एक तिल भर न हटा सकेगी। गवर्नर महोदय सही कर देंगे कि प्रान्त की शान्ति के लिए रिज़र्व्ड विभागों के लिए इतने धन की तो आवश्यकता है ही। बस, उनके ये शब्द उनके प्रिय विभागों को मालामाल रक्खेंगे, भले ही ट्रान्सफर्ड विभाग धन की कमी के कारण दुर्दशा में पड़े रहें। इन विभागों के लिए कुछ नये टेक्सों की रचना की जा सकेगी परन्तु यह कार्य सुगम नहीं है। ऊपर से गवर्नर की धौंस सहनेवाले मन्त्री लोग किसी विशेष कार्य के करने के पहिले नये टेक्सों की रचना करने पर प्रजा के तिरस्कार के भी पात्र बन जायँगे। ट्रान्सफर्ड विभागों की एक सूची रिपोर्ट में दी गई है। म्यूनिसिपैलिटी, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, देहाती अदालतें, शिक्षा (उसमें भी उच्च शिक्षा नहीं), सहयोग-समितियां, कुछ कृषि विभाग, कुछ मेडिकल विभाग, जंगलात, आबकारी आदि छोटे छोटे १५ काम ऐसे हैं जो, मि० मांटेगू के मत से ट्रान्सफर्ड विभाग बनाये जा सकते हैं। ये काम आकर्षण-शून्य तो हैं ही, परन्तु साथ ही ऐसे भी हैं कि इनमें पड़ने से कोई आदमी शासन के काम में पटु भी नहीं हो सकता। विभागों का यह विभाजन अत्यन्त त्रुटि-पूर्ण है, और यदि यह ऐसा ही रहा जैसा कि है, तो इसके लिए, इस प्रकार की बन्द मुट्ठी से रुपया निकालते हुए काम करते रहना कम आशावादिता का कार्य न होगा। हम कह चुके हैं कि अन्य विषयों पर मेम्बरों की राय केवल सिफ़ारिश का रूप रक्खेगी। प्रजा की चाही हुई बातों का तो यह हश्र होगा, परन्तु उधर गवर्नर महोदय जो कुछ चाहेंगे उसके पास होने में देरी न लगेगी। उनके चाहे हुए कानूनी मसवदे का यदि प्रजा के प्रतिनिधि विरोध करें तो उन्हें अधिकार होगा कि अपनी सही के बल पर—वही, 'प्रान्त की शान्ति' के नाम पर—उसे केवल कौंसिल में पेश करके ही एक बड़ी कमेटी के हाथों में दे दें। इस कमेटी में ४० से लेकर ५० फ़ी सदी तक कौंसिल के मेम्बर होंगे, परन्तु इनमें आधे से अधिक गवर्नर द्वारा ही चुने जायँगे। निःसन्देह इनमें केवल एकतिहाई ही सरकारी आदमी होंगे, परन्तु हमारा आज तक का तजुर्बा कहता है कि गवर्नर के चुने हुए आदमी किसी प्रकार भी सरकारी आदमियों से कम न होंगे। गवर्नर द्वारा चुने हुए आदमियों को बोलने और मत देने की पूरी आज़ादी होगी परन्तु यह आज़ादी उस समय तक बड़ी ही लज्जाशील वस्तु रहेगी जब तक गवर्नर के हाथ में क़दम क़दम पर सब कुछ कर सकने का अधिकार रहेगा। यदि अपने आदमियों को अधिकता के कारण इस बड़ी कमेटी में प्रजा का लाया हुआ क़ानून पास भी हो जाय, तो उसके सामने एक और भी मोरचा आ जायगा। वह फिर कौंसिल में पेश होगा। कौंसिल तो उसका कुछ भी न कर सकेगी, परन्तु गवर्नर महोदय की कार्यकारिणी कौंसिल के मेम्बर साहब उसमें सुधार किये जाने का प्रस्ताव पेश कर सकेंगे। यदि अब भी वह मसविदा बच जाय, तो शतरञ्ज की चाल में जिस प्रकार वज़ीर के बाद बादशाह मुक़ाबले में उतर पड़ता है उसी प्रकार गवर्नर महोदय अवतरित हो जायँगे। उनके हाथ में ब्रह्मास्त्र दो हैं। एक तो यह कि वे कौंसिल को एकदम तोड़ दें; और दूसरा यह कि उस मसवदे ही को नामंजूर कर दें या उसमें मनचाहा परिवर्तन करा दें। यह ख़याल हो सकता है कि गवर्नर के ऊपर कार्यकारिणी कौंसिल के भारतीय मेम्बर का प्रभाव रहेगा, और वह इस प्रकार की निरंकुशता से काम नहीं लेगा परन्तु कार्यकारिणी कौंसिल में भारतीय मेम्बर की प्रभुता उतनी अधिक कदापि न रहेगी, जितना कि समझा जारहा है। गवर्नर के अधिकार होगा कि वह अपनी मदद के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए एक या दो सरकारी अफ़सरों को अपनी गवर्नमेंट का एडिशनल-मेम्बर बना ले। निःसन्देह इन अफ़सरों को वोट देने का हक प्राप्त न होगा परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि इनकी बातों का प्रभाव गवर्नर पर अधिक पड़ेगा, और रिज़र्व्ड विभाग में कार्य-कारिणी कौंसिल का भारतीय मेम्बर एडिशनल मेम्बरों के प्रभावों से प्रभावित और यूरोपियन मेम्बर से प्रेरित गवर्नर के मुकाबले कुछ भी नहीं कर सकेगा। इस अवस्था की अच्छाई के लिए, बस बड़े शुद्ध चित्त और सरल भाव से यही मनाइए कि गवर्नर अच्छे हों तो एडिशनल मेम्बर और यूरोपियन मेम्बर साहब भी दयालु हों। या यह समझकर संतोष कीजिए, जैसा कि डा० तेजबहादुर सप्रू का मत है, कि लोकमत का प्रभाव निरंकुशता को रोकेगा। लोकमत के प्रभाव पर मिन्टो-मारले सुधारों के समय में भी तो विश्वास किया गया था, परन्तु फिर क्या हुआ?—इस लेख से हमारे पाठक यह जान सके होंगे कि प्रान्त के कामों में जो स्वाधीनता दी जानेवाली है वह बरायनाम है। उसमें उत्तरदायित्व का अस्तित्व नाम को ही है। प्रजा के प्रतिनिधियों में से जो शासन के काम में पड़ेंगे उन्हें बहुत ही साधारण काम मिलेगा, और धन के लिए उन्हें परमुखापेक्षी रहना पड़ेगा। वे तो प्रजा के सामने अपने काम के लिए उत्तरदाता रहेंगे, परन्तु उनके अन्य सहयोगी, जो रिज़र्व्ड विभागों के प्रभु रहेंगे, इन बंधनों से मुक्त रहेंगे और समय समय पर बड़ी से बड़ी स्वेच्छाचारिता कर सकेंगे। इसका अर्थ यह है कि भारतीय कार्यकर्ताओं को आगामी आलोचनाओं और कलंक की ढाल बनाकर वर्तमान हाकिमों को अपने क्षेत्र में और भी अधिक स्वेच्छाचारी हो जाने का अवसर प्राप्त होगा।

भारत सचिव और भारत सरकार।

देश के शासन में इन दोनों अधिकारियों का सब से ऊंचा स्थान है। बिना इनकी आज्ञा के कुछ भी नहीं हो सकता, और ये जो चाहें उसे कोई रोक भी नहीं सकता। वर्तमान शासन के कारण देशभर में जितनी बुराई और स्वेच्छाचारिता फैली हुई है, देशवासियों की उन्नति में जितनी रुकावटें दिखाई पड़ती हैं और हमारे धन्धों और व्यापार के विकास को जो क्षति पहुंची है—उन सब का सब से बड़ा कारण यही है कि भारत सचिव और भारत-सरकार भारतवर्ष के हित की दृष्टि से काम करने के लिए कभी विवश नहीं रहे। यदि हमारे शासन-क्रम के इन दोनों विभागों में उचित परिवर्तन और सुधार हो जाय तो देश की भलाई होनी आरम्भ अवश्य हो जाय। परन्तु, यह अत्यन्त खेद की बात है कि ऐसा होता दिखाई नहीं देता। देश में उत्तरदायित्व-पूर्ण शासन के युग की स्थापना की जाने वाली है परन्तु इस महायज्ञ के रचयिता लोगों ने जिन प्रस्तावों को देश के सामने रक्खा है उनसे यथार्थ रूप में उत्तरदायित्व-पूर्ण शासन के स्थापित होने का रंग ढंग नज़र नहीं आता। मि० मांटेगू के प्रस्तावानुसार म्युनिसिपिल बोर्ड और डिस्ट्रिक्ट बोर्डों में उत्तरदायित्व पूर्ण शासन का पूरा अधिकार हो जायगा। वे इस शासन-प्रणाली को किसी रूप में प्रान्तिक कार्यों में भी स्थान देना चाहते हैं परन्तु आगे बढ़ते ही, भारत-सरकार के सुधार की बात आते ही, वे इस घोषणा की, जो कि २० अगस्त १९१७ को पार्लमेंट में की गई थी और बार बार दोहराये गये उस सिद्धान्त की जो उसकी रिपोर्ट के पन्ने २ पर अङ्कित है, अवहेलना सी करते हैं। वे स्पष्ट शब्दों में कहते हैं कि भारत सरकार की प्रणालियों में सुधार हो परन्तु भारत सरकार भारतवासियों के सामने उत्तरदाता न होगी। वह केवल पार्लमेंट के सामने उत्तरदाता होगी और कुछ मामलों में तो उसका फैसला ही अन्तिम फैसला होगा। हमें मि० मांटेगू के इस फैसले पर अत्यंत आश्चर्य है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब कि वे भारत-सरकार को लोक-सत्ता से इतना बाहर रख रहे हैं तब यह कैसे सम्भव होगा कि प्रान्तों में जिस उत्तरदायित्वपूर्ण शासन की वे रचना करना चाहते हैं उसमें कुछ भी सफलता हो सके। प्रान्तिक शासन स्वाधीन हो जाने पर भी भारत-सरकार की मातहती ही में रहेगा। भारत-सरकार उसके कामों में हस्तक्षेप कर सकेगी। ऐसी अवस्था में क्या यह संभव है कि भारत सरकार के स्वेच्छाचार के नीचे प्रान्तिक स्वाधीनता का पौधा कभी हरा भरा रह सके। इस सम्बन्ध में विचार करने के योग्य दूसरी बात यह भी है कि इस प्रकार के प्रबन्ध में युक्तियुक्तता कहां तक है? आप देश में उत्तरदायित्वपूर्ण शासन स्थापित करना चाहते हैं। इसका आरम्भ आप प्रान्तों से करते भी हैं परन्तु आगे सार्वदेशिक कामों में आप वैसी ही स्वेच्छाचारिता जारी रहने देना चाहते हैं जैसी की आज तक थी। क्या इस प्रबन्ध में नीति की स्थिरता मानी जा सकती है? साधारण बुद्धि का आदमी भी यही कहेगा कि यदि उत्तरदायित्वपूर्ण शासन की स्थापना होनी है तो प्रान्तिक मामलों में हो और साथ ही साथ सार्वदेशिक मामलों में भी, नहीं तो उसका न होना ही भला। इसलिए मि० मांटेगू के भारत-सम्बन्धी वर्तमान प्रस्तावों की नीति न केवल अस्थिर ही है, वरन् वह हानिकारक और बिलकुल परिवर्तन किये जाने के योग्य भी हैं।

(प्रताप)।

मज़ाल होता।

अपने को बोलने का ग़र कुछ मजाल होता।
दम म जवाब देते कोई सवाल होता॥
हिकमत की जड़ न कटती शाखें हुनर की होतीं।
हिम्मत के फूल होते जोशे जमाल होता॥
बरबाद यों न होते अरमान अपने दिल के।
ग़र अपनी ख़ासियत का कुछ भी ख़याल होता॥
मुश्किल था इस जहां में हमसा अमीर कोई।
ग़र हमको हैसियत का कुछ भी मलाल होता॥
ढूढ़े न कोई मिलता अपनी बराबरी का।
दुनियां में ठाठ अपना भी बेमिसाल होता॥
जोरो बहादुरी में पड़ते न कम किसी से।
बस देखते ही बनता ऐसा कमाल होता॥
जो आज अपने मुंह पर बढ़ बढ़ के बोलते हैं।
अपना जो हो रहा है वो उनका हाल होता॥

"कुसुमाकर"।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मांटेगू सुधार-व्यवस्था।

रिफार्म की रिपोर्ट सत्य ही एक उत्तम साहित्य का नमूना है। लेखन-शैली बहुत ही अच्छी है। और सबसे बढ़कर बात तो यह है कि लेखक उत्साहपूर्ण वकील, एक निष्पक्ष न्यायकर्त्ता, प्रभावशाली छिद्रान्वेषी और एक सहृदय पक्ष लेनेवाला जान पड़ता है। सत्य ही रिपोर्ट का आधा हिस्सा तो ऐसा लिखा है जैसा कि एक "निकृष्ट" किन्तु योग्य और पढ़ा लिखा स्वराज्यवादी ही लिख सकता है। सरकार के निकम्मे होने के सुबूत बहुत कुछ दिये गये हैं और दिखाया गया है कि ऐसी अवस्था में राजनैतिक आन्दोलन होना स्वाभाविक था। रिपोर्ट में भारत को स्वराज्य देने की बात भी बराबर और स्पष्ट शब्दों में कही गई है यद्यपि यह नहीं कहा गया है कि वह दिन कब आवेगा। यह अवश्य मालूम होता है कि २० अगस्त १९१७ की घोषणा के अनुसार मि० मांटेगू लेनदेन करना चाहते हैं और इसीलिए उन्होंने राज्य की एक ऐसी मशीन सामने रक्खी है जोकि यदि ईमानदारी से ठीक ठीक चलाई जावे, तो वह आपही आप भारतवर्ष को परतन्त्रता के अन्धकार से स्वतंत्रता के उजाले में ले जावेगी। चाहे भारतीय इतने चर के खाने के बाद इस वादे का भी विश्वास न करे किन्तु केवल इसलिए हम मि० मांटेगू को दोषी नहीं ठहरा सकते।

घोषणा अमूल्य इसलिए समझी गई है कि इसमें पहिले ही पहिल ब्रिटेन का भारत को स्वराज्य देने का इरादा शब्दों में रख दिया गया था यद्यपि घोषणा की शब्दावली बहुत ही तुली हुई थी। उसमें यह भी कहा गया था कि "ब्रिटिश और भारतीय सरकार ही को यह निर्णय करने का अधिकार होगा कि स्वराज्य पथपर कितने समय में और कितने दूर तक आगे बढ़ना चाहिये। निर्णय यह देखकर होगा कि भारतीयों की उत्तरदायित्व शक्ति पर कहांतक भरोसा किया जा सकता है।" यह रुकावटें रहस्यपूर्ण हैं और लोगों ने उस समय इन्हें ध्यानपूर्वक पढ़ा था। किन्तु इसमें मि० मांटेगू का दोष नहीं। राज्य कर्मचारी होने के कारण वह अपने कर्त्तव्य से आगे नहीं बढ़ सकते थे। कर्त्तव्य यह था कि वह सब बातों की खोज करें और घोषणा को पूर्ण करने के लिए उसकी नींव डाले।

हम इसलिए भी उनको दोषी नहीं ठहरा सकते कि उनका मसविदा कांग्रेस और मुस्लिम लीग के मसविदे से नहीं मिलता। उनका इतना कह देना ही काफी है कि यह स्कीम एक बड़े भारतीय नैतिक समाज का सब से नया, सब से पूरा और सच्चा मसविदा है; और इसलिए सब से पहिले ध्यान देने योग्य था। हमें विश्वास भी दिलाया गया है कि मि० मांटेगू और लार्ड चेम्सफ़ोर्ड ने यह जानने का भरसक प्रयत्न किया है कि कहांतक वह २० अगस्त की घोषणा के साथ सम्बन्ध रख सकता है।

ईमान्दारी से मि० मांटेगू के पक्ष में हम इतना स्वीकार करते हुये रिपोर्ट का खंडन आरंभ करते हैं। तीन प्रश्न सामने हैं।

(१) क्या २० अगस्त की घोषणा-चक्र के अन्दर ही मि० मांटेगू का मसविदा अधिक उदार नहीं हो सकता था।

(२) यह कांग्रेस और मुस्लिम लीग के मसविदे से अच्छा है या बुरा?

(३) क्या इस समय वह मसविदा भारतीयों की आकांक्षाओं को संतुष्ट कर सकता है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहिले प्रश्न

का उत्तर यह है कि अवश्य हो सकता था, किन्तु अब कौन कह सकता है कि यह रिपोर्ट हद से आगे निकल गई है ? यदि हद से आगे भी निकल जाती तो क्या होता ? वह ईश्वरीय वाक्य नहीं थे कि जिनसे आगे बढ़ जाना पाप होता। हमें ब्रिटेन के राजा और उनके मंत्रियों का सम्बन्ध मालूम है और हम कह सकते हैं कि यदि एक मंत्री की फूंक एक घोषणा मिटा सकती है तो वह उसे पैदा भी कर सकती है। यदि बड़े लाट बिना डांट खाये एक राज्य घोषणा को रद्दी कर सकते हैं तो दूसरे लाट अन्य घोषणा को अधिक अच्छा और उदार बना सकते हैं। फिर यह काकातुआ की तरह घोषणा, घोषणा का रटना अपना मज़ाक आप उड़ाना है या नहीं ?

मान भी लिया जाय कि परिमित मार्ग से आगे बढ़ना पाप था तो भी मिस्टर मांटेगू उससे जहां तक कि सचमुच बढ़ गये हैं कहीं आगे जा सकते थे। हम कह सकते हैं कि पूरा प्रान्तिक स्वराज्य-घोषणा के आगे कभी नहीं बढ़ सकता। रुपयों की थैली पर अधिकार देना तथा कर्मचारियों पर व्यवस्थापक सभा का दबाव उसके प्रतिकूल न होता। कांग्रेस मुस्लिम लीग के मसविदे ने बहुतसी बातों में हस्तक्षेप नहीं किया है वे सब भारतीय सरकार के हाथ में छोड़ दी जा सकती थीं।

दूसरे प्रश्न

का उत्तर केवल "हां" या "ना" में देना बहुत कठिन है क्योंकि मि० मांटेगू का मसविदा कांग्रेस मुस्लिम लीग स्कीम के मसविदे से बिलकुल निराला है। मि० मांटेगू की स्कीम में 'उत्तरदायित्वपूर्ण शासन' का विचार बहुत कुछ ठीक है किन्तु ये विचार तो कांग्रेस-लीग स्कीम में भी जोड़े जा सकते थे। स्कीम में व्यवस्थापक को बहुत कुछ अधिकार दिये गये हैं और उनको ठीक तरह पर काम में लाने से राज्य कर्मचारियों पर ठीक रोक थाम हो सकेगी। कांग्रेस-लीग स्कीम के हिसाब से व्यवस्थापक सभा की ओर से एक नाराजी का वोट पास किया जा सकता है और भलेमानस मंत्रियों को बिलकुल निकाल देने या उनका वेतन कम कर देने का दंड देने की कोई आवश्यकता नहीं। कितने ही देशों में जनसत्तात्मक शासन की स्थापना है और राजकर्मचारी मंत्रियों को निकाल देने का तरीका नहीं है। यदि मि० मांटेगू उत्तरदायित्व शासन के इतने शौक़ीन हैं तो हमें स्वीकार है वह हमारी स्कीम में इतना और बढ़ा दें।

किन्तु हमारी समझ में नहीं आता कि नवागन्तुक "उत्तरदायित्व" की दावत करने के लिए क़ानूनी शक्ति का बलिदान करना क्यों आवश्यक और उचित है। यदि पहिली चीज़ ऐसी ही जरूरी है तो कर्मचारीगण ही की त्रुटियां क्यों न दबी रहें जिससे वह निरंकुश-शासन न कर सकें ? यदि मि० मांटेगू को रोक थाम के लिए एक ऊँची नई सभा की उत्पत्ति ऐसी ही आवश्यक थी तो वह उसके मेम्बरों के लिए जितनी अधिक योग्यता स्थिर करना चाहते कर सकते थे किन्तु यह भी तो मालूम हो कि उसमें चुने हुए मेम्बरों का अधिक होना आवश्यक क्यों है। यह स्पष्ट है कि मांटेगू साहब का तात्पर्य हमारी स्कीम की शासनप्रणाली को सुधारना क्यों है किन्तु क़ानूनी ताक़त को तोड़ना। कुछ का मत है कि यह नई सभा केवल रोक थाम के लिए ही बनाई जावेगी। यदि यही है तो एक सभा ऊँची और दूसरी नीची क्यों ठहराई गई ? बड़े लाट साहब ही ने हिम्मत करके यह रद्द करने का भार अपने सिर क्यों नहीं ले लिया ?

इसलिए प्रश्न हमारे सामने यह नहीं है कि दोनों स्कीमों में शासन-प्रणाली कौनसी अच्छी है किन्तु किसमें चुने हुये प्रतिनिधियों को अधिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिकार मिल सकता है ? ढाँचे का अदलबदल जितना चाहे हो किन्तु कोई भी हमारी आंख में धूल डाल कर हमारे अधिकार नहीं ले सकता। यह दूसरी ही बात है कि मि० मांटेगू इस बात का प्रयत्न करें कि अधिकार अधिकतर सरकार के ही हाथ में रहे किन्तु कांग्रेस लीग स्कीम को अच्छा बना देने के धोखे में हमको कम अधिकार देना जले पर निमक छिड़कना है। हम पंडितों की चालबाजी से गंवारू स्पष्ट-वादिता अधिक अच्छी समझते हैं।

बजट में 'रिज़र्व्ड' और 'ट्रांसफ़र्ड' नामक जो दो विभाग किये गये हैं वह केवल नैतिक ही दृष्टि से नहीं किन्तु शासनप्रणाली की दृष्टि से भी बुरे हैं। मि० मांटेगू ने स्वयं स्वीकार किया है कि यह बहुत बड़ा झमेला है। रिपोर्ट की प्रार्थनाएँ और सब उपदेश एक काम न आएँगे और उससे जाति-विद्वेष और अधिक बढ़ेगा। कार्यकारिणी सभा करीब करीब पूरी अँगरेज़ों से भरी होगी और मंत्रीगण हिन्दुस्तानी होंगे। इसको छोड़ रक्षित विभागवालों को आप ही आप और सब से पहिले रुपया खर्च करने को मिल जायगा और दूसरों को या तो कार्यकारिणी सभा के सामने हाथ फैलाये खड़ा रहना पड़ेगा या अपने भाइयों पर अधिक टैक्स लगाना पड़ेगा। ख़ैर हम कांग्रेस-लीग स्कीम को किसी भी रूप में लेने को उपस्थित हैं यदि वह हमारा रुपयों पर अधिकार और कार्यकर्तागण के रोक थाम की शक्ति हमारी व्यवस्थापक सभा के हाथ से न ले लें।

तीसरे प्रश्न

का उत्तर यह है कि मि० मांटेगू की स्कीम इस समय की भारतीय पिपासा को शान्त नहीं कर सकती। कांग्रेस लीग स्कीम में चाहे जो कुछ दोष हों किन्तु निस्सन्देह उससे साफ़ २ जाना जाता है कि भारतीय अधिकार चाहते हैं और देशवासी कोई भी चीज स्वीकार नहीं करेंगे जिससे उनको इच्छित अधिकार न मिल जाय। एक बात और है। अभी तक देश की जिह्वा पर कांग्रेस लीग स्कीम को छोड़कर और कुछ नहीं था। बहुतों का ख़याल है कि यह स्कीम लोगों के दिमाग में ऐसी जम गई है कि वह उसको छोड़ और कोई चीज़ चाहे वह कितनी ही अच्छी हो न लेंगे। हम समझते हैं कि यह बात सर्वथा मिथ्या है। कांग्रेस लीग स्कीम हमको बहुत प्यारी है, इसलिए नहीं कि वह एक ख़ास तरह की राज्य-प्रणाली का नमूना है किन्तु इसलिए कि उससे देशवासियों को ख़ास तरह के अधिकार मिलेंगे। इससे स्वभावतः यह जाना जाता है कि हम कोई भी दूसरी वस्तु स्वीकार करने को उपस्थित हैं यदि जो अधिकार हम कांग्रेस लीग स्कीम के द्वारा चाहते हैं हमें मिलजांय। जो हमारी "स्कीम" की बारम्बार पुकार को तोते की रटन समझ कर मज़ाक उड़ाते हैं उन को लत्य ही मनुष्यों तथा और बातों की आन्तरिक वस्तुओं का जानने की तमीज़ ही नहीं है। स्कीम कांग्रेस की पूरी छानबीन के बाद बनाई गई थी और वह एक प्रकार से गैर-सरकारी स्वराज्य बिल था। विलायती पार्लामेंट में प्रत्येक पार्टी अपने गैर-सरकारी बिलों का अक्षरशः अनुमोदन करते हैं, यद्यपि वह जानते हैं कि उसमें बहुत कुछ बदलना उचित है। नतीजा यह होता है कि उन्हीं का सा बिल सरकार की ओर से उपस्थित किया जाता है। भारतीय नेताओं ने यदि एक स्वर से कांग्रेस लीग स्कीम की दुहाई फेरी तो कभी भी तोतों का सा काम नहीं किया। "हमारी स्कीम" की रटन में बहुत कुछ खुले अर्थ और बुद्धिमत्ता है उनकी बात जाने दीजिये जो पताका की तरह जिधर हवा बही और अपनी भलाई देखी मुड़ जाते हैं और समझते हैं कि हम स्वतंत्र हैं। दुहाई के अर्थ यह कदापि नहीं थे कि हमारी स्कीम में कुछ भी न बदला जाय यदि गवर्नमेंट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी स्कीम लेके हमारे सामने उपस्थित हो। हमें किसी विशेष स्कीम से झगड़ा नहीं चाहे वह मांटेगू साहब की हो या कर्टिस साहब की। हमें अपने अधिकार की पहिली किश्त से मतलब है। हमारी सम्मति में मांटेगू साहब की स्कीम हमारे आदर्श के तलुओं तक भी नहीं पहुंचती इसीसे हम समझते हैं कि उस स्कीम को रद्दी समझना ही ठीक है।

हम यह नहीं कहते कि बिना सोचे समझे इस स्कीम को स्वीकार करलो या अस्वीकार करदो। हम जानते हैं कि यह अवसर बहुत नाजुक है और हमको बड़े उत्साही, दूरदर्शी तथा नीतिज्ञों की आवश्यकता है। किन्तु हमें किसी तरह विश्वास नहीं होता कि इसके स्वीकार या अस्वीकार करने पर हमारा भाग्य अवलम्बित है। स्कीम का जो समर्थन या विरोध करते हैं दोनों ही अपना कर्तव्य पालन करते हैं। समर्थन करनेवालों ने इसकी त्रुटियां भी दिखाई हैं और दूसरों ने इसके लाभों को स्वीकार किया है। इसलिए स्कीम न बिलकुल अपनाई गई है और न फेंक ही दी गई है किन्तु सब से गम्भीर और कठिन प्रश्न यह है कि हम कुल देश की ओर से स्कीम के बारे में मि० मांटेगू को अन्तिम उत्तर क्या दें। उत्तर ठीक स्वाभिमान पूर्ण, सम्मानपूर्ण किन्तु साफ साफ शब्दों में होना चाहिये। [मराठा]

शासन-सुधार-स्कीम।

सहयोगी "लीडर" की राय में मि० मांटेगू और लार्ड चेम्सफोर्ड की सुधार योजना-सम्बन्धी रिपोर्ट वर्तमान अवस्था में बहुत उन्नति करनेवाली है और इससे महत्वशाली सुधार होंगे। इसी में यह भी बतलाया गया है कि भावी उन्नति किस प्रकार होगी। इसे अस्वीकार न करके इसमें उचित संशोधन कराना आवश्यक है। इण्डिया कौंसिल और इण्डिया आफ़िस के सुधार के लिए एक कमेटी नियुक्त होनेवाली है, जिससे आशा है कि उस में अधिक भारतीय सदस्यों को स्थान मिलेगा। वाइसराय की कौंसिल में १ भारतीय सदस्य को स्थान मिलनेवाला है, किन्तु हमें ३ स्थान प्राप्त करने के लिए चेष्टा करनी चाहिये, स्टेट कौंसिल में २५ सरकारी और २५ निर्वाचित सदस्य होने चाहिये। प्रान्तिक सरकारों में कुछ मंत्री नियुक्त होनेवाले हैं, इससे जान पड़ता है कि वहां की सरकार में आधे भारतीय और आधे यूरोपियन सदस्य होंगे। आज कल की कठिनाइयों को दूर करने के लिए रिपोर्ट में वास्तविक चेष्टा की गई है। इसमें सरकार के अधिकारों को सुरक्षित रखने के लिए आवश्यक सतर्कता का अवलंबन किया गया है। इन दोषों को दूर कराने की चेष्टा करनी चाहिये। हमारी राय यह है कि इसे बिलकुल अस्वीकार न करके उसमें संशोधन कराने चाहिये। यदि ऐसा न किया जाय तो होनेवाले सुधारों को हानि पहुंचेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुधार-योजना पर श्री० गांधी जी ।

निपुणता की दृष्टि से यह रिपोर्ट कांग्रेस-लीग की योजना से उत्तम है। मेरे विचार में २० अगस्त की घोषणा के अनुसार भारत की भलाई करने की वास्तविक इच्छा मि० मांटेगू और लार्ड चेम्सफोर्ड के मन में उत्पन्न हुई है। मैं इसका उल्लेख किये बिना नहीं रह सकता कि उन्होंने इसे बड़े परिश्रम से तैयार किया है, और इसे स्वीकार न करने से देश पर विपत्ति आ जायगी। इसलिए इसे एकदम अस्वीकार न करके इस पर सहानुभूतिपूर्ण विचार करना चाहिये। इसमें सुधार होने की आवश्यकता है। कांग्रेसलीग की योजना कितनी ही भद्दी क्यों न हो परन्तु वही हमारी माँगों की कसौटी है। इसलिए उसकी प्रधान बातों को इस योजना में सम्मिलित कराने के निमित्त हमें कोई बात उठा न रखनी चाहिये। मैं क्रम क्रम से सुधारों को कार्य में परिणत करने का विरोधी हूं। प्रान्तों में दो दलों के हाथों में अधिकार रखने की कल्पना मेरी समझ में हमें हमारे ध्येय तक पहुंचाने में समर्थ न होगी, इसलिए अधिकारों को रक्षित रखने का विचार बिलकुल त्याग देने के लिए जितना दबाव डाला जाय, उतना ही थोड़ा है।

भारतीय और ब्रिटिश जनता के हितों की रक्षा में जो प्रभेद रक्खा गया है, उससे हम पर का अविश्वास साफ़ प्रकट होता है। इसीसे रिपोर्ट में इसका अलग प्रबंध दिखाई देता है। क्या अन्य सब बातों की अपेक्षा ब्रिटिश हितों की रक्षा पर अधिक ध्यान देना आवश्यक है? मेरे विचार में यह विषय ब्रिटिश और हिन्दुस्तानियों की सम्मिलित चेष्टा से बननेवाले किसी कानून से भी अधिक महत्वपूर्ण है। इसलिए मैं नम्र किन्तु ज़ोरदार शब्दों में स्पष्ट रूप से कहता हूं कि भारतवासियों के हितों के सामने ब्रिटिशों के हित की बात गौण समझी जायगी और जहां वे भारत की उन्नति के विरोधी होंगे, वहां उन पर जोखिम आयेगी। यदि मुझ से कहा जाय तो मैं फ़ौजी खर्च घटा विदेश से आकर देशी वस्तुओं से प्रतिस्पर्द्धा करनेवाली चीज़ों पर गहरा कर बैठा देशी उद्योग-धन्धों की रक्षा करूंगा और अंगरेज़ नौकरों की संख्या यथासाध्य कम करूंगा। उन्होंने हम पर विजय पाई है, इसीलिए हमें उनका मुलाहिज़ा करना चाहिये, मैं नहीं समझता कि इससे अधिक हक़ पाने का अधिकार उन्हें पहिले था या अब है। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि जिस दिन से हममें राष्ट्रीयता की उत्पत्ति हुई, और हम लोगों में अपने अधिकारों को प्राप्त करने की शक्ति उत्पन्न हुई, उसी दिन से उनका यह हक़ भी जाता रहा। शासकों का यह न कहना कि हम विजेता हैं, अत्यन्त शोभाप्रद है। इण्डियन सिविल सर्विस की निपुणता और कर्तव्यपरायणता की जो प्रशंसा की जाती है, उसमें हम भी शामिल हो सकते हैं, और उसके कार्य का उचित पुरस्कार भी उसे मिला है, परन्तु उसके लिए दूसरी तरह से कृतज्ञता प्रकट करने का साधन ऐसी चेष्टा करना है कि वे गुण हम में भी उत्पन्न हों। जिस सुधार योजना में यह तत्व न माना गया हो कि वर्तमान शासन-पद्धति दुस्सह और हाथ में भिक्षा-पात्र देनेवाली है, उससे भारत को कभी लाभ नहीं पहुंच सकता। शान्ति, सुव्यवस्था और सुशासन के बदले यदि लोगों को निस्सत्त्व बनाने वाला दारिद्र्य प्राप्त हो तो कम से कम मैं कहूंगा कि इसके लिए बहुत अधिक दाम देना पड़ा। सुधरी हुई कौंसिलों को, उन्नति चाहनेवाले इस देश की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए ख़र्च में कमी करने को अपना प्रधान सिद्धान्त मानना चाहिये। यदि यह स्वीकार कर लिया जाय तो फिर हम पर अविश्वास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने का कोई कारण ही नहीं रहेगा। इनके सिवा ब्रिटिश हितों की बातें जैसी आज हैं वैसी ही आगे भी कायम रहेंगी।

सारांश यह कि कांग्रेस-लीग की मांग के अनुसार सिविल सर्विस में सैकड़े ५० स्थान मिलने के लिए हमें ज़ोर देना चाहिये।

सुधारों पर मा० डा० तेजबहादुर सप्रू ।

"इस योजना से प्रान्तिक व्यवस्थापक कौंसिलें विस्तृत होंगी और उनमें निर्वाचित सदस्यों का संख्याधिक्य रहेगा। इसके द्वारा हमें (१) विस्तृत व्यवस्थापक कौंसिलें, (२) निर्वाचित सदस्यों का वास्तविक आधिक्य (३) प्रत्यक्ष निर्वाचन और (४) वोट का विस्तृत अधिकार मिलेगा। कौंसिल के सदस्यों की संख्या और निर्वाचित सदस्यों के आधिक्य का निश्चय कमेटी के द्वारा होगा। हमने कांग्रेस लीग स्कीम में व्य० कौंसिल में सैकड़े ८० स्थान निर्वाचित सदस्यों को देने की प्रार्थना की थी इसके लिए हमें कमेटी पर दबाव न डालने का कोई कारण नहीं दिखाई देता। नई योजना में कहा गया है कि गवर्नर इसके सभापति हों और उन्हें उपसभापति चुनने का अधिकार रहे। इसमें कांग्रेस लीग स्कीम से मतभेद है। सिर्फ़ इसी दलील पर ऐसा किया गया है कि कौंसिल के मुखिया अनुभवी होने चाहिये। परन्तु मुझे इसमें कोई सार नहीं दिखाई देता। मेरे विचार में हम लोगों में ऐसे मनुष्य हैं, जो व्य० कौंसिलों का कार्य चला सकते हैं। कांग्रेस लीग की योजना में मांगा हुआ पूरक प्रश्न करने का अधिकार दिया गया है।" शासकों पर व्य० कौंसिल का अधिकार रहने के सम्बन्ध में काँग्रेस लीग के प्रस्ताव को अस्वीकार करने का उल्लेख करके आपने कहा है कि पहिला अनुभव इस पर ज़ोर देने को बाध्य करता है कि ऐसा प्रबन्ध हो, क्योंकि स्वीकार या अस्वीकार करना जब तक शासकों के हाथ में होगा, तब तक शासन के वास्तविक कार्य में बाधा पड़ने की सम्भावना रहेगी। इसके सम्बन्ध में कहा गया है कि पार्लामेंट के किसी प्रस्ताव से वहाँ की सरकार बंधी नहीं है, इसलिए यह प्रस्ताव बिलकुल नवीन है; परन्तु मैं नवीनता को अस्वीकार करने की दलील नहीं समझता, क्योंकि योजना में कुछ विषय बिलकुल नये हैं। इस प्रस्ताव में बहुत सार है कि नई योजना से व्य० कौंसिल के प्रस्तावों के सम्बन्ध में शासकों पर गहरा प्रभाव पड़ेगा, और उससे पहिले का सा व्यवहार नहीं हो सकता। इस पर भी कई विषयों में बिल पेश करके व्य० कौंसिल की इच्छाएं पूर्ण नहीं हो सकतीं। इसलिए हम यह मानने को तैयार नहीं हैं कि हमारी मांग अयोग्य है। मैं प्रतिपक्षी की दलील का ज़ोर भी स्वीकार करने को तयार हूं, और मैं इसलिए इस स्कीम को रद्द नहीं करना चाहता कि इसमें प्रस्तावों के बारे में हमारे प्रस्ताव मंजूर नहीं किये गये, परन्तु स्मरण रखना चाहिये कि साधारण प्रस्तावों पर यद्यपि बन्धन न हो तथापि बजट के कुछ अंगों पर के प्रस्तावों के सम्बन्ध में बन्धन होने चाहिये।

योजना में कहा गया है कि हर एक विभाग या विभागों में, जो कार्यकारिणी कौंसिल के सदस्य या मंत्री के अधीन रहेंगे, व्य० कौंसिल के मेम्बरों की एक स्थायी कमेटी रहेगी। इसका कार्य सलाह देने का होगा पर उसके हाथ में कोई अधिकार न होगा। हमारी समझ में इससे सदस्य या मंत्री के कार्य पर अच्छा प्रभाव पड़ेगा।

अब हम व्य० कौंसिल के कार्य का ज़िक्र करते हैं। साधारणतः सब विषयों के क़ानून

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसमें पास किये जायँगे । परन्तु सरकारी विभाग 'रक्षित' और 'हस्तान्तरित' दो भागों में विभक्त किये गये हैं । रक्षित विषयों के संबंध में सरकारी प्रस्ताव पास करने के लिए सरकार की ओर से यह सर्टीफ़िकेट देनी पड़ेगी कि देश में शान्ति, सुव्यवस्था और सुशासन के लिए यह आवश्यक है । यदि किसी विषय के 'रक्षित' होने के सम्बन्ध में सन्देह हो तो कौंसिल के मेम्बर उसका निर्णय करने के लिए उसे भारत सरकार के पास भेजने का अनुरोध गवर्नर से कर सकेंगे, जिसकी सम्मति मिलने पर वह कौंसिल की ग्रेंड कमेटी के पास भेजा जायगा। इस कौंसिल में सरकारी सदस्यों का बहुमत होगा । इसके बाद यह विषयनिर्वाचिनी कमेटी में पेश होकर फिर कौंसिल में आयेगा और यद्यपि कौंसिल में उस पर चर्चा होगी, तथापि उसे कार्यकारिणी कौंसिल के सदस्य के प्रस्ताव के सिवा रद्द करने या उसमें संशोधन करने का अधिकार न होगा। सम्भवतः रक्षित विषयों के सम्बन्ध में व्य० कौंसिल पर दबाव रखने के लिए ही ऐसा प्रबन्ध किया गया है । इसे सरल बनाने का उपाय क्यों नहीं किया गया? गवर्नर को अशासनीय कौंसिल को भङ्ग करने और किसी प्रस्ताव को पुनर्विचार के लिए पेश करने का अधिकार है । ऐसी दशा में यह समझना कठिन है कि ग्रैंड कमेटी नियुक्त करने की आवश्यकता क्यों उत्पन्न हुई ? हमें आशा है कि रिपोर्ट पर जब कार्रवाई की जायगी तब इसको उठा देने का प्रबन्ध किया जायगा । इसको उठा देने की आवश्यकता उस समय और भी ज़बर्दस्त हो जाती है, जब यह दिखाई देता है कि प्रान्तों की कार्रवाई में भारत सरकार को हस्तक्षेप करने का पूरा अधिकार है।

आर्थिक व्यवस्था के सम्बन्ध में रिपोर्ट में ये बातें प्रधान हैं:—(क) भारतीय और प्रान्तिक आय व्यय बिलकुल अलग रहेंगे, (ख) प्रान्तिक सरकारों को भारत सरकार के संचय में रुपया देना पड़ेगा, (ग) कुछ शर्तों पर प्रान्तिक सरकारें नये कर बैठा सकेंगी और ऋण ले सकेंगी और (ग) पूरा बजट व्यवस्थापक कौंसिल के सामने रक्खा जायगा ।

प्रान्तिक बजट शासकों की ओर से बनाया जायगा, और पहिली मद्द भारत सरकार को दी जानेवाली रक़म होगी, इसके बाद रक्षित विषयों पर के ख़र्च होंगे । हस्तान्तरित विषयों के लिए जो रुपया लगेगा उसका निश्चय मंत्रियों द्वारा होगा और यदि रुपये की कमी हो तो नये कर बैठाने की बात गवर्नर और मंत्रियों द्वारा स्थिर की जायगी । अनन्तर बजट व्य० कौंसिल में पेश किया जायगा और यदि रक्षित विषयों पर होनेवाले ख़र्च को कौंसिल नामंजूर या कम करे तो गवर्नर को पूरे या उसके अंश को मंजूर करने के लिए दबाव डालने का अधिकार होगा । इस मद्द के सिवा अन्य मद्दों के ख़र्च में कौंसिल के अनुसार परिवर्तन होगा। योजना के रचयिताओं ने लिखा है कि हस्तान्तरित विषयों के ख़र्च को निबाहने के सम्बन्ध में उद्वेग ज़रूर होगा, परन्तु कोई गवर्नर सच्चे कारणों के बिना कौंसिल की सम्मति को अस्वीकार न करेंगे और यदि वह कारण सच्चे हों तो उन्हें अपना दायित्व पूर्ण करने के लिए अस्वीकार करना ही होगा । हमारी समझ में बजट पर सारी सरकार द्वारा विचार होना चाहिये । जिनपर हस्तान्तरित विषयों का भार हो, उन्हें रक्षित विषयों पर होनेवाले ख़र्च पर विचार करने का मौक़ा मिलना चाहिये । इस सम्मिलित चर्चा में पूर्ण राजस्व का भारत सरकार को दी जानेवाली रक़म को छोड़कर, अनुमान किया जाय, इसके बाद रक्षित विषयों के लिए होनेवाला ख़र्च इस तरह से जांचा जाय, जिसमें, व्य० कौंसिल में होनेवाली टीका से मोर्चा लिया जाय, और बाक़ी रुपया मंत्रियों के हवाले किया जाय । यदि इससे आवश्यकता पूरी न हो तो भारत सरकार की आज्ञा से या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज्ञा मिले हुए मदों में टैक्स बढ़ाया जाय। मुझे यह कहना पड़ता है कि इससे हस्तान्तरित किये हुए विषयों का कार्य अच्छी तरह चलाने में कठिनाई होगी। मैं आवश्यक नये कर लगाने का विरोध नहीं करता, परन्तु इसका निश्चय होना चाहिये कि हस्तान्तरित विषयों के ख़र्च के लिए यथेष्ट रुपया हो। इससे यह भाव उत्पन्न होता है कि रक्षित विषयों के ख़र्च का प्रबन्ध सुरक्षित कर लिया गया है। आरम्भ में मंत्रियों का कार्य भी सरल न होगा। इसमें सुधार करने के लिए उपाय बताना कठिन है, परन्तु हस्तान्तरित विषयों के लिए निश्चित रक़म मिलने का प्रबन्ध करना कठिन न होगा। सम्भवतः दोनों विभागों के लिए निश्चित रक़म के स्थिर करने ही से इसकी कठिनाई दूर होगी, यद्यपि यह नहीं कहा जा सकता कि इससे विभिन्न विभागों की वृद्धि में बाधा न पड़ेगी।

"कार्यकारिणी सरकार के संगठन में कुछ लोगों को मि० कर्टिस के मसौदे की ध्वनि सुनाई देगी। परन्तु अच्छी तरह रिपोर्ट का अध्ययन करनेवाले को यह दिखाई देगा कि यद्यपि विभाग अलग किये गये हैं, तथापि सरकार एक है। यद्यपि कांग्रेस लीग की योजना के रचयिताओं में से मैं भी एक हूँ; तथापि मेरी व्यक्तिगत सम्मति है कि कार्यकारिणी कौंसिल के सदस्यों का निर्वाचन ल्य० कौंसिल के सदस्यों में से न हो, और इस चुनाव के सम्बन्ध में गवर्नर को अपरिमित अधिकार न होना चाहिये। सम्भव है कि भविष्य में लोकमत के प्रबल होने पर गवर्नर ऐसे मनुष्य को नियुक्त करने का साहस न कर सकेंगे, जिसका लोगों पर प्रभाव न हो, परन्तु सिर्फ इस आशा से हम सन्तुष्ट नहीं हो सकते, इसलिए इसमें सुधार होना चाहिये। मेरे विचार में कार्यकारिणी कौंसिल के सदस्यों का चुनाव निर्वाचित सदस्यों द्वारा बताये गये मेम्बरों में से होना चाहिये।

मेरे विचार में यद्यपि रिपोर्ट में बहुत-स्वतन्त्रता का अवलम्बन किया गया है तथापि यदि इससे हमें जनता के हित करने का कुछ भी मौक़ा मिलता हो तो इसे स्वीकार करना चाहिये, क्योंकि ऐसी अधूरी योजना में जिन दोषों का होना स्वाभाविक है, वे इसमें हैं। मैंने अब तक मताधिकार का उल्लेख नहीं किया है। यद्यपि इसका निर्णय एक कमेटी द्वारा होगा तथापि यह वास्तविक विस्तृत होना चाहिये। यह पहिला ही अवसर है कि ब्रिटेन ने अपनी भारतीय नीति की घोषणा की है, इसलिए दायित्वपूर्ण शासन का आरम्भ कितना ही कम क्यों न हो; परन्तु हमारी योग्यता पर सन्देह करनेवालों को हमें यह दिखा देना चाहिये कि हम कार्य करने में समर्थ हैं और उनकी धारणा भ्रमपूर्ण है। इसलिए हम यह कहने को प्रस्तुत हैं कि इस योजना से हमारी वर्तमान अवस्था बहुत उन्नत होगी। इससे इसे अङ्गीकार करके स्वीकार करना ही लाभदायक होगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुधारों पर मान० श्रीयुत श्रीनिवास शास्त्री।

"खेद का विषय है कि सुधारों के सम्बन्ध की सिफ़ारिशें कॉंग्रेस लीग की सुधार-योजना से बिलकुल भिन्न रूप में प्रकाशित हुई हैं। मसौदे में अन्तिम सफलता प्राप्त करने के लिए परस्पर दोनों दलों में विश्वास और सहनशीलता का होना आवश्यक है। कोई भी यही इच्छा करेगा कि यह आशा सफल हो। इस सुधार-योजना का प्रधान ध्येय यह है कि दायित्वपूर्ण शासन का आरम्भ प्रान्तों से हो और इसके लिए उसकी आरम्भिक मर्यादा धीरे २ शिथिल की जाय। प्रान्तों में पूरा दायित्वपूर्ण शासन प्रतिष्ठित होने के समय तक भारत सरकार के हाथ में वास्तविक अधिकार रहे। यद्यपि धीरे धीरे भारत सरकार को जनता के प्रति उत्तरदायी होना आवश्यक है, तथापि उसपर लोकमत का पूरा दबाव न रहेगा। इन सिद्धान्तों के स्वीकार करने के बाद, यह कहना पड़ता है कि सुधार-योजना में उन्हें पूर्ण करने के सम्बन्ध में ख़बरदारी से हार्दिक चेष्टा की गई है। सब महत्वपूर्ण विषयों में सुधार-योजना की सिफ़ारिशों से आजकल की अपेक्षा बहुत अधिक उन्नति होनेवाली है, और उसकी क्रमशः वृद्धि होने के लिए कमीशन द्वारा जाँच कराने का प्रबन्ध किया गया है। यह देखने के लिए कि योजना में बताये हुए नियमों के अनुसार कैसा काम चल रहा है, १२।१२ वर्ष के बाद एक कमीशन नियुक्त करने का निश्चय किया गया है। यह कमीशन नये संगठन के कार्य पर अपनी रिपोर्ट देकर भविष्य में और कौन अधिकार दिये जा सकते हैं, इसकी सिफ़ारिश करेगा। सुधार-योजना में निर्द्धारित १२ वर्ष के भीतर भी कुछ सुधार करने का अवसर रक्खा गया है। योजना में कहा गया है कि जब यह सुधार-योजना अमल में लाई जायगी, इसके पाँच वर्ष बाद भारत सरकार की मंजूरी से प्रान्तिक व्यवस्थापक कौंसिलें या स्वयं भारत सरकार अपनी ज़िम्मेदारी पर अन्य सुधार करने की आज्ञा दे सकती है।

कार्यकारिणी सभा के कार्य में गवर्नर प्रधान रहेंगे और उनके सिवा और एक यूरोपियन रहनेवाले हैं। जनता को दिये हुये अधिकारों (हस्तान्तरित विषयों पर) मंत्रिमंडल का प्रभुत्व रहेगा और रक्षित विषयों पर कार्यकारिणी कौंसिल का अधिकार होगा। इससे जब जब काम पड़ेगा तब तब व्यवस्थापक कौंसिलों मातहत अफ़सरों और जनता से मंत्रिमंडल और कार्यकारिणी कौंसिलों का मतभेद उत्पन्न होने की बहुत कम सम्भावना रहेगी। व्यवस्थापक कौंसिलों में जनता द्वारा निर्वाचित सदस्यों का संख्याधिक्य रहने के कारण, जो अधिकार उनके हवाले किये जायँगे, उनके संबन्ध में कोई क़ानून या नियम बनाने में कोई बाधा उपस्थित न होगी। यदि कार्यकारिणी कौंसिल इनके कार्यों में हस्तक्षेप करना चाहे, तो वह इसी उद्देश्य से बनाई हुई बड़ी कमेटियों द्वारा ऐसा कर सकती है। इन कमेटियों में सरकारी सदस्यों का संख्याधिक्य भी परिमित ही रहेगा। जिससे कार्यकारिणी कौंसिल को व्यवस्थापक कौंसिल के कार्य में फेरबदल करना बहुत कठिन होगा। व्यवस्थापक कौंसिल के कार्य में गवर्नर हस्तक्षेप कर सकते हैं, परन्तु इसपर ध्यान रखना चाहिये कि वे भी कारणों को लिखकर बताये बिना ऐसा नहीं कर सकते। सुधार-योजना में

आर्थिक प्रबन्ध

भी साधारणतः जनता की माँग के अनुसार ही किया गया है। प्रान्तिक और भारत सरकार के आयव्यय के मार्ग भी बिलकुल अलग किये गये हैं। प्रान्तिक सरकारों पर इतना ही बन्धन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रक्खा जानेवाला है कि उन्हें अपनी बचत की रक़म से सैकड़े ८७) रुपये भारत सरकार को देने पड़ेंगे। नये कर बैठाने का दायित्वपूर्ण अधिकार मंत्रिमंडल को दिया गया है। इससे रक्षित अधिकारों के विभागों में होनेवाली ख़र्च की वृद्धि पर अप्रत्यक्ष रूप से उनका अधिकार रहेगा। भिन्न २ कार्यों के लिए निर्द्धारित रक़मों के संबन्ध में प्रस्ताव पेश करके ही बजेट मंज़ूर किया जायगा। रक्षित विषयों के संबन्ध के रुपयों को फिर बजट में सम्मिलित करने का अधिकार गवर्नर साहब को होगा, परंतु वे लिखकर यह बताने के बाद ही कि कार्यनिर्वाह के लिए उनकी अत्यन्त आवश्यकता है, ऐसा कर सकेंगे।

भारतीय सरकार में दो सभाएँ रहेंगी। जिनमें से व्यवस्थापक एसेम्ब्ली या सभा में दो तिहाई निर्वाचित सदस्य होंगे। इस सभा द्वारा निर्मित क़ानूनों को अमली स्वरूप प्राप्त होने के लिए उनपर दूसरी कौंसिल को सम्मति मिलनी चाहिये। यदि दूसरी कौंसिल कोई क़ानून बनाना चाहे तो उसे गवर्नर जनरल द्वारा यह सर्टीफ़िकेट लेनी पड़ेगी कि वह शान्तता और सुशासन के लिए आवश्यक है। इसका नाम कौंसिल आफ़ स्टेट होगा। यद्यपि इसका संगठन सरकारी प्रस्ताव पास कराने के उद्देश ही से किया गया है, तथापि अन्य देशों की ऐसी ही कौंसिलों की अपेक्षा इसका संगठन उत्तम है।

कार्यकारिणी सभा में एक अतिरिक्त भारतीय सदस्य नियुक्त होनेवाले हैं। यद्यपि प्रजा के प्रतिनिधियों को भारत सरकार के कार्य में हस्तक्षेप करने का नियमानुसार कोई अधिकार नहीं है, तथापि कार्यकारिणी कौंसिल में एक भारतीय के रहने के कारण आजकल की अपेक्षा सरकारी नीति और कार्य पर उसका अधिक प्रभाव पड़ेगा। हर एक विभाग को सलाह देने के लिए एक कमेटी की नियुक्ति से यद्यपि मंत्रियों की जिम्मेदारी कुछ कम होती है तथापि उक्त कमेटी की नियुक्ति लाभदायक ही प्रमाणित होगी। भारत-मंत्री का वेतन ब्रिटिश ख़ज़ाने से देने और पार्लमेंट के सदस्यों की एक विषय-निर्वाचिनी कमेटी नियुक्त करने की पद्धति भी मंगलसूचक है। यह कमेटी भारत-मंत्री के कार्य पर देखभाल, भारतीय मामलों के सम्बन्ध में सलाह देने और व्यवस्थापक कौंसिलों में जब कोई विशेष प्रस्ताव पास हो, उस समय बड़ी कमेटियों द्वारा पास होनेवाले प्रान्तीय क़ानूनों की जांच करने का काम करेगी।

सुधार-योजना में कुछ दोष भी है। जब तक वे न मिटाये जायँ, तब तक उत्साह से योजना का समर्थन नहीं किया जा सकता। भारत सरकार को बिलकुल स्वतंत्र रखने को हम कभी स्वीकार नहीं कर सकते। जनता की ओरसे जैसी शासन-प्रणाली प्रतिष्ठित करने की मांग की गई है, उसके सिद्धान्त की नींव सिर्फ प्रान्तिक शासन में डाली गई है। ऐसी अवस्था में शांति परिषद में क्या कोई भी यह कह सकेगा कि वही सिद्धान्त भारत में भी प्रचलित किया गया है? क्या कोई कह सकता है कि नमक बनाने, आय-कर का प्रबन्ध रखने या रेलवे का कार्य चलाने के काम हमारी शक्ति के बाहर हैं? स्टेट कौंसिल को कुछ विषयों में क़ानून बनाने का जैसा अधिकार है, वैसा ही अधिकार उपयुक्त या अन्य विभागों के सम्बन्ध में व्यवस्थापक कौंसिल को दिया जाता, तो क्या भारत सरकार को लकवे की बीमारी हो जाती? रिपोर्ट के देखने से जान पड़ता है कि भारत सरकार की ओर नज़र डालने की भी हिम्मत उसकी नहीं हुई है। इतना ही नहीं परन्तु १२ वर्ष के बाद जो कमीशन नियुक्त किया जानेवाला है, उसके कार्य-क्रम में भारत सरकार पर लोकमत का दबाव डालने की सम्भावना का उल्लेख करने का ज़िक्र तक रिपोर्ट में नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया गया है। यह देश

आर्थिक स्वाधीनता

को विशेष महत्व देता है, इसपर भी उसके सम्बन्ध में कोई निश्चित सम्मति रिपोर्ट में नहीं दी गई है। योजना में कुछ ऐसे सदस्यों का उल्लेख है जिनपर किसी विभाग की ज़िम्मेदारी नहीं है, और समय २ पर उनके भारस्वरूप होने की सम्भावना है। वैसे ही प्रीवी कौंसिल का कार्य भी निश्चित नहीं किया गया है, इसलिए वह सिर्फ़ शोभा के लिए ही रहेगी।

भारतीय कार्यकारिणी कौंसिल में रहनेवाले सदस्यों की संख्या निर्द्धारित नहीं है, ऐसी दशा में १ भारतीय को उसमें स्थान देना पर्याप्त नहीं है। यह साधारण नियम है कि दूसरी कौंसिल रहने से पहिली कौंसिल सिर्फ़ जनता द्वारा चुने हुए सदस्यों की होनी है। कम से कम भारतीय व्यवस्थापक कौंसिल में दो तिहाई से अधिक निर्वाचित प्रतिनिधियों के रहने की आवश्यकता है और प्रान्तिक कौंसिलों में निर्वाचित प्रतिनिधियों का बहुमत हुए बिना सच्ची स्वायत्तता मिलने की सम्भावना नहीं है। प्रा० व्यव० कौंसिलों को सार्वजनिक हित और आवश्यक विषयों को उपस्थित करके उनपर वादविवाद करने का पूरा अधिकार होना चाहिये। गवर्नर पर एक यह बन्धन आवश्यक है कि निर्द्धारित समय पर व्यव० कौंसिल का अधिवेशन करना चाहिये। गवर्नर को व्यव० कौंसिल का सभापति न होना चाहिये, और सभापति चुनने का अधिकार भी उनको न रहना चाहिये। मंत्रिमंडल का दर्जा कार्यकारिणी कौंसिल के सदस्यों के समान होना और उन्हें उनके बराबर वेतन मिलना चाहिये। विषयों को रक्षित और हस्तान्तर करनेवाली कमेटी को स्पष्ट आज्ञा देनी चाहिये कि रक्षित विषय कम और हस्तान्तर किये जानेवाले विषय अधिक हों। यदि ऐसा प्रबन्ध न हो तो दायित्वपूर्ण शासन-पद्धति का आरम्भ पोला और आभासमय ही होगा।

सुधारों पर डा० सुब्रह्मण्य ऐयर।

यह स्कीम अत्यन्त निराशाजनक है। इसमें रुपये में एक आना भी अधिकार नहीं दिया गया। इसकी सूचनाएँ पदपद पर लोगों के विषय में अविश्वास प्रकट करती हैं। इसलिए वाञ्छित ध्येय प्राप्त होने तक हमें बराबर आन्दोलन जारी रखना चाहिये।

सुधारों पर मान० मालवीय जी की सम्मति।*

"जहां तक प्रस्तावों का सम्बन्ध है, वहां तक ये विस्तृत और उदार सुधारों के प्रवर्तक हैं, जिनके लिए हमको कृतज्ञ होना चाहिये। परन्तु ये देश की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए पर्याप्त नहीं हैं। इनका बिलकुल बहिष्कार करना प्रश्न के बाहर है। इन्हें बढ़ाने और इनमें संशोधन करने के लिए हमें तजवीज़ों को पेश करना और उनके लिए हेतु देना चाहिये।

* माननीय मालवीय जी की "सुधारों" की एक विस्तृत आलोचना प्रकाशित हो गई है। उसको पढ़ने के बाद ही उनकी राय ठीक तरह से मालूम हो सकती है। मालवीय जी की राय, अङ्गरेज़ी तथा हिन्दी में पुस्तकाकार छप रही है और शीघ्रही प्रकाशित होगी। हम इतना कह देना चाहते हैं कि अबतक जितनी सम्मतियां प्रकाशित हुई हैं उनमें से इसका सबसे ऊँचा स्थान है। जो पुस्तक लेना चाहते है उन्हें शीघ्र ही आर्डर भेज कर ग्राहकों में अपना नाम दर्ज करा लेना चाहिये। मैनेजर, मर्यादा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुधारों पर लोकमान्य तिलक ।

लोकमान्य का कथन है कि मि० मांटेगू की तैयार की हुई सुधार स्कीम बिलकुल असन्तोष-जनक है। रिपोर्ट तो अच्छी है परन्तु इसकी प्रस्तावित स्कीम निरर्थक है। कांग्रेस लीग स्कीम में जो शीघ्र स्वराज्य प्राप्त करने के सिद्धान्त थे उनसे यह स्कीम प्रत्येक अंश में प्रतिकूल है। बात असल में यह है कि स्थानिक स्वराज्य-सम्बन्धी अधिकार पूरे करके अधूरे प्रान्तिक स्वराज्य की व्यवस्था की गई है परन्तु इंपीरियल गवर्नमेंट में हमें कुछ व्यावहारिक अधिकार नहीं दिये गये हैं। कांग्रेस लीग स्कीम को सुशासन के लिये अहितकर कह कर उन्होंने जो आक्षेप किये हैं वे इस नई स्कीम के विषय में भी ठीक चरितार्थ होते हैं। बड़े आश्चर्य की बात तो यह है कि मि० भूपेन्द्र-नाथ वसु ने भी इसका समर्थन कर दिया है। इसलिए अब हमारे सामने कांग्रेस के विशेष अधिवेशन का सभापति चुनने का प्रश्न उप-स्थित है। पहिले इसे तय कर लेना चाहिये। यद्यपि राजा साहब महमूदाबाद, मिसेज़ बेसेंट, डा० सुब्रह्मण्य ऐयर तथा मैं, इन चारों ने भी सभापति का आसन ग्रहण करने से इन्कार कर दिया है परन्तु तो भी हम चारों में से ही किसी न किसी को यह कार्य करना ही पड़ेगा। इंग-लैंड को डेपूटेशन भेजने को तो शायद छै महीने बाद प्रबन्ध हो सके। साम्राज्य के पुन-संगठन के समय कांग्रेस लीग को स्वीकार कराने के लिए हमें भरसक प्रयत्न करना चाहिये। हमारे डेपूटेशन को गवर्नमेंट इंगलैंड जाने देगी या नहीं इस विषय में मुझे पूर्ण विश्वास है कि रिपोर्ट के लेखानुसार इस सुधार स्कीम पर वादविवाद करने की पूर्ण स्वतन्त्रता दी जावेगी। इस बीच हम लोग कांग्रेस लीग स्कीम का सम-र्थक एक दूसरा बिल पार्लामेंट में पेश करने का प्रयत्न करेंगे। यदि हमारे ये सब प्रयत्न निष्फल चले जावें तो उसके बाद हम अपने कर्तव्य पथ का निर्णय करेंगे।

सुधारों पर श्रीमती बेसेंट ।

यह सुधारों सी योजना न इङ्गलैंड के देने के योग्य है और न भारतवासियों के लेने के योग्य है। उदारता और विचित्रता के स्थान में यह स्कीम तुच्छ और वाहियात बातों से भरी है। इसमें उदार और दूरदर्शिता भरी राजनी-तिज्ञता की न गन्ध है और न इससे रचयिता की बुद्धिमत्ता ही प्रगट होती है। भारत की भविष्य में भी स्वतन्त्रता उपलब्ध होने की आशा इस स्कीम से कोई प्रगट नहीं होती। भारत-माता के सपूतों ने इसलिए अपने प्राण दिये हैं कि दूसरे देशवासी उस स्वतन्त्रता को प्राप्त कर-चैन उड़ावें जिससे खुद भारतवासी ही वंचित रक्खे जाते हैं; दूसरे देशों को स्वतन्त्रता दिलाने के लिए ही उसने अपना धन स्वाहा कर दिया और उसके ही पुत्र विदेशी राज्य की गुलामी में अपना समय बिताते हैं। संसार भर में भारत ही एक ऐसा देश रह जायगा जिसको सन्धि से कोई लाभ नहीं होगा क्योंकि इससे उसको स्वतन्त्रता तो मिल नहीं सकती बल्कि उसका और अधिक खून चूसे जाने की आशङ्का है तथा संसार के अन्य राष्ट्रों के मुक़ाबले में उसे नीचे पद पर रहना पड़ेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय टिप्पणियाँ।

"फूल तो दो दिन बहारे जाँफ़िज़ा दिखला गये,
हसरत उन गुंचों पै है जो बिन खिले मुरझा गये"।

लक्ष्मीशङ्कर अवस्थी, हमारे दक्षिण बाहु, मित्र, सहकारी, अभ्युदय तथा कुछ दिनों से मर्यादा के मेरुदंड, आज संसार में नहीं रहे। आज हमारा वह सहारा नहीं रहा जिसके भरोसे हम सब कुछ छोड़कर काहिली या बीमारी में दिन काट देते थे, आज वह विश्वस्त उत्तरदायित्वपूर्ण मित्र न रहा जिसकी देखरेख में हमको उतना ही विश्वास था जितना कि अपनी, आज वह काम बटानेवाला न रहा जो भूख, प्यास, नींद, स्वास्थ्य की परवा न कर दिन रात जी तोड़ परिश्रम कर इस चिन्ता में निमग्न रहता था कि अभ्युदय और मर्यादा सर्व-श्रेष्ठ पत्र और पत्रिका रहे। प्रायः दस वर्ष से हम अवस्थी जी को जानते थे। आरम्भ में अवस्थी जी "लीडर प्रेस" में काम करते थे। वहां से माननीय मालवीयजी कुछ दिनों के लिए उनको माँगन माँग लाये थे। अवस्थी जी मिडिल की कक्षा तक स्कूल में पढ़े हुए थे। मा० मालवीय जी उनको टाइपराइटर का काम सिखलाना चाहते थे। उसी समय में अभ्युदय का भार हमने लिया था। अवस्थी जी को माननीय मालवीय जी से हमने माँग लिया। अध्यवसाय, परिश्रम और दिनदूनी रात चौगुनी बढ़नेवाली योग्यता से अवस्थी जी ने हमको चकित कर दिया। हमको इसके कहने में संकोच नहीं कि अवस्थी जी को हमसे कहीं अच्छा हिन्दी भाषा का ज्ञान हो गया था और अँगरेज़ी भाषा भी वे बहुत ही अच्छी तरह लिखने लगे थे। "बङ्गाली", "पत्रिका" तथा "लीडर" में प्रति सप्ताह, एक कालम या आधा कालम हिन्दी पत्र पत्रिकाओं की प्रधान खबरें या सम्मतियाँ वे कुछ दिनों तक लिखकर भेजा करते थे। जिन लोगों ने उनको पढ़ा है वे ही कह सकते हैं कि अँगरेज़ी भाषा में भी कितनी सुंदर रीति से वे अपने भावों को प्रकट कर सकते थे। यह सब उनकी स्वयमोपार्जित योग्यता थी। दिन रात पढ़ना और मनन करना या साधु-संगत में समय बिताना अवस्थी जी का काम था। ऐसे मित्र के विछोह का अर्थ क्या है यह हम आपको बतलाने में असमर्थ हैं। जो वृक्ष रोपा गया था, जो चन्द्रमा की कला की भांति उत्तरोत्तर वृद्धि को प्राप्त हो रहा था, कलिका जिसमें प्रस्फुटित ही हो पाई थी, वह मुरझा गया। अवस्थी जी बड़े ही साधु और सौम्य प्रकृति के पुरुष थे, हर समय उनके मुख पर हँसी खेला करती थी किन्तु अधिक परिश्रम करने से उनका स्वास्थ्य बहुत बिगड़ गया था। स्वास्थ्य की सर्वथा हीन दशा में भी दस, बारह, चौदह घंटे वे लगातार काम करते थे। कुछ विशेष कारणों से उन्होंने अभ्युदय से सम्बन्ध तोड़ा था। सम्बन्ध तोड़ने के कुछ दिन पूर्व तथा पहिले भी कभी कभी अभ्युदय का उन पर पूरा भार रहता था। प्रायः प्रत्येक लाइन उनकी देखी या लिखी हुई होती थी। स्वास्थ्य की हीन दशा में इतना कड़ा परिश्रम उनके लिए ज़हर हो गया। उनका बड़े सच्चे कार्यकर्ता होना तथा निःस्वार्थ हिन्दी की सेवा और प्रेम भी उनको स्वास्थ्य की चिन्ता छोड़कर अधिक परि-श्रम करने पर बाध्य करता था। ऐसा हिन्दी का भक्त आज न रहा यह हिन्दी संसार का अभाग्य है। अवस्थी जी की अवस्था २५ वर्ष की थी, इतने ही दिनों में स्वभाव की सरलता और उच्चाशयता से उन्होंने अपने मित्रों के हृदय में ऊँचा स्थान प्राप्त कर लिया था। ऐसे कुसुम का यों मुरझा जाना असहनीय नहीं तो क्या है। ईश्वर उनके कुटुम्बियों को धैर्य प्रदान करे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और इस विपत्ति में उनकी सहायता करे इसके सिवाय और अब क्या कह सकते हैं।

डा० मूलचन्द टंडन।

शहर के प्रसिद्ध डाक्टर, म्युनिसिपल बोर्ड के एक रत्न, प्रजापक्ष के कट्टर और विकट वकील, सामाजिक तथा राजनैतिक क्षेत्र के एक प्रधान कार्यकर्ता डाक्टर साहब का एक कड़ी बीमारी के बाद स्वर्गवास हो गया। डाक्टर साहब मृदुल और हँसमुख स्वभाव के मनुष्य थे और प्रत्येक मनुष्य की यथाशक्ति सहायता करने को हर समय प्रस्तुत रहते थे। डा० साहब की मृत्यु से शहर के सार्वजनिक कामों को खासी क्षति पहुंची है।

"एक ज़िन्दा मिसाल था, न रहा,
ख्वाब था! या ख्याल था! न रहा!

ला० काशीनाथ कक्कड़

स्थानीय रईस कक्कड़ घराने के एक सुगन्धमय पुष्प थे। खेद से कहना पड़ता है कि युवावस्था में ही प्रायः १५ दिन की हृदस्पन्दन की बीमारी के बाद आपका स्वर्गवास हो गया। आप एक सच्चे गृहस्थ, सच्चे मित्र और अमीर घरानों के लड़कों के लिए एक अच्छे नमूना थे। आप में अनेक अच्छे और परस्परविरोधी गुणनिवास करते थे। आपकी एक पाई फजूल खर्च में नहीं जा सकती थी, कौड़ी कौड़ी का आप हिसाब रखते थे किन्तु इसके साथ ही साथ आप बड़े हौसलेवाले और उदार थे। आप सच्चरित्र और साथ ही साथ यारबास थे। हृदय इतना अच्छा था कि आपकी हर समय यही चेष्टा रहती थी कि कैसे, क्या करने से किसी का उपकार, किसी मित्र को उनसे सहायता प्राप्त हो जाय! ईश्वर उनकी आत्मा को सद्गति और उनके कुटुम्बियों को इस दारुण दुःख में धैर्य दे और क्या कहें।

मान्टेगू चेम्सफोर्ड सुधार

८ जुलाई को प्रकाशित हो गये। हमको खेद है हम अक्षरशः अनुवाद या उसका कुछ भी अंश इस संख्या में नहीं प्रकाशित कर सके। रिपोर्ट २४३ पृष्ठ में छपी हुई है और उसका हिन्दी अनुवाद प्रायः ५०० पृष्ठ में होगा इस संख्या या किसी एक संख्या में स्कीम का प्रकाशित करना असंभव है किन्तु इसका हमने दूसरा प्रबन्ध कर लिया है। अनुवाद तीन भागों में पुस्तकाकार छप रहा है। प्रथम भाग आधे से अधिक छप चुका है और प्रायः २० दिन में प्रकाशित* हो जायगा। मर्यादा के पाठक उसीको अपना कर सुधार व्यवस्था को सुचारु रूप से मनन कर अपनी सम्मति पुष्ट कर सकते हैं। इस संख्या में आरम्भ में सुधारव्यवस्था की सारभूत बातें और साथ ही भारतमित्र, अभ्युदय, प्रताप, मराठा आदि कुछ सहयोगियों तथा कुछ प्रधान पुरुषों की सम्मतियाँ हमने प्रकाशित कर दिया है। स्थानाभाव से हम अधिक सम्मतियां इस संख्या में प्रकाशित नहीं कर पाये किन्तु हम आशा करते हैं कि धीरे धीरे हम सभी प्रधान पुरुषों की सम्मतियों को मर्यादा में निकाल सकेंगे। हम आशा करते हैं कि मर्यादा के पाठक, माँटेगू चेम्सफोर्ड सुधार व्यवस्था को इन सम्मतियों की सहायता से पढ़कर अपना मत निश्चित करेंगे। भारत के इतिहास में वर्तमान समय बड़ा नाजुक है, सैकड़ों वर्ष तक ऐसा अवसर हाथ न आयेगा और इस समय की तनिक सी

भूल या भीरुता

से हमारा ही नहीं हमारे बाद में आनेवाली दो तीन पुस्तों का गला सदा के लिए घुट जायगा। व्यवस्था देनेवालों ने भी रिपोर्ट शीघ्र

* इस मास के अंतिम सप्ताह तक में प्रथम भाग हो जायगा पाठकों को शीघ्रही आर्डर भेज कर ग्राहकों में नाम दर्ज करा लेना चाहिये। मैनेजर, मर्यादा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही प्रकाशित कर दिया है और उनकी इच्छा है कि भारतवासी इसको पढ़ कर अपनी सम्मति प्रगट करें। यदि भारतवासी अपना कर्तव्य पालन न करें, अपनी उचित राय न ज़ाहिर करें तो यह उनका दोष होगा और इसका दंड उनको ही नहीं वरन् उनके बाल बच्चों, संबन्धियों, पड़ोसियों और समस्त देशवासियों को सहस्त्रों वर्षों तक भोगना पड़ेगा, दंड भी ऐसा वैसा नहीं वरन् गुलामी और स्वत्वहीनता का जिससे दुःखदायी, हीन और कठोर दंड संसार में और कोई हो ही नहीं सकता। इसलिए प्रत्येक भारतवासी का यह धर्म है कि वह सुधारों पर विचार करे। रिपोर्ट को हमने पढ़ा है और यथाशक्ति उसपर विचार किया है, ऐसी अवस्था में हम अपना कर्तव्य समझते हैं कि हम भी अपनी राय पाठकों पर प्रकट कर दें। संसार के सभी मनुष्यों में

गुण और दोष

होते हैं, गुणों की अधिकता से मनुष्य अच्छा और अवगुणों के आधिक्य से वह बुरा होता है। ऐसा संभव नहीं कि किसी मनुष्य में दोष ही दोष या गुण ही गुण हों। रिपोर्ट के संबन्ध में भी यही ध्रुव है। हमको केवल विचार यह करना है कि वह अच्छी है या बुरी, उसमें गुणों या अवगुणों की अधिकता है, अर्थात् उससे हमको अधिक लाभ होगा या हानि। जो सम्मतियाँ अबतक प्रकाशित हुई हैं उनमें आरंभ में मि० मांटेगू और लार्ड चेम्सफोर्ड को धन्यवाद देने का क्रम देखा गया है, यह कहा गया है कि उन लोगों ने पूरी नेकनीयती से, ईमानदारी से, भारतीय मसलों पर विचार किया है और इसी हेतु से उनकी सहृदयता और उदारता की प्रशंसा की गई है। हम

धन्यवाद

नहीं देते इसलिए नहीं कि मि० मांटेगू और लार्ड चेम्सफोर्ड उदार तथा नेकनीयत नहीं या धन्यवाद देने के योग्य नहीं वरन् इस लिए कि किसी सार्वजनिक प्रश्न पर विचार करते समय हम उसमें व्यक्तित्व Personalities का प्रश्न उठाना न्याययुक्त नहीं समझते। मांटेगू साहब मिस्टर हैं, साधारण पुरुष हैं, लार्ड हैं, भारत-सचिव हैं या सम्राट् के प्रतिनिधि हैं इससे उनकी स्कीम अच्छी या बुरी नहीं हो सकती, साथ ही वे बड़े ईमानदार हैं, उदार हैं, बेईमान हैं या अनुदार इससे स्कीम के गुण-दोष कम या ज़्यादे नहीं हो सकते। जिस समय तक स्कीम प्रकाशित नहीं हुई थी या जिस समय इस उद्देश्य से वे लन्दन से चले थे उस समय हम उनके व्यक्तित्व या व्यक्तिगत गुणों Qualities से बोध कर सकते थे, उनकी ईमानदारी, उदारता और स्वतंत्रता के प्रेम से यह अन्दाज़ा लगा सकते थे कि रिपोर्ट उदार या अनुदार होगी किन्तु जब स्कीम प्रकाशित हो गई तब रचयिताओं के व्यक्तिगत गुणों या स्कीम के साहित्यिक गुणों की दोहाई देकर स्कीम के शब्दों को अधिक मानी पहिनाना या यह समझना या समझाना कि व्यवहार ऐसा नहीं वैसा होगा, या आज नहीं तो दस दिन बाद यह हो जायगा, यह उचित नहीं। इसके सिवाय हमारी राय में "राजनीति" के अन्तर्गत "उदारता" नहीं है और न उदारता के अंतर्गत राजनीति ही है। राजनीति का प्रथम और सर्वोत्कृष्ट सिद्धान्त विशेषकर उन जातियों के लिए जो हीन हैं और उठना चाहती हैं या जो गुलामी की जंजीर में जकड़ी हुई हैं यह है:—

"That any one should act in Politics out of complaisance or from a sentiment of Justice, others may expect from us but not we from them. Every Government takes solely its own interest as the standard of its actions, however it may drape them with deductions of Justice or

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

sentiment. My belief is that no one does anything for us unless he can at the same time serve his own interests. अर्थात् "राजनीति में कोई उदारता, न्याय आदि के भावों से परिचालित नहीं होता। प्रत्येक गवर्नमेंट अपने स्वार्थों को दृष्टि में रख कर कोई काम करती है और मेरा विश्वास है कि मेरे लिए कोई कभी कुछ नहीं करता जब तक उसका भी स्वार्थ उससे न सिद्ध होता हो"। बिस्मार्क के इस सिद्धान्त की जो अवहेलना करते हैं वे धोखा खाते हैं। मि० मांटेगू और लार्ड चेम्सफोर्ड उदार हैं, इससे हमको विरोध नहीं, किन्तु हमको इससे अवश्य विरोध है कि भारतीय प्रश्नों पर विचार करते समय वे उतने ही उदार और नेकनीयत हो सकते हैं जितना कि एक भारतीय, साथ ही हमको इससे भी विरोध है कि इङ्गलैंड और भारत के परस्पर विरुद्ध हितों के सामने आने पर भारत की उनको उतनी ही चिन्ता रहेगी जितनी कि एक भारतीय को। इन्हीं कारणों से उदारता तथा नेकनीयती के नाम पर न हम धन्यवाद देना उचित समझते हैं और न उनके सहारे हम स्कीम को उदार और श्रेष्ठ ही मानने को तैयार हैं। हम स्कीम को जैसी वह है जैसे उसके शब्द हैं और जो उनके मानी हैं उसी की कसौटी पर कसना उचित समझते हैं। कुछ शब्दों में तो सुधार व्यवस्था के संबंध में

हमारी राय

यह है:—

"उमड़ि घुमड़ि घन लीन्हों है चहूँधा घेरि,
शोर भयो धुरवा जवासे जूथ जरिगे।
डहडहे भये द्रुम रंचक हवा के गुन,
कुहू कुहू मोरवा पुकारि मोद भरिगे॥
रहि गये चातक जहाँ के तहाँ देखत ही
शोभनाथ कहूं बूंदा बूंदि हू न करिगे।
शोर भयो घोर चँहुओर महि मंडल में
आये घन आये घन आय के उघरिगे॥"

अथवा

कंज बन जानि हंस मारि मन "मून" फिरे
गन्ध बन भृङ्गन के भङ्ग कर डारे तैं।
पाके फल जानि शुक पुंज पछताने आन,
जानि कै बसन्त बात वृथा पात डारे तैं॥
देखि अरुणाई मन माँहि तुव फूलन की,
आमिष अहारी गृध वायस बिडारे तैं।
परे तरु सेमर के सिफत तिहारी यह
आश दै दै पन्छिन निराश करि डारे तैं॥

हमारी समझ में कवि शोभनाथ ने मांटेगू-आगमन और स्कीम-सम्बन्धी हमारे विचारों को मेघ के सम्बन्ध में बड़े ही सरस और ओज-पूर्ण शब्दों में कह डाला है किन्तु टीकाटिप्पणी का यह क्रम हमको पसन्द नहीं। टीका-टिप्पणी ठीक हो इसके लिए तथा इसलिए भी कि पाठकों को भी अपना मत निश्चय करने में सहायता मिले "हमारी राय ऐसी क्यों है" इसको कारण सहित बतला देना हम अपना कर्तव्य समझते हैं।

स्कीम की भूलभुलैया

में न घुसकर अपनी राय क़ायम करने के और भी सहज तरीक़े हैं और संसार में बहुत से सज्जन इन्हीं सहज उपायों को प्रायः काम में लाया करते हैं। एक उपाय है यह देखना कि हमारे विपक्षियों, हमारे हितों के विरोधियों की इस सम्बन्ध में राय क्या है। किसी स्कीम या सुधार को यदि पायोनियर, मद्रास मेल, स्टेट्समैन आदि एँग्लो इंडियन पत्र तथा स्वयम् एँग्लो इन्डियन लोग अच्छा समझें, उसकी प्रशंसा के पुल बांधें और प्रयत्न करें कि भारतवासी भी हां में हां मिला दें तो बिना कुछ भी सोचे विचारे किसी भी हिन्दुस्तानी को समझ लेना चाहिये कि

दाल में कुछ काला

है और जिसे ये अच्छा कह रहे हैं वह उनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए भी उतना ही अच्छा नहीं हो सकता। मांटेगू चेम्सफोर्ड-स्कीम सहज ही में इस कसौटी पर कसी जा सकती है। हम देख रहे हैं कि एँग्लो इन्डियन पत्र तथा कितने ही एँग्लो इंडियन सज्जन और हमारे वे अफ़सर विशेष कर जिनको हम पहिले से जानते हैं एक स्वर से स्कीम की प्रशंसा कर रहे हैं ऐसी अवस्था में हमको यह समझने में संकोच न करना चाहिये कि स्कीम से हमारा बहुत बड़ा हित नहीं हो सकता। स्कीम के समर्थक कह सकते हैं कि एक ओर से यदि हमारे विपक्षी समर्थन कर रहे हैं तो यह भी तो सत्य है कि हमारे विदेशी शुभचिन्तक भी—जिनकी हितचिन्ता में हमको सन्देह नहीं हो सकता—तो समर्थन कर रहे हैं। यह ठीक है, हमारे विदेशी शुभ-चिन्तक भी समर्थन कर रहे हैं किन्तु इसका कारण और कुछ भी हो सकता है। कारण क्या है, हम आगे बतलावेंगे।

स्कीम को भले प्रकार समझ सकने तथा उस पर सम्यक विचार उपस्थित करने के लिए यह आवश्यक है कि हम

स्कीम के गर्भ-समय

से उस पर दृष्टिपात करना आरम्भ करें, उस समय से आजतक की उसकी एक एक बात को समझें और मनन करें। ऐसा करने पर ही हमारा विचार करना उचित और पर्याप्त हो सकता है। जो अआ इई न जानकर क ख ग घ पढ़ना चाहें या उसका प्रयत्न करें उनका ज्ञान, ज्ञान नहीं अज्ञान होगा।

हमको यह विचार करना चाहिये कि मांटेगू-चेम्सफ़ोर्ड स्कीम गर्भ में कैसे आई? इसके गर्भाधान में अधिक योग किसका है? शासकों की उदारता का, भारतवासियों के आन्दोलन का, वर्तमान समय का—जो बड़े बड़े घोर परिवर्तनों की अपेक्षा कर रहा है—या आधुनिक महाभारत का जो विकराल काल के कराल गाल के समान नित नये देशों को हड़पता और रणक्षेत्र में उगलता चला जा रहा है।

शासकों की उदारता

का प्रश्न उठ ही नहीं सकता। जैसा कि हम कह चुके हैं राजनीति और उदारता विरोधात्मक शब्द हैं, दूसरे संसार के इतिहास-काल में तो कहना ही क्या मर्यादा पुरुषोत्तम राम और विभीषण के समय में भी यह देखी नहीं गई, तीसरे इस हृदयगत उदारता का कम से कम भारतवासियों की नज़रों में इसके पहिले शासकों ने कभी परिचय नहीं दिया, चौथे अकस्मात् और अकारण इस समय इसके पैदा हो जाने का कोई विशेष कारण नहीं है। ऐसी दशा में हम यह मानने को तैयार नहीं कि सुधार-स्कीम शासकों की उदारता के कारण गर्भ में आई। अब हम इस पर विचार करना चाहते हैं कि क्या

भारतवासियों का आन्दोलन

फला है? यह भी नहीं हुआ है क्योंकि इसके पहिले "बङ्ग-भङ्ग" का भी आन्दोलन ऐसा नहीं फला कि भारत-सचिव उत्तरदायित्वपूर्ण शासन-व्यवस्था की बात चलाते या उसकी व्यवस्था पर विचार करने के लिए भारत में पदार्पण करने का कष्ट उठाते। इसके विपरीत हम यह कह सकते हैं कि उदार लार्ड हार्डिंज ने अपने समय में भारतवासियों को उनके स्वत्व दिलाने के लिए बहुत लिखापढ़ी की थी, इसके पहिले भी अनेक सहृदय वाइसराय भारतवासियों की बेड़ी तनिक ढीली कराने का प्रयत्न कर चुके हैं किन्तु ऐसा कभी हुआ नहीं। यह सुधार-व्यवस्था लार्ड हार्डिंज की ही दोहाई देकर दी जाती है, कामन्स सभा में प्रश्न होने पर कहा जाता है कि बैठे बिठलाये, भारतवासियों के गरम दल के आन्दोलन से दबकर उसे उत्साह प्रदान करने को नहीं वरन् इसलिए कि लार्ड हार्डिंज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के समय से भारत-सरकार चैन नहीं लेने देती और कहती है कि नर्म दलवाले भी अपने हाथ से बाहर हो जायंगे, सुधार करना ज़रूरी है। मि० मांटेगू पर कटाक्ष होने पर कहा जाता है कि स्वतंत्रता के प्रेम या मनोवेग से वे सुधार करने को लालायित नहीं वरन् वे सुधार करना चाहते हैं क्योंकि सुधार इस समय अनिवार्य रूप से आवश्यक हैं। ऐसी अवस्था में यह प्रत्यक्ष है कि शासकों की उदारता या भारतीयों के आन्दोलन को भारत में भारतसचिव को लाने का श्रेय हम नहीं दे सकते। इसका समस्त श्रेय हम

समय

और युद्ध को देते हैं। इसके अनेक कारण हैं और वे किसी से छिपे नहीं। जैसा हम कह चुके हैं समय घोर परिवर्तनों की अपेक्षा कर रहा है, वास्तव में चार वर्ष की लड़ाई के बाद अब परिवर्तनों का युग आया और आरंभ हो रहा है। ये परिवर्तन किसी एक देश में, द्वीप में या महाद्वीप में परिमित नहीं होंगे। संसार के प्रत्येक राष्ट्र, प्रत्येक देश में ये परिवर्तन होंगे किन्तु यह विषयान्तर है। परिवर्तन और स्वतंत्रता की लहरों से दूर भारत क्या कोई भी देश नहीं रह सकता। इसी लिए भारत में परिवर्तन के युग ने पदार्पण किया है। भारतवासी चाहें या न चाहें, शासकों की इच्छा हो या नहीं भारत को ये लहरें चपेटा मारेंगी, वह स्नान करेगा, धोया जायगा, पवित्र होगा और इसे भारतवासी या शासक रोक नहीं सकते। ऐसी दशा में समय को प्रधानता न देना व्यर्थ की ज़िद के सिवा और कुछ नहीं है।

युद्ध

का जो हम नाम लेते हैं उसका कारण यह है कि इस युद्ध ने एक नूतन-विचारक्षेत्र संसार की नज़रों के सामने ला रक्खा है। स्वतंत्रता, स्वराज्य, स्वभाग्यनिर्णय के सिद्धान्त और जातु के साथ संसार की जनता के मन में स्थान कर रहे हैं। संसार की जनता के येही आदर्श और आराध्य देव हो रहे हैं। प्रत्येक बात को वह इससे जोड़ती और इसकी कसौटी पर कसती है, जहां इनका वास नहीं वहां इनकी प्रतिष्ठा करना वह अपना कर्तव्य समझती है और इन्हीं विचारों की प्रेरणा से भारत के संबन्ध में इनकी चर्चा होने लगी है। दूसरा कारण यह है कि युद्ध

स्वतंत्रता के स्थापन

की दोहाई देकर हो रहा है। मित्रदल साफ साफ कह रहा है कि स्वतंत्रता की रक्षा के लिए वह ख़ून बहा रहा है। इङ्गलैंड चिल्ला चिल्ला कर कह रहा है कि हीन और छोटे राष्ट्रों की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए, बेलजियम के लिए, मान्टीनिग्रो, सर्विया आदि के लिए, वह लड़ रहा है। एमेरिका भी इसीलिए युद्ध में सम्मिलित हुआ है। जबतक रूस के ज़ार सम्मिलित थे एमेरिका युद्ध में सम्मिलित होते सकुचता था। वह सोचता था जो स्वयम् निरंकुश है, स्वतंत्रता का द्रोही है, वह

स्वतन्त्रता की जैजैकार

के लिए कब लड़ सकता है? रूस में परिवर्तन होते ही वह युद्धक्षेत्र में उतर पड़ा किन्तु उतरने के पहिले उसने इङ्गलैंड से भी बातें करलीं। आयर्लैंड की स्वतंत्रता का वचन एक तरह से लेलिया गया। हम यह नहीं कह सकते कि प्रेसीडेन्ट विलसन ने भारत के संबंध में कुछ पूछताछ की थी या नहीं किन्तु हमसे यह छिपा नहीं कि डाक्टर सुब्रह्मण्य ऐयर का पत्र उनको मिल चुका था। इङ्गलैंड के प्रतिनिधि के पास उन्होंने उसको भेज दिया था। हम यह भी जानते हैं कि एमेरिका की प्रजा—प्रतिनिधि—सभा के सदस्यों को उस पत्र की प्रतिलिपियां बांटी गई थीं। एमेरिका के प्रायः १५०० प्रधान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्रों ने उस पत्र पर टीका-टिप्पणी की थी और कदाचित इन सब बातों के बाद २० अगस्त को कामन्स सभा में मि० मांटेगू ने भारत में उत्तरदायित्वपूर्ण शासन स्थापित करने तथा उस संबन्ध में भारत आने का निश्चय प्रगट किया था। सम्भव है कि बातें जैसे हमने कहीं हैं बिलकुल वैसी ही एक के बाद एक न हुई हों, यह भी संभव है कि डा० सुब्रह्मण्य के पत्र का कुछ भी प्रभाव न पड़ा हो, वह देर से मिला हो किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि युद्ध के अनन्तर

सन्धि-सभा

में—जो भविष्य में राष्ट्रों का संबन्ध क्या होगा इसी बात को तय करने के लिए होती है—देशों के भाग्य निर्णय की बातें उठेंगी। इसका सुबूत यह है कि जर्मनी ने अभी जब पोलैंड और फिनलैंड आदि में स्वराज्य स्थापित करना चाहा था इङ्गलैंड की तरफ से कहा गया था कि इस स्वराज्य को हम लोग स्वीकार नहीं कर सकते क्योंकि जनता को स्वभाग्य-निर्णय का अधिकार होना चाहिये, दूसरे लोग, दूसरी जाति वाले अन्य जातिवालों के भाग्य का पट्टा नहीं लिख सकते, पट्टा लिखने का अधिकार केवल उस जातिवालों को ही हो सकता है। इसकी चर्चा रेशटा (जर्मन पार्लामेंट) में हुई थी। एक जर्मन सदस्य ने उठकर यह पूछा था कि क्या स्वभाग्य-निर्णय का अधिकार इङ्गलैंड भारत, मिश्र आदि देशों को भी देगा? इन सब बातों के कहने से हमारा तात्पर्य केवल यही है कि अन्त में सन्धि-सभा के सामने एक बार देशों और राष्ट्रों के भाग्य का प्रश्न उपस्थित होगा, उनके भाग्य का निर्णय उनके प्रभु या मित्र नहीं वरन् समस्त राष्ट्रों के प्रतिनिधियों की एक सभा द्वारा होगा। उस सभा में होंगे स्वतंत्रता के प्रेमी अमेरिका, फ्रांस, इङ्गलैंड तथा अन्य अनेक राष्ट्र। जो राष्ट्र अपने आधीन दूसरी जातियों या देशों को रखना चाहते हैं उनको अमेरिका को पहिले सन्तुष्ट करना होगा, अमेरिका भी कौन जिसके प्रेसीडेण्ट विलसन खुले शब्दों में पुकार पुकारकर कह रहे हैं कि Guardianship, Trusteeship, Sphere of Influence देख रेख, सरपरस्ती और प्रभाव-क्षेत्र आदि के सिद्धान्तों को हम नहीं मानते। इङ्गलैंड या जर्मनी स्वभाग्य-निर्णय के प्रश्न को उठावें या नहीं किन्तु यह प्रश्न वहां अमेरिका उठायेगा क्योंकि संसार की भावी शान्ति के लिए यह आवश्यक है कि समस्त जातियां और देश स्वतंत्र हों और अपनी भलाई या बुराई करने का उनको पूरा अधिकार हो। यदि इस मांटेगू व्यवस्था से जिसमें हमारे अधिकार नहीं के समान हैं और जिसके द्वारा यह भी तय नहीं कि २०० वर्षों में भी हमको स्वराज्य मिल जायगा, हम सन्तुष्ट हो गये तो सन्धि सभा में हमारे प्रभुगण ललकार कर कह देंगे कि अन्य राष्ट्रों को भारत के सम्बन्ध में टांय टांय करने की ज़रूरत नहीं। भारतवासी जिसके योग्य थे और जितना वे चाहते थे हमने देदिया और वे उससे सन्तुष्ट हैं। स्वभाग्यनिर्णय का अवसर उनको दिया गया, उन्होंने फ़ैसला भी कर दिया है और अब किसी राष्ट्र को दखल देने की ज़रूरत नहीं। हमारे मित्र जो मांटेगू सुधार-व्यवस्था का समर्थन करते हैं इस बात का यों जवाब देते हैं। उनका कथन है कि यह निर्विवाद सत्य है कि भारतवासियों को सन्तुष्ट करने तथा सन्धि सभा में यह कह सकने के लिए कि भारत संतुष्ट है स्कीम की रचना हुई है किन्तु यह मानते हुए भी हम

चोर चोर मौसिया भाई

वाली कहावत की सत्यता को नहीं भूल सकते। सन्धि सभा में युद्ध के अनन्तर अपने अपने हितों की सब को परवा होगी, अपने स्वार्थों की रक्षा के लिए जर्मनीवाले न भारत का और न इङ्गलैण्ड वाले जर्मन उपनिवेशों का पचड़ा उठा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देगा। ऊँचे आदर्श, स्वतंत्रता, स्वभाग्य-निर्णय आदि के प्रश्न यूरोपियनों या उनकी सन्तानों के लिए हैं, यूरोपियनों के सम्बन्ध में ही इनकी चिन्ता की जायगी। भारत, दक्षिण एफ्रिका के जर्मन उपनिवेशों, या काङ्गो के सम्बन्ध में यही होगा कि "चुप चुप न तुम हमारी कहो न हम तुम्हारी"। मानव प्रकृति को देखते हुए हमको इसके कहने में संकोच नहीं कि समर्थन करने वालों की यह बात बिलकुल अनर्गल ही नहीं है किन्तु इसके साथ ही साथ हमको विकाश के सिद्धान्तों में विश्वास है, हमको न्याय और स्वतंत्रता की पवित्रता और विजय में विश्वास है, उसकी समुद्र से भी विशाल लहरों की प्रचंडता और मग से पहाड़ों और विघ्नबाधाओं को उखाड़ फेकने की शक्ति में विश्वास है और है हमको विश्वास लीलामयी महाशक्ति में जिसने इस महाभारत का बीज बोया है, इसे बढ़ाया है और जो इसे शान्त नहीं होने देती। हमारा यह विश्वास है कि संसार के प्रत्येक राष्ट्रों और देशों में घोर परिवर्तन होगा और समस्त देशों में परिवर्तन होने के बाद ही यह महाभारत आपसे आप शान्त हो जायगा। रिफार्म स्कीमों से यदि वे परिवर्तन हो सकते तो इस जगत्व्यापी चार वर्ष भी महाभारत के सृष्टि की कोई आवश्यकता न थी। इस कारण से हमको विश्वास नहीं कि सन्धि सभा में भी स्वतंत्रता और न्याय के सिद्धान्तों का स्वार्थ की बेदी पर बलिदान होगा। इसके साथ ही साथ जो रिफार्म स्कीम के पैरोकार, लंदन निवासी मि० पोलक, कैप्टन वेजउड आदि भारत के शुभचिन्तकों की राय की दोहाई देकर स्कीम का समर्थन करने के लिए कह रहे हैं उनसे हम इतना यह भी कह देना आवश्यक समझते हैं कि इस समय

युद्ध में विजय

प्राप्त करनी अँगरेज़ जाति के लिए उतना ही आवश्यक है जितना कि हमारे लिए वायु। अँगरेज़ जाति का एकमात्र ध्येय इस समय युद्ध में विजय है और इसी कारण से इस समय इङ्गलैंड के राजनीतिज्ञों में दलबन्दी नहीं है। मंत्रिमंडल में सभी दल के पुरुष सम्मिलित हैं और कम से कम विजय प्राप्ति के लिए प्रयत्न करने के सम्बन्ध में वहां नाम को भी मतभेद नहीं है। युद्ध में विजय प्राप्ति का एक नैतिक अस्त्र यह है कि इङ्गलैंड स्वार्थ के लिए नहीं वरन् परमार्थ और स्वतंत्रता की रक्षा के लिए लड़ रहा है। इसी बात की सत्यता सिद्धि करने के लिए यह आवश्यक है कि यह भी सिद्ध किया जाय कि इङ्गलैंड अपने अधीन देशों में भी स्वतंत्रता का प्रचार करने को लालायित है। इसी कारण से सुधार स्कीम की रचना हुई है और यह आवश्यक है कि उसके संबन्ध में इङ्गलैंड में मतभेद न हो। जिस प्रकार युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करना राष्ट्रीय धर्म है उसी प्रकार इस समय यह कहना भी—कि भारत को जो उचित है दिया जारहा है—अँगरेज़ों का राष्ट्रीय धर्म है। अँगरेज़ यह कहेंगे कि बहुत दिया जा रहा है, या जितना चाहिये दिया जा रहा है किन्तु यह कोई नहीं कहेगा कि

"कम दिया जा रहा है"

इन कारणों से इस समय हम लोगों को अपनी ही बुद्धि से काम लेना चाहिये, अपने अँगरेज़ मित्रों को नहीं।

एक बात और कह कर हम अपने विचारों की इस लम्बी चौड़ी प्रस्तावना को समाप्त करना चाहते हैं। समर्थन करनेवाले हमारे अनेक मित्रों की राय में स्कीम के विरुद्ध आवाज़ उठाना, उसके दोष दिखलाना, देश के प्रति अन्याय करना है। उनका कहना है कि स्कीम का विरोध एङ्ग्लो-इन्डियन तथा लन्दनवासी करेंगे ही इसे बुरी कहेंगे। यदि हम लोगों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने भी ऐसा ही कहना शुरू किया तो फिर मंत्री-मंडल या कामन्स सभा द्वारा स्कीम का स्वीकृत होना असंभव हो जायगा और भारतवासियों को जो कुछ मिल रहा है उससे भी हाथ धोना पड़ेगा। मालूम नहीं ऐसा कहनेवालों के पास इसका प्रमाण क्या है, कदाचित आयर्लैंड का स्वराज्य बिल जो स्थगित पड़ा हुआ है उसी की नींव पर वे ऐसा कहते हों किन्तु हमारी समझ में ऐसा कहनेवालों का दृष्टिक्षेत्र परिमित है। हम कह चुके हैं कि देनेवाला ज़रूर इङ्गलैंड है और यह कि इस समय कुछ देना उसके लिए बहुत ज़रूरी है किन्तु दिलानेवाला समय और युद्ध है। ऐसी स्थिति में अपनी और समय की शक्ति को एक कोने रखकर इङ्गलैंड को ही स्वयम् दाता और सब कुछ कर सकनेवाला समझ बैठना, और उसकी प्रसन्नता और नाराज़ी पर ही अपने भाग्य के फैसले का दारमदार समझना भूल है। स्कीम पर सम्यक रूप से विचार करने के लिए उपर्युक्त सब बातों को ध्यान में रखना बहुत ज़रूरी है और इसी कारण से हमने इनका उल्लेख कर दिया है। अब हम स्कीम पर विचार करना चाहते हैं, हम उनके शब्दों को तथा भारतीयों को दिये गये अधिकारों को विचार-कसौटी पर कसना चाहते हैं और देखना चाहते हैं कि

स्कीम स्वयम कैसी है ?

सरकार की ओर से स्कीम की एक, एक दो पृष्ठवाली सक्षिप्त विवरणी हमको प्राप्त हुई थी। उसमें क्या था यह तो हमने पढ़ा नहीं किन्तु आरंभ में ही यह कहा गया था कि स्कीम उसी प्रकार के ऐतिहासिक महत्व की है जिस महत्व की कैनाडा संबन्धी

लार्ड डरहम की रिपोर्ट

थी। यह कहना तो कठिन है कि भविष्य में इस रिपोर्ट को कैसा स्थान मिलेगा किन्तु इतना हम अवश्य निःसंकोच भाव से कह सकते हैं कि यद्यपि लार्ड डरहम ने कैनाडा में और मि० मांटेगू ने भारत में स्वराज्य-स्थापन के लिए रिपोर्ट लिखा है और यद्यपि दोनों के उद्देश्य समान दिखाई देते हैं तथापि मसविदों में, उनके भावों और सिद्धान्तों में ज़मीन आसमान का अन्तर है। शिक्षा की कमी, परस्पर विरोध, जाति भेद, मत-मतान्तर के झगड़े, शासन-शक्ति की हीनता आदि को मि० मांटेगू और ला० चेम्सफोर्ड ने भारतवासियों को पूर्ण-उत्तरदायित्व-पूर्ण स्वराज्य न देने के लिए महत्वपूर्ण कारण समझा है; इसके विपरीत इन्हीं कमियों को ला० डरहम ने कैनाडा में तुरन्त स्वराज्य स्थापित करने का सबसे ज़बर्दस्त कारण समझा था। शिक्षा की कमी, शासनशक्ति की हीनता, अयोग्यता आदि की दोहाई देकर मि० मांटेगू ने कितने ही अधिकार भारतवासियों को नहीं दिये। मि० मांटेगू ने इस अनर्गल सिद्धान्त को—कि सरकारी अफसर भारतीय जनता के सर्वश्रेष्ठ हितैषी हैं और यह कि भारत के सुशासन, सुरक्षा, सुव्यवस्था और शान्ति की जितनी इनको चिन्ता है और जितनी अच्छी व्यवस्था उसकी वे कर सकते हैं भारतवासी स्वयम् नहीं कर सकते—वेदवाक्य मान लिया है और इसी लिए लिख मारा है "हनोज़ दिल्ली दूरस्त" "दिल्ली दूर है"। इसके विपरीत लार्ड डरहम ने कैनाडावासियों को यह कह कर—यह संभव है कि उपनिवेश निवासी सदा यह न जाने कि सर्वोत्तम कानून उनके लिए कौन सा होगा या यह कि उनका सबसे श्रेष्ठ प्रतिनिधि कौन सा पुरुष होगा किन्तु इसके साथ ही साथ हम इस सत्य की ओर से अपनी आंखें नहीं फेर सकते कि यह सब ठीक निश्चित करने में उनका स्वार्थ और हित सबसे अधिक है और इसलिए ठीक सिद्धांत पर पहुंचने के लिए वे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनसे अधिक प्रयत्न और चेष्टा करेंगे जिन पर बने हुए अच्छे या बुरे कानूनों का अधिक प्रभाव न पड़ेगा—स्वराज्य दे दिया । दोनों रिपोर्टों में कितना अन्तर है यह उपर्युक्त बातों से साफ प्रगट है । यह हुई संक्षिप्त विवरणी की माया अब

रिपोर्ट का हाल

सुनिये । रिपोर्ट दो भागों में विभाजित है । प्रथम ११४ पृष्ठ प्रस्तावना स्वरूप हैं, इनमें भारत की राष्ट्रीय दशा पर विचार और सुधार किस प्रकार सम्भव हैं इस सम्बन्ध के विचार हैं। बाकी के पृष्ठों में सुधार के प्रस्ताव हैं। कहना नहीं होगा कि प्रस्ताव विचारों पर अवलम्बित हैं या यह कि विचार बीज है और प्रस्ताव पुष्प; जैसे बीज हैं उन्हीं के अनुहार पुष्प भी हैं । ११४ पृष्ठ की बातों का यहाँ पर उल्लेख करना असम्भव है इस कारण से हम उन्हीं मोटी २ दो चार बातों का उल्लेख करना ज़रूरी समझते हैं जो मि० मांटेगू और लार्ड चेम्सफोर्ड को विशेष रूप से उल्लेखयोग्य समझ पड़ी हैं और जिनकी नींव पर उनके प्रस्तावित सिद्धान्त खड़े किये गये हैं । इसका एक कारण यह भी है कि विचारों को देखने पर यदि वे हीन या अनुचित सिद्ध हुए तो हमको यह मालूम हो जायगा कि वे प्रस्ताव कैसे होंगे जो इन विचारों पर अवलंबित हैं । विचार के नमूने यह हैं:—

(१) अधिकतर भारतीय जनता दीन, हीन, अशिक्षित, निःसहाय है और यूरोपीय जनता की साधारण श्रेणी से कहीं गई गुज़री है ।

(२) भारत में जाति-भेद, ऊँच नीच, हिन्दू मुसलमान, मतमतान्तर के झगड़े आदि सहस्रों ही विभेद करनेवाली बातें हैं जो ऐक्य की जड़ पर कुठाराघात करनेवाली हैं और किसी भी राजनैतिक सुधारक को इनको ध्यान में रखना चाहिये ।

(३) सुशासन, सुव्यवस्था और शान्ति की फिक्र जितनी सरकार को है उतनी भारतवासियों को नहीं और इनकी व्यवस्था जितनी अच्छी रीति से अँगरेज़ अफसर कर सकते हैं भारतवासी नहीं कर सकते ।

(४) शिक्षित भारतवासी और उनके नेताओं की अपेक्षा अँगरेज़ अफसरों और सरकार को साधारण भारतीय जनता तथा कृषक भाइयों की हितचिन्ता का अधिक ख्याल है ।

(५) भारतीय सुधार व्यवस्था में सिविल सर्विस, अँगरेज़ व्यापारियों, पादरियों आदि के हितों की रक्षा पर भी दृष्टि रखना आवश्यक है ।

इन बातों के सिवाय पग पग पर भारतीय अयोग्यता, अनुभवहीनता और भारतवासियों के प्रति अविश्वास के गीत गाये हैं । प्रस्ताव कैसे हैं, कहां तक न्याय और विवेक पर स्थित हैं इसकी आलोचना के पहिले हम यह आवश्यक समझते हैं कि पहिले हम इन उपर्युक्त विचारों की ही जिन पर प्रस्ताव निर्भर हैं आलोचना कर दें । इसके अनन्तर हम प्रस्तावों को २० अगस्तवाली घोषणा की कसौटी पर कसेंगे, यह देखेंगे कि उत्तरदायित्वपूर्ण स्वराज्य हमको मिला है या नहीं, यदि नहीं तो मिल सकता है या नहीं, और कितने दिनों में और फिर इसके बाद हम प्रस्तावों पर विचार करेंगे । मांटेगू साहब का कहना है कि भारतीय जनता दीन हीन अशिक्षित, निःसहाय है, उसने पार्लामेंट का नाम भी नहीं सुना है और "वोट" क्या है, किस चिड़िये का नाम है, कैसे और क्यों वह व्यवहार में लाई जाय यह सब वह कुछ नहीं जानती, ऐसी अवस्था में उत्तरदायित्वपूर्ण शासन जिससे और जनता की वोट से एक घना सम्बन्ध है, एकदम से या पूर्ण रूप से स्थापित नहीं किया जा सकता। दूसरी कठिनाई जो मांटेगू साहब के मार्ग में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहाड़ का रूप धारण कर खड़ी हो गई थी वह यह है कि भारत में फिर्के अनेक हैं, जाति भेद है, ऊँच नीच का झगड़ा है, मतमतान्तर के भीषण झगड़े हैं, इनके कारण ऐक्य स्थापित नहीं हो सकता और इस कारण से उत्तरदायित्व-पूर्ण शासन का स्थापित कर देना भयावह है। इन दो बातों पर विचार करने के पहिले हम यह कह देना आवश्यक समझते हैं कि मि० मांटेगू और लार्ड चेम्सफोर्ड ने अपनी आंखों पर पश्चिमीय सभ्यता के चश्मे को लगाकर भारतीय बातों को देखा है, इस चश्मे के सहारे उनको बहुतसी बातें जो सम्भव है वास्तव में उतनी ही बुरी न हों बुरी दिखाई दी हैं। उदाहरण स्वरूप मि० मांटेगू को यह बातें अच्छी नहीं मालूम हुईं। उनका कहना है कि "ब्रिटिश भारत की २४ करोड़ की आबादी में से प्रायः २२ करोड़ मनुष्य ग्रामों, देहातों या कस्बों में रहते हैं कृषि भारतवासियों का मुख्यजीवनोपाय है। साधारण समय में इङ्गलैंड के १०० पीछे ५८ पुरुष उद्योगधन्धा आदि करते हैं और केवल ८ कृषि में लगते हैं इसके विपरीत भारत में १०० पीछे ७१ कृषि में और १२ उद्योग-धन्धों से जीवननिर्वाह करते हैं"।

मि० मांटेगू से हमको यही कहना है कि उन्होंने राय ज़ाहिर करने में शीघ्रता की है, मुकद्दमा अभी कचेहरी में है, अभी वर्तमान महाभारत के रणक्षेत्रों के इजलास में यह तय हो रहा है कि उद्योग-धन्धों की अधिकता अच्छी है या कृषि की, शहरों में एक स्थान में सट कर लाख दो चार लाख आदमियों का रहना अच्छा है या थोड़ी संख्याओं में अलग अलग रहना खुले मैदानों में। बात असल में यह है कि भारत में कृषि की अधिकता नहीं वरन् गरीबी और पर-शासन ज़हर हो रहा है। मि० मांटेगू कदाचित इस बात को अस्वीकार न करेंगे कि

पश्चिमीय सभ्यता

कसौटी पर कसी गई और वह खरी नहीं उतरी। युद्ध इसीलिए हो रहा है क्योंकि पश्चिमीय सभ्यता ने मालूम होता है संसार का मार्ग अवरुद्ध कर दिया था, युद्ध के बाद यह निश्चय होगा कि सभ्यता कैसी होनी चाहिये, अधिकतर जनता का उद्योगधंधों, कलपुरजों पर निर्भर रहना अच्छा है या इसमें कुछ परिवर्तन होना चाहिये। इसके सिवाय हमको यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि एक देश की राजनैतिक संस्थाएँ दूसरे देश में ज्यों की त्यों नहीं जमाई जा सकतीं विशेष कर जब कि उस देश के रस्मरेवाज, भावभूषा बिलकुल एक दूसरे के विरुद्ध हों, और स्वयम् उसकी सभ्यता बड़ी उच्च कोटि की रह चुकी हो। ऐसी अवस्था में पश्चिमीय सभ्यता—जिसके भविष्य रूप का पता नहीं—की कसौटी पर भारत को कसना भूल है। अब रही जनता की दीनता, हीनता, शिक्षा—हीनता वोट और पार्लमेंट के अज्ञान आदि की बात।

दीनता, हीनता और शिक्षाहीनता

के सम्बन्ध में हमको यही कहना है कि इसीके कारण हम स्वराज्य चाहते हैं। प्रायः १०० वर्ष से भारतीय जनता सिविल सर्विस और अङ्गरेज़ी शासन के अधीन है किन्तु इतने दिनों में अङ्गरेज़ी नौकरशाही ने कुछ नहीं किया और रिपोर्ट स्वयम् यह कहता है कि ८० वां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८० वर्ष नहीं तो कुछ ही दिनों तक हमलोगों को भी अवसर दिया जाय, देखा जाय कि थोड़े ही काल में हम उनकी दीनता, हीनता और शिक्षाहीनता को दूर कर सकते हैं या नहीं? जिस दलील को मि० मांटेगू और लार्ड चेम्सफोर्ड हमारे खिलाफ उपस्थित कर रहे हैं वास्तव में वही हमारे मुकदमे की नींव है और उसी की दोहाई देकर हम अपने मुकदमे की डिगरी चाहते हैं। रही

पार्लमेंट और वोट

के अज्ञान की बात सो ठीक नहीं है। पहिले तो भारतीय इतिहास विशेष कर "बौद्ध काल" का यह सिद्ध करता है कि प्रतिनिधियों का चुनाव होता था, लोग वोट देते थे चाहे उनकी सम्मति वोट के नाम से ही न पुकारी जाती रही हो किन्तु बहस के लिए यदि यह मान भी लिया जाय कि भारतीय जनता ने पार्लमेंट और वोट का नाम भी नहीं सुना है तो इससे सिद्ध क्या होता है? "पार्लमेंट" और शब्द "वोट" भारत की वस्तु नहीं विदेश की किसी वस्तु का साधारण जनता को अज्ञान कोई पाप नहीं, इङ्गलैंड ही की साधारण जनता ने

पंचायत

का शब्द कब सुना है? इङ्गलैंड के कितने सज्जन के निवासियों ने पंचायत का शब्द सुना है और उसके अर्थ समझते हैं? रही शिक्षा हीनता की बात और यह कि साधारण जनता के दिमाग में राजनीति नहीं है, उससे राजनीति से सम्बन्ध नहीं है इसका जवाब यही है कि इङ्गलैंड में ही सुधार बिल के समय में कितने मनुष्य शिक्षित थे या राजनीति की चिन्ता करते थे? इङ्गलैंड में ही क्यों संसार के सभी देशों में अधिकार मिलने के समय कितने मनुष्य शिक्षित या अधिकारी होने के योग्य थे? माननीय मालवीय जी ने जैसा लिखा है—

"संसार में क्या अधिकार देने से कोई श्रेष्ठ उपाय है जिससे लोग राजनैतिक मामलों में योग देने लगें? संसार में इस समय भी जर्मनी, एमेरिका, फ्रांस, आस्ट्रिया और स्वयम् इङ्गलैंड में ही वोट देने के लिए शिक्षा अनिवार्य रूप से आवश्यक नहीं है। वोट देने का अधिकार जायदाद, कर आदि पर स्थित है और भारत में भी इसी तरह से अधिकार दिया जा सकता है। इसके सिवाय लार्ड डरहम ने जैसी दशा में कैनाडावासियों को स्वराज्य दिया था उससे तो हमारी दशा कहीं अच्छी है। लार्ड डरहम ने कैनाडावासियों की दशा का वर्णन करते हुये लिखा था "निवासियों की शिक्षा हीनता की बात को किसी रूप से बढ़ाकर लिखना असंभव है। उनमें शिक्षा प्रचार के लिए कभी कोई प्रयत्न ही नहीं किया गया और प्रायः एक कोने से दूसरे कोने तक निवासी अक्षर भी नहीं लिख या पढ़ सकते। भारतवासियों की दशा ऐसी नहीं है। यह सच है कि वे उसी दृष्टि से पढ़ेलिखे नहीं हैं जिस दृष्टि से हम यूरोप निवासियों को पढ़ेलिखे समझते हैं किन्तु उसके साथही साथ मामूली समझदारी में किसी जाति के मनुष्यों से वे हीन भी नहीं हैं। अङ्गरेज़ी का ज्ञान ही ज्ञान नहीं है। न अक्षरों की शिक्षा ही शिक्षा है। एक कृषक से बातें करने पर भी आप बड़े बड़े ऊँचे सिद्धान्तों की बातें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुन सकते हैं, ऊंचे सिद्धांत और Philosophy अध्यात्म की बातें तो सच पूछिये भारतवासियों के खून के साथ रगों में बहा करती हैं, अक्षर न जानने वाले भी आपको रामायण की चौपाइयां और बातें सुना सकते हैं, आपको यह बतला सकते हैं कि राजा का धर्म क्या है, प्रजा के साथ व्यवहार कैसा होना चाहिये, भाई, बन्धु, माता पिता का सत्कार कैसा होना चाहिये, और यह कि आपस के संबंध की माप क्या है ? हमें रोना शिक्षाहीनता का उतना नहीं है जितना कि इस बात का है कि स्वराज्य के अभाव से ग्रामों में हमारे कितने ही चासर, शेक्सपीयर, मिल्टन, सूरदास, तुलसी, पद्माकर, देव और भूषण, नेपोलियन, नेल्सन, वाशिङ्गटन, ग्लैग्सटन और ब्राइट पैदा होते हैं और मर जाते है, हीनता की दशा में उनको प्रकाश में आने का भी अवसर नहीं प्राप्त होता। शिक्षाप्रचार कोई बड़ी बात भी नहीं, जापान ने २५ वर्ष में संसार में अपनी धाक जमाली—जो लोग उसे बरबर समझते थे आज उसके साथ मैत्री करना अपना सौभाग्य समझते हैं—क्या हम १०, या १५ वर्ष में समस्त भारतवासियों में शिक्षा प्रचार भी नहीं कर सकते ? बात भी तो कठिन नहीं है एक कलम से शिक्षा को अनिवार्य और निःशुल्क कर देने ही से तो यह हो सकता है। यह सच है कि इङ्गलैंड १०० वर्ष में भी यह नहीं कर सका है, अब भी नहीं कह सकते कि इसके लिए उसे कितना समय चाहिये किन्तु हमारे लिए यह कठिन नहीं, हम दावे के साथ कह सकते हैं कि १० या १५ वर्ष के बीच भारत की साधारण जनता उतनी ही पढ़ी लिखी हो सकती है जितनी कि और देशों की। इस दशा में भी भारतीय निरे मूर्ख ही नहीं हैं। यह सच है कि घुटनों तक धोती पहिने और एक गमछा ओढ़े हुये वे जीवन व्यतीत कर देते हैं, वे कोट पेन्ट नहीं पहिनते, न उनकी आंखों पर चश्मा ही होता है किन्तु इसका अर्थ केवल यही है कि उनकी आवश्यकताएँ कम हैं। उनका रहन सहन सस्ता है और इस कारण से वे स्वार्थहीन अधिक हो सकते हैं; फैसला करने या पंचायत तय करने में वे अधिक तटस्थ हो सकते हैं। कम से कम हम यह कभी मानने को तैयार नहीं कि कौंसिल के लिए या डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के लिए वे अपना प्रतिनिधि नहीं चुन सकते। मि० मांटेगू कहते हैं He has sat on Caste Panchayats, he has signed joint petitions to official authority. But he has never excercised a vote on public questions. His mind has been made up for him by his landlord or banker or his priest or his relatives or the nearest official पंचायत में वह बैठा है, उसने प्रार्थनापत्रों पर औरों के साथ साथ हस्ताक्षर भी किया है किन्तु सार्वजनिक प्रश्नों के संबन्ध में उसने कभी वोट नहीं दी है। ज़मींदार, महाजन, पुरोहित, रिश्तेदार या सरकारी अफसरों की राय से ही जैसा वे कह देते हैं वह कर देता है। यहां पर सहसा यह प्रश्न होता है कि इङ्गलैंड, एमेरिका आदि देशों में जहां इतने दिनों से प्रजा-सत्तात्मक स्थापित है क्या एक साधारण मनुष्य स्वतंत्र रूपे से स्वतंत्रतापूर्वक वोट के अधिकार को काम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में लाता है ? क्या वहां उसकी वोट पर उसके ज़मींदार, मकान मालिक, उसके व्यापार तथा उसके साथियों का पूरा पूरा अधिकार नहीं होता ? साधारण जनता का तो कुछ कहना ही नहीं क्या मि० मांटेगू की सदा ही वोट उनकी पार्टी के हाथ में गिरों नहीं रहती ? क्या पार्टी का सदस्य स्वतंत्र होता हुआ भी कभी अपनी स्वतंत्र सम्मति प्रगट करना अपना धर्म समझता है ? ऐसी दशा में वास्तव में यदि देखा जाय तो साधारण भारतीय जनता के मनुष्य और इङ्गलैंड और एमेरिका के उच्च से उच्च श्रेणी के मनुष्य में फर्क इतना ही है कि भारतीय ज्ञान के अभाव से दूसरों से परिचालित होता है जब कि एक अङ्गरेज सब कुछ जानता बूझता हुआ भी दूसरों की राय से चलता है। इसके सिवाय "वोट" की जो व्यवस्था और क्रम है वास्तव में उसका अर्थ वही नहीं है जो होना चाहिये इसे मि० मांटेगू भी स्वीकार करेंगे। यदि वोट ही सब कुछ है तो उसका शीघ्र स्थापित हो जाना ही अच्छा है, उसका समझना कोई ऐसी कठिन बात नहीं।

जो आही न सके।

संभव है एक दो या चार बार लोग उचित मनुष्य के लिए वोट न दें किन्तु इनकी गलतियां उनको आप ही अभीष्ट रास्ते पर आपसे आप लादेंगी। इन्हीं कारणों से हम वोट और शिक्षा-हीनता को महत्व नहीं प्रदान करते।

(अपूर्ण)।

केवल ५०० प्रतियां छप रही हैं। केवल ५०० प्रतियां छप रही हैं।

हिन्दी में

मांटेगू-सुधार-व्यवस्था।

मर्यादा के ग्राहकों को पौन मूल्य पर।

सुधार-व्यवस्था तीन खंडों में शीघ्र ही छपकर प्रकाशित हो जायगी। प्रथम भाग इस मास में ही तैयार हो जायगा। ग्राहकों को चाहिये कि ग्राहकों में नाम दर्ज करालें। ज्यों ज्यों भाग छपते जायँगे वी० पी० से भेजे जायँगे।

माननीय मालवीय जी की सम्मति।

प्रायः १०० पृष्ठों में शीघ्र ही छपकर प्रकाशित होगी। ग्राहकों में शीघ्र नाम लिखवाइये।

मैनेजर मर्यादा।

अभ्युदय प्रेस, प्रयाग में बद्रीप्रसाद पाण्डेय के प्रबन्ध से छपकर प्रकाशित हुई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवश्य देखिये !

अच्छे सामाजिक उपन्यासों का शौक है, तो अवश्य खरीदिये !

उमा ।

उमा क्या है ? उमा बंगभाषा के उत्कृष्ट और गिनेगिनाये थोड़े उपन्यासों में से इसी नाम के एक उपन्यास का हिन्दी अनुवाद है । इसकी रचना-शैली बिलकुल सादी होने पर भी इतनी मुग्धकर है कि पढ़ते पढ़ते विमुग्ध हो जाना पड़ता है, करुणा उमड़ आती है । उमा का साहस, उमा की योग्यता और चतुरता स्वाभाविक होने पर भी विलक्षण है । उमा की पति-भक्ति, पति को अपने वश में प्रेम से बांध रखने की शक्ति, वाक्चातुरी और गृहस्थी के संभालने के अलौकिक गुण बहुत ही उपादेय हैं । संसारमात्र की स्त्रियों के अनुकरण योग्य हैं । उमा का संकट के समय—पतिका दूसरी स्त्री के प्रेमपाश में फंसे रहने के समय भी—धर्म को तिलांजुलि न दे प्रेम, कौशल से उस धधकती हुई आग को बुझाने की युक्ति सभी गृहस्थ मात्र की स्त्रियों के लिए वांछनीय है । मतलब यह कि उमा एक ऐसा उपयोगी उपन्यास है कि इसकी एक एक प्रति प्रत्येक गृहस्थ के घर में अवश्य रहनी चाहिये । आजतक हिन्दी भाषा में इसकी टक्कर का एक भी उपन्यास प्रकाशित नहीं हुआ है । बंगभाषा में इसके सात संस्करण हो चुके । इसके लेखक हैं प्रसिद्ध समालोचक पांचकौड़ी वंद्योपाध्याय बी० ए० महाशय । मूल्य १)

गृहलक्ष्मी ।

उपन्यास तो बहुत हैं । पर अच्छे उपन्यासों का हिन्दी भाषा में अभाव सा है । अच्छे उपन्यासों द्वारा जिस प्रकार सरल रीति से शिक्षा दी जा सकती है, दूसरी पुस्तकों द्वारा वैसा करना आसान नहीं है । आजकल स्त्रियों को शिक्षित बनाने की अभिरुचि लोगों में बेतरह बढ़ रही है । ऐसे लोगों की रुचि में सहाय्य प्रदान करने की दृष्टि से बंगभाषा के प्रसिद्ध उपन्यास "राय-परिवार" का यह हिन्दी अनुवाद तैयार किया गया है । अपढ़ मनुष्यों और गंवार स्त्रियों द्वारा यह सोने का संसार किस प्रकार मिट्टी हो जाता है और पढ़ी लिखी स्त्रियों के सहाय्य से मिट्टी का घर किस प्रकार स्वर्णरूप धारण करता है । यही इसमें अच्छी तरह दिखलाया गया है । इसके अतिरिक्त पाप और बेईमानी का भयंकर परिणाम; मैत्री किसे कहते हैं, उसका आदर्शचित्र इत्यादि बहुत से ऐसे वर्णन हैं कि पुस्तक को बिना समाप्त किये आप उसे रख नहीं सकेंगे । मुख-पृष्ठ पर दो सुन्दर स्त्रियों का सुन्दर चित्र भी दिया गया है । मूल्य १)

पेरिस रहस्य ।

यह मिस्ट्रीज़ आव पेरिस का वही हिन्दी अनुवाद है, जिसके लिए लोग वर्षों से लालायित थे, जिसका नाम सुनते ही लोग फड़क उठते थे, जिसकी विचित्रता, मधुरता, मनोहरता और अनूठेपन की संसार भर में धूम मची हुई है । लीजिये और फ्रांस की राजधानी पेरिस के रहस्यों की बहार देखिये । मूल्य प्रतिभाग ।=)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

पता—'उपन्यास-बहार' आफिस, काशी, बनारस ।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्वत् १९७५ ।

बट रहा है ।

इस बार का पञ्चांग देखने योग्य है, आज ही एक पोस्टकार्ड पर दस सज्जनों का नाम और ठिकाना [भिन्न भिन्न स्थानों के] लिख भेजिये लौटती डाक से घर बैठे पावेंगे । बँट जाने पर हताश होना पड़ेगा ।

जूड़ीबुखार वो तिल्ली की दवा ।

बीमारी को रोकने से आराम करना अच्छा है ।

आजकल सैकड़ों पेटेंट दवाएं फसली बुखार की दिखाई पड़ती हैं । इनमें प्रायः कुईनैन है, इसलिये दवाएं बुखार को कुछ समय तक रोक देती हैं, परन्तु आराम नहीं कर सकतीं ।

इसमें ये विशेष गुण है :—

१—यह मलेरिया के जीवों को मार देती है इसलिये इसको चार पांच खुराक पीने ही से बुखार का आना बन्द होता है ।

२—यह खून को गाढ़ा करती है और उसके दोषों को मिटाती है ।

३—यह पिलही को गलाती है ।

मोल छोटी शीशी ॥) आठ आने, पै० व डा० म० ।-) २ शीशी तक ॥) आठ आने ।

मोल बड़ी शीशी ॥।=) चौदह आने । पै० व डाक म० ।=) छः आने । २ शीशी तक ॥) ।

धातुपुष्ट की गोलियां ।

ताकत देनेवाली दवा में प्रसिद्ध दवाएं—फसफरास, ष्ट्रिकनिया और डेमिएना मिलाकर ये गोलियां बनी हैं । शरीर के धातुओं की मगज, रीढ़, रग, मांस और खून को पुष्ट करने का ये विशेष दावा रखती हैं ।

इनका गुण—भूख बढ़ाना, पाचन शक्ति घटने से जो दोष होते हैं यानी छाती पर बोझ, पेट फूलना, वायु के डिकार, आलस्य आदिक एक ही दो दिन में जाते हैं । खाने का आनन्द मिलता है । सुस्त चित्त की ग्लानि जाती रहती है, मन में फुर्ती आती है और मिहनत करने पर थकावट नहीं होती ।

अधिक मिहनत, अधिक पढ़ना, जवानी का दोष, अधिक विहार आदिक कुक्रियाओं से धातुक्षीण होकर मग्ज खाली और रगें निस्तेज हो गई हों तो दो तीन सप्ताह में गोलियां पुनः उन्हें शरीर में जोश लाती हैं । दो सप्ताह की खुराक ३० गोलियों की एक शीशी १) एक रुपया डा० म० १ से ४ तक ।-) ८ शीशी तक ।≤) सात आने ।

Collection, Haridwar

डा: एस. के. बर्म्मन ५, ६, ताराचंद दत्त ष्ट्रीट, कलकत्ता ।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२००) रुपये दूंगा

बिना औषध के जन्मभर को रोग दूर।

स्वप्नदोष और शीघ्रपतन बड़े भयङ्कर रोग हैं। स्वप्नदोष नवजवानों के शरीर और दिमाग़ को मिट्टी कर देता है, याददाश्त का तो यह दुश्मन है। शीघ्रपतन गृहस्थों का घातक है समय पर लज्जित होने से लोग मर जाना अच्छा समझते हैं, सन्तान भी नहीं होती। मुझे एक ऐसी क्रिया-विधि प्राप्त हुई है जिससे ये दोनों रोग जन्मभर के लिए जाते रहते हैं। यह कोई दवाई नहीं केवल एक साधन है इस पर भी यदि प्रयोग करने पर रोग दूर न हो तो २००) रु० दंड दूंगा जोकि आप अदालत द्वारा मुझसे वसूल कर सकते हैं। इसके बताने की फ़ीस राजाओं से १००) धनवानों से ५) सर्वसाधारण व विद्यार्थियों से २) रु०। डाकमह०।) आना।

नोट—उक्त क्रिया पत्रद्वारा लिखकर बताई जायगी, साथ ही एक बूटी भी भेजी जायगी जिसका सेवन एक सप्ताह तक आवश्यक है।

प्रकाशक—

चन्द्रशेखर शर्मा धर्मोपदेपक,

(नं० २) पो० जलाली ज़ि० अलीगढ़।

उदरामृत

अगर आपको भूख कम लगती हो अथवा मदाग्नि, अजीर्ण पेट दर्द, कब्ज, जी मचलाना, खट्टी या जली हुई डकारों का आना बवासीर, तिल्ली, हैजा, आदि पेट का कोई भी रोग हो तो हमारा जगत् प्रसिद्ध स्वादिष्ट उदरामृत चूर्ण व्यवहार कीजिये तत्काल गुण दिखाता है। मू० फ़ी शीशी ॥) दर्जन ४॥) डा० म० २ तक।)

पता--ब्राह्मी औषधालय

(बी ब्रांच) पो० जलाली ज़िला अलीगढ़

महात्माओं के चित्र।

हमने बड़े प्रयत्न से भारत के मान० नेताओं देशभक्त महिलाओं तथा चिरस्मरणीय महानुभावों के चित्र तैयार किये हैं। लीजिये, इन आदर्श महात्माओं के चित्रों से घरों को पावन और सुशोभित कर नेत्रों को सफल कीजिये। चित्रों की सूची निम्नलिखित है :—

देशोद्धारक स्वर्गीय मि० गोखले।
मान० पं० मदनमोहन मालवीय।
भारत के वयोवृद्ध ऋषि दादा भाई नौरोजी।
सर फ़ीरोजशाह मेहता।
लोकमान्य मि० तिलक।
देश के सच्चे सपूत महात्मा गांधी सपत्नीक।
श्रीमती एनी बीसेन्ट।
प्रसिद्ध विदुषी श्रीमती सरोजनी नायडू।
महात्मा गांधी के प्रिय शिष्य भारत के शुभचिन्तक मिस्टर पोलक।
साहित्य-सम्राट् श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुर।
स्वर्गीय महादेव गोविन्द रानाडे।
विद्यानुरागी स्वर्गीय सर सैयद अहमद खां।
मान० बिशुननारायण दर।
मान० गोकर्णनाथ मिश्र।
श्रीमान् बाबू गङ्गाप्रसाद वर्मा।
मि० अरंडेल। मि० वाडिया।
श्री० डा० सतीशचन्द्र। सर सुब्रह्मण्य ऐयर।
श्रीकृष्णस्वामी ऐयर। मि० बोमन जी।
लाला लाजपत राय सुरेन्द्रनाथ बनर्जी।

इन सब चित्रों का इनलार्जमेंट १०×१२ माउन्टेड १४×१८ दाम प्रत्येक का १०)।

केबिनट साइज़ के प्रत्येक चित्र का दाम ॥) मर्यादा के ग्राहकों से डाकखर्च और पैकिंग माफ़। औरों से नहीं।

१ अक्टूबर १९१८ के बाद बढ़ा दिये जायँगे प्रत्येक चित्र इसी ता० तक ॥) में मिलेगा बाद को दाम १) हो जायगा।

पता=पी० एन० वर्मा एन्ड कंपनी,

मेडेलिस्ट फ़ोटोग्राफ़र्स, जानसेनगंज, इलाहाबाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी में भाष्येणूसुधार

शीघ्र ही छप कर तैयार हो जायगा। पुस्तक तीन भागों में प्रकाशित होगी। प्रथम भाग, इसी मास में प्रकाशित हो जायगा। मर्यादा के ग्राहकों को, तथा उनको जो ग्राहकों में अपना नाम इसी मास में दर्ज करा लेंगे

पुस्तक पौन मूल्य पर

मिलेगी। केवल ५०० प्रतियां छप रही हैं, ग्राहकों को शीघ्रता करनी चाहिये।

सुधार पर मालवीय जी

माननीय मालवीय जी की सम्मति प्रकाशित हो गई है। वह अङ्गरेजी तथा हिन्दी में पुस्तकाकार छप रही है। ग्राहकों को शीघ्र आर्डर भेज कर पुस्तक मँगवानी चाहिये, नहीं पछताना पड़ेगा।

गांधी-ग्रन्थ-माला

के पैम्फलेटों को मँगाकर पढ़िये। बहुत लाभ होगाः—

सत्याग्रह—लिओ टाल्सटाय —)

समय नहीं है—कृष्णाकान्त मालवीय =)

साधन मौजूद नहीं—कृष्णाकान्त मालवीय =)

निष्क्रिय प्रतिरोध नहीं सत्याग्रह—महात्मा गांधी —)

मैनेजर "मर्यादा", प्रयाग।

'मर्यादा' की विशेष संख्याएँ।

कुछ प्रतियाँ बच रही हैं। जिन सज्जनों को मंगाना हो, उनको शीघ्रता करनी चाहिये।

(१) स्त्रियों की विशेष संख्या, जुलाई १९१२ ॥=)

(२) स्वराज्य संख्या १)

(३) दक्षिण अफ्रीका की संख्या, दिसम्बर १९१३ ।=)

मैनेजर "मर्यादा", प्रयाग।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मर्यादा ।

मासिक पत्रिका ।

भाग १६] अगस्त सन् १९१८ । [संख्या २

मांटेगू-चेम्सफोर्ड-स्कीम ।

[लेखक—श्रीयुत सी० पी० रामस्वामी ऐयर ।]

मुझे साफ साफ मालूम होता है कि यह २० अगस्त १९१७ के निर्वाचित आत्म-निर्णय के आदर्श की ओर चलना नहीं है किन्तु इससे विमुख होना है । ऐसे समय में जब कि भारत के भविष्य के निपटारे में अंग्रेज़ों की ओर से हिन्दुस्तानियों का विश्वास उठता जाता है यह आवश्यक है कि शासन की आन्तिरिक अवस्था बदली जाय । यदि ऐसा न हुआ तो उस विश्वास का शीघ्रता से अधोपतन होना नहीं रुक सकता । ऐसे अवसर बहुत कम आते हैं और विलायत के नैतिक-जीवन में इतना जल्द अदल-बदल देखकर मुझे कहना पड़ता है कि स्कीम अधूरी और विचार तथा विकास में रुकती हुई है । इसमें यदि साफ़ साफ़ मेरे कथनानुसार परिवर्तन न हुआ तो स्कीम बनानेवालों की अर्थसिद्धि नहीं हो सकती।

यह मानते हुए कि बिना अपने सिर भार लिये शासन की योग्यता नहीं आ सकती और बिना स्वयं काम किये केवल वादविवाद ही से बहुत कुछ बुराइयां उत्पन्न हो सकती हैं, रिपोर्ट की लेखन-शैली से मालूम होता है कि लेखकों को हम लोगों पर विश्वास नहीं । उनकी सम्मति है कि हमको यदि थोड़े भी अधिकार दिये गये तो गवर्नमेंट बैठ जायेगी । यह भी कहा गया है कि बिना इस दक़ियानूसी शासन-प्रणाली के तोड़े ही "उत्तरदायित्वपूर्ण शासन" आरम्भ होना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कांग्रेस-लीग स्कीम को तो यह कह कर गालियां सुनाई गई है कि इसमें शासनकार्य विभाजित है और अधिकार इस तरह बांटे गये हैं कि Legislature (व्यवस्थापक) अब चाहे Execation (शासकदल) को शक्तिहीन कर सकता है किन्तु उसको तोड़ नहीं सकता। हमारी नवरचित गवर्नमेन्ट की मशीन को देखिये। प्रत्येक क़ानून का पास होने से पहिले लेजिस्लेटिव एसेम्बली और कौंसिल आफ़ स्टेट में से जाना और उसके अतिरिक्त सरकार को घटाने बढ़ाने का उसमें पूरा अधिकार होना यह दोनों बातें—क़ानून बनाने की शक्ति को सत्य ही सरकार के हाथ में रख देती हैं। "सुख-शान्ति और सुराज का फ़िक़रा—"रक्षित-विभागों के उत्तरदायित्व" के फ़िक़रे के समान ऐसा बेतुका है कि उसकी आड़ में हर एक शिकार खेला जा सकता है। फल यह होगा कि बिना सरकारी अफ़सरों की सहायता के व्यवस्थापक सभा (Lageslative Assembly) कभी भी अपनी ऐसी नहीं कर सकती। किन्तु स्कीम में इससे बढ़कर खराबी यह है कि बजट पर प्रस्ताव सिर्फ़ सिफारिस की हैसियत से ही किये जायँगे। जब तक आय-व्यय में हमारा पूरा हाथ नहीं दिया जाता तब तक भारत का भविष्य धुंधला ही रहेगा। दो असली बात जो स्कीम में छूट गई है वह वही है जो कांग्रेस-लीग स्कीम में मांगी गई थी अर्थात् शासकदल के ऊपर व्यवस्थापक और व्यवस्थापक का कोष पर अधिकार। जिस स्कीम में यह दो बातें नहीं वह कभी भी आगे बढ़नेवालों को संतुष्ट नहीं कर सकती।

यह २० अगस्त की घोषणा के आदर्श की ओर बढ़ना नहीं किन्तु उससे पीछे हटने के बराबर है और मुझे पूर्ण विश्वास हो गया है कि यह तरीक़ा हमको कभी भी स्वभावतः स्वराज्य के अंतिम लक्ष्य की ओर नहीं ले जा सकता।

मेरी सम्मति है कि शासन के प्रत्येक हिस्से में पूरी रोक थाम प्रजा की होनी चाहिये। दृष्टान्त के लिए भारतीय चुंगी और विदेशी माल पर कर को लीजिये। यदि वह प्रश्न एक महती सभा को दे दिया जाय, जिसमें साम्राज्य के कुल हिस्सों के वोट रहें तो मानी हुई बात है कि भारत का कोई लाभ न होगा। क्योंकि भारत और उपनिवेशों का एक एक वोट रहेगा। यदि हम बाहर की आनेवाली वस्तुओं पर कर बांधना चाहेंगे तो जापान, एमेरिका और फ्रांस के साथ साथ हमको इङ्गलैंड की चीज़ों पर भी कर लगाना पड़ेगा। स्वदेशी वस्तुओं के बनाने और उनके प्रचार के लिए यह करना परमावश्यक है; किन्तु हम ऐसा कदापि नहीं कर सकेंगे इसके लिये हमें पूरे आर्थिक-स्वराज्य की आवश्यकता है। इस तरह के कर से मिला हुआ रुपया फ़ौज और जहाज़ों में लगाया जा सकता है। इनकी जितनी आवश्यकता एक देश की रक्षा के लिये जितनी है वह सभी को मालूम है। सिविलसर्विस के ऊपर जनता की सत्ता दो प्रकार हो सकती है। पहिला यह कि एकाएक उचित समय पर सब अधिकार हिन्दुस्तानियों को सौंप दिया जाय दूसरा यह कि धीरे धीरे दिया जाय। पहिले का होना अति कठिन है, क्योंकि क्या जाने वह "उचित समय" आवे या न आवे और यदि आवे तो न जाने कब आवे। ठीक यह होगा कि तुरन्त ही २० या २५ फ़ीसदी से अधिकार देना आरम्भ कर देना चाहिये। व्यवस्थापक कौंसिल को यह अधिकार हो कि वह जिस जगह को चाहे तोड़ दे, जिस पर चाहे हिन्दुस्तानी को नौकर करे और जिसकी चाहे तनख़्वाह घटाये या बढ़ाये। पुलीस के दो हिस्से किये जा सकते हैं। एक जो रोज़ काम आती हो, दूसरी जो लड़ाई दंगे के समय काम आवे। लड़ाई दंगेवाली पुलीस कुछ दिनों तक मांटेगू [illegible] र प्रतिनिधि सभा के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाथ में न भी रहे तो कुछ हर्ज नहीं है। मेरा इन सब बातों को कहने से यह तात्पर्य है कि गवर्नमेंट का प्रत्येक हिस्सा प्रजा के हाथ ही में होना चाहिये। इस समय कुछ रोकथाम अवश्य रक्खी जा सकती है, किन्तु अन्त में सब अधिकार प्रजा ही के हाथ में आने चाहिये।

प्रान्तिक व्यवस्थापक सभायें जो स्कीम छप जाने के बाद बनाई जायँगी वे केवल इंगलैंड के स्वतंत्र विचार के प्रतिष्ठित पुरुषों और हिन्दुस्तान के ग़ैर-सरकारी प्रतिनिधियों की ही होनी चाहिये। सरकारी आदमी जितने कम हों उतना ही अच्छा है, और उनका काम केवल सरकारी मामलों का जताना और सलाह देना ही उचित है। यदि ऐसा न हुआ तो आजकल के अफ़सर, जो आगे बढ़ने के विरोधी हैं और जिनकी हर तरह से विशेषता है, अपने ही लाभ की कोशिश करेंगे। मेरी सम्मति है कि प्रान्तीय कौंसिलों के मेम्बरों का नम्बर अवश्य ही पहिले से तय हो जाना चाहिये और नम्बर इस हिसाब से तय किया जाय कि जहां तक सम्भव हो सब नेताओं के कार्यकर्ता उसके मेम्बर हो जावें। जातिगत प्रातिनिध्य भी इस तरह का हो जो थोड़े दिन ही के लिए हो और जिससे आपस के लड़ाई झगड़े अधिक न बढ़ें।

मेम्बरों का नम्बर भले प्रत्येक प्रान्त में अलग अलग रहे, किन्तु यह सब कमेटी के हाथमें न छोड़ देना चाहिये। क़ानून बना देना चाहिये कि इससे कम मेम्बर किसी प्रान्त में न हो। प्रान्तीय सरकार के हाथ में सुधार का काम देना बहुत भूल है।

मांटेगू साहब को दिखाया जा चुका है कि यह रक्षित हस्तान्तरित और विभागों में शासन को विभाजित करना और इस प्रकार प्रत्येक सरकारी आदमी को "दोहरी सरकार" की सेवा करना बहुत कठिन है। किन्तु यदि हम मान भी लें कि यह बात हो सकती है तो बहुत कुछ विभाग के ऊपर भी निर्भर है। इसके साथ मेरी राय है कि वह हिस्से, जिनमें प्रजा का हाथ रह सकता है या रहना चाहिये और जिससे बहुत लाभ होने की आशा है, प्रजा के प्रतिनिधियों ही को दे देना चाहिये। केवल उतना ही अधिकार सरकार के हाथ में रहे जितना कुल देश में शान्ति रखने के लिए परमावश्यक है। मेरे विचार में तो साधारण पुलीस और न्याय का कुल काम हस्तांतरित विभाग में होना चाहिये जिसमें जनता का अधिकार ही उचित है। जब तक कि जनता में पूर्ण अधिकार मिल जाने का ज्ञान नहीं होता तबतक उत्तरदायित्व शक्ति का उत्पन्न होना असम्भव है। मेरी यह भी सम्मति है कि हस्तांतरित विभाग में थोड़े की जगह पूरा "दायित्वपूर्ण" देना ही ठीक है। व्यवस्थापक कौंसिल के ऊपर दबाव रखने या उनकी बातों में बारबार हस्तक्षेप करने से सब काम रुक जाने का भय होगा। इसलिए जांच करनेवाली कमेटी को विभागों को ठीक करने में सब बातें जान जाना उचित है, जिससे अन्त गड़बड़ न हो।

मैं इतना विरोध होने पर भी स्थायी कमेटी का पक्षपाती हूँ, किन्तु मैं यह भी चाहता हूं कि यह केवल चुने हुए मेम्बरों ही की बनी हुई होनी चाहिये। विषय और समय, जिसमें उनकी राय ली जायगी, यह सब भी पहिले ही से तय हो जाने चाहिये। यह भी आवश्यक है कि केवल नई कौंसिल ही को अपने काम चलाने के नियम बनाने का अधिकार हो।

कार्यकारिणी कौंसिल।

एक हिन्दुस्तानी के इस कौंसिल में होने का मैं विरोधी नहीं, किन्तु दशा देखते हुए मैं यही कहूंगा कि यदि वह व्यवस्थापक कौंसिल की इच्छानुसार काम न करे तो उसे इस्तीफ़ा दे देना चाहिये, और व्यवस्थापक कौंसिल को अधिकार होगा कि वह दूसरे मेम्बर को भेजे जो उस कौंसिल की राय वहां दे सके।

मंत्रियों की तनख़्वाह कार्यकारिणी कौंसिल की तनख़्वाह के बराबर होनी चाहिये। वह तन-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख़्वाह व्यवस्थापक कौंसिल के वोट-द्वारा मिलनी चाहिये। आजकल की बनी हुई गवर्नमेंट आफ़ इंडिया ही के ऊपर यह काम छोड़ देना ठीक नहीं।

बजट।

मेरी सम्मति है कि स्कीम छपने के बाद जो कमेटी बनेगी उसको उचित होगा कि वह प्रत्येक विभाग का, पिछले कई साल के ख़र्चे का, औसत निकाल ले और भविष्य में उनके सुधार की आवश्यकताओं का अनुमान कर ले, कम-ख़र्ची की आवश्यकता को भलीभांति देख ले और तब अधिक से अधिक रक़म रक्षित विभाग के लिए रख दे, और व्यवस्थापक कौंसिल को अधिकार दे दे कि हर बरस वह जाँच कर उसमें घटा बढ़ा सके। गवर्नर को भी अनुचित अदल-बदल को रोकने का अधिकार दे दिया जाय। यदि वह कभी कुछ अधिक रुपया किसी विशेष विभाग में लगाना चाहे तो लगा सकता है, यदि ऐसा न हुआ तो बजट पर हमारा अधिकार स्वप्नवत् कहलायेगा।

क़ानून बनाना।

बड़ी कमेटी को निर्वाचित करके उसके हाथ में देना बड़ी भारी ग़लती है। ऐसा करने से सुधारक क़ानून कभी भी न बन सकेंगे। प्रान्त के लिए क़ानून बनाना प्रान्तिक व्यवस्थापक कौंसिल ही के हाथ में छोड़ देना चाहिये, और गवर्नर को उसमें रोकथाम का अधिकार दे देना चाहिये। बड़ी कमेटी का इस तरह हस्तक्षेप करना या तो बखेड़ा बढ़ायेगा या निरर्थक सिद्ध होगा। मैं अच्छी तरह से देख सकता हूं कि मनोविकार को छोड़कर इससे कुछ लाभ न होगा। बड़ी कमेटी के बनने से राजनैतिक मशीन का मूल केन्द्र हट जायगा, और यह मिस्टर मांटेग्यू नहीं चाहते। हस्तांतरित विभाग के विषय में कदापि यह बड़ी कमेटी की टांग नहीं अड़ना चाहिये। केवल गवर्नर का वोट ही काफ़ी है। रक्षित विभाग में से हर एक चीज़ हस्तांतरित विभाग में आप ही आप पांच २ वर्ष के बाद आजाने ही का क़ायदा होना चाहिये। इसका रुकना तभी सम्भव हो जबतक कि एक नियम-बद्ध कमीशन यह प्रमाणित न कर दे कि अमुक वस्तु का देना अभी ठीक नहीं।

भारतीय गवर्नमेंट

में भी उसी प्रकार की कौंसिलें बनाई जानी चाहिये जैसी कि प्रान्तों में बनाई जायेंगी। यदि ऐसा किया जाय तो कौंसिल आफ़ स्टेट के बनाये जाने में कोई हानि नहीं है। किन्तु यह साफ़ साफ़ क़ानून बना दिया जाय कि उसका काम केवल उन बिलों में दख़ल देने का अधिकार रहेगा जिससे राज्य में शान्ति स्थापित रहे। जब तक भारतीय कार्यकारिणी कौंसिल में आधे मेम्बर हिन्दुस्तानी नहीं होंगे तब तक स्कीम का असली मतलब सिद्ध न होगा।

भारतीय कौंसिल

तोड़ दी जाय, क्योंकि आजकल के लिए वह ठीक नहीं—इस बात पर पूरा भारतवर्ष सहमत है। किन्तु ऐसा न किये जाने से सब को शोक है। सेक्रेटरी आफ़ स्टेट फ़ार इंडिया की पदवी सेक्रेटरी आफ़ स्टेट फ़ार कौंसिल के बराबर रखने में कोई ख़राबी नहीं है, विशेषकर जब पार्लमेंट-कमेटी का निर्वाचन अवश्य है।

कुल स्कीम को भलीभांति जाँचने से यह स्पष्ट दिखाई देता है कि किसी विभाग में भी कार्यकारिणी शक्ति को जनता के रोकथाम में रखने का प्रयत्न नहीं किया गया है। समय समय पर एक कमीशन सब बातें जांच करने के लिए बैठाना निरर्थक होगा, यदि प्रारम्भ ही में हमको बहुत कुछ अधिकार न दे दिये गये। शासनप्रणाली और देश की आर्थिक-स्वतंत्रता आदि के सुधार के कामों में स्वराज्य और आत्मनिर्णय का ध्यान दिमाग़ से बिलकुल हटा दिया गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

मर्यादा ।

मासिक पत्रिका ।

भाग १६] अगस्त सन् १९१८ । [संख्या २

मांटेगू-चेम्सफोर्ड-स्कीम ।

[लेखक–श्रीयुत सी० पी० रामस्वामी ऐयर ।]

मुझे साफ साफ मालूम होता है कि यह २० अगस्त १९१७ के निर्वाचित आत्म-निर्णय के आदर्श की ओर चलना नहीं है किन्तु इससे विमुख होना है । ऐसे समय में जब कि भारत के भविष्य के निपटारे में अंग्रेज़ों की ओर से हिन्दुस्तानियों का विश्वास बढ़ता आता है यह आवश्यक है कि शासन की आन्तिरिक अवस्था बदली जाय । यदि ऐसा न हुआ तो उस विश्वास का शीघ्रता से अधो-पतन होना नहीं रुक सकता । ऐसे अवसर बहुत कम आते हैं और विलायत के नैतिक-जीवन में इतना जल्द अदल-बदल देखकर मुझे कहना पड़ता है कि स्कीम अधूरी और विकास तथा विकास में रुकती हुई है । इसमें यदि साफ़ साफ़ मेरे कथनानुसार परिवर्तन न हुआ तो स्कीम बनानेवालों की अर्थसिद्धि नहीं हो सकती।

यह मानते हुए कि बिना अपने सिर भार लिये शासन की योग्यता नहीं आ सकती और बिना स्वयं काम किये केवल वादविवाद ही से बहुत कुछ बुराइयां उत्पन्न हो सकती हैं, रिपोर्ट की लेखन-शैली से मालूम होता है कि लेखकों को हम लोगों पर विश्वास नहीं । उनकी सम्मति है कि हमको यदि थोड़े भी अधिकार दिये गये तो गवर्नमेंट बैठ जायगी । यह भी कहा गया है कि बिना इस दक़ियानूसी शासन-प्रणाली के तोड़े ही "उत्तरदायित्वपूर्ण शासन" आरम्भ होना चाहिये।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कांग्रेस-लीग स्कीम को तो यह कह कर गालियां सुनाई गई है कि इसमें शासनकार्य विभाजित है और अधिकार इस तरह बांटे गये हैं कि Legislature (व्यवस्थापक) जब चाहे Execation (शासकदल) को शक्तिहीन कर सकता है किन्तु उसको तोड़ नहीं सकता। हमारी नवरचित गवर्नमेन्ट की मशीन का देखिये। प्रत्येक क़ानून का पास होने से पहिले लेजिस्लेटिव एसेम्बली और कौंसिल आफ़ स्टेट में से जाना और उसके अतिरिक्त सरकार को घटाने बढ़ाने का उसमें पूरा अधिकार होना यह दोनों बातें—क़ानून बनाने की शक्ति को सत्य ही सरकार के हाथ में रख देती हैं। "सुख-शान्ति और सुराज का फ़िक़रा—"रक्षित-विभागों के उत्तरदायित्व" के फ़िक़रे के समान ऐसा बेतुका है कि उसकी आड़ में हर एक शिकार खेला जा सकता है। फल यह होगा कि बिना सरकारी अफसरों की सहायता के व्यवस्थापक सभा (Lageslative Assembly) कभी भी अपनी ऐसी नहीं कर सकती। किन्तु स्कीम में इससे बढ़कर खराबी यह है कि बजट पर प्रस्ताव सिर्फ सिफारिस की हैसियत से ही किये जायँगे। जब तक आय-व्यय में हमारा पूरा हाथ नहीं दिया जाता तब तक भारत का भविष्य धुंधला ही रहेगा। दो असली बात जो स्कीम में छूट गई है वह वही है जो कांग्रेस-लीग स्कीम में मांगी गई थी अर्थात् शासकदल के ऊपर व्यवस्थापक और व्यवस्थापक का कोष पर अधिकार। जिस स्कीम में यह दो बातें नहीं वह कभी भी आगे बढ़नेवालों को संतुष्ट नहीं कर सकती।

यह २० अगस्त की घोषणा के आदर्श की ओर बढ़ना नहीं किन्तु उससे पीछे हटने के बराबर है और मुझे पूर्ण विश्वास हो गया है कि यह तरीक़ा हमको कभी भी स्वभावतः स्वराज्य के अन्तिम लक्ष्य की ओर नहीं ले जा सकता।

मेरी सम्मति है कि शासन के प्रत्येक हिस्से में पूरी रोक थाम प्रजा की होनी चाहिये। दृष्टान्त के लिए भारतीय चुंगी और विदेशी माल पर कर को लीजिये। यदि वह प्रश्न एक महती सभा को दे दिया जाय, जिसमें साम्राज्य के कुल हिस्सों के वोट रहें तो मानी हुई बात है कि भारत का कोई लाभ न होगा। क्योंकि भारत और उपनिवेशों का एक एक वोट रहेगा। यदि हम बाहर की आनेवाली वस्तुओं पर कर बांधना चाहेंगे तो जापान, एमेरिका और फ्रांस के साथ साथ हमको इङ्गलैंड की चीज़ों पर भी कर लगाना पड़ेगा। स्वदेशी वस्तुओं के बनाने और उनके प्रचार के लिए यह करना परमावश्यक है; किन्तु हम ऐसा कदापि नहीं कर सकेंगे इसके लिये हमें पूरे आर्थिक-स्वराज्य की आवश्यकता है। इस तरह के कर से मिला हुआ रुपया फ़ौज और जहाज़ों में लगाया जा सकता है। इनकी जितनी आवश्यकता एक देश की रक्षा के लिये जितनी है वह सभी को मालूम है। सिविलसर्विस के ऊपर जनता की सत्ता दो प्रकार हो सकती है। पहिला यह कि एकाएक उचित समय पर सब अधिकार हिन्दुस्तानियों को सौंप दिया जाय दूसरा यह कि धीरे धीरे दिया जाय। पहिले का होना अति कठिन है, क्योंकि क्या जाने वह "उचित समय" आवे या न आवे और यदि आवे तो न जाने कब आवे। ठीक यह होगा कि तुरन्त ही २० या २५ फ़ीसदी से अधिकार देना आरम्भ कर देना चाहिये। व्यवस्थापक कौंसिल को यह अधिकार हो कि वह जिस जगह को चाहे तोड़ दे, जिस पर चाहे हिन्दुस्तानी को नौकर करे और जिसकी चाहे तनख़्वाह घटाये या बढ़ाये। पुलीस के दो हिस्से किये जा सकते हैं। एक जो रोज़ काम आती हो, दूसरी जो लड़ाई दंगे के समय काम आवे। लड़ाई दंगेवाली पुलीस कुछ दिनों तक मांटेगू साहब के कथनानुसार प्रतिनिधि सभा के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाथ में न भी रहे तो कुछ हर्ज नहीं है। मेरा इन सब बातों को कहने से यह तात्पर्य है कि गवर्नमेंट का प्रत्येक हिस्सा प्रजा के हाथ ही में होना चाहिये। इस समय कुछ रोकथाम अवश्य रक्खी जा सकती है, किन्तु अन्त में सब अधिकार प्रजा ही के हाथ में आने चाहिये।

प्रान्तिक व्यवस्थापक सभायें जो स्कीम छप जाने के बाद बनाई जायँगी वे केवल इंगलैंड के स्वतंत्र विचार के प्रतिष्ठित पुरुषों और हिन्दुस्तान के ग़ैर-सरकारी प्रतिनिधियों की ही होनी चाहिये। सरकारी आदमी जितने कम हों उतना ही अच्छा है, और उनका काम केवल सरकारी मामलों का जताना और सलाह देना ही उचित है। यदि ऐसा न हुआ तो आजकल के अफ़सर, जो आगे बढ़ने के विरोधी हैं और जिनकी हर तरह से विशेषता है, अपने ही लाभ की कोशिश करेंगे। मेरी सम्मति है कि प्रान्तीय कौंसिलों के मेम्बरों का नम्बर अवश्य ही पहिले से तय हो जाना चाहिये और नम्बर इस हिसाब से तय किया जाय कि जहां तक सम्भव हो सब नेताओं के कार्यकर्ता उसके मेम्बर हो जावें। जातिगत प्रातिनिध्य भी इस तरह का हो जो थोड़े दिन हो के लिए हो और जिससे आपस के लड़ाई झगड़े अधिक न बढ़ें।

मेम्बरों का नम्बर भले प्रत्येक प्रान्त में अलग अलग रहे, किन्तु यह सब कमेटी के हाथमें न छोड़ देना चाहिये। क़ानून बना देना चाहिये कि इससे कम मेम्बर किसी प्रान्त में न हों। प्रान्तीय सरकार के हाथ में सुधार का काम देना बहुत भूल है।

मांटेग्यू साहब को दिखाया जा चुका है कि यह रक्षित हस्तान्तरित और विभागों में शासन को विभाजित करना और इस प्रकार प्रत्येक सरकारी आदमी को "दोहरी सरकार" की सेवा करना बहुत कठिन है। किन्तु यदि हम मान भी लें कि यह बात हो सकती है तो बहुत कुछ विभाग के ऊपर भी निर्भर है। इसके साथ मेरी राय है कि वह हिस्से, जिनमें प्रजा का हाथ रह सकता है या रहना चाहिये और जिससे बहुत लाभ होने की आशा है, प्रजा के प्रतिनिधियों ही को दे देना चाहिये। केवल उतना ही अधिकार सरकार के हाथ में रहे जितना कुल देश में शान्ति रखने के लिए परमावश्यक है। मेरे विचार में तो साधारण पुलीस और न्याय का कुल काम हस्तांतरिक विभाग में होना चाहिये जिसमें जनता का अधिकार ही उचित है। जब तक कि जनता में पूर्ण अधिकार मिल जाने का ज्ञान नहीं होता तबतक उत्तरदायित्व शक्ति का उत्पन्न होना असम्भव है। मेरी यह भी सम्मति है कि हस्तांतरित विभाग में थोड़े की जगह पूरा "दायित्वपूर्ण" देना ही ठीक है। व्यवस्थापक कौंसिल के ऊपर दबाव रखने या उनकी बातों में बारबार हस्तक्षेप करने से सब काम रुक जाने का भय होगा। इसलिए जांच करनेवाली कमेटी को विभागों को ठीक करने में सब बातें जान जाना उचित है, जिससे अन्त गड़बड़ न हो।

मैं इतना विरोध होते पर भी स्थायी कमेटी का पक्षपाती हूँ, किन्तु मैं यह भी चाहता हूं कि यह केवल चुने हुए मेम्बरों ही की बनी हुई होनी चाहिये। विषय और समय, जिसमें उनकी राय ली जायगी, यह सब भी पहिले ही से तय हो जाने चाहिये। यह भी आवश्यक है कि केवल नई कौंसिल ही को अपने काम चलाने के नियम बनाने का अधिकार हो।

कार्यकारिणी कौंसिल।

एक हिन्दुस्तानी के इस कौंसिल में होने का मैं विरोधी नहीं, किन्तु दशा देखते हुए मैं यही कहूंगा कि यदि वह व्यवस्थापक कौंसिल की इच्छानुसार काम न करे तो उसे इस्तीफ़ा दे देना चाहिये, और व्यवस्थापक कौंसिल को अधिकार होगा कि वह दूसरे मेम्बर को भेजे जो उस कौंसिल की राय वहां दे सके।

मंत्रियों की तनख़्वाह कार्यकारिणी कौंसिल की तनख़्वाह के बराबर होनी चाहिये। यह तन-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ख्वाह व्यवस्थापक कौंसिल के वोट-द्वारा मिलनी चाहिये। आजकल की बनी हुई गवर्नमेंट आफ़ इंडिया ही के ऊपर यह काम छोड़ देना ठीक नहीं।

बजट।

मेरी सम्मति है कि स्कीम छपने के बाद जो कमेटी बनेगी उसको उचित होगा कि वह प्रत्येक विभाग का, पिछले कई साल के ख़र्चे का, औसत निकाल ले और भविष्य में उनके सुधार की आवश्यकताओं का अनुमान कर ले, कम-ख़र्ची की आवश्यकता को भलीभांति देख ले और तब अधिक से अधिक रक़म रक्षित विभाग के लिए रख दे, और व्यवस्थापक कौंसिल को अधिकार दे दे कि हर बरस वह जाँच कर उसमें घटा बढ़ा सके। गवर्नर को भी अनुचित अदल-बदल को रोकने का अधिकार दे दिया जाय। यदि वह कभी कुछ अधिक रुपया किसी विशेष विभाग में लगाना चाहे तो लगा सकता है, यदि ऐसा न हुआ तो बजट पर हमारा अधिकार स्वप्नवत् कहलायेगा।

क़ानून बनाना

बड़ी कमेटी को निर्वाचित करके उसके हाथ में देना बड़ी भारी ग़लती है। ऐसा करने से सुधारक क़ानून कभी भी न बन सकेंगे। प्रान्त के लिए क़ानून बनाना प्रान्तिक व्यवस्थापक कौंसिल ही के हाथ में छोड़ देना चाहिये, और गवर्नर को उसमें रोकथाम का अधिकार दे देना चाहिये। बड़ी कमेटी का इस तरह हस्तक्षेप करना या तो बखेड़ा बढ़ायेगा या निरर्थक सिद्ध होगा। मैं अच्छी तरह से देख सकता हूं कि मनोविकार को छोड़कर इससे कुछ लाभ न होगा। बड़ी कमेटी के बनने से राजनैतिक मशीन का मूल केन्द्र हट जायगा, और यह मिस्टर मांटेगू नहीं चाहते। हस्तांतरित विभाग के विषय में कदापि यह बड़ी कमेटी की टांग नहीं अड़ना चाहिये। केवल गवर्नर का वीटो ही काफ़ी है। रक्षित विभाग में से हर एक चीज़ हस्तांतरित विभाग में आप ही आप पांच २ वर्ष के बाद आजाने ही का क़ायदा होना चाहिये। इसका रुकना तभी सम्भव हो जबतक कि एक नियम-बद्ध कमीशन यह प्रमाणित न कर दे कि अमुक वस्तु का देना अभी ठीक नहीं।

भारतीय गवर्नमेंट

में भी उसी प्रकार की कौंसिलें बनाई जानी चाहिये जैसी कि प्रान्तों में बनाई जावेंगी। यदि ऐसा किया जाय तो कौंसिल आफ़ स्टेट के बनाये जाने में कोई हानि नहीं है। किन्तु यह साफ़ साफ़ क़ानून बना दिया जाय कि उसका काम केवल उन बिलों में दख़ल देने का अधिकार रहेगा जिससे राज्य में शान्ति स्थापित रहे। जब तक भारतीय कार्यकारिणी कौंसिल में आधे मेम्बर हिन्दुस्तानी नहीं होंगे तब तक स्कीम का असली मतलब सिद्ध न होगा।

भारतीय कौंसिल

तोड़ दी जाय, क्योंकि आजकल के लिए वह ठीक नहीं—इस बात पर पूरा भारतवर्ष सहमत है। किन्तु ऐसा न किये जाने से सब को शोक है। सेक्रेटरी आफ़ स्टेट फ़ार इंडिया की पदवी सेक्रेटरी आफ़ स्टेट फ़ार कौंसिल के बराबर रखने में कोई ख़राबी नहीं है, विशेषकर जब पार्लमेंट-कमेटी का निर्वाचन अवश्य है।

कुल स्कीम को भलीभांति जाँचने से यह स्पष्ट दिखाई देता है कि किसी विभाग में भी कार्यकारिणी शक्ति को जनता के रोकथाम में रखने का प्रयत्न नहीं किया गया है। समय समय पर एक कमीशन सब बातें जांच करने के लिए बैठाना निरर्थक होगा, यदि प्रारम्भ ही में हमको बहुत कुछ अधिकार न दे दिये गये। शासनप्रणाली और देश की आर्थिक-स्वतंत्रता आदि के सुधार के कामों में स्वराज्य और आत्मनिर्णय का ध्यान दिमाग़ से बिलकुल हटा दिया गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोरिया या 'वृहत्तर जापान'।

(२)

[लेखक—'प्रवासी भारतवासी'।]

राजवंशों की कथा।

तृराज वंश का पतन—सप्तम शताब्दी में शिरागी कुदूरा व कोकोली राजवंशों की आपस की द्वेषाग्नि अधिक भभक उठी व उसकी ज्वाला अन्तिम सीमा तक पहुंच गई। यहां तक कि एक जापान से सहायता लेता था तो दूसरा चीन से और वे सारे द्वीपकल्प पर अपना राज्य स्थापित करने के लिए आपस में कटते मरते थे। अन्त में शिरागी का राजा चीन की सहायता से, जो उस समय तङ्ग वंश के आधीन था, कुदारा व कोकोली को ७२७ वि० उ० में पराजित करने में समर्थ हुआ। किन्तु दूसरी ही शताब्दी में नवीन राज्य बोकाई (पोहाई) का उत्तरी पश्चिमी सीमा पर इतना दबाव पड़ा कि शिरागी का आधा उत्तर-पूर्व का राज्य उसकी अधीनता से निकल गया (७७० वि० उ०)। अगली दो शताब्दियों में भीतरी बखेड़ों से, जो भिन्न भिन्न जातियों ने स्वतंत्रता के लिए मचाये थे, यह राज्य और शिथिल पड़ गया। यहां तक कि ८७७ वि० उ० में कोरया (कोली) का राज्य काईजों में स्थापित हो गया।

कोली (कोरिया) देश।

ओकेम (वांगकोन) वंश के प्रथम राजा ने १८ वर्ष पर्यन्त लड़ाई भिड़ाई करके सारे द्वीपकल्प को एक पताका के अन्तर्गत किया और सारे देश में एक साम्राज्य स्थापित हुआ। यह राज्य पांच शताब्दियों तक बड़ी उन्नत दशा में रहा। इस काल में देशवासी बड़े सुखी रहे। यहां इस समय हर प्रकार की शान्ति विराजती थी, इसी समय सभ्यता व बौद्ध धर्म की चर्चा भी यहां खूब बढ़ी। किन्तु इस राज्य को पड़ोसियों से बनाये रखने में बड़ी कुटनीति से सामना करना पड़ा। क्योंकि इसी समय में एक के उपरान्त दूसरी, सङ्ग, लीआओ, किन, युआन राजवंश आधुनिक मंचूरिया व उत्तरी चीन में उठे व मिटे। ये आपस में खूब लड़ते भिड़ते रहे। समय समय पर विजित दो जातियों का संग देकर उनकी हाँ में हाँ मिलाने में कोरिया को बड़ी दिक्कत उठानी पड़ी थी। किन्तु इस चातुर्य-नीति में इसे सदा सफलता ही प्राप्त नहीं होती रही।

पन्द्रहवीं शताब्दी के मध्य युग में कोरिया के अन्तिम राजा को यह निश्चय करने में बड़ी दिक्कत पेश आई कि वह शिथिलता की ओर जाती हुई युआन् वंश का साथ दे कि प्रतापी और बढ़ते हुए भिंग वंश के साथ हो। जब वह इस भांति दुविधा में पड़ा था उसके सबसे बलिष्ट सेनापति ली-साई-कीई (ली-त्सोंग-कियु) ने १४४६ वि० उ० में उसे हरा उसका राज्य स्वयम् छीन लिया। इसके एक सौ वर्ष पूर्व कोरिया को कुबलिया खां के जापानी धावे में सहायता देने के कारण बड़ी क्षति उठानी पड़ी थी।

लीवंश-ली-शीई-कीई; कोरिया राज्य के सेनापति, का यह विचार बहुत ठीक था कि भिंग वंश के विरुद्ध युआन वंश से षड्यन्त्र करने में राजा देश पर बड़ी आपत्ति ला रहा है। इस कारण उसने जीर्ण कोली वंश को उखाड़ फेंका और अपना नवीन राज्य कानयों (कीजो) में स्थापित किया। इस राजा ने पुराना नाम चोसेन, जोसर्वप्रिय था, पुनः प्रचारित किया। इस नवीन राजा ने भिंग वंश को उपहार दे उसकी अधीनता स्वीकार की और देश में चीनी कानून व चीनी विद्या तथा सभ्यता का प्रचार किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टायसो (तापे चौंग) वंश के तृतीय राजा ने (१४५८–१४७५ वि० उ०) देश में चारो ओर विद्यालय स्थापित किये व चीनी पुस्तकों के मुद्रणार्थ अक्षर ढालने का भी एक कार्यालय खोला।

चतुर्थ नृपति सीसो (सी-चौंग १४७६–१५०७) ने एक सार्वजनिक भवन बनवाया जहां गम्भीर शास्त्रों की विवेचना होने लगी। इसी राजा ने उनमन नामी कोरियन अक्षरों का भी आविष्कार किया जो श्रवणेन्द्रिय के सिद्धान्त पर बने हैं (जापानी अक्षरों का नाम काता काना है। चीन में इस प्रकार के अक्षर अब तक प्रचलित नहीं हैं) इसीने देश में ज्योतिष तथा यंत्रविद्या का भी प्रचार करवाया, स्वयम् बहुत सी उत्तम २ पुस्तकों का सम्पादन किया, राज्य-कर-पद्धति को सुधारा तथा कारागार-सम्बन्धी नियमों को भी संशोधन कर उत्तम बनाया। यह लीवंश के काल का स्वर्णयुग वा सत्ययुग था।

दसवें नृपति इनजीन-कुन (योन-सान-कुन १५५२–१५६३) के उपरान्त देश में अराजकता की वृद्धि होने लगी और देश आपस की लड़ाई भिड़ाई से दुःख उठाने लगा। इसीके साथ २ राजकर्मचारियों में भी दूषण बढ़ने लगे।

जापानी आक्रमण !

चतुर्दश नृपति सेनसो (सोऊचङ्ग १६२४–१६६५) के समय में विख्यात तोयोतोमी हिदेयोशी, जापानी प्रधान सचिव व सेनापति, का इस देश पर आक्रमण हुआ। यह आक्रमण सारे देश पर फैला था। अन्त में इस सेनापति ने राजधानी (कीईजो) व प्राचीन हीईजो को परास्त कर हीईजो में जापानी सेना के लिए एक बड़ा दुर्ग निर्माण किया। राजा गिशू नगर में भाग गया व मिंग राजवंश की सहायता से नाममात्र के लिए राज्य को बचा लिया। चीनियों व जापानियों में कई वर्षों तक यह युद्ध चलता रहा। जब मंचू वंश का प्रभाव बढ़ा तब कोरिया ने इसका साथ दिया और मिंग वंश को तिलांजलि दी। अब कुछ समय तक कोरिया बाहरी शत्रुओं के आक्रमण से बचा रहा व अष्टादशवीं व उन्नीसवीं शताब्दी के प्रथम चरण में शिल्प व विद्या की फिर कुछ २ उन्नति यहां होने लगी। किन्तु आरामतलबी व आलस्य की चाल कूटनीति व आपस के कलह ने वास्तविक उन्नति के मार्ग में बहुत कुछ रुकावट डाली और उसके स्वाभाविक प्रसार को रोक दिया। इतने ही में (१९०६) में पच्चीसवां राजा कें-सो की मृत्यु हो गई। इसने कोई राज्य का उत्तराधिकारी नहीं छोड़ा था। बस इस प्रश्न को लेकर कि सिंहासनारूढ़ कौन हो आपस में लोग लड़ने लगे। छब्बीसवाँ राजा टेस्सो (चोल-चौंग) इसी गड़बड़ी के मध्य में सिंहासन पर बैठ गया। तब से किन् (किम्) व बिन् (मिन्) वंशों में भयानक कलह मचना प्रारम्भ हुआ जिसके कारण देश पर विपत्तियों का बादल टूट पड़ा। प्रजापीड़न, कुशासन व अराजकता का राज्य चारों ओर देश में फैल गया। इस समय अच्छा मौक़ा ताक विदेशियों ने हस्तक्षेप करने की अनुमति चाही। इस समय ताइ-ईन् कुन् (तापे-वान् कुन्) ने जो बालक राजा का संरक्षक था देश में नवीन स्फूर्ति फूकनी चाही किन्तु वह कृतकार्य न हो सका। उसका सब प्रयत्न निष्फल गया।

जापान के हस्तक्षेप करने से यह देश चीन से स्वतन्त्र हो गया किन्तु चीन का षड्यन्त्र बन्द नहीं हुआ। नतीजा उसका यह निकला १९५१–१९५२ में जापान ने चीन से लड़ाई छेड़ दी। इस युद्ध के उपरान्त कोरिया चीन से बिलकुल स्वतन्त्र हो गया और देश का नवीन नाम कान (हान) रक्खा गया। किन्तु आपस का षड्यन्त्र नहीं ही मिटा। भीतर २ भिन्न २ वंश आपस में राजनैतिक चालें चलते ही रहे यहां तक कि १९६१–१९६२ में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जापान-रूस युद्ध

भी इसीके कारण छिड़ गया। रूस को पराजित करने के उपरान्त जापान ने कोरिया को स्वतन्त्र छोड़ने में अपनी भलाई न देखते हुए पोर्ट्स माउथ की संधि से कोरिया पर अपने अधिकार की घोषणा कर दी और प्रिंस ईतो यहां के प्रधान 'रेज़ीडेंट' (Resident-General) नियुक्त हुए। अब देश में जापानी प्रभाव से वाह्य उन्नति प्रारम्भ हुई। कहा जाता है कि १६६८ में कोरिया के राजा ने स्वेच्छा से अपना अधिकार त्याग कोरिया को पूर्णतया जापान का दास बना दिया। स्वतन्त्रता से निकल देश पूर्णतया दासत्व की शृङ्खला में बँध गया। अब इसके नवीन प्रभुओं ने इसको फिर से तृतीय बार चोसेन नाम दिया है।

जापान का नूतन राज्य।

१६६८ से १६७२ तक केवल चार ही वर्ष होते हैं किन्तु इसी अल्प समय में जापान ने अपने अधिकार को दूसरों की निगाह में सार्थक करने के लिए यहां अनेक प्रकार की उन्नति व तड़क भड़क के कार्यों को प्रारम्भ किया है। सियुल जो यहां की राजधानी है हर प्रकार से सुसज्जित हो रही है। विद्युत प्रकाश, शुद्ध जल, चौड़ी २ सड़कें यहां तक कि संडास भी यहां बन रही हैं जो अभी तक स्वयम् जापान में कहीं नहीं है।

चार ही वर्षों में लाखों जापानी यहां आ बसे हैं और प्रति दिन इनकी अधिक धारा यहां आती जाती है। जापान सरकार इस देश को विदेश नहीं रहने देना चाहती वरन् इसे अपनाना चाहती है। कोरियन व जापानी लोग जाति की दृष्टि से इतने निकट हैं कि इनका आपस में मिल जाना असम्भव नहीं है। जापान आपस के वैवाहिक सम्बन्ध को भी खूब सहायता दे रहा है। उसकी इच्छा है कि कोरिया भी हैकैदो की भांति जापान का अंग बन जावे, केवल जापान के अन्तर्गत विदेशी राज्य की भांति न रहे। उसकी इच्छा है कि यह स्काटलैंड की भांति इङ्गलिस्तान से मिलकर ग्रेटब्रिटेन की भांति ग्रेट जापान बनावे किन्तु अभी यह नहीं कहा जा सकता कि इस परिश्रम में जापान सफल होगा कि नहीं। यदि कोरिया जापान से स्काटलैंड के इङ्गलैंड से मिलने की भांति मिल गया तो अवश्यमेव यह पश्चात्मृत दोनों देशों के लिए शुभकर होगा किन्तु यदि यह मिलाव आयर्लैंड के इङ्गलैंड के साथ मिलने की भांति केवल तैल जल के मिलाव के सदृश हुआ तो यह प्राच्य देश में एक नवीन समस्या उपस्थित कर देगा। देखें, इसका क्या होता है। यह एक नवीन समस्या हल हो रही है। इसकी ओर सारे जगत की आँख लगी है।

चोसेन के नरनारियों की चाल ढाल।

इस देश में केवल एक सप्ताह से भी कम रहने का अवसर मिला इससे स्वयम् अनुभव द्वारा इस देश के बारे में कुछ वर्णन करना देश के प्रति अन्याय करना है। अधिक पुस्तकावलोकन के अभाव के कारण अन्य पुरुषों की सम्मति तथा अनुभव से लाभ उठाने की योग्यता भी अपने में नहीं है। इसलिए यह जानते हुए भी कि जापानी इस देश के प्रभु हैं, उन्हें यह देश अपने पास रखना ही है, इस कारण उनकी सम्मति स्वार्थभाव से अछूत व निरपेक्ष नहीं हो सकती तथापि हमें भी सिवाय उनके दिये हुए वृत्तान्त को छोड़कर और कोई उपाय अपने भाइयों तक इनका समाचार पहुंचाने का नहीं है। इससे पाठकगण उपर्युक्त अध्याय में दिये हुए इतिहास तथा नीचे दिये हुए अन्य वृत्तान्तों को पूर्णतया प्रामाणिक न समझते हुए अपनी स्वतन्त्र राय बनावें। यह वृत्तान्त केवल इस दृष्टि से लिखा जा रहा है कि एक नवीन देश के बारे में देशवासियों को कुछ न कुछ परिचय अवश्य मिल जावे। जिन्हें इसके पाठ के उपरान्त अधिक वृत्तान्त जानने की अभिलाषा होगी वे अन्य पुस्तकों से अव-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोकन से तथा इस विचित्र प्राचीन देश की यात्रा का कष्ट उठा ठीक २ समाचार जानने का प्रयत्न करेंगे।

इस देश के मनुष्यों को देखकर एक बार अपने देश के पञ्जाबी सिक्ख भाइयों तथा साधारण रीति पर मुसलमान भाइयों का स्मरण हो आता है। यहां के पुरुष प्रायः दाढ़ी रखते हैं व उनके सर के बाल भी बड़े होते हैं जिन्हें वे माथे के ऊपर कंघो कर बाँध रखते हैं। इन्हें देखने से सिक्ख भाइयों के केश याद आते हैं। टोपी पहिनने के पूर्व ये माथे के गिर्द एक काले रङ्ग की पट्टी बाँधते हैं जो एक प्रकार से सिक्खों के मस्तक पर के चक्र सी देख पड़ती है। यहाँ के लोग प्रायः सफ़ेद रङ्ग का कपड़ा पहिनते हैं। सभी लोग एक प्रकार का पायजामा पहिनते हैं जिसे नीचे पैर के गुल्फ के पास बाँध देते हैं अर्थात् मोहरी खुली नहीं रहने देते। ऊपर घट में एक मिर्जई पहिनते हैं, बाहर लंबा पेंड़ी तक का अँगरखा। अँगरखा व मिरज़ई ये दोनों बगलबन्दी की भांति होती हैं। दाहिनी ओर का पल्ला बाईं ओर के पल्ले के नीचे जाता है व ऊपर बाईं ओर का पल्ला दहिने वक्षस्थल के पास एक बन्द द्वारा बँधा रहता है। माथे पर ये लोग काले तार की बनी हुई एक प्रकार की टोपी पहिनते हैं, जैसो कि हमारे क्षत्री भाइयों के यहां छोटे बच्चों को अँग्रेज़ी टोपी पहिनाई जाती है।

स्त्रियों की पोशाक।

स्त्रियों की पोशाक भी प्रायः मर्दों ही की भांति होती है। ये भी पायजामा पहिनती हैं और मिरजई की जगह एक अँगिया, जो बहुत ही छोटी होती है। केवल उसीको पहिनकर जो श्रमजीवी स्त्रियाँ बाहर कार्य्य करती हैं उनका अंग उस छोटे कपड़े से नहीं ढकता। हां, इनका पायजामा बहुत ऊंचा पेट के भी ऊपर बाँधा जाता है। मध्यम श्रेणी की स्त्रियाँ पायजामे के ऊपर चोली का दामन दबा कर एक प्रकार का ढाला, स्वेत वा कपूरी रङ्ग का लहँगा पहिनती हैं। ये अपने बाल प्रायः अपने यहाँ की स्त्रियों की भाँति लंबी चोटी करके बाँधती हैं। किन्तु अन्य प्रकार से भी बाल बाँधने की यहाँ प्रथा है जो विचित्र है और बाल एक प्रकार से मुकुट की भाँति देख पड़ते हैं। यहां पर्दे की सख़्त रिवाज़ थी। स्त्रियाँ बाहर नहीं निकलती थीं। केवल रात्रि में एक घंटा बजता था तब सब पुरुष घर में चले जाते थे और स्त्रियाँ घंटे भर के लिए बाहर आती जाती थीं। दिन में बाहर आने के लिए एक प्रकार का लम्बा अँगरखा फर्गुल की भांति माथे पर से नीचे छोड़ लेती थीं इससे उनका मुख नहीं ढँपता था पर सब अंग ढँप जाता था। अब पर्दे की रिवाज़ घट रही है किन्तु प्रतिष्ठित धनी लोग अब भी इस मर्यादा को निबाहते हैं। स्यूल नगर में अब भी स्त्रियाँ यह लम्बा अंगा ऊपर डालकर निकलती हैं। इस लम्बे अँगरखे के बदले में छाता भी है। जो यह लम्बा अँगरखा नहीं ओढ़तीं वे छाता लगा लेती हैं। रात्रि में बिना पानी के भी छाता लगाये स्त्रियों को देख पहले बड़ा कौतूहल हुआ था पर रहस्य मालूम पड़ने से सन्देह दूर हो गया। चोसन देश में आने के पूर्व मेरा विचार था व मेरे अतिरिक्त अन्य और असंख्य लोगों का यही विश्वास होगा कि पर्दे की प्रथा महात्मा मुहम्मद के बाद मुसलमानी धर्म के साथ साथ उत्पन्न हुई है और यह प्रथा, वा कुप्रथा कहिये, केवल उन्हीं देशों में प्रचलित है जहाँ जहाँ मुसलमानी सभ्यता का असर है; यद्यपि संसार के मुसलमानी-सभ्यता-प्रधान देश मिस्र इत्यादि में भी यह कुप्रथा चरमसीमा को नहीं पहुंची है, जैसा कि इसका बुरा हाल भारत में है। किन्तु इस देश में पर्दे का रिवाज़ देखकर चकित होना पड़ा और अभी तक इसके निश्चय का अवसर नहीं प्राप्त हुआ कि यह प्रथा यहां स्वतंत्र रूप से है वा मुसल-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानी धर्म के साथ साथ आई है। यह भी एक याद रखने की बात है कि चीन, मञ्चूरिया व कोरिया में भी मुसलमान धर्मावलम्बी मनुष्य हैं।

कोरियानिवासियों का भोजन।

यहां के लोग दिनरात में तीन बार भोजन करते हैं—प्रातःकाल कलेवा, दोपहर में रसोई व रात्रि में व्यालू। खुशहाल लोग चावल का अधिक प्रयोग करते हैं किन्तु निर्धन जन चावलों की जगह ज्वार बाजरे के भात से ही काम चलाते हैं। दाल यहाँ अनेक प्रकार की होती है। मूंग भी मिलती है किन्तु ये लोग दाल हमारी भाँति नहीं खाते वरन् उसकी पीठी बनाकर भिन्न २ प्रकार के खाद्य-पदार्थ उससे बनाते हैं। भात के अतिरिक्त नाना प्रकार की भाजी व सूखी मछली इनका प्रधान खाद्य पदार्थ हैं। इनके अतिरिक्त हर प्रकार के जलचर, भूचर, नभचर, जीवजन्तुओं का मांस भी ये लोग प्राप्त होने के खा लेते हैं। पशुओं के आन्तरिक यन्त्र, यकृत, स्रीहा इत्यादि, यहां असाधारण उत्तम खाद्य पदार्थ समझे जाते हैं। यहां नोन व मिर्चा पर अधिक रुचि है, पियाज भी बहुत व्यवहार में आता है। तिल का तेल भी बहुत खाया जाता है। गाय बकरी होने पर भी यहां दूध घी का व्यवहार बहुत कम है। यही अवस्था जापान में भी है और सुनते हैं कि चीन में भी यही हालत है।

कोरिया के मकान

गृह यहां बड़े ही क्षुद्र झोपड़ों के होते हैं। ये भी अत्यन्त मैले व छोटे रहते हैं। फूजन से स्यूल तक प्रायः दो ढाई सौ मील की यात्रा में भी ईंट व खपड़े के मकान नहीं देख पड़े। किंतु स्यूल में पुरानी राजकीय इमारतें बहुत अच्छी अच्छी देख पड़ीं व संग्रहालय में दो सहस्र वर्ष पूर्व के भी खपड़े, ईंट व अन्य पके हुए मिट्टी के पात्र मिले, जिससे ज्ञात होता है कि आधुनिक हीनावस्था का कारण अत्यन्त निर्धनता है, उत्तम गृह बनाने के ज्ञान तथा अभिलाषा का अभाव नहीं है। महाशय गेल नामी एक पादरी यहां २० वर्षों से रहते हैं। उनसे बातें करने तथा देखने से भी ज्ञात हुआ कि यहां के निवासी श्रम करने को तथा कोई अन्य मेहनत मशक्कत के काम को नीची निगाह से देखते हैं। भूखे मरते रहना उन्हें कबूल है पर हाथ से काम कर अपनी इज्जत में बट्टा लगाना ये पसन्द नहीं करते—यही फाकेमस्ती हमारे देश में भी पाई जाती है। इसके जानने के उपरान्त यहां की हीनावस्था के कारण का बहुत कुछ पता चल गया। जब किसी देश में ऊँच नीच का भाव आ जाता है व श्रम करना नीचा ख़याल किया जाने लगता है तब उस समाज को अधोगति प्रारंभ होती है व घुन लगे वृक्ष की भांति समाज भीतर २ खोखला होने लगता है। अन्त में एक दिन आता है कि ज़रा से हवा के झोंके को भी न सम्हाल सकने की शक्ति रहने के कारण झूठा ऊँचा उठा हुआ वृक्ष पृथ्वी पर गिर पड़ता है। इस गुलामी की अवस्था में भी इस देश में यह दशा है कि घरों में टहल करनेवाली श्रमजीवी स्त्रियाँ भी एक छोटी सी पुटली वा गठरी हाथ में उठा बाज़ार से घर लाने में अपनी मानहानि समझती हैं। ऐसी अवस्था होते हुए इस देश का और क्या हो सकता था?

इस फाकेमस्ती का सहायक जातपाँत का भेद भी यहां उपस्थित था और अब भी है। यहां चार प्रकार की जातियाँ हैं (१) उत्तम जातियाँ जिन्हें 'यांग पान' कहते हैं (२) मध्यम जातियाँ (इनका नाम नहीं मालूम। शायद कोई विशेष नाम नहीं है) (३) साधारण जाति जिसे सांग नोमे कहते हैं (४) इनके अतिरिक्त 'पेकचोंग' नाम की एक और जाति इनसे भी नीची है यह विदेशियों के वंशज से बनी है (५) अन्तिम जाति दासों की है।

इनमें से उत्तम जाति (यांगपान) के दो विभाग थे:—टोंगपान व सेपाना। इनमें से प्रथम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजकाज के उच्च पदों पर रह सकते थे व दूसरे सेना में उच्च पदाधिकारी होते थे। इनकी ब्राह्मण-क्षत्री से तुलना देना अनुचित न होगा। इनके स्वत्व व अधिकारों की भी कथा ज्यों की त्यों मैं नीचे उद्धृत करता हूं।

राजकाज के सभी पदों के ग्रहण करने का अधिकार इनके अतिरिक्त और जातियों को न था। इसपर से भी ये युद्ध से बरी थे। इन्हें राज्यकर नहीं देना होता था व अपराध करने पर शारीरिक दंड से भी ये मुक्त थे। न्यायालय में इन्हें खड़े रहने का अधिकार था किन्तु अन्य लोगों को घुटने के बल झुके रहने का ही अधिकार न्यायालय में था। यात्रा करते समय इन्हें अधिकार था कि पहले से टिके हुए अन्य यात्रियों को निकालकर ये सबसे उत्तम स्थान वासों व चट्टियों में ले सकते थे। मामूली श्रेणी के लोग जब इनसे बोलते थे तब उन्हें श्रीमान् हुज़ूर इत्यादि शब्दों का प्रयोग करना पड़ता था। इनके सामने हुक्का पीने, चारपाई पर बैठने अथवा घोड़े इत्यादि पर चढ़ने का अधिकार नीची श्रेणीवालों को नहीं था। अब ज़रा उनकी दशा को अपने यहाँ के ब्राह्मण-क्षत्रियों की दशा से मिलाइये। हमारे यहां भी ब्राह्मणों को प्राणदंड हिन्दू दंडनीति के अनुसार नहीं मिल सकता। अब भी ग्रामों में ब्राह्मण क्षत्रियों के सामने अन्य जातिवाले हुक्का नहीं पी सकते, चारपाई पर नहीं बैठे रह सकते, यहां तक कि घाम में छाता भी नहीं लगा सकते। बेचारे कितने गरीबों के छाते, जो कलकत्ता, बम्बई से लेकर लौटते हैं, यदि कहीं भूल से उन्होंने उसे ग्राम में लगा लिया, तो ये घमण्डी लोग थप्पड़ मार उनसे छीन लेते हैं। न जाने यह 'ज़बर्दस्त का ठेंगा सिर पर' की कुप्रथा संसार में क्यों और कब से चल पड़ी है।

मध्यम श्रेणी के लोगों को राजकाज में उच्च पद नहीं मिलते थे किन्तु उन्हें रोज़गार धन्धा कर कमाने की मनाही न थी। उच्चश्रेणीवाले लोग काम-धन्धा नहीं पाते थे इससे गो व नाममात्र में मध्यम श्रेणी से उच्च गिने जाते थे किन्तु उनकी आर्थिक अवस्था हीन थी जैसी हमारे यहाँ ब्राह्मण-क्षत्रियों की अन्य व्यापारियों के बनिस्बत कम है। सांग नोम श्रेणी में कृषक, लोहार, बढ़ई, व्यापारी व अन्य पेशेवालों का शुमार था। दासों का कुछ अधिकार न था। वे अपने स्वामियों की सम्पत्ति थे, वे बेचे जा सकते थे, दूसरों को दिये जा सकते थे, राज्य-कर्मचारियों को सूचना देकर उनका बध भी किया जा सकता था। उन्हें अपनी सन्तानों पर भी अधिकार न था। अवस्था ठीक वैसी ही थी जैसी कि गुलामी की अवस्था में १६२४ वि० उ० के पूर्व अमरीका में थी।

क़ानूनी दृष्टि में यह सब जातपाँत तथा गुलामी की अवस्था जापानी प्रभुओं ने उठा दी है। किन्तु सदियों से पड़ी आदत तुरन्त नहीं मिट जाती। उसे मिटने में यदि उतना नहीं जितना कि पड़ने में लगा था, तब भी आधा समय अवश्य चाहिये। यहाँ की तो बात ही न्यारी है। सभ्यता के घमण्डी अमरीका में से भी अभी गुलामी नहीं दूर हुई। वहाँ अब भी गोरे मनुष्य रङ्गीन मनुष्यों के साथ रेल में, ट्राम में नहीं चढ़ना चाहते। ज़रा २ सी बात पर निबल काले मनुष्यों को पकड़कर 'लिञ्च' (Lynch) कर डालते हैं। अपनी ही अवस्था आप क्यों नहीं देखते? जूते खाते शताब्दियाँ बीत गईं पर अभी माथे की खुजली नहीं मिटी। गौतम, कणाद, राम व अर्जुन की सन्तान होने का घमण्ड बाक़ी ही है—वही मिसाल है "भुईं बित्तौ नाहीं नाम पृथ्वीपाल सिंह" वा "बेंतौ तनिको नाहीं नाम बरयार सिंह"!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वही लोकप्रिय होते हैं ।

स्व-तन-जन का तो हित साधन,
जगत् में सब कोई करते ।
अहो ! "मैं-मेरे" के पीछे,
कहो, हैं कौन नहीं मरते ?
किन्तु परहित करने में जो,
समय सब अपना देते हैं ।
शुद्ध 'निस्पृहता' के अवतार
वही लोकप्रिय होते हैं ॥ १ ॥

सैकड़ों बड़े घरों के रोग
लोग हरने को प्रस्तुत हैं ।
आप होकर रच विविध विधान,
टहल को भी, लो, उद्यत हैं ॥
टकों का किन्तु न करते ख़याल,
दुःख दीनों का खोते हैं ।
दया से द्रवीभूत होकर
वही लोकप्रिय होते हैं ॥ २ ॥

धाम-धन-पद-प्रतिष्ठा-प्राप्त
जनों का मान ध्यान रखते ।
बैठते उठते सब कोई;
अदब में कमी नहीं करते ॥
किन्तु केवल गुण-गण पर जो
रीझ कर गद्गद होते हैं ।
मान छोटों का भी करते,
वही लोकप्रिय होते हैं ॥ ३ ॥

ठसक में सदा बड़प्पन की
कुचलते छोटों को जो लोग ।
उठाते अनुचित उनसे लाभ,
ग्रस्त हो "टैक्ट", "चाल" के रोग ॥
जगत् में कम न अधम ऐसे,
ख़ब वे पीछे रोते हैं ।
किन्तु जो समदर्शी जन हैं
वही लोकप्रिय होते हैं ॥ ४ ॥

समझते पर-दुख को अपना,
स्वीय दुख-सुख को जो सपना ।
जानते जीवमात्र के जो
उदय की बस माला जपना ॥
प्रेम के पूजक जो अविचल,
योग* निर्मल जल पीते हैं ।
'त्याग हित जीवन है जिनका
वही लोकप्रिय होते हैं ॥ ५ ॥

'मालव-मयूर' ।

प्राचीन भारत में प्रजासत्तावाद ।

[लेखक—श्रीयुत विनयकृष्ण रोहतगी ।]

प्रायः लोग यह कहा करते हैं कि प्राचीन समय में भारतवर्ष में प्रजासत्तात्मक शासनप्रणाली प्रचलित नहीं थी और भारतवासियों को यह भाव विदेशियों से प्राप्त हुआ है । हमारे अँग्रेज़ शासकों की तो यह धारणा है ही परन्तु बहुत से हमारे शिक्षित देशभाई भी उसको मानने के लिए तैयार हैं । वह कहते हैं कि आदिकाल से ही भारतवासी राजा को ईश्वरकर्तृक समझते थे तथा उसको ईश्वर का एक अंग मानते थे । इनकी सम्मति में उस समय राजा के कार्य को ईश्वरकर्तृक समझकर लोग उसका प्रतिरोध नहीं करते थे और उसकी मनमानी घरजानी आज्ञा को भी वे प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लेते थे । संक्षेप में उनका अभिप्राय यह है कि राजा ही प्राचीन समय में "सर्वे

* "योगः कर्मसु कौशलम्" । गीता ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वा" था और लोकमत का आदर नहीं होता था। परन्तु यह उनका भ्रममात्र है। अवश्य ही इसकी निर्मूलता सिद्ध करने के लिए हमारे पास कोई सिलसिलेवार इतिहास नहीं है किन्तु हमारे प्राचीन ग्रन्थों में विशेषतः वेद, उपनिषद्, स्मृति तथा रामायण और महाभारत में और विदेशी परिव्राजकों के लेखों में हमें प्राचीन भारत में प्रचलित शासनप्रणाली का विवरण कई जगह मिलता है। उन्हींके आधार पर मैं यहाँ अपने विचार प्रकट करूंगा।

भारत के प्राचीन इतिहास के विषय में गवेषणा करनेवालों का लेख पढ़ने से मालूम हाता है कि पुराकाल में यह देश छोटे छोटे राज्यों में विभक्त था। कुछ राज्यों का शासन राजा स्वयं करते थे और कुछ का शासन प्रजासत्तात्मक संस्थाओं द्वारा होता था। वैदिक समय से ही राजाओं को निर्वाचित करने की प्रथा आरम्भ होती है। इसके प्रमाण में वेद के निम्नलिखित दो मंत्रों का अनुवाद उद्धृत किया जा सकता है:—

'हे राजा! राजकार्य चलाने के लिए प्रजा तुझे निर्वाचित करे। इन पांचों प्रकाशयुक्त दिशाओं में प्रजा तुझे निर्वाचित करे।*

'यहाँ तू (राजा) है। मैंने तुझे चुना है। स्थिरता और दृढ़तापूर्वक खड़ा रह। सब श्रेणियों के लोग तेरी इच्छा (पूर्ण) करें। तेरा राजत्व भ्रष्ट न हो'।†

प्रो० बालकृष्ण कहते हैं कि "इस मंत्र से स्पष्ट होता है कि वेद के अनुकूल प्रजा से एक मनुष्य चुना जाना चाहिये। यदि ऐसा अर्थ न हो तो 'मैंने तुझे चुना है' और 'सब प्रजा तेरी इच्छा करे' ऐसे शब्द क्यों आये? इन वाक्यों से भी सिद्ध होता है कि प्रजा की इच्छा के विरुद्ध कोई राजा राज्य नहीं कर सकता।"

इसके अतिरिक्त और भी वेद में कई मंत्र हैं जिनसे सूचित होता है कि उस समय में राजा निर्वाचित होते थे। राजकार्य चलाने के लिए एक सुयोग्य राजा की आवश्यकता थी जो सिंहासन पर बैठकर स्वयं भोगविलास आदि में मग्न न होकर प्रजा की समृद्धि धन-दौलत की वृद्धि का यत्न करता था।

जिस प्रकार राजा प्रजा द्वारा निर्वाचित होता था उसी प्रकार प्रजा उसको सिंहासन पर से उतार भी सकती थी। राजाओं को पद-च्युत करने और राज्य में से निकाल देने की कई ऋचाएँ वेद में मिलती हैं*। उपर्युक्त ऋग्वेद के मंत्र में 'तेरा राज्य तुझसे भ्रष्ट न हो' यह वाक्य डंके की चोट से कह रहा है कि नियम-विरुद्ध चलने से राजा को पदच्युत कर देना चाहिये।

केवल पदच्युत ही करने का प्रजा को अधिकार नहीं था वरन् वह राजा को फिर निर्वाचित भी कर सकती थी। अथर्व वेद के एक मंत्र का निम्नलिखित अनुवाद इसको अच्छी तरह पुष्ट करता है:—

'हे पुनः निर्वाचित राजा! तेरे विरुद्ध पक्ष के लोग भी तुझको बुलावें। उनकी इच्छा के विरुद्ध तेरे मित्रों ने तुझे पुनः निर्वाचित किया है। इन्द्र अग्नि और सब देवताओं ने तुम्हारी कुशलता तुम्हारी प्रजा के हाथ में सौंपदी है'।†

इनको पढ़कर कौन कह सकता है कि प्राचीन समय में राजा को निर्वाचित करने की

* त्वां विशो वृणुतां राज्याय त्वामिमाः प्रदिशः पञ्चदेवीः।
अथर्ववेद, ३, ४

† आत्वा हार्षमन्तरभूर्ध्रुवस्तिष्ठा विचालयत्
विशस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु मात्वद्राष्टमधिभ्रशत।
ऋग्वेद, १०, १७३

* Vedic Index II Pp. 213

† ह्वयन्तु त्वा प्रतिजनाः प्रतिमित्रा अवृषत।
इन्द्राग्नी विश्वे देवास्ते विशि क्षेममदीधरन्॥
अथर्ववेद ३, ३, ५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रथा प्रचलित नहीं थी? अब तक तो मैंने वैदिक काल के सम्बन्ध में कहा है। अब देखिये स्मृति के समय में यह प्रथा कहाँ तक वर्तमान थी। शुक्रनीति में लिखा है कि "जो राजा गुण, नीति, राज्य में प्रचलित नियम और बल का शत्रु हो गया हो उस विनाशक को राज्य से हटा देना चाहिये। राष्ट्र की रक्षा के लिए राजकर्मचारियों की सम्मति लेकर राजपुरोहित उसके स्थान पर उसके कुल में उत्पन्न हुए किन्तु गुणयुक्त सम्बन्धी को सिंहासन पर बैठावें"।*

उपर्युक्त उद्धृतांश को पाठकगण तनिक ध्यानपूर्वक पढ़ें। इसमें आजकल के बहुत बड़े राजनैतिक सिद्धान्त का मूलमंत्र भरा हुआ है अर्थात् इससे हमें यह पता लगता है कि धर्मात्मा, सदाचारी और न्यायप्रिय राजा को सिंहासन पर बैठाने और अत्याचारी, कुमार्गगामी और अयोग्य राजा को पदच्युत करने का अधिकार प्रजा को था। स्वतंत्रता की जन्मभूमि इंगलैंड को शासन-प्रणाली के उद्भवकाल में इस सिद्धान्त का कई बार उपयोग किया गया था।

मनुस्मृति हम लोगों का एक बहुत प्रामाणिक ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में मनु भगवान् स्वयं कहते हैं, "जो राजा मूर्खता तथा मोहवश होकर अपनी प्रजा को सताता है वह शीघ्र राजच्युत किया जाता है और बान्धवों सहित मृत्युलोक को प्राप्त होता है। जिस प्रकार शरीर को पीड़ा पहुंचाने से मनुष्यों के प्राण निकल जाते हैं उसी प्रकार प्रजा को कष्ट देने से राजा भी मृत्यु को प्राप्त होता है†।" उदाहरण में मनु ने नहुष इत्यादि राजा का नाम दिया है। भागवत में नहुष राजा की कथा इस प्रकार लिखी है। एक समय किसी कारण इन्द्र अपना शासन छोड़कर भाग गये थे। पृथ्वीलोक के राजा नहुष को बहुत धर्मात्मा और सदाचारी समझकर देवताओं ने उसको इन्द्र बनाया। कुछ काल तक इसने बहुत न्यायपूर्वक शासन किया परन्तु बाद में अत्याचार करने लगा था। इस कारण ऋषियों ने इसको शाप देकर सर्प बना दिया।

यह कथा तो बहुत छोटी सी है परन्तु इससे बहुत महत्वपूर्ण बातें सिद्ध होती हैं। यह कहानी हम लोगों को यह बतलाती है कि प्राचीन समय में भी राजा को निर्वाचित करना और उसको उतार देना प्रजा के आधीन था। पाठकों को इसे कहानीमात्र समझकर उपेक्षा की बुद्धि से नहीं देखना चाहिये। यदि पौराणिक समय में लोग इस भाव से अनभिज्ञ होते तो उस समय के ग्रन्थों में भी ऐसे भाव का समावेश नहीं होता। सच पूछिये तो इस प्रकार की आज्ञा सुशासन के लिए बहुत आवश्यक है क्योंकि ऐसी आज्ञा रहने से राजा को स्वेच्छाचारी और अत्याचारी होने का साहस नहीं होता है। हमारे भारतवर्ष में ही नहीं वरन् सारे सभ्य देशों में इस नियम का प्रचार है।

उपर्युक्त प्रमाणों का तात्पर्य यह है कि प्राचीन समय में राजा निर्वाचित होते थे और यदि कोई अत्याचारी हुआ तो प्रजा इसको उतार भी सकती थी।

देशशासन में राजा को पूर्ण स्वतंत्रता नहीं थी। उसके स्वेच्छाचारी बनने में कई बाधाएँ थीं। एक धुरंधर लेखक का कथन है कि "मुसलमान तथा तातार जातियों के राज्य में तथा चीन, वैबीलोन और मिस्र इत्यादि देशों में जो प्रजा के अहितार्थ उच्छृङ्खलात्मक राज्य-शासन-प्रणाली (despotism) प्रचलित थी वह आर्य लोगों में

* गुणनीतिबलद्वेषी कुलभूतोऽप्यधार्मिकः ।
नृपो यदि भवेत् तन्तु त्यजेद्राष्ट्रविनाशकम् ॥
तत्पदे तस्य कुलजं गुणयुक्त पुरोहितः ।
प्रकृत्यनुमतं कृत्वा स्थापयेद्राज्यगुप्तये ॥

† मोहाद्राजा स्वराष्ट्रं यः कर्षयत्यनवेक्षया ।
सो चिराद् भ्रश्यते राज्याज्जीविताच्च सबान्धवः॥७-१११
शरीरकर्षणात्प्राणाः क्षीयन्ते प्राणिनां यथा ।
तथा राज्ञामपि प्राणाः क्षीयन्ते राष्ट्रकर्षणात् ॥७-११२॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्तमान नहीं थी। और यदि किसी समय इसका प्रादुर्भाव हुआ भी तो वह बहुत क्षण-स्थायी होता था।"* इससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि उस समय राजा स्वतंत्र निष्प्रतिबन्ध नहीं होते थे।

प्राचीन समय के लोग जो प्रतिज्ञा कर देते थे उसको—जिस तरह से हो—निभाना वे अपना कर्तव्य समझते थे। जीवन तक की आहुति देकर वह इस कर्तव्यरूपी यज्ञ को समाप्त करने में नहीं हिचकते थे। अर्थात् 'प्राण जाये पर वचन न जाई' इस उक्ति के वे अन्ध अनुयायी थे। इसी कारण राजदंड हाथ में लेते समय राजाओं से कड़ी प्रतिज्ञाएँ करवाई जाती थीं जिसमें वह राज्य पाते ही धन और अधिकार के गर्वरूपी मद से पागल होकर अत्याचार न करने लगें। ऐतरेय ब्राह्मण में लिखा है कि राज्याभिषेक के समय निम्नलिखित प्रतिज्ञा राजा से करवानी चाहिये:—"यदि मैं प्रजा पर अत्याचार करूँ तो इस जन्म में किया हुआ मेरा सब पुण्य, परलोक में मेरी प्रतिष्ठा, मेरा जीवन, मेरी संतान सब नष्ट हो जाय"! †

इसके अतिरिक्त राजाओं को शास्त्रों में लिखे हुए और देश में प्रचलित नियमों को मानना पड़ता था तथा उन्हींके द्वारा देश का शासन करना पड़ता था। कुछ लोग सोचते हैं कि प्राचीन समय में राजा के लिए नियम नहीं बनते थे, नियम प्रजा के लिए होते थे। परन्तु इसकी निर्मूलता विम्बिसार नामक बौद्ध राजा के सम्बन्ध में चीनी यात्री ह्वियुंत्सांग की सुनी हुई निम्नलिखित कथा से सिद्ध होती है। एक समय राजधानी में आग बहुत लगने लगी थी। इसको रोकने के लिए राजा ने नियम बनाया था कि जिस मनुष्य के घर में आग लगेगी उसको देशनिकाले का दंड दिया जायगा और वह शीत बन में भेज दिया जायगा। संयोगवश एक दिन राजमहल में आग लग गई। तब राजा ने मंत्रियों से कहा "स्वयं मुझको देशनिकाले का दंड मिलना चाहिये", तथा राज्य-शासन का भार अपने बड़े पुत्र के हाथ में सौंपकर बन चले गये। परन्तु चलते समय राजा कह गये कि "मैं देश के नियमों की रक्षा करना चाहता हूँ, इसीलिए मैं स्वयं बन जा रहा हूँ"।* इसके अतिरिक्त स्मृति, वेद इत्यादि अन्य प्रामाणिक ग्रन्थों में भी राजा को धर्मशास्त्र के अनुसार चलने का उपदेश दिया गया है। महाभारत में लिखा है कि राजा से निम्नलिखित शपथ करवानी चाहिये:—"हे राजा! मन, कर्म और वचन से शपथ करो कि मैं देश को ईश्वरतुल्य समझकर सर्वदा इसकी भलाई करने की चेष्टा करूँगा। धर्मशास्त्र और नीति में लिखे हुए नियम को मैं सर्वदा मानूंगा। मैं कभी भी स्वतंत्र नहीं रहूँगा।†।" मनुस्मृति में लिखा है कि "राज्यशासन में राजा को सर्वदा नियमों (विधानों) को मानना चाहिये क्योंकि जो राजा अपने राज्य का शासन अच्छी तरह करता है वह शीघ्र उन्नत अवस्था को प्राप्त करता है।‡ शुक्रनीति के प्रथम अध्याय के १२३वें श्लोक में लिखा है, कि जो राजा शास्त्रों में लिखे हुए नियमानुसार कर्तव्य पालन करता है और जितेन्द्रिय होता है वह इस लोक में तथा परलोक में दोनों में सुखी होता है। इन प्रमाणों से सिद्ध होता है कि राजा उच्छृङ्खला और स्वेच्छाचारिता के पथ पर नहीं चल सकता था।

सच पूछिये तो अधिक अधिकार मंत्रियों के ही हाथ में रहता था। राजा को राज्य-सम्बन्धी

* Miraglia, Comparative Legal Philosophy quoted in N. C. Sen Gupta's Origin of Society in India.

† ऐतरेय ब्राह्मण ८. ४. १. १३

* Buddhist Records Bk. IX

† शान्तिपर्व अध्याय ५९।

‡ मनुस्मृति ७, ११३।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सब कार्यों में मंत्रियों की सहायता लेनी पड़ती थी। आजकल की शासन-सभा (Executive council) की तरह उस समय में भी मंत्रीसभाएँ होती थीं। प्रत्येक मंत्री के अधिकार में एक २ विभाग का प्रबन्ध रहता था। शुक्रनीति के अनुसार निम्नलिखित दस मंत्री होते थे।

१ पुरोधा Minister of Religion
२ प्रतिनिधि Regent
३ प्रधान Prime Minister
४ सचिव Minister of Finance
५ मंत्री Councillor
६ पंडित Minister of Education
७ प्राडविवाक Law Minister
८ अमात्य Secretary of State
९ सुमंत्रक Minister of Peace and War
१० दूत Ambassador in Chief

इनके अतिरिक्त उपमंत्री और सहायक-मंत्री इत्यादि भी हुआ करते थे। इन लोगों की सम्मति से राजा को राज्यशासन करना पड़ता था। राजाओं को मंत्रियों की सम्मति के अनुसार चलना चाहिये। इस विषय में नीतिवाक्यामृत में बहुत ज़ोरदार शब्दों में कहा गया है कि "जो मंत्रियों की बात नहीं मानता वह राजा ही नहीं है।"* राजाओं की स्वेच्छाचारिता की निन्दा करने में शुक्रनीति ने तो और भी बढ़चढ़कर लिखा है:—"जो राजा मंत्रियों की बात नहीं मानता वह राजा के भेष में डाकू (दस्यु) है और प्रजा के धन का अपहारक है"।† आगे चलकर इसी पुस्तक में लिखा है कि जब राजा (मंत्रियों की सम्मति के बिना) स्वतंत्रतापूर्वक राज्य करता है तो स्वयं ही अपने विनाश को प्राप्त होता है। उसका राज्य उसके हाथों से जाता रहता है और वह अपने राज्य से निकाल बाहर किया जाता है।" इन प्रमाणों का निचोड़ यही निकलता है कि राजाओं के लिए प्रजा-पालन में मंत्रियों की सहायता लेना आवश्यक था। (अपूर्ण)।

ऊषा का स्वागत।

महा घोर काली रजनी निज
दलबल ले अब भागी है।
भय से अति ही कम्पित माता
घोर नींद से जागी है॥
देखो पूरब ओर अपूरब
शोभा ऊषा दिखलाती॥
माता का दुख दूर हुआ है,
समाचार यह जतलाती॥ १॥
अहह! याद कर उस रजनी को
धकधक हृदय धड़कता है।
ऊः! बादल गर्ज्जन करते हैं
कड़कड़ बज्र कड़कता है॥
ऐसी काल-रात्रि भी हमको
हा! हा! हाय! बितानी थी।
अहह! निठुर विधि! ऐसा दुख दे
तुझको मात सतानी थी!! २॥
नहीं रहा पर अब वह भय है
ऊषा का आगमन हुआ।
सारा भय तव शुभागमन से
ऊषे! आहा! दमन हुआ॥
पक्षीगण चहचहा रहे हैं,
"होमरूल" की करें पुकार।
कान जहाँ जावें सुन पड़ता
"होमरूल" ही का हुंकार॥ ३॥

इलाचन्द्र जोशी।

---

* "न स खलु राजा यः मंत्रिणोऽतिक्रम्य वर्तते।" सोमदेवसूरी कृत नीतिवाक्यामृत अध्याय १०।
† शुक्रनीति २, २४७।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत कहां है?

[लेखक-'अनन्त'।]

यह अनेकवार कहा जाचुका है कि इंगलैंड संसार में स्वतंत्रता और न्याय की रक्षा तथा संस्थापना के लिए वर्तमान महाभारत में सम्मिलित हुआ है। इंगलैंड वर्तमान युद्ध में किसी स्वार्थ-संपादन के लिए भाग नहीं ले रहा है। साम्राज्य का विस्तार करना अथवा धनलिप्सा से प्रेरित हो अपने व्यवसाय का प्रसार करना इङ्गलैंड का उद्देश्य नहीं है।

ऐसी उद्घोषणा कई बार पार्लामेंट में हो चुकी है। इंगलैंड के सचिव तथा अन्य उच्च-पदाधिकारियों ने इस उद्देश्य को स्पष्टरूप से बारंबार प्रकट किया है। इंगलैंड का ऐसा उद्देश्य जानकर स्वतंत्रताप्रिय अमेरिकन गवर्नमेंट मित्रमंडल में सम्मिलित हुई है।

जब तक रूस मित्रमंडल में रहा तब तक अमेरिका युद्ध में इङ्गलैंड का साथ देने से हिचिकता था क्योंकि रूस की शासनप्रणाली अनियंत्रित थी और अमेरिका को भय था कि मित्रमंडल की विजय से रूस की शक्ति और भी बढ़ जावेगी और उसका फल यह होगा कि ज़ार और भी स्वच्छन्द तथा अनियंत्रित हो जावेगा।

अमेरिका के प्रेसीडेंट उडरो विलसन संसार में स्वतंत्रता का राज्य स्थापित करने के पक्षपाती हैं और वह स्वार्थ पर युद्ध में सम्मिलित होने के लिए कभी प्रस्तुत नहीं होंगे। जब रूस में राज्यक्रान्ति हुई और 'ज़ारडम' का अन्त हुआ तब अमेरिका की हिचक दूर हुई और उसने जर्मनी की अहम्मन्यता का दमन करने के लिए युद्ध की घोषणा की परन्तु तब भी अमेरिका स्वस्थ नहीं हुआ। प्रेसीडेंट विलसन मित्रमंडल में सम्मिलित तो अवश्य हुए पर उनको अभी पूर्ण विश्वास नहीं हुआ कि यह युद्ध स्वतंत्रता के लिए है। वह देखते थे कि ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत ही कुछ देश ऐसे हैं जहां की प्रजा स्वतंत्र नहीं है और जहां का राज्यशासन लोकमत के अनुकूल तथा दायित्वपूर्ण नहीं है। इन अधीन देशों में आयलैंड की भी गणना है। अमेरिका में बहुत से आयलैंड के निवासी रहते हैं जिनका प्रभाव अमेरिका के लोकमत पर थोड़ा बहुत पड़ता है। उन्होंने प्रेसीडेंट का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया। आयलैंड के नेताओं ने भी अपने जन्म-सिद्ध स्वत्वों की प्राप्ति के लिए और भी उत्साह के साथ आन्दोलन आरम्भ किया और अमेरिका की सहानुभूति चाही।

अमेरिकन जाति स्वभाव से ही स्वतंत्रता-प्रिय है। वह किसी को दासत्व की शृङ्खला में बांधा नहीं चाहती। इसके विपरीत उठती हुई जातियों को सहायता देना वह अपना कर्तव्य समझती है। फिलीपाइन द्वीप में अमेरिकन गवर्नमेंट ने अल्पकाल में क्या किया है यह इतिहास के जाननेवालों से छिपा नहीं है। जब अमेरिका की अधीनता में यह द्वीप आया तब इस द्वीप के निवासी अधिकतर असभ्य तथा अशिक्षित थे परन्तु अमेरिका की सहायता से अब वहां शिक्षा का अच्छा प्रचार हो गया है और शीघ्र ही वहां दायित्वपूर्ण शासन स्थापित हो जावेगा।

अस्तु अमेरिका ने आयलैंड के साथ भी सहानुभूति प्रकट की और प्रेसीडेंट विलसन ने आयलैंड की स्वतंत्रता के लिए उद्योग करना आरंभ किया। इङ्गलैंड तथा अमेरिका के बीच इस सम्बन्ध में लिखा पढ़ी हुई। लन्दन के 'टाइम्स' पत्र के वाशिंगटन सम्वाददाता ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूचना दी थी कि अमेरिका उस समय तक युद्ध में समुचित भाग न लेगा जब तक आयलैंड को स्वराज्य न मिल जावेगा—उसने यह कहा था कि प्रेसीडेंट भी प्रकट रूप से यदि नहीं तो गुप्त रूप से आयलैंड से सहानुभूति रखते हैं और अमेरिकन प्रजा के नेताओं ने तो इस बात को स्पष्ट रूप से प्रकट कर दिया है कि अमेरिका तब तक युद्ध में उपयुक्त सहायता न देगा जब तक आयलैंड का प्रश्न हल न हो जावेगा। जब पार्लामेंट में 'जनबल बिल' पास हुआ था तब लायड जार्ज ने स्पष्ट ही कहा था कि आयलैंड के लिए शीघ्र ही स्वराज्य बिल पेश होगा क्योंकि प्रेसीडेंट विलसन की ऐसी इच्छा है और ऐसा करने से अमेरिका से पूर्ण रूप से सहायता मिलने की आशा है। इस वक्तव्य से स्पष्ट है कि प्रेसीडेंट विलसन ने आयलैंड की स्वतंत्रता के लिए बड़ा उद्योग किया है। अभी स्वराज्य बिल पेश नहीं हुआ है और यद्यपि आयरिश राष्ट्रीय दल के नेता मि० डिलन को इस विषय में सन्देह है तथापि प्रेसीडेंट विलसन के होते हमको पूर्ण आशा है कि आयलैंड के सुख के दिन अब दूर नहीं हैं। आयलैंड का यह सौभाग्य कि अमेरिका उसका सहायक खड़ा हुआ है। इससे प्रेसीडेंट विलसन की हार्दिक इच्छा मालूम होती है कि यह युद्ध वास्तव में धर्म संस्थापन के लिए हो। वह जर्मनी का यह लांछन नहीं सुनना चाहते कि मित्र-मंडल कहता तो है कि यह युद्ध संसार में स्वतंत्रता स्थापित करने के लिए है और बृटिश साम्राज्य के अन्तर्गत ही कुछ देश ऐसे हैं जो स्वाधीन नहीं हैं और जिनके निवासियों को बृटिश नागरिक के साधारण स्वत्व भी नहीं प्राप्त हैं।

परन्तु भारतवासियों के लिए प्रेसीडेंट विलसन कुछ कर रहे हैं या नहीं इसका हमको पूरा पता नहीं चलता है। डा० सुब्रह्मण्य ऐयर ने प्रेसीडेंट विलसन को पत्र भेजकर देश का बड़ा हित किया है। इसने उनका ध्यान भारत की ओर आकृष्ट हुआ है और जहां तक मैं समझता हूं उन्होंने मि० लायड जार्ज को भारत के सम्बन्ध में अवश्य कुछ न कुछ लिखा होगा।

लाला लाजपतराय अमरिका में एक मासिक पत्र निकाल रहे हैं। उसका उद्देश्य अमेरिका के राजनीतिज्ञों के सन्मुख भारत की सच्ची अवस्था का चित्र रखना है। लालाजी ने वहां भारतीय स्वराज्य-संघ भी स्थापित किया है और वे ही स्वयं उसके सभापति हैं।

डा० सुब्रह्मण्य का पत्र १५०० अमेरिकन पत्रों में प्रकाशित हुआ था और भारत-सम्बन्धी लेख भी कई पत्रों ने लिखे थे। इस आन्दोलन से थोड़ा बहुत लाभ अवश्य हुआ है। परन्तु प्रेसीडेंट विलसन तभी पूर्ण सहानुभूति दिखा सकते हैं जब उनको पूर्ण विश्वास हो जावे कि भारतवासी प्राणपण से अपनी स्वतंत्रता के लिए वैध आन्दोलन कर रहे हैं। इधर ४ वर्ष के भीतर भारत में बहुत जागृति हुई है। स्वराज्य की मांग जनसमुदाय की मांग हो रही है। जनता में होमरूल का बहुत कुछ प्रचार हुआ है परन्तु हमारी शक्ति का पूरा पता अमेरिका को नहीं चलता है। 'सेन्सरशिप' इतनी ज़बर्दस्त है कि कि भारतवासी भारतवर्ष में अपने देश के लिए क्या कर रहे हैं इसका ठीक २ पता अमेरिका को नहीं चलता और अमरीका में भारतवासी अपने देश के लिए क्या कर रहे हैं और अमेरिकानिवासियों की हमारे साथ कहां तक सहानुभूति है इसका पता हमको पूरा नहीं चलता है। इसके अतिरिक्त जब हम सभ्य संसार को अपनी सच्ची अवस्था का दिग्दर्शन कराने की चेष्टा करते हैं, तब हमारे मार्ग में विघ्न उपस्थित होते हैं, हमारे डेपूटेशन रोक दिये जाते हैं। यही एक कारण है कि अमेरिका उस रूप से भारत के लिए नहीं उद्योगशील है जिस रूप से वह आयलैंड के लिए है। दूसरा कारण यह है कि अमेरिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में हज़ारों आयरिश निवास करते हैं जिनके साथ नित्यप्रति का व्यवहार रहने के कारण यह स्वाभाविक है कि अमेरिका उनके साथ सहानुभूति प्रदर्शित करे। उनकी सभ्यता भी एक ही है। इसके विपरीत भारत के इनेगिने लोगों को ही अमेरिकन सिटीज़न के स्वत्व प्राप्त हैं। जहां तक समाचारपत्रों से ज्ञात हुआ है लाला जी केवल वहां आन्दोलन कर रहे हैं। उनका कोई ऐसा बड़ा सहायक भी नहीं है। ऐसी अवस्था में हमको आशा कम है कि अमेरिका पूर्ण रूप से हमारी स्वतंत्रता के लिए उद्योग करेगा। भारत ऐसा अभागा है कि इसकी हीन दशा पर किसी को भी दया नहीं आती। सच तो यह है कि आजकल दया का युग ही नहीं है। आजकल तो उसीकी लोग सहायता करते हैं जिसको स्वाभिमान है, जो अपने आत्मगौरव को भूल नहीं गया है और जो अपने पैरों पर स्वयं खड़ा होना जानता है।

क्या भारत के भाग में सुख के दिन नहीं बदे हैं? अथवा क्या भारत संसार के बाहर है जिसके साथ सहानुभूति प्रकट करने की कोई आवश्यकता नहीं समझता। हम ऐसाही समझते हैं क्योंकि लायड जार्ज के माथे मिथ्या भाषण का दोष आरोपण करने का हमको साहस नहीं है। उन्होंने कहा है कि इंगलैंड संसार की स्वतंत्रता के लिए युद्ध करता है। भारत स्वतंत्र नहीं है और न उसको स्वतंत्र करने की कोई चेष्टा ही हो रही है। केवल शासन-प्रणाली में थोड़े बहुत सुधार हो गये हैं। इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि भारतवर्ष संसार के बाहर समझा जाता है।

हम शक्तिहीन हैं और स्वतंत्रता के पक्षपाती राष्ट्र इस समय हमारे लिए कुछ ऐसा उद्योग भी नहीं कर रहे हैं। ऐसी अवस्था में हमको केवल एक परमात्मा का भरोसा है। परमात्मा ने ही हमारे हृदयों में जातीयता का भाव उत्पन्न किया है। भारतीय स्वराज्य का आन्दोलन मनुष्य रचित नहीं है। ईश्वरीय शक्ति से प्रेरित होकर इस आन्दोलन का कार्य हो रहा है। वह शक्ति जब अपना काम संपादन कर लेगी तभी उस अनन्त राशि में मिलेगी जहां से वह आई थी। कहावत है कि आशा पर संसार स्थिर है। यद्यपि हमको चारो ओर शून्य ही शून्य दीख पड़ता है तथापि आशा है कि यह विश्वास हमको इस कठिन समय में भी पूर्णतया निरुत्साही न बनावेगा।

उद्बोधन।

उषाकाल रमणीक हुआ,
सूर्यागमन अलीक हुआ।
तेज विगत राकेश हुआ,
उन्नत हृदय दिनेश हुआ ॥१॥
कुमुद हृदय अवसन्न हुआ,
पङ्कज हृदय प्रसन्न हुआ।
लखकर वह रवि को आगत,
उट्ठा कहने को "स्वागत" ॥२॥
विरह नींद से कमल जगा,
फैलाने वह स्वकर लगा।
कुमुद पतन का पतन हुआ,
विकसित पङ्कज सुमन हुआ ॥३॥
उठो कहो "जय जय भारत",
मनोभाव करलो उन्नत।
हृद् के प्रेम-पटल खोलो,
उठो! कर्म्म की जय बोलो ॥ ४ ॥
कार्य पन्थ सब ग्रहण करें,
हृद् में नित नव भाव भरें।
सभी मनस्वी वीर उठें,
कार्यार्थी गम्भीर उठें ॥५॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देश राग गा जग जावें,
देशोन्नति में लग जावें।
राष्ट्र प्रेम में जावें सन,
स्व-सर्वस्व करदें अर्पण ॥६॥
देशोन्नति की तान छिड़े,
पतन और उत्थान भिड़े।
हृदय हृदय से मिल जावे,
स्नेह सुमन सब खिल जावें ॥७॥
ऐक्य सुरभि वे फैलावें,
अखिल विश्व को महकावें।
कर्म्मवीर ले कर्म्म ध्वजा,
उन्नति डंका बजा बजा ॥८॥
नव साहस सञ्चार करें,
भारत स्वर्गागार करें।
नवोत्साह नव हृदय करें;
उन्नति पथ पर पैर धरें ॥९॥
नव जीवन सब में भरदें,
हृद्विशाल विस्तृत करदें।
हम सब प्रेम-पियूष पियें,
'नव जीवन' ले पुनः जियें ॥१०॥
कहें वही कर दिखलावें,
पथ में कण्टक भी आवें।
पथ कण्टक आकीर्ण रहें,
पर सप्रेम सब पथिक सहें ॥११॥
अड़ जावें भारत प्यारे,
पथ के विघ्न हरें सारे।
साहसाङ्क हम बढ़ें, बढ़ें
उन्नति-गिरि के श्रृङ्ग चढ़ें ॥१२॥
कर्म्म पाथ से हट न सकें,
दुख भी सम्मुख डट न सकें।
मन के साहस घट न सकें,
कभी न कर्म्मवीर हिचकें ॥१३॥
साधक नवजीवन धर हो,
साधन ऐक्य खड्ग कर हो।
कम-गति चतुर दत्त होवे,
निज उत्थान लक्ष होवे ॥१४॥
सत्याग्रह भारा होवे,
पतन शीश धड़ से खोवे।
भारत सूर्य बढ़े आगे,
पतन तिमिर आगे भागे ॥१५॥
भारत-वीर हुंकार उठे,
सब भारत संसार उठे।
पहिले सा फिर भारत हो,
"दास" पदक अब ग़ारत हो ॥१६॥
अब अखिलेश, अगोचर से,
अनाद्यन्त अजरामर से।
यही विनय अब सविनय है,
कहदो "उन्नति निश्चय है" ॥१७॥
हो स्वातंत्र्य-विशेष यहां,
राम-प्रेम मय जहां तहां।
यदि प्राचीन कार्य-गति हो,
अर्वाचीन समुन्नति हो ॥१८॥
अब यह प्रभो ! क्षुद्र जीवन,
तुमको किया अहो अर्पण
इसे न क्या अपनाओगे ?,
प्रेम न निज सरसाओगे ? ॥१९॥
करुणा-वृष्टि करो अ तो,
नाथ ! सुदृष्टि करो अबतो।
अबतो भगवन ! बनो सदय,
हमें सिखादो विश्व-विजय ॥२०॥
सुचरित्री हों सभी हृदय,
गत हो विनिमय बनें अभय
लीलामय ! सुखकर ! भगवन् !,
अब तो प्यारे ! जीवनधन ! ॥२१॥
भारत की सुध लो प्रियतम !,
कृपा कोर कुछ करो न कम।
है यह वही लीला-स्थल,
पावन-सुन्दर-शुभ- निर्मल ॥ २२ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जहां स्वयं तुम थे विचरे,
दुःख क्लेश सब दूर करे।
उसे व्यर्थ अब समझो क्यों ?,
दूध गिरी हो मक्खी ज्यों ॥ २३ ॥

फिर से इसको अपनाओ,
नेह सुधा फिर बरसाओ।
बस अब दो वरदान यही,
"बनजा भारत ! पुनः वही" ॥२४॥

कन्हैयालाल जैन (कस्तला)।

महायुद्ध और कृषि उन्नति।

ऐसा मालूम होता है कि आजकल अन्तर्जातीय कलहों की प्रधान कुंजी खाद्य-पदार्थों की समस्या है। रणविशारद और व्यावहारिक नीतिज्ञ, सब लोग खाद्य-वस्तुओं की यथासम्भव अधिक पैदावार करने के महत्व को समझे हुए हैं और उन सब का लक्ष अब "वैज्ञानिक कृषि" की तरफ लगा हुआ है। एक बड़े युद्धकुशल व्यक्ति का कथन है कि अभी हाल में इटली की फौज का जो पीछे हटाव हुआ उसका मुख्य कारण खाद्य-वस्तुओं का अभाव था। कारण यह है कि १९१६ की फसल वहाँ साधारण वर्षों से बहुत ही कम पैदा हुई। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि युद्ध का कुल ठाठ, गोला-बारूद इत्यादि तथा फौजों की हलचल करने की कुशलता, ये सब बातें व्यर्थ हैं यदि खाद्य-वस्तुओं की सामग्री यथेष्ट नहीं है।

लड़ाई शुरू होते ही इंगलैंड ने कृषि विभाग की तैयारी की क्योंकि युद्ध के पूर्व बृटिश जनता अपनी खाद्य-वस्तुओं के लिए, अधिकांश में बाहरी देशों पर निर्भर थी। वहां कृषि की तरफ कुछ भी ध्यान नहीं दिया जाता था। लंदन के किसी बनिये की दूकान का निरीक्षण करने से यह मालूम हो सकता था कि इंगलैंड किस तरह अपने दैनिक आवश्यक खाद्य-पदार्थों के लिए विदेशों का मुहताज था। इस दुर्लक्ष के परिणाम अत्यन्त शोचनीय तथा असन्तोषदायक हुए हैं। लड़ाई शुरू होने के पश्चात् इंगलैंड का ध्यान इस महत्वपूर्ण विषय की तरफ आकृष्ट हुआ। तुरन्त ही समस्त देश के किसान इस निमित्त इकट्ठे किये गये कि खाद्य-वस्तुओं की पैदावार बढ़ाने के उपाय सोचे जायँ। अगस्त १९१६ में एक सभा इस उद्देश से स्थापित की गई कि वह लोगों को खाद्य-सामग्री के बढ़ाने का उपाय सुझावे। कृषि की नई तदबीरों को काम में लाने के लिए यथाशक्ति प्रयत्न किया जा रहा है, काम में आनेवाली खादों की उचित रक्षा की जा रही है, किसानों को बीज तथा आवश्यक यंत्र सामग्री दी जारही है।

शुद्ध बीजों का भण्डार पैदावार को बढ़ाने के लिए अत्यंत आवश्यक है। नये साल की फसल के लिए बोर्ड किसानों को गेहूँ बांट रहा है। कई प्रयोग लोगों को प्रत्यक्ष करके इस हेतु बतलाये जा रहे हैं कि बीजों के उपयोग में कमखर्ची किस तरह को जाय। ग्रेटबृटेन की इस कृषिजागृति में ध्यान देने योग्य यह एक बात है कि हरएक बड़ा ज़मींदार बड़ी खुशी से काम करने को उद्यत हुआ है। उचित साधनों द्वारा किसानों में कृषि का ज्ञान फैलाया जा रहा है तथा भूमि को पहले की अपेक्षा ज्यादा उपजाऊ बनाने की अत्यन्त आवश्यकता किसानों के हृत्पटलों पर अङ्कित की जा रही है। किसानों को उन्नत-वैज्ञानिक-कृषि से परिचित करने तथा स्थानीय वृष्टि-विषयक प्रश्नों को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जांच करने के लिए प्रयोग-शालाएँ स्थापित की गई हैं। कृषि के पहले से अधिक औज़ार प्रचार में लाये जा रहे हैं। बीजों का चुनाव लोगों को सिखलाया जा रहा है और खादों के क्रय-विक्रय का उत्तम प्रबन्ध किया गया है। अंगरेज़ किसान को कृषि की कला उतनी ही मालूम है जितनी महाद्वीप यूरोप में किसी और किसान को। वह कृषि के नये औज़ारों तथा प्रयोगों से अपरिचित नहीं है। इतना होने पर भी इंगलैंड की दशा संतोषजनक नहीं है। इस विश्वव्यापी समर ने इंगलैंड को अपनी कृषि-संबन्धी शोचनीय दशा बतलाई और यह सिद्ध किया कि यदि बृटिश सरकार पहले की तरह कृषि की ओर उदासीन रही तो कितने ही बड़े २ कारखानों तथा औद्योगिक प्रगतियों के होते हुए भी समस्त अंगरेज़ जाति को बड़ी विपत्ति उठानी पड़ेगी।

जर्मनी।

अब जर्मनी का हाल सुनिये। लड़ाई छिड़ने के समय वह खाद्य-पदार्थों के प्रश्न का सामना करने को पूर्णतया तैयार था। उसके नीतिज्ञों ने ऐसी 'पालिसी' का प्रचार किया था जिससे जर्मनी में कृषि की पैदावार सालों साल बढ़ती ही चली जाय। वान व्यूलो ने अपनी 'इम्पीरियल जर्मनी' नामी पुस्तक में लिखा है कि "मेरा यह विश्वास है कि जर्मन लोगों के लिए राष्ट्रीय दृष्टि से प्रबल कृषि का होना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि युद्ध के समय कृषि का प्रश्न तमाम राष्ट्र के लिए बड़े ही महत्व का है। गवर्नमेंट को चाहिये कि बाहर से आनेवाली कृषि वस्तुओं पर किसी तरह का महसूल न लगावे जिससे देशी कृषि की उन्नति हो तथा मज़दूरों के जीवन का ख़र्च भी कम हो"। १९वीं सदी के अंत तक जर्मनी का कृषि के उत्तेजनार्थ कार्यक्षेत्र पूर्णतया निश्चित नहीं हुआ था परन्तु उसका यह ढंग सफल हो चुका था कि कृषि को मदद पहुंचाकर उससे ज़्यादा पैदावार कमावे। जर्मनी के लिए ऐसा करना अनिवार्य भी था क्योंकि इसका अस्तित्व यूरोप के बीच में होने से तथा आसपास दूसरे स्वतंत्र देशों के होने से, उसके लिए समुद्र के मार्ग प्रायः बंद हैं। १८९४ ई० में जर्मनी के कृषकों की दशा सन्तोषजनक नहीं थी परन्तु जर्मन विज्ञान-नेताओं के प्रबल-प्रयत्नों से यह स्थिति बहुत दिनों तक क़ायम न रह कर तुरन्त ही सुधर गई। यदि इङ्गलैंड की अपेक्षा जर्मनी में सन् १८९५ से १९१५ के बीच में; कृषि की अधिक उन्नति न हुई होती तो महायुद्ध के दूसरे वर्ष के पहले ही, जर्मनी के खाद्य-पदार्थों का अंत हो गया होता। किन्तु ऐसा नहीं हुआ अर्थात् जर्मनी ने इस बीच बहुत कुछ उन्नति की है और यही प्रधान कारण है जिससे जर्मनी आज तक मित्रराष्ट्रों से फौजों तथा कृषि-युद्ध बराबर लड़ रहा है।

अब इस महायुद्ध के जारी रहते हुए भी जर्मन कृषि का हाल सुनिये। जर्मनी को मालूम हो गया था कि यदि लड़ाई छिड़ी तो उसके शत्रु उसके आसपास मज़बूत घेरा डालेंगे। इसलिए यदि महायुद्ध में अन्तिम विजय प्राप्त करनी है तो देश को अपनी सब आवश्यक वस्तुएँ अपने ही देश में पैदा करनी चाहिये। जर्मनी अपनी कृषि में मिश्रित 'नाइट्रोजन' बहुत ख़र्च करता है। ज़मीन का उपजाऊपन अकसर उसमें जितना नाइट्रोजन हो उसी पर कूता जाता है। पौधों के आहार के लिए नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है। यह आहार उनको भूमि के नाइट्रोजन-युक्त द्रव्यों से मिलता है। भूमि को नाइट्रोजन कुछ सड़ी हुई वनस्पतियों से और कुछ प्राणियों की विष्ठा जैसे गोबर, मूत्र इत्यादि से मिलता है। इसके अतिरिक्त सोडियम नाइट्रेट और सल्फेट से तैयार किया हुआ रासायनिक खाद भी भूमि को दिया जाता है। ... ज़मीन को ज़्यादा पैदावार का मुख्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण यह है कि यहां बनावटी खाद बहुतायत से दी जाती है। लड़ाई छिड़ेगी ऐसा सोचकर जर्मनों ने नाइट्रेट का बड़ा भारी भंडार इकट्ठा कर रक्खा था; परन्तु वह एक साल भर ही में ख़र्च हो गया और जर्मनी में नाइट्रोजन का दुष्काल पड़ा परन्तु "रसायन शास्त्र" ने जर्मनी को एक बड़ी आपत्ति से बचाया। वहां के रसायनशास्त्रज्ञ इस खोज में लगे हुए थे कि नाइट्रिक एसिड के पृथक्करण की तरकीब निकल आये। थोड़े ही समय में सरकार की सहायता से कई कारख़ाने खोले गये। मार्न नदी की लड़ाई के पश्चात् तुरन्त ही बनावटी नाइट्रेट और एमोनियम सल्फेट की पैदावार करनेवालों को सरकार ने आर्थिक सहायता प्रदान की और इस सहायता से एमोनियन सल्फेट से नाइट्रिक एसिड तैयार करने के कारख़ानों के लिए ३०,०००,००० मार्क्स पूंजी से एक बड़ा भारी रासायनिक मंडल क़ायम हुआ। शान्ति के समय जर्मनी में हर साल ५५०००० टन एमोनियम सल्फेट पैदा होता था। एक फ्रेंच रसायन-शास्त्रज्ञ ने खोज लगाई थी कि यदि एमानियन हवा में मिलाकर गरम प्लैटीनम के ऊपर से गुज़ारी जाय, तो उससे नाइट्रोजन निकल सकता है। इसके लिए १९१५ में जर्मनी में ३० कारख़ाने खोले गये जिनसे १००००० टन नाइट्रिक एसिड हर महीने निकलता था। इसके अतिरिक्त जर्मनी में एक और कारख़ाना है जहां नाइट्रोजन को विद्युत अग्नि में डालने से नाइट्रिक एसिड तयार किया जाता है। इस तरकीब से प्रति वर्ष ६००० टन नाइट्रिक एसिड तैयार होता है। नाइट्रिक एसिड तैयार करने की तीसरी तरकीब अमोनिया से है। मार्ननदी की लड़ाई के पश्चात् जब जर्मनी ने देखा कि यह महायुद्ध सम्भवतः और भी कई सालों तक चलेगा तब भिन्न २ कंपनियों को आर्थिक सहायता देकर उसने वार्षिक पैदावार बढ़ाई। खाद्य तैयार करने में सल्फेरिक एसिड की कमज़ोरी की आवश्यकता थी इसके लिए एमोनियम व शोरा को मिश्रण करके उसे सुपर फास्फेट में मिला दिया। अनुभव से ऐसा प्रतीत हुआ कि यह मिश्रण नाइट्रोजन तथा खाद दोनों का काम देता है। जर्मनी में पोटाश निमक बहुतायत से है जो जर्मन ज़मीन को बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुआ है। जर्मनी की आबादी सन् १८८८ में ४८,०००,०००, १८९५ में ५१,०००,००० तथा १९१३ में ६७,०००,००० हुई तथापि बाहर से खाद्य-वस्तुओं का प्रवेश वहां प्रमाण से बहुत कम हुआ। ऐसा कूता गया है कि १०० एकड़ जर्मन ज़मीन पर ७५ आदमी भलीभांति निर्वाह कर सकते हैं। लड़ाई जारी रहते हुए भी जर्मनी की कृषि संस्थाएँ भूमि का हर एक नया एकड़ आबाद कर रही हैं। सैकड़ों कृषि-शास्त्रविशारद हज़ारों कृषि के नये २ औज़ारों सहित, रूमेनियां, सर्विया और एशिया माइनर में भेजे गये हैं। एडोवा (एबीसिनियां) प्रान्त में कपास की खेती क्रमशः बढ़ाई जा रही है। एनेटोलिया के मैदानों पर अनाज की पैदावार की उन्नति हो रही है। इस नई ज़मीन की पैदावार से मध्यवर्ती राष्ट्रों (जर्मनी-आस्ट्रिया) की खाद्य सामग्री दिन बदिन बढ़ती जा रही है।

अब बेल्जियम की तरफ़ देखिये। यहां जर्मन लोगों ने हर एक वस्तु का नाश किया; परन्तु उन्होंने 'बेल्जियम किसान-सभा' में हस्तक्षेप नहीं किया। यह एक बड़ा भारी कृषि का "संघ" है, जिसने बेल्जियम की कृषि की रक्षा करने तथा उसको उन्नतावस्था में पहुंचाने में बहुत कुछ भाग किया है। जर्मन लोगों ने यह समझ लिया कि बेल्जियम को कृषि की रक्षा करना कितना आवश्यक है। साधारणतः यह कहने में कोई अत्युक्ति न होगी कि इस संघ की निर्माण की हुई हरएक चीज़ पूर्ववत् है, इतना ही नहीं वरन् और भी कई नई नई बातें प्रचलित की गई हैं। कृषि की नई संस्थाएं, १ एँटवर्प २ लेवन में और १ पूर्व फ्लैंडर्स में स्थापित की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गई है। रेल-मार्ग और सड़कें आदि १८१४ के अन्त ही में पुनः दृढ़ की गईं व "संघ" के इन्स्पेक्टर लोग फिर से ग्रामीण संस्थाओं का निरीक्षण करने लगे। उनको एक और काम सौंपा गया। वह यह कि कौन कौन से गाँवों में क्या क्या नुक़सान हुआ है, और इसके लिए वहाँ के निवासियों को किस तरह सहायता पहुंचाई जा सकती है, इस बात को वहां स्वयं प्रत्यक्ष देखकर, एक रिपोर्ट पेश करें जिससे उस रिपोर्ट को अमल में लाने के लिए एक कार्य-संचालक कमेटी क़ायम की जाय। यह कमेटी फरवरी मास में क़ायम हुई। इस सभा का मुख्य उद्देश किसानों को हर प्रकार की मदद पहुंचाना तथा उनकी असुविधाएँ दूर करना और उनको आवश्यकतानुसार ऋण देना था। उसने फ्रेंच तथा फ्लेमिश भाषा में एक "ग्रामीण मकान" नामी पुस्तिका बनाकर गाँव २ में बिना मूल्य बाँटी। उस पुस्तक में गाँव की रचना किस प्रकार होनी चाहिये, स्वच्छ, शुद्ध हवादार मकानों की उपयोगिता, स्वच्छता की आवश्यकता इत्यादि बातें भिन्न २ चित्रों द्वारा आकर्षक रीति से बतलाई गई हैं। भाषा भी बहुत सरल है। एक दूसरी संस्था स्थापित की गई है, जिसका आद्य हेतु, किसानों को खाद्य-वस्तुएँ ला देना, समस्त देश में उनकी कमखर्ची के लिए व्याख्यान दिलाना इत्यादि है। किसानों को क़र्ज़ देने के लिए एक सेंट्रल क्रेडिट फंड क़ायम किया गया है, जिसका मूलधन ८८,८७,००० फ्रांक है।

एमेरिका।

दूसरा कृषि-प्रधान देश, जो अन्त में इस महायुद्ध में सम्मिलित हुआ, एमेरिका है। शान्ति के समय एमेरिका में, अगणित संपत्ति व्योपार से आती थी। बहुत वर्षों तक वह समस्त संसार की बखारी थी। आकस्मिक आपत्ति के समय सब राष्ट्र, धान्य के लिए एमेरिका पर निर्भर रहते थे। इसलिए जब वह लड़ाई में शामिल हुआ तब खाद्य-वस्तुओं की पैदावार को बढ़ाने की अत्यन्त आवश्यकता वहाँ प्रतीत हुई। इसके लिए वहां एक सम्मिलित 'कृषि-विभाग' क़ायम हुआ, जिसने समस्त देश के किसानों से पुकार की कि खाद्य वस्तुओं की पैदावार बढ़ाओ, और इस महत्वपूर्ण कार्य के लिए हर एक गवर्नमेंट प्रेस, स्कूल तथा प्रत्येक सार्वजनिक संस्था, तन मन धन से कार्य कर रही है। जिस दिन एमेरिका ने लड़ाई की घोषणा की उसी दिन ६०,००,००० किसान इकट्ठे होकर खाद्य-पदार्थों को बढ़ाने के लिए उद्यत हुए। वहां की कांग्रेस ने अगस्त १८१७ में एक कृषि क़ानून इस ग़रज़ से पास किया कि राष्ट्र की कृषि दिनबदिन बढ़े। इस एक्ट से कृषि के मंत्री को यह अधिकार प्राप्त होता है कि वह राष्ट्र के किसी भी मनुष्य से कृषि-संबन्धी सामग्री, ख़र्च, क़ीमत, बीज, औज़ार इत्यादि के विषय में प्रश्न पूछ सकता है और उस मनुष्य का यह कर्तव्य होगा कि वह मंत्री को, यथाशक्ति उत्तर दे। यदि यह मनुष्य ३० दिन के अन्दर इन बातों का उत्तर न देगा तो उसको १००० पौंड तक दंड या १ वर्ष क़ैद की सज़ा हो सकती है। कृषि के मंत्री को कई लाख डालर्स का धन इसलिए सौंपा गया कि वह जानवरों में रोग फैलने से बचावे, उनके बढ़ाने का कोशिश करे, पाले हुए पशुओं की रक्षा करे, अच्छे बीज लाकर उनको इकट्ठा करे तथा आवश्यकता पड़ने पर उनको बाँटे। एमेरिका में १८१७ में मुख्य मुख्य पैदावार निम्न प्रकार हुई है:—३१९१,०००,००० बुशेल्स अनाज, ६५८,७६७,००० बुशेल्स गेहूं १,५८०,०००,००० बुशेल्स जौ, २०३,६५८,००० बुशेल्स जुवार, ३३,२५६,००० बुशेल्स चांवल, ७३,२८०,००० बुशेल्स आलु। ये संख्याएँ औसत फ़सल से बहुत ज़्यादा हैं और ऐसी आशा की जाती है कि मुख्य मुख्य फ़सलों की पैदावार शीघ्र ही द्विगुणित हो जायगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संसार के तीन प्रधान देशों में कृषि बढ़ाने के लिए कैसे कैसे प्रचंड उपाय किये जारहे हैं यह बात ऊपर के विवेचन से पाठकों को ज्ञात होगी। क्या भारत-सरकार का ध्यान इस विषय की ओर आकर्षित होगा ? जिस हिन्दुस्तान में कितने ही वर्षों से फसलें पुराने ढर्रे पर ही नहीं वरन् कहीं कहीं पहले से भी कम हो रही हैं वहां सरकार को चाहिये कि कृषि को हर प्रकार से उत्तेजन दे। यह भारत-भूमि समस्त संसार को खाद्य-वस्तुएँ पहुंचा सकती है, यदि सरकार किसान को आवश्यक कृषि-शिक्षा देकर उसको हर प्रकार की सहायता दे तथा उसको महाजनों के चंगुल से बचाकर आर्थिक सहायता प्रदान करे।*

विष्णुमनोहर राशिकर।

सुधार-योजना।

प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी का मसविदा जो मि० मांटेगू की सेवा में उपस्थित किया गया था।

संयुक्त प्रदेश आगरा व अवध की प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी की ओर से यह आवेदनपत्र उपस्थित किया जाता है कि यह कमेटी सुधारों के इस मसविदे (स्कीम) का अनुमोदन करती है, जो इंडियन नेशनल कांग्रेस और आल-इंडिया मुसलिम-लीग ने मिलकर तैयार किया है।

(२) सुधारों के मसविदे के सम्बन्ध में जो प्रस्ताव इंडियन नेशनल कांग्रेस और आल-इन्डिया मुसलिम-लीग ने लखनऊ में पिछले दिसम्बर के महीने में पास किया था, वह तीन भागों में विभक्त है। पहिले भाग में यह इच्छा प्रकट की गई है कि महाराजाधिराज की ओर से इस बात की घोषणा की जाय कि ब्रिटिश राजनीति का यही मूल उद्देश्य है कि भारतवर्ष को स्वराज्य शीघ्र प्राप्त हो जाय। दूसरे भाग का आशय यह है कि शासन-प्रबन्ध में ऐसे ऐसे सुधार किये जायँ जिनसे स्वराज्य की प्राप्ति सम्भव हो, और तीसरे भाग में यह मांग है कि राष्ट्रीय सभा में भारतवर्ष को दूसरे आत्मशासित उपनिवेशों के बराबर ही स्थान दिया जाय। इस आवेदनपत्र का यह अभिप्राय है कि जो सुधार प्रान्तीय राज्य-प्रणालियों में कांग्रेस और मुसलिम-लीग ने मांगे हैं, उनकी मोटी मोटी बातों पर विस्तारपूर्वक विचार करे और उन सुधारों के मूल नियमों को बड़े आकार में दिखलाये। अतएव इस समय भारतवर्ष और राष्ट्र के राजनैतिक सम्बन्ध का वर्णन करना हम लोगों के लिए अनावश्यक है। दूसरा कारण यह भी है कि राष्ट्र और भारतवर्ष का पारस्परिक क्या सम्बन्ध होना चाहिये, इस प्रश्न का संतोषजनक उत्तर देने के लिए यह ज्ञात होना चाहिये कि हिन्दुस्तानियों को अपने देश के प्रबन्ध करने में कितना अधिकार है, और हम लोगों के लिए यह भी आवश्यक है कि हम यह बतलायें कि प्रस्ताव के पहिले भाग में जो घोषणा करने के लिए कहा गया है वह घोषणा क्यों होनी चाहिये। यद्यपि महाराजाधिराज की ओर से कोई घोषणा नहीं की गई है तथापि ब्रिटिश राज्य ने सेक्रेटरी आफ़ स्टेट के मुख से यह वचन दिया है कि हम भारतवर्ष को स्वराज्य-प्राप्ति के मार्ग पर पहुंचा देंगे। सेक्रेटरी आफ़ स्टेट की घोषणा से उस आन्दो-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

* माडर्न रिव्यू के आधार पर।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लन में बड़ी शान्ति आगई जो भारतीय राजनीति के सम्बन्ध में मचा था। इस घोषणा से हिन्दुस्तानियों को यह भरोसा दिया गया कि इङ्गलेंड हिन्दुस्तानियों को सब अधिकार प्राप्त करा देने का पूरा पूरा भार अपने ऊपर लेता है, इससे क्रोध का आवेश रुक गया, और हमारे देशवासियों के हृदय में आशा का उदय हुआ। ब्रिटिश राज्य की ओर से यह पहली घोषणा थी, जो एक उच्च कर्मचारी के मुख से हुई, और जिसने ब्रिटिश राज्य को इस प्रतिज्ञा से बांधा कि हिन्दुस्तान में पार्लामेंट के नमूने की राज्य-प्रणाली स्थापित हो जायगी। परन्तु हमें यह कहना पड़ता है कि इस घोषणा में यह कमी है कि केवल कर्मचारियों ही पर इस बात का विचार करना छोड़ दिया गया है कि किस समय कितना अधिकार दिया जाना चाहिये। हिन्दुस्तानियों से इस बात के निर्णय करने में सम्मति नहीं ली जायगी, और कोई समय भी नहीं बतलाया गया है, जिसके अन्तर्गत हिन्दुस्तान को स्वराज्य प्राप्त हो जायगा। पिछली घटनाओं से हमको यह प्रतीत होता है कि समय समय पर निष्पक्ष विचारकों की कमेटी इस बात का निर्णय किया करे कि जो अधिकार दिये गये थे उनसे लाभ पहुंचा या हानि, और यह कि अब कौन या कोई अधिकार देना उचित है या अनुचित।

(३) हमारे लिए यह भी निष्प्रयोजन होगा कि हम आजकल की अशान्ति का कारण ऐतिहासिक रूप में वर्णन करें, अथवा उन कारणों का अन्वेषण करें; जिनसे पिछले तीन ही घटनापूर्ण वर्षों में भारतीय राजनीति में परिवर्तन हो गया है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इन तीन वर्षों में ऐसी ऐसी घटनाएँ हुई हैं, जिनके कारण वैमनस्यता इतनी बढ़ गई थी कि थोड़े दिन तो देश की स्थिति बड़ी चिन्तनीय रही। परन्तु सेक्रेटरी आफ़ स्टेट की घोषणा से यह दशा इतनी भयानक न रही। इतना हो चुकने पर कुछ अदूरदर्शी लोग जिनको सुधारों के मिलजाने से अपने स्वार्थसाधन में यहां अथवा इङ्गलेंड में बाधा पड़ने का भय है, ब्रिटिश और भारतीय गवर्नमेंट की इस शान्ति-प्रदायिनी राजनीति में अनुचित विघ्न डाल रहे हैं, जिसके कारण कोप और भय का फिरसे उदय होना सम्भव हो गया है। इन लोगों को गम्भीर विचार की अपेक्षा बुराई करना और गालियां देना सहज मालूम पड़ता है। धमकी साफ़ साफ़ और खूब देते हैं, निर्भीकतापूर्वक मिथ्या बातें इङ्गलैण्डवासियों को सुझाई जाती है, जिससे वे हमसे विमुख हो जायँ, और हमारी राज्य और राष्ट्र-भक्ति का पूरा परिचय यूरोप, एशिया तथा अफ्रीका के युद्धक्षेत्रों में पाजाने पर भी ऐसे लोग हमारी उपमा रूस के विद्रोहियों से देते हैं, जिनको अपने छोटे छोटे अधिकार भी छोड़कर हिन्दुस्तानियों को देना असह्य मालूम होता है, और ये अधिकार अपने ही देश में हिन्दुस्तानी लोग नहीं पाते। परन्तु इन बातों को विस्तार देना अनावश्यक है, क्योंकि हमें विश्वास है कि गवर्नमेंट इस छोटे से दल के आन्दोलन की ओर बिना ध्यान दिये हुए हिन्दुस्तान के प्रति अपने धर्म का पालन करेगी, और उसी शान्तिकारिणी राजनीति पर आरूढ़ रहेगी, जिसका आरम्भ सेक्रेटरी आफ़ स्टेट की घोषणा से हुआ है। हम लोग इस समय केवल इतना ही कहेंगे कि स्वराज्य की इच्छा प्राचीन है, इसकी उत्पत्ति हाल ही की नहीं है और न हिन्दुस्तानियों ने इङ्गलेंड के युद्ध में दुचित्ते होने का अवसर ताक कर स्वराज्य की रट इसी समय प्रारम्भ करदी है, जैसा कि वे लोग कहते हैं जिन्हें सत्य सदा अप्रिय मालूम पड़ता है। स्वराज्य की रट प्रायः उतनी ही प्राचीन है जितने वर्ष कांग्रेस को होते हो गये हैं। यदि हम भारतीय राजनीति में नया युग पैदा करनेवाले सन् १६०५ ई० से पूर्व न जायँ तो भी इस वर्ष के सभापति श्रीमान् गोखले जी ने अपने वक्तव्य में कांग्रेस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के सामने यह कहा था कि कांग्रेस का यह उद्देश्य है कि इस देश में भी ब्रिटिश राज्य के दूसरे स्वाधीन उपनिवेशों के प्रकार की राज्य-प्रणाली स्थापित हो जाय। सन् १९०६ में श्रीमान् दादाभाई नौरोजी ने फिर स्पष्ट और प्रभावशाली शब्दों में कहा कि ब्रिटिश राज्य की प्रजा होने के कारण हम भी यूनाइटेड किंगडम या उपनिवेशों की तरह स्वराज्य के योग्य हैं, और जब सन् १९०८ में कांग्रेस को लिखा हुआ नियमबद्ध संगठन प्राप्त हुआ तब यह प्रण किया गया था कि उपनिवेशों के नमूने का स्वराज्य प्राप्त करना कांग्रेस का उद्देश्य है।

(४) इन्हीं सब कारणों से हम लोग केवल कांग्रेस के सुधारों के मसविदे का ही विस्तारपूर्वक विचार करेंगे। कौन कौन और किस हद तक हिन्दुस्तानियों को अधिकार दे देना योग्य है, इसका निर्णय करना हम लोगों के लिए अत्यावश्यक है, और इसी के निर्णय के लिए ही राइट आनरेबुल दी सेक्रेटरी आफ़ स्टेट का भारतवर्ष में आगमन हुआ है। इस बात का निर्णय हो जाना भावी राजनीति की घोषणा से भी अधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि राजनीति की प्रतिज्ञा जितनी ही निश्छल होगी उतनी ही वह व्यवहार में लाई जायगी। इस बात का निर्णय होना उतना ही प्रभावशाली है, जितना इस बात का कि हिन्दुस्तान की भलाई का ध्यान राष्ट्रीय विषयों पर विचार करते समय कहां तक रखना चाहिये। क्योंकि जब हिन्दुस्तान को स्वराज्य प्राप्त हो जायगा तब यह असम्भव होगा कि राष्ट्रीय मामलों का विचार करते समय इस देश को भुला दिया जाय।

(५) कांग्रेस-लीग स्कीम का विचार करते समय हम उस भाग पर अधिक ध्यान देंगे, जिसमें उन सुधारों का वर्णन है जो प्रान्तीय शासन-प्रणाली में होने चाहिये, और इसकी ओर अधिकतर ध्यान दिया जायगा कि संयुक्तप्रदेश को कौन से सुधारों की आवश्यकता विशेष है। इस भाग के दो भागान्तर हैं—एक में कार्यकारिणी गवर्नमेंट का वर्णन है और दूसरे में व्यवस्थापक सभा का। हम पहले यह विचार करेंगे कि इस प्रान्त की शासन-प्रणाली में क्या सुधार करना चाहिये।

कार्यकारिणी गवर्नमेंट।

(६) संयुक्तप्रदेश ब्रिटिश हिन्दुस्तान में सब से बड़ा प्रान्त है, और इसकी जन-संख्या ब्रिटिश आइल्स (इंगलैंड, आयर्लैंड और स्काटलैंड) से भी अधिक है, तब भी इसका शासन केवल एक छोटा लाट, जो आई० सी० एस० पास है, करता है। उसको इतने बड़े कार्य में बङ्गाल, मद्रास और बम्बई के लाट तथा बिहार और उड़ीसा के नये प्रान्त के छोटे लाटों के समान किसी कार्यकारिणी कौंसिल की सहायता भी नहीं मिलती है। कांग्रेस का कहना यह है कि इस प्रान्त की शासन-प्रणाली बङ्गाल, बम्बई और मद्रास की भांति हो जाय, इसका शासन एक गवर्नर और कौंसिल से हो। कार्यकारिणी कौंसिल की मेम्बरी केवल आई० सी० एस० वालों ही को न दी जाय। कम से कम आधे मेम्बर हिन्दुस्तानी हों, जिनको प्रान्तीय व्यवस्थापक सभा के ऐसे सभासद चुनें, जिनको जन-समुदाय ने चुनकर कौंसिल में भेजा हो।

(७) इस प्रान्त में कार्यकारिणी कौंसिल के स्थापन के प्रस्ताव का इतिहास लिखना निष्प्रयोजन है, इसका आरम्भ सन् १८३३ ई० में हुआ था। कौंसिल-द्वारा शासन के लाभ और एक ही मनुष्य-द्वारा शासन की हानियां बतलाना भी अनावश्यक है। इस प्रश्न पर अच्छी तरह से इम्पीरियल और प्रान्तीय लेजिस्लेटिव कौंसिल में विचार हो चुका है, और इस पर बहुत से व्याख्यान और लेख भी निकल चुके हैं, तथा सेक्रेटरी आफ़ स्टेट और गवर्नमेंट आफ़ इन्डिया स्वीकार कर चुके हैं कि हमारे प्रान्त में कार्यकारिणी कौंसिल स्थापित होनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिये, यदि हौस आफ़ लार्ड्स इन लोगों की विचारपूर्ण सम्मति को एकदम अस्वीकार न कर देता तो हमारे प्रान्त को कार्यकारिणी कौंसिल जाने कब की प्राप्ति हो गई होती। इस व्यवहार से विचलित न होकर गवर्नमेंट आफ़ इन्डिया ने फिर कौंसिल के लिए सम्मति दी है, और वाइसराय की कौंसिल के सब मेम्बर इसमें सहमत हैं। हमको विश्वास है कि यह प्रस्ताव बहुत शीघ्र स्वीकार कर लिया जायगा।

(८) परन्तु केवल कार्यकारिणी कौंसिल पा जाने से हमारा काम नहीं चलेगा। इस कौंसिल का सभापति भी ऐसा गवर्नर होना चाहिये, जो हमारे नेताओं में से चुना जाय, जिसकी सहानुभूति सब से हो, जो राजनीति से सुपरिचित हो, और जिसको शासन-प्रणाली का अच्छा ज्ञान हो। यही विचार "डिसेन्ट्रलाइज़ेशन कमीशन" ने भी प्रकट किया था। उसने कहा था कि ऐसे लेफ़्टिनेन्ट गवर्नर का उसके सहकारी कर्मचारी, जिनमें से कुछ जो नौकरी में उससे अधिक प्राचीन हैं, इतना गौरव नहीं मानेंगे कि सब काम निष्कंटक होता चला जाय, क्योंकि लाट साहब भी तो केवल आई० सी० एस० ही हैं। उन्होंने यह भी कहा था कि कांग्रेसवाले मार्ग पर चलने से एक यह भी लाभ होगा कि ऐसे गवर्नर की मस्तिष्क-शक्ति पूर्ण और तीव्र होगी, और उसकी पूर्व सुकृत्तियों के कारण उसका सन्मान होगा, और उसके कर्मचारीगण उसकी सहायता करेंगे। ३० मई सन् १९१५ को इलाहाबाद में आनरेबुल सर राजा मुहम्मद अली मुहम्मद खां, के० सी० आई० ई०, महमूदाबाद के सभापतित्व में हिन्दू और मुसलमानों की विशेष सभा हुई, जो संयुक्तप्रदेश में सबसे बड़ी राजनैतिक कान्फरेंस थी, और जिसका उद्देश्य था कि कौंसिल-गवर्नमेंट देने की बात अस्वीकार करने पर प्रतिवाद करे। उस कान्फरेंस में "डीसेन्ट्रलाइज़ेशन कमीशन" के मत का पूरा पूरा अनुमोदन हुआ। हम इस पर विशेष ध्यान इसलिए दिलाते हैं कि सर जेम्स मेस्टन के बाद सर हारकोर्ट बटलर के लेफ़्टिनेन्ट गवर्नर होने की खबर से सर्वसाधारण के हृदय में शंका पैदा हो गई है। सर जेम्स मेस्टन के उपरान्त आई० सी० एस० वाले के नियुक्त होने का यह अर्थ निकलता है कि इस प्रान्त में फिर कुछ समय तक हम लोग गवर्नर से वंचित रहेंगे।

कार्यकारिणी कौंसिल का निर्माण।

(९) इस विश्वास पर कि कार्यकारिणी कौंसिल हमको शीघ्र प्राप्त हो जायगी, हम उसके निर्माण के कुछ नियम बताने का साहस करते हैं।

(१०) यह बात गवर्नमेंट ने पहिले ही मान ली है कि कौंसिल में जितने विदेशी हों उतने ही हिन्दुस्तानी भी हों। इस विषय में सेक्रेटरी आफ़ स्टेट ने २५ दिसम्बर १९१४ के डिस्पैच में लिखा था कि हिज़ एक्सेलेन्सी के पत्र पर विचार करके कौंसिल में यह निश्चय हुआ कि संयुक्त प्रदेश में कार्यकारिणी कौंसिल के दो मेम्बर तब तक रक्खे जायँ, जैसी कि हिज़ एक्सेलेन्सी की सम्मति है, और इनमें से एक हिन्दुस्तानी हो। फिर २२ फरवरी, १९१७, को इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल के डिबेट में जो आनरेबुल डाक्टर तेजबहादुर सप्रू ने आरंभ किया था, सर रेजीनाल्ड क्रैडाक ने होम मेम्बरी के आसन से यह कहा था कि "कार्यकारिणी कौंसिल के मिलने का उत्तर हां या नहीं के रूप में गवर्नमेंट तभी ठीक ठीक दे सकती है जब यह निश्चय हो जाय कि कौंसिल का निर्माण कैसे होगा। यह बात तो दूसरी है कि कितने मेम्बर होंगे"। इस कथन से विदित होता है कि यदि इस प्रान्त को कार्यकारिणी कौंसिल प्राप्त होगी और उसमें मेम्बरों की संख्या समान होगी तो गवर्नमेंट आफ़ इन्डिया हिन्दुस्तानियों को आधी संख्या में रखने का पक्ष लेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(११) कार्य-कारिणी कौन्सिल में हिन्दुस्तानियों का होना इसलिए आवश्यक है कि गवर्नमेंट को शासन-सम्बन्धी मामलों में हिन्दुस्तानियों के विचार का अनुमान मिल सके, और सुशिक्षित हिन्दुस्तानियों के परामर्श से लाभ पहुंच सके। यह लाभ कल्पित नहीं है, क्योंकि लार्ड मार्ले से लेकर सभी ने इन्डिया-कौन्सिल और इम्पीरियल कौन्सिल और प्रान्तीय कार्य-कारिणी कौन्सिलों के हिन्दुस्तानी मेम्बरों की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है, और इसमें सन्देह करने का कोई अवसर नहीं है कि इन कौन्सिलों में हिन्दुस्तानी मेम्बरों की संख्या बढ़ा देने से विशेष लाभ की आशा है। इस प्रान्त के शासन का प्रबन्ध देशवासियों की इच्छा और रुचि के अनुकूल होने के लिए यह अनिवार्य है कि कार्यकारिणी कौन्सिल में हिन्दुस्तानियों की संख्या केवल इतनी ही नहीं कि उनके विचारों का प्रभाव शासन के मामलों पर पड़े बल्कि इतनी हो कि उनकी सम्मति के विरुद्ध कोई कार्य न हो। जिसमें उनके हृदय में यह विश्वास पैदा हो कि वे भी शासक-वृन्द के एक बड़े अंश हैं, और उनकी बात सहसा काटी नहीं जायगी। इसकी आवश्यकता इस कारण से और भी बढ़ जाती है कि जिस शासन-प्रणाली के कार्य का निरीक्षण कार्यकारिणी कौंसिल को करना है, उसमें अधिकतर विदेशी कर्मचारी हैं। इस प्रणाली के दोषों को मिटाने के लिए निरीक्षक-वृन्द में हिन्दुस्तानियों की अधिकता होना चाहिये। इसलिए हम यह बात ज़ोर देकर कहने का साहस करते हैं कि संयुक्त प्रदेश की कार्य-कारिणी कौंसिल में छः मेम्बर होना चाहिये, जिनमें कम से कम तीन हिन्दुस्तानी हों।

(१२) शेष तीन मेम्बर आइ० सी० एस० वालों में से ही नहीं लेना चाहिये। पूरे प्रान्त का शासन जिनके हाथ में हो, उनमें ये गुण होने चाहियें कि वे राजनीतिज्ञ हों, सर्वसाधारण की इच्छा और रुचि से सहानुभूति रखते हों और नियमों पर उदार हृदय से आरूढ़ रहें तथा किसी बात का निर्णय करते समय सब बातों का ध्यान रक्खें। ये गुण उन लोगों में होने असम्भव हैं जिनको "एफ़िशियन्सी" (निपुणता) ही सर्वप्रधान नियम मालूम होता है, जो शासन के छोटे छोटे नियमों से बद्ध होकर काम करते करते बड़े बड़े नियमों को घृणित समझने लगते हैं। जिनका जीवन छोटे छोटे नियमों के अक्षरशः पालन करने में बीतता है उनमें वह दृष्टि कैसे रह जायगी जो सब बातों को एक दूसरे के सम्बन्ध में इस प्रकार देखती है जैसे कोई मनुष्य ऊंचे पर खड़ा होकर आस पास देखे। ऐसी दशा में जो आदमी जन्मभर सामयिक कठिनाइयों का ही निवारण करते रहे हैं, ऐसों को उन पदों पर नियुक्त कर देना, जहां दूरदर्शिता और सहृदयता के गुणों का होना आवश्यक है, मिस्टर बर्नार्ड हौटन के कथनानुसार वैसा ही है जैसे जहाज़ को कप्तानी ऐसे आदमी को सौंपना जिसका जीवन अञ्जन के कल-पुर्ज़ों को साफ़ करने में बीता हो। इसके अतिरिक्त विश्वसनीय कर्मचारियों द्वारा यह आशा दिलाई जा चुकी है कि ब्रिटिश राजनीति का उद्देश्य भारतवर्ष को उत्तरदायित्वपूर्ण राज्य-प्रणाली देने का है। यह बात सार्वजनिक उत्तरदायित्वपूर्ण राज्य-प्रणाली के मुख्य नियमों के सर्वथा विरुद्ध है कि सिविलसर्विस के लोग ही राज्य के मुख्य भागों के सर्वश्रेष्ठ कर्मचारी बनाये जायं। यह ठीक है कि कांग्रेस उत्तरदायी गवर्नमेंट तत्काल ही नहीं मांगती है तथापि जो सुधार उसने मांगे हैं उनके मिलने से उत्तरदायी गवर्नमेंट सुलभ हो जायगी। इस स्कीम के अनुसार राज्य-कर्मचारियों को अपना ही काम करना चाहिये, अर्थात् नियमों के अनुसार व्यवहार करना उनका काम है, नियमों का निर्माण करना नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१३) शासन श्रीमान् मिस्टर गोखले के कथनानुसार होना चाहिये, अर्थात् प्रान्तीय गवर्नमेंट के मेम्बरों के अधिकार में ये काग़ज़ रहने चाहियेः—(१) होम अर्थात् देश-सम्बन्धी मामले (इसमें क़ानून और न्याय सम्मिलित हैं) (२) फाइनेन्स अर्थात् आर्थिक प्रबन्ध (३) सिंचाई का प्रबन्ध, खेती के मामले और पब्लिक वर्क्स अर्थात् सड़कों, पुलों इत्यादि का निर्माण और निरीक्षण (४) शिक्षा (५) डिस्ट्रिक् बोर्ड और म्यूनिसिपल बोर्ड, इसमें सफ़ाई तथा आरोग्यता, औषधि इत्यादि का प्रबन्ध सम्मिलित हैं (६) शिल्प और व्यापार।

(१४) कांग्रेस की यह इच्छा है कि कार्यकारिणी कौंसिल के आधे हिन्दुस्तानी मेम्बर वे लोग चुनें, जिनको सर्वसाधारण ने चुनकर लेजिस्लेटिव कौंसिल में भेजा है। यह सत्य है कि ऐसा प्रस्ताव प्रायः सर्वथा नवीन है, केवल स्विट्ज़रलैण्ड और दक्षिणी अफ्रिका की प्रान्तीय कमेटियों में ही मन्त्री-गण चुनाव से नियुक्त होते हैं। इस बात का भी भय बतलाया गया है कि चुनाव करने से अपने २ लिए राय लेने का प्रयत्न, चुनाव करनेवालों पर अनुचित दबाव, तथा और भी कुप्रथाएँ फैलेंगी। यह शंकाएँ विचारणीय अवश्य हैं, परन्तु किसी बात में कुछ दोष निकाल देने से वे सर्वथा तिरस्करणीय नहीं हो जाती हैं। जो प्रस्ताव कीजिये, उसमें कोई न कोई दोष अवश्य निकल आवेगा, चाहे जितना सोच विचारकर उपस्थित कीजिये। परन्तु उसको इसी बात पर अस्वीकार नहीं कर देना चाहिये जबतक कोई दूसरा उपाय न बतलाया जाय, जो वास्तव में पहले से अच्छा हो, अथवा यह सिद्ध न कर दिया जाय कि जिस दोष का निवारण प्रस्ताव का अभिप्राय है वह निवारण नहीं होगा, बल्कि परिणाम में पहले से बड़ा दूसरा दोष निकल आवेगा। कांग्रेस के अनुसार चुनाव से मेम्बर को कौंसिल में भेजने के स्थान में कुछ लोगों का यह मत है कि जिन लोगों के नाम लेजिस्लेटिव कौंसिल के चुने हुए हिन्दुस्तानी मेम्बर लिख भेजें, उनमें से गवर्नमेंट चुनाव करले। परन्तु इस रीति में भी चुनाव के दोष उपस्थित हैं। यदि चुनाव की रीति अस्वीकार की जाय तो कांग्रेस के प्रस्ताव के स्थान में क्या होगा, यही कि गवर्नर अपने आप मेम्बरों के नाम प्रकाशित कर दे। इस रीति में निस्सन्देह बहुत से दोष वर्तमान हैं, और कार्यकारिणी कौंसिलों में इस रीति से जो सभासद पहुंचे हैं वे सर्वसाधारण के विचारों को नहीं प्रकट करते हैं न उनमें लोगों का विश्वास ही होता है। फिर कांग्रेस-स्कीम के अनुसार एक्ज़ेक्यूटिव को लेजिस्लेटिव कौंसिलवाले स्थान च्युत नहीं कर सकते हैं, अतएव यह उचित है कि पूर्णरूप से (रिस्पान्सिबिल गवर्नमेंट) स्वराज्य मिलने तक कोई ऐसा उपाय हो कि एक्ज़ेक्यूटिव और लेजिस्लेटिव कौंसिलों में हेलमेल बना रहे। इस कारण एक्ज़ेक्यूटिव कौंसिल में ऐसे सभासदों की उपस्थिति, जिनको लेजिस्लेटिव कौंसिल के सभासदों ने चुना हो और इस लिए जिन पर प्रायः उनका विश्वास हो, अतिलाभदायक प्रतीत होती है। इससे एक्ज़ेक्यूटिव का प्रभाव अधिक शक्तिशाली हो जायगा, और रिप्रेज़ेन्टेटिव गवर्नमेंट को रिस्पान्सिबिल गवर्नमेंट में परिणत करना भी सहज हो जायगा।

(लेजिस्लेटिव कौंसिल) व्यवस्थापक सभा।

(१५) जो प्रस्ताव कांग्रेस ने प्रान्तीय व्यवस्थापक सभाओं को फिर से निर्माण करने और उनके अधिकारों का निर्वाचन करने के बारे में उपस्थित किये हैं, उनका उद्देश्य प्रान्तीय आत्मशासन है। जिसका वचन हमको २५ अगस्त सन् १६११ वाले प्रख्यात डिस्पैच में दिया गया था। इस बात को निश्चय जान कर कि जातीयता का ज्ञान बढ़ने से हिन्दुस्तानी लोग अपने देश के शासन में अधिक अधिकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माँगेंगे और इस बात को आवश्यक समझकर कि भविष्य में सुधारों के देने के नियम स्थिर कर लिये जायँ, हिन्दुस्तान की गवर्नमेंट ने लिखा था कि "इस कठिनाई का यही उपाय समझ पड़ता है कि सब प्रान्तों को धीरे धीरे आत्म-शासन के अधिकार दिये जायँ, और इस प्रकार किसी समय समस्त हिन्दुस्तान में कई एक स्वच्छन्द प्रान्त हो जायँगे, जिनपर सबसे ऊँचा अधिकार केवल हिन्दुस्तान की गवर्नमेंट का रहेगा, जो साधारणतः अन्यायी शासन को छोड़कर किसी कार्य में हस्तक्षेप नहीं करेगी, और जिसको केवल राष्ट्रीय मामलों से काम रहेगा।" कांग्रेस का अनुरोध है कि इस राजनीति का वचन दिये छः वर्ष से अधिक बीत गये, अब इस पर व्यवहार करना चाहिये।

(१६) मसविदे की मुख्य बातें ये हैं कि कौंसिल को बढ़ाना चाहिये, और चुने हुए मेम्बरों की संख्या अधिक होनी चाहिये। कौंसिल के मेम्बर सर्वसाधारण चुनें, और चुनाव के नियम और अधिकार बढ़ा दिये जायं। शासन और अर्थ-सम्बन्धी विषयों पर कौंसिल ही का पूरा अधिकार हो। जो प्रस्ताव कौंसिल पास करेगी, वे कार्यकारिणी समिति पर बाध्य होंगे, और बजट पर कौंसिल का पूरा अधिकार होगा।

(१७) क़ानून के अनुसार संयुक्त प्रदेश की व्यवस्थापक सभा में ५० मेम्बर से अधिक नहीं हो सकते हैं, जिनमें लाट साहब भी आ गये। दो एक्सपर्ट (किसी विषय में दक्ष) मेम्बरों के अतिरिक्त, जिनको स्थानीय गवर्नमेंट अवसर पर नामज़द कर सकती है, कौंसिल में ४७ मेम्बर हैं, जिनमें से २१ चुने हुए और २६ नामज़द हैं। नामज़द मेम्बरों में से २० से अधिक संख्या अफ़सर लोगों की नहीं हो सकती। इस प्रकार निर्वाचित और नामज़द मेम्बरों को मिलाकर इनकी संख्या अफ़सरों से अधिक तो अवश्य है, परन्तु साधारण मेम्बरों की संख्या का अधिक होना भ्रममात्र ही सिद्ध हो चुका है। काम पड़ने पर गवर्नमेंट की हां में हां मिलानेवाले ही अधिक मिलते हैं। सर्वसाधारण के निर्वाचित मेम्बर इतने कम हैं कि वे अपनी इच्छा का प्रभाव कार्यकारिणी सभा पर नहीं डाल सकते हैं। इसके अतिरिक्त निर्वाचन के लिए संयुक्त प्रदेश के केवल १३ भाग हैं, जो इतने बड़े प्रान्त के लिए बहुत कम हैं, और वोट देने का अधिकार इतना संकुचित है कि साधारण लोग निर्वाचन में भाग नहीं ले सकते।

(१८) चार चार म्यूनिसिपेलिटियों के दो समूह हैं। हरएक समूह बारी बारी से चार चार मेम्बर निर्वाचित कर सकता है। संयुक्त प्रदेश में जितने बड़े बड़े नगर हैं, उनको देखते हुए निर्वाचन का अधिकार बहुत कम लोगों को मिलता है। यह न्यूनता इस बात के कारण और भी अधिक प्रतीत होती है कि इन्हीं बड़े बड़े नगरों में विद्या का प्रभाव अधिक पड़ा है, और इन्हीं में नवीन विचार विशेष पाये जाते हैं। इन्हीं नगरों में जन-समुदाय की सेवा की वाञ्छा विशेष पाई जाती है, योग्यता भी अधिक होती है और उन्नति की आकांक्षा तथा राजनैतिक विषयों की समझ भी विशेष होती है। फिर भी वर्तमान पद्धति इन बातों पर कुछ ध्यान नहीं देती। आजकल अँगरेज़ी के अशिक्षित लोगों और राजाओं तथा सरदारों का तो—जिन्हें ब्रिटिश हिन्दुस्तान के मामलों से कोई तात्पर्य नहीं—निर्वाचन होता है, परन्तु जो लोग अपने देश का भली प्रकार ज्ञान रखते तथा भलाई के लिए परामर्श दे सकते हैं, उनके निर्वाचन में अनेक बाधाएँ हैं।

(१९) फिर जिस स्थान में निर्वाचन होता है वहां की म्यूनिसिपैलिटी के मेम्बरों ही को वोट देने का अधिकार होता है। ऐसे म्यूनिसिपल मेम्बरों की संख्या अनुमान से ३० होती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, इसलिए यह सिद्ध है कि जहां १,००,००० मनुष्य निवास करते हैं वहां का मेम्बर चुनने के लिए २ दर्जन से भी कम मनुष्यों को अधिकार है।

(२०) कमिश्नरी को ज़िले से ज़्यादा अधिकार नहीं है। कमिश्नरी की जन-संख्या प्रायः ५० लाख होती है। कुमायूं की कमिश्नरी को कौंसिल में मेम्बर भेजने का अधिकार नहीं है, शेष ६ कमिश्नरियों के बारे में इतना ही, उचित समझा गया कि हरएक में से एक एक मेम्बर भेजा जाय। निर्वाचन करने की रीति नगर से भी अधिक अयोग्य है। निम्नलिखित वर्णन, जो माननीय मि० सी० वाई० चिन्तामणि के युक्त प्रदेश की झांसीवाली कान्फरेन्स में अक्तूबर, १९१६ में दिये गये वक्तव्य से उद्धृत है, इसका ठीक ज्ञान करा देता है—"एक लम्बी चौड़ी कमिश्नरी, जिसकी जन-संख्या कई लाख होती है, और जिसमें कई ज़िले होते हैं, एक ही मेम्बर भेज सकती है। यदि निर्वाचन की रीति का वर्णन करें तो तुरन्त उसके दोष निश्चय ही प्रकट हो जायँगे। मेम्बर को वे "डेलीगेट्स" चुनते हैं, जिनको उस कमिश्नरी के म्यूनिसिपल तथा डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के सभासद चुनते हैं, और डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के मेम्बर म्यूनिसिपल बोर्ड के मेम्बरों से कम ज्ञानवान् हुआ करते हैं। केवल शिष्टाचार से ही डिस्ट्रिक्ट बोर्ड आत्मशासित संगठन कहे जा सकते हैं। कोई विशेष गुण या सम्पत्ति का होना मेम्बरी अथवा राय देनेवालों के लिए ज़रूरी नहीं ठहराया गया है। मैजिस्ट्रेट या कलेक्टर जैसे उचित समझें वैसे लिस्ट तैयार कर दें। इस बार सरकारी वर्षारम्भ से इस प्रकार निर्वाचित मेम्बरों की संख्या और भी बढ़ा दी गई है। प्रायः सब मेम्बर ज़िमीन्दार हैं, और जन-संख्या के हिसाब से बहुत से मुसलमान हैं। ये दोनों समाज अपने अपने मेम्बर अलग निर्वाचन करते हैं। केवल यही नहीं कि वोट देने के लिए म्यूनिसिपल बोर्ड और डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का साथ कर दिया जाता है, बल्कि म्यूनिसिपल बोर्डों को डिस्ट्रिक्ट बोर्डों के बराबर वोट देने का अधिकार भी नहीं प्राप्त है। प्रान्त की हरएक कमिश्नरी में डिस्ट्रिक्ट बोर्ड ही ज़्यादा मेम्बर कौंसिल में भेजते हैं। किसी किसी कमिश्नरी में तो बहुत ही अधिक भेद होता है। इलाहाबाद की कमिश्नरी में संख्या है २२ और १०। गोरखपुर में तो यह अन्तर हँसने योग्य है, अर्थात २० और ३, इस कमिश्नरी (झांसी) में १० और ६ है। सब कमिश्नरियों में डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के मेम्बर कौंसिल में १९८ हैं, और म्यूनिसिपल बोर्ड के केवल ८८। यही २८६ जनों का समूह बिना रोकटोक के इसका निर्णय करता है कि कौन कौन व्यक्ति कौंसिल में समस्त जन-समूह की ओर से स्थान पावेंगे, यहो नहीं कि किसी विशेष समाज अथवा पक्ष की ओर से।

(२१) इस प्रकार ३ दर्जन से भी कम मनुष्य कई लाख मनुष्यों की ओर से कौंसिल में मेम्बर भेजते हैं। यह भी नहीं कहा जा सकता है कि निर्वाचन के अधिकार बढ़ने नहीं पाये हैं, क्योंकि इससे अधिक और अधिकार बढ़ते ही क्या, यह इसीसे ज्ञात हो जाता है कि प्रान्तीय कौंसिल के लिए अपना विशेष मेम्बर निर्वाचन करने का अधिकार १,७६२ मुसलमानों को प्राप्त है।

(२२) कांग्रेस-लीग-स्कीम का उद्देश्य ऊपर कहे गये अन्याय और अनियम को मिटाने का है। स्कीम का पहला प्रस्ताव है कि व्यवस्थापक सभा में १२५ मेम्बर होना चाहिये, जिनमें से $\frac{4}{5}$ चुने हुए और $\frac{1}{5}$ नामज़द हों, अर्थात् निर्वाचित मेम्बरों की संख्या १०० हो। यह १०० मेम्बरी की जगहें भिन्न जातियों तथा समाजों में इस प्रकार विभाजित हों कि ४ जगहें यूरोपियन्स को, ४ ज़िमींदारों को, १ प्रयाग-विश्वविद्यालय को, १ हिन्दू-विश्वविद्यालय और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१ मुस्लिम-विश्वविद्यालय को, जब वह स्थापित हो जाय । शेष ८८ जगहों में से ३० फ़ीसदी अर्थात् २७ मुसलमानों को मिलें जैसा कि मुस्लिम-लीग और इन्डियन नेशनल कांग्रेस ने निर्णय कर दिया है, और शेष ६२ जगहें साधारण निर्वाचन-मंडलियों को दी जायँ । जिस नगर की जन-संख्या ५०,००० से कम न हो उसे १ मेम्बर भेजने का अधिकार हो । इस रीति से १६ जगहें बँट जायँगी, जो निम्न नगरों को मिलेंगी:—इलाहाबाद, लखनऊ, बनारस, कानपुर, आगरा, मेरठ, बरेली, फैज़ाबाद, गोरखपुर, झांसी, मुरादाबाद, अलीगढ़, सहारनपुर, शाहजहां पुर, फ़र्रुख़ाबाद, फ़तेहगढ़ और मथुरा । यहां पर यह बता देना उचित होगा कि इन नगरों में पहले के आठ आजकल दो समूहों में विभाजित हैं । हर एक समूह में ४ नगर हैं, जो निर्वाचन-काल में बारी बारी से चार चार मेम्बर कौंसिल को भेजते हैं ।

(२३) शेष ४६ जगहें प्रान्त के भिन्न भिन्न विभागों को दी जायँ । इनके बाँटने की रीति नगर के राय देनेवालों की संख्या पर निर्भर होगी । आशा है कि प्रत्येक नगर एक एक मेम्बर भेज सकेगा, परन्तु ऐसा निश्चय नहीं कहा जा सकता । किसी किसी बड़े धनवान तथा ज्ञानवान् नगर को एक से अधिक मेम्बर कौंसिल में भेजने का अधिकार होगा, और दो या अधिक छोटे तथा कम शिक्षित नगरों को एक में मिलाकर निर्वाचन का अधिकार देना होगा । बिना हर एक नगर के निर्वाचक-मंडल की संख्या जाने हुए इस प्रस्ताव के सूक्ष्म भागों का विस्तारपूर्वक वर्णन नहीं किया जा सकता । प्रस्ताव का तत्व यह है कि निर्वाचन के लिए देश के विभाग छोटे छोटे हों, और निर्वाचन-मंडली में मनुष्यों की संख्या संकुचित न हो, तथा प्रत्येक निर्वाचक को एक राय देने का अधिकार हो, और प्रत्येक निर्वाचक प्रदेश की ओर से एक मेम्बर कौंसिल में उपस्थित हो ।

क्रमशः ।

सच है ।

जहां पर फूट पैदा है,
वहां का नाश निश्चय है ।
जहां है ऐक्य का आदर,
वहां का भाव निर्भय है ॥
जहां बसता कपट पापी,
वहां दुर्भोग पैदा है ।
जहां मतभेद का डेरा,
वहां की पूछना क्या है ॥
नहीं जाती वहां लक्ष्मी,
जहां बहुमन की माया है ।
जहां विश्वास है, सच है,
वहां ईश्वर की दाया है ॥
वहां विद्या नहीं होती,
जहां दुर्मति का दावा है ।
नहीं हिम्मत वहां होती,
जहां झूठा दिखावा है ।
वहीं बलवान होते हैं,
जहां लोगों में एका है ।
जहां का प्रेम सच्चा है,
वहीं का रँग मज़े का है ॥

श्रीकान्त-कुसुमाकर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय टिप्पणियाँ।

१९१७ के जापान और भारत के व्यापार की तालिका।

निम्नलिखित अंकों को देखकर यह प्रगट होगा कि जापान भारत की बाज़ार पर किस तेज़ी से कब्ज़ा कर रहा है। १९१५, १६ और १७ में जापान से इतने मूल्य की चीज़ें आई हैं।

आनेवाली चीज़ों का नाम।	१९१७।	१९१६।	१९१५।
चीनी साफ़	१०९५३६३ यन	१८४३७७८	१६५६६२१
बीयर	२२२१६१२	९११७७५	२९५३८०
कोयला	१०८८४८	१५७२८७	२०७१५९
लकड़ी	४९४१६०३	२७९०८१२	१९६४२८६
सलफर गंधक	१०९१६४३	२८२५२१	१७७०३१
मैंथलक्रिस्टल	१९५६१८३	१५५९५२७	१२५४६९७
रेशम कच्चा	१३६०४४	१६५१७५	२५७२९
सूत	४१३२६३६	३२३९३१४	४०१२३७
तांबा	५०३२२७३	९७६३७	८५१५६२
ज़िङ्क	११९६०५२	२८७४३७	०
दियासलाई	८६६१०९८	५७९२१९८	५४९४१३३
रेशमी कपड़ा	३९५५२७६	४१३२५४८	५४०५८७६
सूती कपड़ा	१५१२१४५४	१०५६०१११	३७०३४७१
ऊनी कपड़ा	४४८९२५	६१०७९८	१७९२४
रेशमी रुमाल	८८९४३	१८९६१७	७८२६८
सूती तौलिया	१४६७८३	६६६७२४	३५०९४६
सूती बनियाइन ड्रार आदि	५,६९७७७६	६१९६६७७	२९२६८३०
निटेन गुड्स	७०५८१३	७५४००२	३८४८१२
हैट, टोपी आदि	९८७२१	२६८९४०	३८८९५
बटन	८३७०१५	११६६२३०	६६८४८६
कागज़	२२८७३३६	६०२५५१	२२६००६
चीनी के बर्तन	१२११९५८	११६६२३०	६६८०८६
शीशे, चिमनी, ग्लास आदि	४३५७०१८	२९९०६९४	१९४७०३१
छाता वगैरह	७६१०६	२०५४४१	७५९६९
खेलौने	६७७७०७	९३२०९३	५१० ७४

यदि हम स्वदेशी होते और सरकारी सहायता से हम कल कारखाने खोल और चला सकते तो कितना रुपया हम देश का बचा सकते थे? अब भी यदि हम और हमारी सरकार चेते तो हम बहुत कुछ कर सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युद्ध से लाभ।

इस समय संसार-चक्र बड़ी तेज़ी से घूम रहा है, मिन्टों में वे विचार फैल रहे हैं जिनको फैलने में सदियां बीत जातीं, उन्नति वह धड़ाधड़ होती जा रही है जिसके लिए संसार को सहस्त्रों वर्ष की आवश्यकता होती। यह सच है कि इस युद्ध में प्रायः ६००००००० से अधिक मनुष्य मर चुके हैं और नेपोलियन के यूरोपीय महाभारत में ४० लाख से अधिक नहीं मरे थे किन्तु इसके साथ ही साथ यह भी सत्य है कि इन्हीं तीन चार वर्षों में संसार में वे परिवर्तन हुए हैं और होते जा रहे हैं जिनका इन मृत वीरों के जीवनकाल में हो जाना असम्भव था। भीषणता के साथ ही साथ

युद्ध का दूसरा चित्र

भी है। युद्ध के कारण या युद्ध के फल स्वरूप संसार में अवर्णनीय सामाजिक उन्नति हुई है। सामाजिक विचारों, उद्देश्यों और कृतियों में १६१४ के संसार से १६१८ का संसार बहुत आगे है।

राजनैतिक पथ

में युद्ध जातीयता (Recialism) को—जिसका अर्थ जाति और जातीयता को पूर्ण रूप से स्वतन्त्र बनाना है—पुष्ट कर रहा है। पोलैंड, फिनलैंड तथा अन्य छोटी छोटी जातियां स्वतंत्र हो गई हैं या स्वतंत्र होने के लिए तैयारियां कर चुकी हैं। स्वतंत्रता के प्राप्त होते ही उनका सुख-स्वप्न चरितार्थ हो जायगा। इटली की स्वतंत्रता, जर्मन स्टेट्स का ऐक्य, बालकन राष्ट्रों की स्वतंत्रता जातीयता का फल है। यही राष्ट्रीय भाव इस समय यूरोप तथा संसार का शासन कर रहा है। राजनैतिक उन्नति का दूसरा चिह्न हम लोगों को आधुनिक राष्ट्रीय भाव और राष्ट्रीय उद्देश्यों में दिखाई दे रहा है। चार वर्ष पहिले के गवर्नमेंट के कर्तव्यों और उद्देश्यों में भीषण परिवर्तन हो गया है और यह कहना कि वर्तमान राष्ट्र-भाव (National idea of the States) बिलकुल नया है असंगत नहीं है। राजनैतिक इतिहास में इससे पहिले जातियों का स्वदेश की मर्यादा की रक्षा के लिए इस प्रकार सर्वस्वत्याग नहीं देखा गया है। राष्ट्र के लिए ऐसा अनोखा त्याग इस बात का सुबूत है कि राजनैतिक-समाज उन्नति के पथ पर अग्रसर हो रहा है। युद्ध प्रत्यक्ष रूप से और साफ २ घोषणा कर रहा है कि राष्ट्रीय भावों की उपेक्षा कर अंतर्राष्ट्रीय भावों का प्रचार व्यर्थ और मूर्खतामय है क्योंकि अंतर्राष्ट्रीय समाज की स्थिति राष्ट्रीय भावों और उनकी स्वतंत्रता पर अवलम्बित है। यह साफ साफ उन्नति का द्योतक है।

ज़ारिस्म या निरंकुश शासन

के खण्डहरों में प्रजातंत्र के महल की नींव भी राजनैतिक उन्नति का प्रत्यक्ष प्रमाण है। रूस सदा ज़ार और ग्रैंड ड्यूक्स से—जो कि प्रजा के स्वत्वों को कुचलते और उनके साथ भेड़ बकरियों का सा व्यवहार करते थे—शासित होता था। ज़ार बड़ी निर्दयता से प्रजा को सताते थे और पाशविक शक्ति उनकी इतनी चढ़ी बढ़ी थी कि अन्य राष्ट्र उनके भय से त्रस्त रहते थे कि वे उनके भूमि पर कब्ज़ा न कर लें या हीन राष्ट्रों पर कब्ज़ा कर अपनी शक्ति और न बढ़ा लें। इस युद्ध ने निरंकुश शासन की जड़ खोद डाली है और साथ ही साथ रूसी प्रजा को सुशासन के पथ में ला बैठाला है। पोलैण्ड, फिनलैण्ड स्वतंत्र होंगे और साइबीरिया में भी अब सभ्यता के सूर्य की किरणें पहुंच सकेंगी। चाहे और कुछ भी न हो किन्तु अब यह निश्चित है कि इस युद्ध ने

८०००००००० पूर्वीय आत्माओं

को स्वतंत्र कर दिया है और साथ ही साथ रूसी प्रजा को ज़ार के पंजे से निकाल बाहर किया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्थिक दृष्टि

से हम लोग इस सत्य से आँखें नहीं फेर सकते कि इस युद्ध के कारण बहुत से देशों ने उन वस्तुओं का बनाना आरंभ कर दिया है जिनको वे पहिले नहीं बनाते थे। अन्तर्राष्ट्रीय Division of Labour कार्य-विभाग को इस-से हानि अवश्य पहुंची है। यह भी सत्य है कि सस्ते से सस्ते मूल्य पर जो वस्तु एक देश में बन सकती थी वे अब दूसरे देशों में तैयार होती हैं किन्तु इसके साथ ही साथ यह छोटी बातें नहीं हैं कि देशों की किसी वस्तु को बनाने या तैयार करने की बपौती को धक्का पहुंच गया है और दूसरे देशों में वही चीज़ें अब सस्ते दामों में और अधिकता में बनने लगी हैं। अन्तर्राष्ट्रीय कार्य-विभाग का अंध से अंध पक्षपाती और कट्टर से कट्टर समर्थक भी यह नहीं कह सकता कि यह बात कि जो Machines कलें पहिले केवल इङ्गलैंड में बनती थीं अब जर्मनी में बहुतायत से बन रही हैं या यह कि जापान की कपड़ों की मिलों ने पूर्वीय बाज़ारों से इङ्गलैंड के व्यापारियों को हटा दिया है अवनति का पथ-प्रदर्शक है। Chemicals केमिकल्स का बनाना युद्ध के पहिले जर्मनी की बपौती थी किन्तु इस युद्ध के कारण वे अब इङ्गलैंड, फ्रांस, एमेरिका और जापान में बहुतायत से तैयार होने लगे हैं। इन देशों की यह

आर्थिक जागृति

है और यह साफ़ साफ़ उन्नति है। हम यह मानते हैं कि absolute self support अनन्य रूप से अपनी सभी आवश्यक वस्तुओं का निर्माण एक असंभव या अवांछनीय बात है क्योंकि Absolute Economic Indipendence पूर्ण-आर्थिक-स्वतंत्रता या किसी भी अपनी आवश्यक वस्तु के लिए किसी अन्य देश का मुंह न ताकना—यदि यह संभव भी हो तो—जातियों के अन्तर्राष्ट्रीय संबंध को ढीला कर देगा किन्तु इसके साथ ही साथ हम यह भी मानते हैं कि यदि जातीय उद्योग-धंधों की वृद्धि से संसार में एक ही वस्तु बहुत से देशों में सस्ते से सस्ते मूल्य पर तैयार होने लगे और संसार के निवासियों को वह सस्ते दामों पर मिलने लगे तो यह उन्नति है। जापान और एमेरिका युद्ध ही के कारण इस समय अन्य राष्ट्रों के महाजन हो रहे हैं यह भी आर्थिक उन्नति का बहुत बड़ा सबूत है।

यू-बोट और जल-मग्न नौका

के होते हुए भी संसार में इस समय व्यापारी जहाज़ों की संख्या दिन प्रति बढ़ती जा रही है यह बात भी कम महत्व की नहीं है। हवाई जहाज़, रेल, ट्रैम तथा अन्य ले जाने ले आने वाली चीज़ों में जो परिवर्तन हो रहे हैं उनसे युद्ध के समाप्त होने पर व्यापार को जो सहायता मिलेगी वह अकथनीय है।

वैज्ञानिक-क्षेत्र

में भी युद्ध के समय में भी बड़ी उन्नति हुई है। केमिकल में जर्मनी, एमेरिका, जापान, ग्रेटब्रिटेन और फ्रान्स ने अवर्णनीय उन्नति की है। अस्त्र शस्त्र नित नये रोज तैयार होते जा रहे हैं। वायु पर अधिकार भी अब केवल किस्से कहानी की ही बात नहीं है। अब यह संभव है कि विलायत से मनुष्य भारत केवल ६० घंटे में पहुंच सकेगा। संसार में यह हो रहा है और युद्ध के कारण संसार ने यह उन्नति की है।

"वासुदेव"।

कोरी बातें या कुछ काम भी।

वेल्स बेपटिस्ट टबरनकेल लंदन में व्याख्यान देते हुए मि० लायड जार्ज ने कहा है कि हम लोगों को कलंकरहित पवित्र शान्ति के लिए प्रयत्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना या तैयार होना चाहिये। संसार प्रत्येक मनुष्य और जाति के रहने के लिए उपयुक्त होना चाहिये। संसार में कुत्सित कुबेर पूजा, अराजकता और पाशविक शक्ति की प्रधानता के लिए स्थान न होना चाहिये। साम्राज्य का भविष्य प्रजातंत्र के सांचे में ढल चुका है। संगठन के मसले मातृभाव और मित्रता के वायुमंडल में निश्चित होने चाहिये………"

प्रश्न इतना ही है कि आयर्लैंड और भारत प्रधान सचिव के संसार में हैं या नहीं?

माटेगू-चेम्सफोर्ड-सुधार।

(गतांक से आगे।)

"बड़ा शोर सुनते थे पहलू में दिल का।
जो चीरा तो एक क़तरये खून निकला"॥

पिछली संख्या में हम यह दिखला चुके हैं कि भारतवासियों का "वोट" के व्यवहार के ज्ञान का अभाव या उनकी शिक्षा-हीनता उनको स्वराज्य के अधिकार से वंचित नहीं रख सकती। वास्तव में आजकल जिसे हम ज्ञान समझते हैं वह या यूनिवर्सिटी की डिगरियां नहीं वरन् स्वराज्य का उपभोग ही किसी जाति को स्वराज्य के उपयुक्त बना देता है। इस समय हमको यह दिखलाना है कि

जातिभेद या मतमतान्तर के झगड़े

तथा अन्य सहस्रों ही विभेद करनेवाली या ऐक्य की जड़ पर कुठाराघात करनेवाली बातें हमको स्वराज्य के अधिकार के लिए निकम्मा नहीं सिद्ध कर सकतीं। यह सत्य है कि भारत में अनेक जातियाँ और फिर्के हैं, यह भी सत्य है कि यहां अनेक मत हैं जिनके कारण अँगरेज़ी शासनकाल में पचास, सौ वर्षों में एकाध बार झगड़ा हो जाया करता है किन्तु इन दो सत्यों के साथ ही साथ उतना ही सच्चा और महत्व का यह भी सत्य है कि सब कुछ होते हुए भी एक विचित्र प्रकार के ऐक्य के सूत्र में भारतीय जनता बँधी हुई है, हिन्दुओं का तो कुछ कहना ही नहीं, जो राम, कृष्ण, शिव या गंगा के नाम पर एक सूत्र में ग्रंथित हैं, जो तुलसी, पीपल और बट वृक्ष की उपासना करते हैं, हिन्दू मुसलमान भी बहुत दिनों से साथ साथ रहते रहते सहस्रों विभेद करनेवाली बातों के होते हुए भी भाई या अच्छे पड़ोसियों की भांति रहते हैं। ग्रामों में जाकर देखिये जहां अलीगढ़ का प्रकाश नहीं पहुंचा है तब आप जान सकेंगे कि हिन्दू मुसलमान किस तरह रहते हैं, वे मज़हब के नाम पर, फिर्के के नाम पर लड़ते रहते हैं या पड़ोसियों की भांति भाईचारा का निबाह करते हैं। इसके सिवाय यह निर्विवाद सत्य है कि संसार की जातियों में भारतवासी सब से अधिक Law-abiding क़ानून की पूजा करनेवाले और उसके अनुसार रहनेवाले हैं। यह सत्य है कि कभी मज़हबी झगड़े हो जाया करते हैं किन्तु उसका एकमात्र कारण अज्ञान और पराधीन होना है जो

नौकरशाही की देन

है। जब तक "नौकरशाही" उनको अज्ञान तिमिर से निकालना नहीं चाहती, जब तक नौकरशाही उनकी नज़रों में सार्वजनिक भलाई, देशप्रेम, जननी जन्मभूमि की सेवा और स्वतंत्रता के प्रेम को सर्वोत्तम मान नहीं दिखवा देती हमको इसके कहने में संकोच नहीं कि हम उनके जातिगत या मतमतान्तर के झगड़ों को हीन समझने के लिए प्रस्तुत नहीं हैं। हिन्दू मुसलमानों में जो कभी मत के नाम पर या किसी प्रकार से कभी झगड़े हो जाया करते हैं उनसे जो हम भारतवासियों को दुःख होता है वह दूसरों को नहीं हो सकता, उससे जो लज्जा हमको आती है वह हम ही जानते हैं किन्तु इसके साथ ही साथ—औरों को हो या नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किन्तु—हमको यह सन्तोष भी होता है कि अभी जाति बिलकुल निर्जीव नहीं हो गई है, अभी भी, इस हीन दशा में १५० वर्ष की गुलामी के बाद भी उसके धमनियों में कहीं कहीं—शुष्क दशा में ही सही किन्तु—खून शेष है। वह मनुष्य मनुष्य नहीं, वह जाति जाति कहलाने के योग्य नहीं जो विशेष अवसर पर किसी विशेष बात के नाम पर मर मिटने को तैयार न हो सके। जीती जागती जाति का यह चिह्न है। इतने दिन की गुलामी के बाद भी हिन्दू मुसलमान कभी लड़ लेते हैं, इतना जोश उनमें आजाता है कि अपने को सार्वजनिक प्रश्न में लीन कर देते हैं—वह प्रश्न बेहूदा, निस्सार हो इसका प्रश्न नहीं—यह बिलकुल ही असन्तोषप्रद नहीं है। इस झगड़े को बन्द करने का सीधा और सर्वोत्तम उपाय यह था और है कि शिक्षा द्वारा उनके आदर्श उच्च कर दिये जाते, उनको बतला दिया जाता कि झगड़ा करने के लिए उपयुक्त कारण दशहरा, मोहर्रम, बकरीद या गोहत्या नहीं वरन् सार्वजनिक भलाई, देशप्रेम, समता और स्वराज्य है।

शान्ति के उपासक जो चाहे कहें हम युद्ध को विकाश के लिए अनिवार्य रूप से आवश्यक समझते हैं, बहुत से ऐसे गुण मनुष्यों में आवश्यक हैं जो युद्ध के द्वारा पैदा होते हैं। पुराने समय में, सभ्यता की हीन श्रेणियों में या जातियों को हीन दशा में ये युद्ध पहिले किसी स्त्री के नाम पर और बाद में

धर्म और मत

के नाम पर होते थे। इस्लाम के नाम पर मुसलमानों ने यूरोप पर विजय प्राप्त की, यूरोप निवासी Hearth और Home घर और बाल बच्चों की रक्षा के नाम पर भी कुछ न कर सके किन्तु कुछ ही समय बाद उन्हीं लोगों ने चर्च के नाम पर मुसलमानों को यूरोप में त्रस्त कर दिया, और मुसलमान भाग खड़े हुए किन्तु अब जो स्पेनिश या मुसलमान समझ गये हैं कि दोनों के पैगम्बर पूज्य हैं, क्राइस्ट जैसे वैसे मोहम्मद वे अब इस्लाम या चर्च के नाम पर नहीं लड़ सकते अब वे Fraternity, Liberty Equality, समता, स्वराज्य, स्वदेश या और ही किसी उच्च आदर्श के नाम पर ही वीरता दिखला सके तो दिखला सकते हैं। शासकों को यदि यह झगड़ा बुरा लगता है तो उनका धर्म था कि शिक्षा द्वारा वे हिन्दू मुसलमानों को इस योग्य बना देते कि वे जान लेते कि लड़ने के लिए मत या हठधर्मी उपयुक्त कारण नहीं हैं। जिसमें हम ऐसा कर सकें, जिसमें हम अपने हिन्दू और मुसलमान भाइयों को यह समझा सकें कि बकरीद, मोहर्रम, दशहरा आदि से तुम्हारा जीवन, तुम्हारा मेल अधिक मूल्य की वस्तु है और यह कि संसार में तुम्हारे मरमिटने के लिए चीज़ें और हैं और इस प्रकार ये झगड़े बन्द कर सकें हम यह चाहते हैं कि अधिकार हमारे हाथों में हों। कोई भी पढ़ा लिखा या समझदार हिन्दू या मुसलमान कभी भी आपस के झगड़े को नहीं पसन्द करता, उसका सदा यह प्रयत्न रहता है कि यह लज्जाजनक बात न हो जाय किन्तु अन्त में वह देखने को विवश हो जाता है कि उसकी इच्छा कोई चीज़ नहीं।

अज्ञान झगड़ों का कारण अवश्य है किन्तु यह सभी कुछ नहीं है। जब तक नौकरशाही के ध्यान में

DEVIDE AND RULE

"भेद फैलाओ और राज्य करो" शासन की सर्वोत्तम मंत्र है और जब तक हमारे शासक जाति और मत के झगड़े को भारतीय शासन को सहज करने का बीजमंत्र समझते हैं तब तक ऐसे झगड़ों का होना नहीं वरन इतनी कम संख्याओं में और यदा कदा होना ही बड़े आश्चर्य की बात है। इसके सिवाय यदि इन झगड़ों से कोई जाति स्वराज्य के अनुपयुक्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिद्ध होती है तो इंगलैंड, एमेरिका, कैनाडा आदि देशों में तुरन्त ही विदेशीय शासन स्थापित होना चाहिये। पुराने समय का तो कुछ कहना ही नहीं आज भी हिन्दू मुसलमानों की अपेक्षा कहीं बुरी तरह से आयर्लैंड में प्रोटेस्टेन्ट और कैथलिक लड़ रहे हैं। यह भी इतिहास जानने-वालों से छिपा नहीं है कि इंगलैंड ने प्रोटे-स्टेन्ट धर्म के नाम पर ही सदा आयरिश कैथलिकों को स्वत्वविहीन रक्खा था यहां तक कि १८२९ के पहिले कोई आयरिश पार्लामेंट का सदस्य भी नहीं हो सकता था। "खूनी मेरी" के समय से आजतक में इंगलैंड में धर्म और मत के नाम पर क्या नहीं हुआ? किन्तु इससे क्या इंगलैंडवाले अपना प्रबन्ध आप नहीं कर सके? झगड़े का अन्त कब और कैसे हुआ? जब लोगों में शिक्षा का कुछ प्रचार हुआ, वे मतमतान्तर के दायरे से ऊँचे उठ गये, जब पार्लामेंट के प्रभावशाली सदस्य प्रोटेस्टेन्ट होते हुए भी कैथलिक धर्म के विरोध के भाव के ऊपर उठ गये, जब उनमें शिक्षा का प्रचार हो गया, जब अधिकार के व्यवहार और स्वराज्य ने उनको शिक्षा दी कि धर्म का अर्थ भाइयों से झगड़ना, उनसे घृणा करना, उनको शत्रु समझना नहीं है, वरन् उनको अपने समान समझना, उनकी सेवा करना है, जब उनको यह मालूम हो गया कि धर्म और ईश्वर-पूजा का अर्थ उसकी सृष्टि की सेवा और वृद्धि है। जब उन लोगों ने समझ लिया कि सच्चा धर्म देश-सेवा, देश की दशा सुधारना, उसे सुखी और समृद्धिशाली बनाना है तभी इंगलैंड से भीषण मत के झगड़े मिट गये। एक दृष्टि से तो आज भी यह कहा जा सकता है कि आयरिश होमरूल का विरोध अल्स्टरनिवासी केवल धर्म-भेद के कारण ही कर रहे हैं और हम मानें या न मानें भविष्य के निष्पक्ष ऐतिहासिक को यह स्वीकार करना पड़ेगा कि आयर्लैंड को कैथलिक होने के कारण अब तक बहुत दुःख उठाना पड़ रहा है। किन्तु थोड़ी देर के लिए यदि यह मान भी लिया जाय कि हिन्दू मुसलमानों में नित्य प्रति भीषण झगड़े होते रहते हैं, इतना ही नहीं हिन्दू हिन्दू और मुसलमान मुसलमान भी आपस में जाति और धर्म के नाम पर दिन रात लड़ते रहते हैं तो इससे यह कहां और कैसे सिद्ध होता है कि वे

स्वराज्य के योग्य नहीं?

साधारण विवेक यह कहता है कि जब प्रबन्ध उनके ही हाथ में होगा, जब मामला दो दलों में ही तय होने को होगा और किसी तीसरे दल की टाँग भी उसमें न अड़ी होगी तो प्रसन्नता से या अप्रसन्नता से, बुद्धिमत्ता से या बेवकूफी से दोनों ही दल के मनुष्यों को जिनके हाथ में प्रबन्ध का उत्तरदायित्व होगा कोई न कोई उपाय ऐसा निकालना ही होगा जिससे झगड़ा न हो। प्रबन्धकर्ता दोनों ही दल के मनुष्य होंगे, वे दोनों दलों की बातों को भले प्रकार समझ सकेंगे, झगड़े के भाव को समझ सकेंगे और यह समझ सकेंगे कि उसमें कितना अंश निरर्थक है। इसके साथ ही साथ प्रबन्ध-कर्ताओं में उनकी जातिवालों का विश्वास होगा और सब से बड़ी बात यह होगी कि प्रबन्धकर्ता अपनी जाति के झगड़ा करनेवालों को समझा और दबा सकेंगे। तीसरे दलवालों के लिए यह सब असंभव है और इसी कारण से झगड़े हो जाया करते हैं। इसके साथ ही साथ यह भी होगा कि यदि कोई अफ़सर झगड़ा कराना भी चाहेगा जैसा कि अकसर हो जाया करता है तो झगड़ा न हो सकेगा। बात कड़ुई है किन्तु साथ ही साथ सत्य भी है कि देशी रियासतों में हिन्दू मुसलमानों के झगड़े नहीं होते। आज तक हैदराबाद, ग्वालियर, बीकानेर, काश्मीर आदि स्थानों में ऐसे झगड़े सुने नहीं गये। क्या मि० मांटेगू और ला० चेम्सफोर्ड ने इसका कारण सोचते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का कष्ट उठाया था ? थोड़ी देर के लिए यदि उपर्युक्त बातों की सत्यता को हम न मानें तो भी यह नहीं कहा जा सकता कि हिन्दू मुसलमान लड़ते रहते हैं या लड़ते रहेंगे और इसलिए स्वराज्य स्थापित करना भयावह होगा। उसी लार्ड डरहम की रिपोर्ट को देखने से जिसके समान रिपोर्ट यह बतलाई जाती है यह पता चलता है कि कैनाडा में जिस समय लार्ड डरहम जांच करने गये थे अङ्गरेज़ों और फ्रांसीसियों की दशा बहुत बुरी थी। कभी कभी झगड़ा हो जाना तो दूर रहा उनमें मनमोटाव इतना बढ़ा हुआ था कि आपस का व्यवहार तो दूर रहा उनमें आपस की बोल चाल भी बन्द थी। सरजेम्स क्रीग ने अङ्गरेज़ों और फ्रांसीसियों के वैमनस्य का वर्णन करते हुए लिखा था:—

"The line of distinction between us is completely drawn friendship, cordiality are not to be found, even common intercourse scarcely exists."

"पार्थक्य की रेखा पूरी तौर से खिंच गई है, मित्रता, भाईचारा का नामोनिशान नहीं है, आपस की बोलचाल भी बन्द है", लार्ड डरहम ने भी अपनी रिपोर्ट में लिखा था—"I found a struggle not of principles but of races अर्थात मैंने लड़ाई सिद्धान्तों की नहीं वरन् फिर्के की पाई किन्तु यह सब होते हुए भी लार्ड डरहम ने स्वराज्य को ही

दशा-सुधार की महौषधि

समझा और उन्होंने कैनाडा में तुरन्त स्वराज्य स्थापित कर दिया। हम मि० मांटेगू और लार्ड चेम्सफोर्ड से पूछ सकते हैं कि क्या आज के हिन्दू और मुसलमानों के झगड़े उस समय के अङ्गरेज़ों और फ्रान्सीसियों के झगड़ों से बढ़े हुए हैं? वहां आपस में बोलचाल बन्द थी यहां मन्तव्य कांग्रेस और मुस्लिम लीग द्वारा निश्चित हुआ करते हैं यह क्या बिलकुल निरर्थक है? जिस दृष्टि से देखिये आपको यही सत्य सिद्ध होता दिखाई देगा कि हिन्दू मुसलमान के झगड़ों के नाम पर भारत में स्वराज्य के स्थापित करने में विलम्ब करना युक्तियुक्त नहीं और अन्याय सङ्गत है।

"सुशासन, सुव्यवस्था और शान्ति

की फिक्र जितनी सरकार को है उतनी भारतवासियों को नहीं और इनकी व्यवस्था जितनी अच्छी रीति से अङ्गरेज़ अफसर कर सकते भारतवासी नहीं कर सकते"। रिपोर्ट के रचयिताओं की इस दलील को पढ़कर कभी हँसी और कभी क्रोध आता है। भारत भारतवासियों का देश है कुशासन, कुव्यवस्था और अशान्ति से हानि उनको पहुंचेगी, पीड़ा उनको होगी, घरबार उनका लुटेगा और जीवन उनका संकट में पड़ेगा और इसलिए सुशासन सुव्यवस्था और शान्ति की फिक्र उनको न होगी, इनकी फिक्र होगी हमारे अङ्गरेज़ अफ़सरों को जिनको अधिक से अधिक भेड़ से नहीं वरन् भेड़ के बाल-से मतलब हो सकता है और इस की फिक्र हो सकती है कि भेड़ उनके कब्ज़े में बनी रहे और सीधे से बाल कटवा लिया करे। मि० मान्टेगू और ला० चेम्सफोर्ड मानें या न मानें किन्तु संसार के बुद्धिमान और मूर्ख दोनों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही श्रेणी के मनुष्य इस सत्य से मुंह नहीं फेर सकते कि भारतवासियों को भारत से जितना प्रेम हो सकता है, उसके सुख दुःख से जितना सुख दुःख उनको हो सकता है और उसके सुशासन, सुव्यवस्था और शान्ति से जितना घना संबन्ध उनका है उतना अङ्गरेज़ अफसरों का नहीं हो सकता ।

ऐसी अवस्था में सहसा प्रश्न यही होता है कि जब सुख दुःख भारतवासियों को अधिक होगा तो उसकी फिक्र अधिक अफसरों को कैसे हो सकती है ? साधारण बुद्धि तो यही कहती है । व्यवस्था के संबन्ध में भी यही कहा जा सकता है कि जब सुशासन और शान्ति और सुव्यवस्था से भारतवासियों का घना संबन्ध अधिक है तो इसकी व्यवस्था वा प्रबन्ध भी वेही अच्छा कर सकते हैं और इसकी फिक्र भी उन्हीं को अधिक होगी । भारतवासी कोई बच्चे नहीं कि अपना भला बुरा वे स्वयम् न सोच सकें न अङ्गरेज़ देवता ही हैं कि भारतवासियों के सुख दुख का भारतवासियों की अपेक्षा उनको अधिक ख्याल हो ।

(अपूर्ण)

आवश्यकता है

एक योग्य सहकारी सम्पादक की जो अनुभवी हो, शुद्ध हिन्दी लिख सकता हो और जो अङ्गरेज़ी से अनुवाद भी भले प्रकार कर सकता हो । वेतन योग्यतानुसार दिया जायगा ।

मैनेजर मर्यादा ।

अभ्युदय प्रेस, प्रयाग में बद्रीप्रसाद पाण्डेय के प्रबन्ध से छपकर प्रकाशित हुई ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२००) रुपये दूंगा

बिना औषध के जन्मभर को रोग दूर।

स्वप्नदोष और शीघ्रपतन बड़े भयङ्कर रोग हैं। स्वप्नदोष नौजवानों के शरीर और दिमाग़ को मिट्टी कर देता है, याददाश्त का तो यह दुश्मन है। शीघ्रपतन गृहस्थों का घातक है समय पर लज्जित होने से लोग मर जाना अच्छा समझते हैं, सन्तान भी नहीं होती। मुझे एक ऐसी क्रिया-विधि प्राप्त हुई है जिससे ये दोनों रोग जन्मभर के लिए जाते रहते हैं। यह कोई दवाई नहीं केवल एक साधन है इस पर भी यदि प्रयोग करने पर रोग दूर न हो तो २००) रु० दंड दूंगा जोकि आप अदालत द्वारा मुझसे वसूल कर सकते हैं। इसके बताने की फ़ीस राजाओं से १००) धनवानों से ५) सर्व साधारण व विद्यार्थियों से २) रु०। डाक मह० ।) आना।

नोट—उक्त क्रिया पत्रद्वारा लिखकर बताई जायगी, साथ ही एक बूटी भी भेजी जायगी जिसका सेवन एक सप्ताह तक आवश्यक है।

प्रकाशक—

चन्द्रशेखर शर्मा धर्मोपदेशक,

(नं० २) पो० जलाली ज़ि० अलीगढ़।

'मर्यादा' की विशेष संख्याएँ।

कुछ प्रतियां बच रही हैं। जिन सज्जनों को मंगाना हो उनको शीघ्रता करनी चाहिये।

(१) स्त्रियों की विशेष संख्या, जुलाई १६१२ ॥=)

(२) स्वराज्य संख्या १)

(३) दक्षिण अफ्रीका की संख्या, दिसम्बर १६१२ ।=)

मैनेजर "मर्यादा", प्रयाग।

महात्माओं के चित्र।

हमने बड़े प्रयत्न से भारत के मान० नेताओं देशभक्त महिलाओं तथा चिरस्मरणीय महानुभावों के चित्र तैयार किये हैं। लीजिये, इन आदर्श महात्माओं के चित्रों से घरों को पावन और सुशोभित कर नेत्रों को सफल कीजिये। चित्रों की सूची निम्नलिखित है:—

देशोद्धारक स्वर्गीय मि० गोखले।
मान० पं० मदनमोहन मालवीय।
भारत के वयोवृद्ध ऋषि दादा भाई नौरोजी।
सर फ़ीरोजशाह मेहता।
लोकमान्य मि० तिलक।
देश के सच्चे सपूत महात्मा गांधी सपत्नीक।
श्रीमती एनी बीसेन्ट।
प्रसिद्ध विदुषी श्रीमती सरोजनी नायडू।
महात्मा गांधी के प्रिय शिष्य भारत के शुभ-चिन्तक मिस्टर पोलक।
साहित्य-सम्राट् श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुर।
स्वर्गीय महादेव गोविन्द रानाडे।
विद्यानुरागी स्वर्गीय सर सैयद अहमद खां।
मान० विशुननारायण दर।
मान० गोकर्णनाथ मिश्र।
श्रीमान् बाबू गङ्गाप्रसाद वर्मा।
मि० अरंडेल। मि० वाडिया।
आ० डा० सतीशचन्द्र। सर सुब्रह्मण्य ऐयर।
श्रीकृष्णस्वामी ऐयर। मि० बोमन जी।
लाला लाजपत राय सुरेन्द्रनाथ बनर्जी।

इन सब चित्रों का इनलार्जमेंट १०×१२ माउन्टेड १४×१८ दाम प्रत्येक का १०)।

केबिनट साइज़ के प्रत्येक चित्र का दाम ॥।) मर्यादा के ग्राहकों से डाकखर्च और पैकिंग माफ़। औरों से नहीं।

१ अक्टूबर १६१८ के बाद बढ़ा दिये जायँगे प्रत्येक चित्र इसी ता० तक ।॥) में मिलेगा बाद का दाम १) हो जायगा।

पता=पी० एन० वर्मा एन्ड कंपनी,

मेडेलिस्ट फोटोग्राफर्स, जानसेनगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूचना।

संयुक्तप्रांत की सरकार की यह आज्ञा जिलाधीश की मारफत ज्ञानमण्डल कार्यालय में आई है कि जबतक सरकार की विशेष अनुमति न मिले तबतक मांटेगू-चेम्सफोर्ड की रिपोर्ट के हिन्दी अनुवाद का प्रकाशन बन्द रक्खा जाय। ग्राहकों से विनयपूर्वक निवेदन है कि हम उक्त पुस्तक को न भेज सकने के लिए क्षमा किये जायँ। इस सरकारी आज्ञा का कारण हमें बताया नहीं गया है।

सञ्चालक
ज्ञानमण्डल कार्यालय, काशी।

उदरामृत।

अगर आपको भूख कम लगती हो अथवा मन्दाग्नि, अजीर्ण, अफरा, पेट दर्द, कब्ज जी मचलाना, खट्टी या जली हुई डकारों का आना, दस्त का साफ न आना, वायुगोला, बवासीर तिल्ली, पेचिश, हैजा, संग्रहणी आदि पेट का कोई भी रोग हो तो हमारा जगत् प्रसिद्ध स्वादिष्ट उदरामृत चूर्ण व्यवहार कीजिये; तत्काल गुण दिखाता है, भूख तो खूब ही लगाता है। मूल्य फी शीशी ॥=) दर्जन ५॥।) डा० म० २ तक ।-) १२ पर ॥।-)

पता--ब्राह्मी औषधालय

(डी ब्रांच) पो० जलाली, जिला अलीगढ़।

गांधी-ग्रन्थ-माला

के पैम्फलेटों को मँगाकर पढ़िये। बहुत लाभ होगाः—

सत्याग्रह—लियो टालस्टाय -)
समय नहीं है—कृष्णकान्त मालवीय =)
साधन मौजूद नहीं—कृष्णकान्त मालवीय =)
निष्क्रिय· प्रतिरोध नहीं सत्याग्रह—
महात्मा गांधी -)

मैनेजर "मर्यादा" प्रयाग।

गर्म कपड़ा मुफ्त।

हम प्रत्येक शहर में केवल एक आदमी को पूरे सूट के लिए देशी काश्मीरे का एक सुन्दर थान बिना मूल्य देना चाहते हैं। इच्छा रखनेवाले शीघ्र लिखें। पवित्र केसर १॥), असली कस्तूरी ३५), सुर्मा ममीरा ३), शुद्ध शिलाजीत ॥), तो०, अंगूरी हींग ५), सुगंधित स्याह जीरा ३), गुलबनफशां ४), पवित्र धूप २), और उत्तम शहद १॥), सेर हम से मंगावें।

पताः—काश्मीर स्टोर्स नं० ४० रावलपिंडी

आत्मा का रक्षण।

मदनमंजरी गोलियों के सेवन से ही होता है कारण उसमें वीर्य विकार, धातुस्राव व कमजोरी को नाश करने के गुण हैं। दस्त साफ लाकर भूख लगाती है, वीर्य को शुद्ध कर पुष्ट करती है, शरीर को नीरोगी कर दीर्घायु करती है, चेहरे को प्रफुल्लित करती है मूल्य ४० गोली का १)

नयनामृत सुरमा।

आंखों के तमाम रोग को दूर कर ज्योति को बढ़ाता है, नेत्र के लिए इससे बढ़ कर सुरमा दूसरा नहीं। का० काला तो० १ की रु० १।) सफेद तो० १ की रु० १०) पाव तोले का रु० २॥) सूचीपत्र मुफ्त मंगवालो।

राज्यवैद्य नरायणजी केशवजी,
नं० १८७, कालबादेवी रोड, बम्बई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुप्रसिद्ध डोंगरे का बालामृत पीने से

छोटे बच्चे ताकतवान् होके उनका वज़न बढ़ जाता है] और [वह मधुर होने के कारण बच्चे बहुत खुशी से पीते हैं।

शीशी का दाम १२ आना,
डाक म० ४ आना।

के० टी० डोंगरे कं० गिरगाँव—बम्बई।

हिन्दी में स्वराज्य।

स्वराज्य-सम्बन्धी पुस्तकें, साहित्यिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक, जीवनी, उपन्यास, जिस प्रकार की पुस्तकों की आपको आवश्यकता हो "मर्यादा पुस्तक-भंडार" को लिखिये, हिंदी की सभी प्रेसों की प्रसिद्ध पुस्तकें घर बैठे आपको पहुंच जायँगी। कुछ पुस्तकों के नाम :—

गोखले के व्याख्यान	१।)	स्वराज्य-माला	२)
जापान रहस्य	॥=)	चतुर जापानी	१॥≤)
कर्मक्षेत्र	।॥=)	अरण्य-वासा	१।)
लो० तिलक की जीवनी	≡)	मोहिनी	॥=)
ऐनी एनी बेसेन्ट	।=)	आर्थिक सफलता	।=)

तिलक के १२ व्याख्यान १)

'मर्यादा पुस्तक-भंडार,' प्रयाग।

रेचनवटी।

आज कल ऐसे मनुष्य बहुत कम होंगे जिन्हें कब्ज़ की शिकायत न हो। दस्त साफ न होने से सिर व पेट में दर्द अथवा भारीपन, चित्त में ग्लानता, भूख व स्मरणशक्ति कम हो जाना आदि बहुत से रोग उत्पन्न हो जाते हैं। एक गोली रात को खालेने से प्रातःकाल एक दस्त साफ़ हो जाता है। दाम एक डिब्बी ॥) वी० पी० से ॥।)।

पं० धरणीधर वैद्य,

[illegible] (…० पो०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गृहस्थमात्र के काम की तत्काल फ़ायदा करनेवाली अमूल्य दवा।

वर्षों से दुनियाँ में विख्यात सरकार से रजिस्टरी की हुई हज़ारों प्रशंसापत्र प्राप्त।

"सिर से लेकर पाँव तक किसी रोग में देखो, जादू का असर करती है बूढ़ों, बच्चों, जवानों, पुरुषों तथा स्त्रियों के कुल रोगों को जो घरों में होते रहते हैं तत्काल फायदा करती है बल्कि पशु पक्षियों के रोगों को भी अच्छा करती है। की० १) रु० । बड़ी शीशी १॥।) वी० पी० ।) । तीन लेने से वी० पी० माफ । १२ लेने से ८) रु० । बड़ी शीशी १५॥।) रु० । वी० पी० माफ । २४ लेने से रोशनी वाच इनाम।

ख़िजाब ! ख़िजाब !!

न्यू ईजाद मनमोहन केशकल्प ।

एक दफ़े के लगाने से भूरे और सफेद बाल भौंरे के रंग के समान काले चमकीले हो जाते हैं। जिल्द पर धब्बा नहीं आता । हाथ काले नहीं होते । विशेष तारीफ यह है कि एक दफा लगाने से जो बाल काले हो जायँगे फिर वह उमर भर सफेद नहीं होंगे । बराबर इस्तेमाल कीजिये कीमत १।) वी० पी० ।-) । तीन लेने से ४) वी० पी० माफ ।

गोरे और ख़ूबसूरत बनने की दवा

सुगंधित फूलों का दूध ।

यह दवा विलायती खुशबूदार फूलों का अर्क़ है। इसे विलायत के एक प्रसिद्ध डाक्टर ने बनाकर अभी भेजा है। इसको ७ दिन बदन और चेहरे पर मालिश करने से चेहरे का रंग गुलाब के समान हो जाता है। बदन से खुशबू निकलने लगती है। गालों के स्याह दाग, मुहासे, छीप, झुर्रियाँ, फोड़ा फुन्सी, खुजली आदि दूर होकर एक ऐसी खूबसूरती आजाती है कि काली रंगत चांद सी चमकने लगती है । जिल्द मुलायम हो जाती है। लगाकर देखो, अपनी प्राणप्यारी को चंद्रमुखी बना लो । दाम एक शीशी १।) वी० पी० ।-) तीन लेने से ४) रु० वी० पी० माफ़ ।

सुगंधित बालों को उड़ानेवाला साबुन ।

बिना किसी तरह के कष्ट के बालों को ५ मिनट में उड़ाकर साफ कर देता है । की० ३ बट्टी के १ बक्स का ॥।) वी० पी० ।) । १२ लेने से २) वी० पी० माफ । तीन दर्जन लेने से रोशनी वाच इनाम ।

पता—जसवन्त ब्रादर्स नं० २, मथुरा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी साहित्य में युगान्तर उपस्थित करनेवाली

"नवजीवन-ग्रन्थमाला" तथा "नवजीवन-निबन्धमाला"

इस समय हिन्दी में ग्रन्थमालाओं की कमी नहीं है। जिस प्रकार, से थोड़े ही दिन हुये सामयिक पत्रों की बरसाती जीवों की तरह सृष्टि हुई थी, उसी प्रकार आजकल ग्रन्थमालाओं के विज्ञापन चारों ओर से निकल रहे हैं। किन्तु यदि हमें सत्य सत्य कहने की आज्ञा दी जाय तो हम यह निःसंकोच कह सकते हैं कि २, ३ ग्रन्थमालाओं को छोड़कर शेष ग्रन्थमालायें सिवाय संख्या वृद्धि के हिन्दी साहित्य का और कोई विशेष उपकार नहीं कर रही हैं। इनकी भी वह ही दशा होगी जो कि क्षणिक उत्साह के साथ निकाले हुये सामयिक पत्रों की थोड़े ही दिन हुये हो चुकी है। इस समय राष्ट्र भाषा की उन्नति और प्रचार करने तथा उसके गौरव महत्व बढ़ाने के लिये गम्भीर विचार युक्त और महत्व पूर्ण मौलिक ग्रन्थों की आवश्यकता है। इसी अभाव की किसी हद तक पूर्ति करने के लिये दीर्घ समय के विचार के पश्चात् हमने "नवजीवन ग्रन्थ-माला" का प्रारम्भ किया है। इस "ग्रन्थमाला" के ग्रन्थों के लेखक अपने अपने विषयों के पंडित होंगे। प्रत्येक विषय की पुस्तक का चुनाव बड़ी सावधानी के साथ किया जायगा। पुस्तकें अधिकांश मौलिक ही प्रकाशित की जायँगी। कोई भी पुस्तक १०० पृष्ठों से कम नहीं होगी। सब पुस्तकों की साइज आकार एक सा ही, डबल क्राउन १६ पेजी रहेगा। हमारा उद्देश्य छोटी बड़ी, महत्व-पूर्ण और साधारण सभी तरह की पुस्तकें प्रकाशित करके संख्या बढ़ाना कदापि नहीं है। हमने यह प्रयत्न राष्ट्रभाषा हिन्दी के द्वारा केवल राष्ट्रीय भावों के प्रचारार्थ ही प्रारम्भ किया है।

इसके साथ ही हमारा निश्चय है कि हम "नवजीवन-निबन्धमाला" भी प्रकाशित करेंगे। इस माला में वह उपयोगी और महत्वपूर्ण सौ, सौ डेढ़ डेढ़ सौ पृष्ठों की पुस्तकें प्रकाशित की जायंगी जिन्हें कि कम पृष्ठों की होने के कारण ग्रन्थमाला में प्रकाशित नहीं किया जायगा। इस निबन्धमाला में भी एक से एक महत्वपूर्ण उपयोगी पुस्तकें प्रकाशित होंगी। इन पुस्तकों की उपयोगिता इनके देखने से ही प्रगट होगी। हमने निश्चय किया है कि "नवजीवन ग्रन्थमाला" के ग्राहकों को जो आठ आना प्रवेश शुल्क देकर स्थायी ग्राहक बनेंगे उन्हें "नवजीवन ग्रन्थमाला" की प्रत्येक पुस्तक सर्वथा बिना मूल्य भेंट दी जायगी। ग्रन्थमाला के प्रत्येक ग्रंथ के साथ निबन्धमाला की भी एक पुस्तक भेज दी जाया करेगी। दोनों मालाओं के ग्रंथ भी एक ही साथ छपा करेंगे। स्थायी ग्राहकों को उनके स्थायी ग्राहक हो जाने के बाद जितने ग्रन्थ छपेंगे वह सब ही लेना आवश्यक होंगे। पहिले छपे ग्रंथ लेना या न लेना उनकी इच्छा पर निर्भर है अनुमानतः वर्ष भर में छः और आठ रुपये के दर्मियान मूल्य के दो या तीन अथवा चार या पांच ग्रंथ प्रकाशित हुआ करेंगे। किसी के स्थायी ग्राहक न रहने पर उनकी भेजी आठ आना प्रवेश फी लौटाई कदापि नहीं जायगी। प्रवेश शुल्क मनीआर्डर या आध आध आने अथवा एक एक आने वाले टिकटों के द्वारा भेजना चाहिये।

हमें पूर्ण आशा ही नहीं किन्तु दृढ़ विश्वास है कि आप इस ग्रन्थमाला के स्थायी ग्राहक बन कर और अपनी गुणग्राहकता तथा विवेकबुद्धि का परिचय देकर हमें उत्साहित करेंगे कि हम राष्ट्र भाषा हिन्दी की सेवा के साथ साथ ही देश में राष्ट्रीय भावों का प्रचार भी कर सकें। जैसा कि हमें दृढ़ विश्वास है—यदि हिन्दी साहित्य प्रेमियों ने हमारी सेवा का कुछ भी आदर किया तो हम कितने ही अनुपम ग्रन्थ रत्नों को प्रकाशित करके आपकी सेवा में शीघ्र ही उपस्थित कर सकेंगे।

द्वारिका प्रसाद सेवक—सरस्वती-सदन, इन्दौर (मध्यभारत)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दूमात्र को जीवन का आनन्द, देशभक्तों को अमृत के समान, स्वराज्यवादियों का सच्चा सहायक वीर मित्र

सच्चे देशभक्त महात्मा गान्धी और लो० तिलक की

पवित्र आत्मा के तुल्य

सचित्र सुन्दर दृढ़प्रतिज्ञ निर्भय राष्ट्रीय मासिक पत्र

देश-भक्त

बड़ी ही सजधज से चित चुरानेवाले सामयिक चित्रों वा लेखों सहित शीघ्र प्रकाशित होने ही वाला है।

देश-भक्त का सच्चा उद्देश।

सच्चा निर्भय दृढ प्रतिज्ञ है, देशभक्त है मेरा नाम,
देश प्रेम में प्राण गंवाना, मुख्य धर्म है मेरा काम।

देशभक्त का सदैव निर्भय होकर सामयिक कठिनाइयों व कष्टों तथा दुःखों को सहन कर देश की सेवा करना तथा दुष्टों की निर्भीकतापूर्ण पोल खोलना मुख्य कार्य होगा।

अन्य सभी प्रकार के लेख व कविताओं का भी संग्रह रहा करेगा। यदि आप जीवित निर्भीक लेख पढ़ना चाहते हैं तो ग्राहक श्रेणी में नाम लिखाइये।

देशभक्त की संख्या पर हम तो तन मन और धन सब कुछ लगाते हैं। किन्तु सर्वसाधारण से मात्र वार्षिक ३) और नमूनार्थ एक कापी अवलोकनार्थ मुफ्त भेजते हैं। नमूना मंगाकर पढ़िये सिर्फ ग्राहकों को स्वराज्य वीणा व तीन रंग स्वराज्य कलैंडर भी मुफ्त में मिलेगा।

कवियों व लेखकों को जोशीले जीवित लेख व कवितायें भेज पुरष्कार लेना चाहिये।

सच्चे विज्ञापनदाताओं को विज्ञापन शीघ्र भेज लाभ उठाना चाहिये।

पता—मन्त्री देशभक्त, सिरसागंज-मैनपुरी (यू० पी०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Regd. No. A. 533.
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाग १६ संख्या ४

मासिक मर्यादा पत्रिका

अक्टूबर सन् १९१८

विषय-सूची ।

विषय	पृष्ठ
१-मूल-मंत्र-श्री० श्रीकान्त कुसुमाकर	१४६
२-भारत पर हमने विजय कैसे प्राप्त की ?-श्रीयुत रामचन्द्र टंडन	१५०-१५६
३-भारत में डाक ले जाने की रीति-श्रीयुत कृष्णविहारी मिश्र	१५७-१६२
४-भारतीय शिक्षा का प्रश्न-श्रीयुत भगवन्नारायण भार्गव	१६२-१६७
५-स्वायत्त शासन की योग्यता-बा० रामानन्द चटर्जी एम० ए०	१६७-१६१
६-कोरिया या वृहत्तर जापान-प्रवासी भारतवासी	१६६-१७८
७-जाति-मानस शास्त्र और सार्वजनिक आन्दोलन-श्रीयुत कृष्णदत्त शर्मा पालीवाल	१७८-१८६
८-गेय-गीत-श्रीयुत लक्ष्मण सिंह क्षत्रिय 'मयंक'	१८७
९-हमारा पुस्तकालय	१८८

वार्षिक मूल्य ३) एक संख्या का ।)

अभ्युदय प्रेस, प्रयाग से छपकर प्रकाशित ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"नवजीवन-ग्रन्थमाला" का

प्रथम, अनुपम, और अद्वितीय राष्ट्रीय ग्रंथ 'एक भारतीय हृदय' द्वारा लिखित

प्रवासी भारतवासी

(प्रकाशित हो गया)

यह पुस्तक एक ऐसे 'भारतीय हृदय' की लिखी हुई है, जिसने कि प्रवासी भारतवासियों के इतिहास और प्रश्नों का कठिन परिश्रम के साथ अच्छी तरह अध्ययन व मनन किया है। इस पुस्तक के पढ़ने से आपको ज्ञात हो जायगा कि प्राचीन काल में हमारे पूर्वजों ने विदेशों में कहां कहां भारतीय उपनिवेश स्थापित किये थे और उस समय विदेशी लोग भारतीयों को किस सम्मान की दृष्टि से देखते थे। प्रवासी भाइयों के विषय में ऐसी पुस्तक हिन्दी में तो क्या भारत की किसी भी भाषा में नहीं निकली है। प्रवासी भाइयों की दुर्दशा का हाल पढ़कर कठोर से कठोर हृदय भी पसीज जायगा। प्रवासी भगिनियों की दुर्गति को पढ़कर आंखों से आंसुओं की धारा बहने लगेगी। आरकाटियों की पोलें इसमें बड़े सुदृढ़ प्रमाणों के द्वारा खोली गई हैं और कुली-प्रथा के दोष इसमें बड़ी खूबी के साथ दिखलाये गये हैं।

फ़िजी, ट्रिनीडाड, ब्रिटिश गायना, डच गायना, जमैका, मोरीशस, सुरीनाम, मलाया, दक्षिण अफ्रिका, कैनाडा, अमेरिका आदि में भारतवासियों की क्या दशा है—यदि यह जानना हो तो यह पुस्तक अवश्य ही पढ़िये। प्रवासी भाइयों की नैतिक, सामाजिक और आर्थिक स्थिति कैसी है—यदि इस विषय में कुछ भी जानने की इच्छा आपके हृदय में है तो यह पुस्तक आपको अवश्य ही पढ़ना चाहिये। प्रवासी भाइयों की धार्मिक उन्नति के लिये अब तक क्या २ प्रयत्न किये गये हैं और अब क्या क्या प्रयत्न होने चाहिये—इन बातों के जानने के लिये यह पुस्तक अति आवश्यक ही नहीं वरन् अनिवार्य भी है।

इस पुस्तक की 'भूमिका' सुप्रसिद्ध भारतहितैषी मि० सी० एफ़० एण्ड्रूज़ एम० ए० ने लिखी है। 'प्रस्तावना' "भारतमित्र" के विद्वान् सम्पादक श्री पंडित अम्बिका प्रसाद जी वाजपेयी ने लिखी है और फ़िजी प्रवासी सुप्रसिद्ध पंडित तोताराम जी सनाढ्य ने 'चार शब्द' लिखे हैं। इससे अधिक इस पुस्तक की उपयोगिता के लिये और क्या कहा जा सकता है। आप एक सरसरी नज़र से ही पढ़ने से इसका महत्व समझ जायँगे। यह अपने विषय की 'अप टू डेट' पुस्तक है।

भारतमाता के प्रत्येक सेवक को यह पुस्तक एक बार अवश्य ही पढ़नी चाहिये। इस काग़ज़ और छपाई की असाधारण महंगाई के समय में बढ़िया छपाई के लगभग साढ़े सात सौ पृष्ठों की, ८ हाफ़टोन सुंदर चित्रों से सुसज्जित, रंगीन छिंटदार दर्शनीय बाइंडिंग के साथ, लेखक और प्रकाशक के कठिन परिश्रम तथा धन व्यय के सामने इस अपूर्व और बृहद् महत्वपूर्ण ग्रंथ का मूल्य भारत में ४) रु० और विदेशों में ७ शिलिंग या ४॥) कुछ भी नहीं है।

वीर सत्याग्रही, दक्षिण अफ्रिका प्रवासी, श्रीयुत भवानी दयालजी लिखित

'नवजीवन-निबन्धमाला' की प्रथम, सचित्र, पुस्तक

हमारी कारावास कहानी

भी प्रकाशित हो गई है, जो कि 'नवजीवन-ग्रन्थमाला' के स्थायी ग्राहकों को सर्वथा बिना मूल्य दी जाती है। अन्यों के लिए मूल्य ॥) है।

आठ आना भेज कर शीघ्रही 'ग्रन्थमाला' के स्थायी ग्राहक बनिये।

व्यवस्थापक—सरस्वती-सदन, इन्दौर (मध्यभारत)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूचना।

१-पत्र-व्यवहार में अपना ग्राहक नं० अवश्य लिखना चाहिये अन्यथा उत्तर देने में अथवा किसी कार्य में विलम्ब होने का कार्यालय उत्तरदाता नहीं।

२-वी० पी० के स्थान में मनीआर्डर भेजकर पत्र मँगाने में अति सुविधा है-क्योंकि वी० पी० का रुपया प्राप्त होने पर नाम ग्राहक श्रेणी में लिखा जाता है। इस प्रकार वी० पी० भेजने के उपरान्त दो एक अंक निकल जाते हैं तब वी० पी० का रुपया प्राप्त होता है।

३-वी० पी० से पत्र मंगानेवालों को एक दो सप्ताह संतोष रखना चाहिये। पत्र-व्यवहार करना व्यर्थ होगा।

मैनेजर मर्यादा, प्रयाग।

उदरामृत।

अगर आपको भूख कम लगती हो अथवा मन्दाग्नि, अजीर्ण, अफरा, पेट दर्द, कब्ज, जी मचलाना, खट्टी या जली हुई डकारों का आना, दस्त का साफ न आना, वायुगोला, बवासीर तिल्ली, पेचिश, हैजा, संग्रहणी आदि पेट का कोई भी रोग हो तो हमारा जगत् प्रसिद्ध स्वादिष्ट उदरामृत चूर्ण व्यवहार कीजिये; तत्काल गुण दिखाता है, भूख तो खूब ही लगाता है। मूल्य फी शीशी ॥=) दर्जन ५॥।) डा० म० १ तक।-) १२ पर ॥-)

पता-ब्राह्म औषधालय

(ठी ब्रांच) पो० जलाली, जिला अलीगढ़।

पीयूषसिन्धु

कफ़, खाँसी, हैजा, दमा, पेचिस, पेटदर्द, संग्रहणी, बच्चों के हरे पीले दस्त, जाड़े का बुखार, कै होना, जी मिचलाना, नजला, जुकाम, आदि रोगों की स्वादिष्ट और सुगंधित दवा। दाम फी० शी० ।।) आ० डा० ख० अलग १ दर्जन का दाम ४) रु० डा० माफ

दद्रुकालानल

दाद की शर्तिया दवा बिना किसी जलन और तकलीफ के हर तरह के दाद को २४ घंटे में जड़ से खोनेवाली दवा दाम फी० शी० ।) आ० डा० ख० अलग। १ दर्जन १॥=) डा० ख० माफ

मंगाने का पता:—

सुन्दर शृंगार म० मथुरा।

गांधी-ग्रन्थ-माला

के पैम्फलेटों को मँगाकर पढ़िये। बहुत लाभ होगा:—

सत्याग्रह—लिओ टालस्टाय =)

समय नहीं है—कृष्णकान्त मालवीय =)

साधन मौजूद नहीं—कृष्णकान्त मालवीय =)

निष्क्रिय प्रतिरोध नहीं सत्याग्रह—महात्मा गांधी =)

मनेजर "मर्यादा" प्रयाग।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गृहस्थमात्र के काम की तत्काल फायदा करनेवाली अमूल्य दवा।

वर्षों से दुनियाँ में विख्यात सरकार से रजिस्टरी की हुई हजारों प्रशंसापत्र प्राप्त।

"सिर से लेकर पांव तक किसी रोग में देखो, जादू का असर करती है बूढ़ों, बच्चों, जवानों, पुरुषों तथा स्त्रियों के कुल रोगों को जो घरों में होते रहते हैं तत्काल फायदा करती है बल्कि पशु पक्षियों के रोगों को भी अच्छा करती है। की० १) रु० । बड़ी शीशी १॥) वी० पी० ।) । तीन लेने से वी० पी० माफ । १२ लेने से ६) रु० । बड़ी शीशी १५॥) रु० । वी० पी० माफ । २४ लेने से रोशनी वाच इनाम।

ख़िजाब ! ख़िजाब !!

न्यू ईजाद मनमोहन केशकल्प ।

एक दफ़े के लगाने से भूरे और सफेद बाल भौंरे के रंग के समान काले चमकीले हो जाते हैं। जिल्द पर धब्बा नहीं आता । हाथ काले नहीं होते । विशेष तारीफ यह है कि एक दफा लगाने से जो बाल काले हो जायँगे फिर वह उमर भर सफेद नहीं होंगे। बराबर इस्तेमाल कीजिये कीमत १।) वी० पी० ।-) । तीन लेने से ३) वी० पी० माफ ।

गोरे और ख़ूबसूरत बनने की दवा

सुगंधित फूलों का दूध ।

यह दवा विलायती ख़ुशबूदार फूलों का अर्क़ है। इसे विलायत के एक प्रसिद्ध डाक्टर ने बनाकर अभी भेजा है। इसको ७ दिन बदन और चेहरे पर मालिश करने से चेहरे का रंग गुलाब के समान हो जाता है। बदन से ख़ुशबू निकलने लगती है। गालों के स्याह दाग, मुहासे, छीप, झुर्रियां, फोड़ा फुन्सी, खुजली आदि दूर होकर एक ऐसी खूबसूरती आजाती है कि काली रंगत चांद सी चमकने लगती है। जिल्द मुलायम हो जाती है। लगाकर देखो, अपनी प्राणप्यारी को चंद्रमुखी बना लो । दाम एक शीशी १।) वी० पी० ।-) तीन लेने से ४) रु० वी० पी० माफ़ ।

सुगंधित बालों को उड़ानेवाला साबुन ।

बिना किसी तरह के कष्ट के बालों को ५ मिनट में उड़ाकर साफ कर देता है। की० ३ बट्टी के १ बक्स का ॥) वी० पी० ।) । १२ लेने से २) वी० पी० माफ । तीन दर्जन लेने से रोशनी वाच इनाम ।

पता—जमनादास आदर्श नं० २, मथुरा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुप्रसिद्ध डोंगरे का बालामृत पीने से

छोटे बच्चे ताकतवान् होके उनका वज़न बढ़ जाता है] और [वह मधुर होने के कारण बच्चे बहुत खुशी से पीते हैं।

शीशी का दाम १२ आना,
डाक म० ४ आना।

इलाहाबाद एजेन्टः—बलदेवप्रसाद एन्ड ब्रदर्स।

के० टी० डोंगरे कं० गिरगाँव—बम्बई।

हिन्दी में स्वराज्य।

स्वराज्य-सम्बन्धी पुस्तकें, साहित्यिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक, जीवनी, उपन्यास, जिस प्रकार की पुस्तकों की आपको आवश्यकता हो "मर्यादा पुस्तक-भंडार" को लिखिये, हिंदी की सभी प्रेसों की प्रसिद्ध पुस्तक घर बैठे आपको पहुंच जायँगी। कुछ पुस्तकों के नाम :—

गोखले के व्याख्यान	१।)	स्वराज्य-माला	२)
जापान रहस्य	॥=)	चतुर जापानी	१॥=)
कर्मक्षेत्र	॥।=)	अरण्य-बाला	१।)
लो०तिलक की जीवनी	=)	मोहिनी	॥=)
देवी एनी बेसेन्ट	।=)	आर्थिक सफलता	।=)

तिलक के १२ व्याख्यान १)

'मर्यादा पुस्तक-भंडार,' प्रयाग।

बाटलीवाले की स्वदेशी।

असली कुनैन की १ ग्रेनवाली १०० गोलियों की शीशी, असली कुनैन की २ ग्रेनवाली २०० गोलियों की शीशी बुखार, मैलेरिया और जुकाम के लिए, एग मिक्सचर, कमज़ोर और थके हुए लोगों के लिए ताकत की गोलियाँ दांतों की जड़ को मज़बूत करनेवाला दन्तमंजन, दाद और खुजली का मलहम, ये दवाएँ सब दवाफरोशों से या डाक्टर एच० एल० बाटलीवाला सन्स एन्ड० को० लिमिटेड वारली, १८ बम्बई से मिल सकती हैं।

Dr. H. L. Batliwalla Sons & Co. Ltd
Warli, 18 Bombay.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

SKB

किया ट्रेडमार्क

कलकत्ते के नामी।

डाक्तर एस, के, बर्म्मन की

३२ वर्ष की प्रसिद्ध

गुणकारी पेटेंट दवाएं।

से सावधान।

चर्म रोग की दवा।

सब तरह के चमड़े के रोग—जैसे खाज, खुजली, छाजन, अपरस आदिक इनसे मिट जाते हैं। कोढ़ से बिगड़े हुये चमड़े में भी यह अच्छा गुण देखाती है, चमड़े के रोगों से प्रायः शरीर के खून में भी दोष आजाता है। इस हालत में केवल तेल के लगाने से पूरा फायदा नहीं मिलता। इस लिए साथ तेल लगाने के खून साफ करने की दवा आईओडाईजड सालसा भी पीना चाहिये।

मोल—॥) आठ आने शीशी। डा० म० १ से २ शीशी तक ।=) पांच आने।

कान बहने की दवा।

कान बहना याने कान पक कर कान के भीतर से पीब बहना नया अथवा पुराने के लिए यह दवा विशेष उपकारी है। इसके चिकित्सा में कान को भीतर से धोकर उसमें दवा डालनी पड़ती है, इस लिए पिचकारी की भी दरकार रहती है।

मोल ।) आने शीशी पिचकारी कांच की ।) आने पै० व डा० म० ।=) आने २ शीशी तक ।=) आने

दांत दर्द की दवा।

लगाते ही दर्द मिटाती है। रोने से हंसाती है। एक महीन व मजबूत तिनका व सींक पर जरा रुई लपेट कर इस दवा में डुबा के ठीक दर्द की जगह लगाना। दांत की सन्धि में दर्द होवे तो जरासा रुई इस दवा में डुबा के सींक की नोक पर रखकर उसमें भर देना, झट दर्द बन्द हो जायगा। सावधान! घबड़ा के व्यर्थ जहां तहां होठ व मसूड़ों में न लगाना क्योंकि यह तेज दवा है।

मोल ।) चार आने शीशी। डा० म० १ से ४ शीशी तक ।=) पांच आने ६ शीशी ।=) छः आने।

डा: एस, के, बर्मन ५, ६, ताराचंद दत्त ष्ट्रीट, कलकत्ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मर्यादा।

मासिक पत्रिका।

भाग १६] अक्तूबर सन् १९१८। [संख्या ४

मूल-मंत्र।

प्रेमभाव से मिलें परस्पर
मनकी कटुता दूर करें।
कपट शत्रु का संग छोड़ दें
चित की चिन्ता चूर करें॥
विद्या-बल के बली बनें हम
धनी बनें दृढ़ बातों के।
सहने को तैयार रहें
हर समय कठिन आघातों के॥ १॥
बोझो कब तक बने रहेंगे
आलस-रूपी गीदड़ हम।
कब तक भक्षण हमें करेंगे
फूट-केशरी दूम-पर दम॥

देश प्रेम के नाते सब से
करें सदा व्यवहार अभंग।
कलह कसाइन की कुटिलाई
का अब हम पर जमे न रंग॥ २॥
परुपकार में दत्तचित्त हो
करें स्वार्थपरता का नाश।
आत्मिकता के साथ करें
जातीय प्रेम-प्रति दृढ़ विश्वास॥
देशभक्ति प्रति सत्यभाव हो
अपने जीवन का व्यवहार।
सिद्धहस्त होंगे अवश्य यदि
करें यत्नतः देशोद्धार॥ ३॥

श्रीकान्त कुसुमाकर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत पर "हमने" विजय कैसे प्राप्त की ?

[अनुवादक—श्रीयुत रामचन्द्र टंडन ।]

पाठक ! इस लेख का शीर्षक देख कर कदाचित् आप विस्मित हों, कदाचित् आप कहें कि 'इस "हमने" का क्या प्रयोजन ?' परन्तु आपको यह ध्यान रखना चाहिये कि लेखक कुछ अपनी ओर से नहीं लिख रहा है। काले आदमियों को ऐसे विषयों पर जिह्वा अथवा लेखनी हिलाने का क्या अधिकार ? वे परतन्त्र होने के कारण सर्वथा अविश्वसनीय हैं न ? परन्तु श्वेतांग ही की लेखनी से निकले हुए वाक्यों का भाषान्तर में उल्लेख करना कोई पाप नहीं है। उन्हींके वाक्यों को भारतमाता के सपूतों के कानों में डालना कोई दोष नहीं है। इसी विचार से यह लेख लिखा जा रहा है, और इसी विचार से इसका शीर्षक भी ऐसा ही है, जिससे पाठक समझ जायँ कि यह किसी अंग्रेज़-द्वारा लिखा गया है। विज्ञापनवालों की तरह धोखा देने के लिए नहीं, भ्रम में डालने के लिए नहीं, वास्तव में एक अंग्रेज़ की सम्मतियों का संग्रह होने के कारण ही इसका नाम ऐसा है। और वह अंग्रेज़ महानुभाव भी कोई कल्पित मनुष्य नहीं है। आपका शुभ नाम है सर जे० आर० सेली। आपकी पुस्तक "The Expansion of England" प्रत्येक अंग्रेज़ी जाननेवाले भारतवासी को अवश्य पढ़ना चाहिये। इसके पढ़ने से अपनी अवस्था का ज्ञान होना असम्भव नहीं है। इसके अतिरिक्त उसे ऐसे छोटे छोटे महत्वपूर्ण प्रश्नों के उत्तर भी स्वयं मिल जायँगे, जैसे, "अंग्रेज़ लोगों ने भारत पर कैसे अधिकार जमाया ?" "ऐसे विस्तृत देश पर वह किस प्रकार शासन कर रहे हैं ?" इत्यादि। "हमारा क्या कर्तव्य है ?" इस बार भी उनकी आँखें अवश्य खुल जायँगी। अस्तु। विशेष भूमिका की आवश्यकता नहीं। केवल इतना ही कहना है कि पाठक इसे ध्यान से पढ़ें, और अवकाश मिलने पर इस पर विचार भी करें। जो कुछ लिखा जायगा वह सर सेली ही के वाक्यों का भावार्थ होगा—

"हमारे देशवासियों ने नई दुनिया में बहुत सी भूमि पर अधिकार कर लिया है, परन्तु प्रायः वे भूमि खाली ही पड़ी हुई थीं। जो कुछ कठिनाइयों का सामना हमें वहां करना पड़ा वे वहां के रहनेवालों के कारण नहीं हुई थीं, बल्कि यूरोप के भिन्न भिन्न देशों के आपस में वैरभाव होने के कारण ही। 'वहां अपने शत्रुओं पर किस प्रकार हमने अधिकार जमाया ?' इसका उत्तर स्पष्ट ही नहीं था; परन्तु उसमें अधिक खोज की भी आवश्यकता न थी। अब हिन्दुस्तान का प्रश्न हमारे सम्मुख आया है। प्रथम तो इसीमें बुद्धि चकराती है कि हिन्दुस्तान को हम जीत कैसे सके ? समझ में नहीं आता। वहां की आबादी बहुत थी, वहां की सभ्यता भिन्न होते हुए भी हमसे कम न थी, पुरानी भी उतनी ही थी। यूरोप के इतिहास से हमें विदित है कि एक सभ्य जाति को, जिसकी भाषा दूसरी है, धर्म दूसरा है, अधिकार में लाना असम्भव है। अस्सी वर्ष में भी स्पेन इतनी कम आबादी वाले डच प्रदेशों को अपने अधिकार में न लासका। स्विस भी पहिले न जीते जा सके, और न ग्रीक ही। फिर भारतवर्ष हमारे अधिकार में कैसे आया ?

"जिस समय हमने भारत पर विजय पाने के लिए पैर बढ़ाया, उस समय हम अमेरिका में निष्फल-मनोरथ हो चुके थे। हम अपनी ही जाति के केवल ३०,००,००० स्वातंत्र्याभिलाषी मनुष्यों को वश में न ला सकने के कारण अपनी असमर्थता पूर्णतया प्रमाणित कर चुके थे। फिर वहां कितना अन्तर है ! अंग्रेज़ों ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी अयोग्यता का जैसा उदाहरण अमेरिका की लड़ाई में दिया वैसा पहिले कभी नहीं दिया था। इससे प्रत्यक्ष यही जान पड़ता था कि अंग्रेज़ों के वे दिन गये। अब उनका अधः-पतन आरम्भ हो गया है। परन्तु नहीं, प्रायः उसी समय भारतवर्ष में वे जैसी शूरता दिखा रहे थे, उससे वे अहङ्कार-वश अपने को शूर-जाति समझने लगे। इस विपरीतता का क्या कारण है?

"इतिहास प्रायः ध्यान और गम्भीरता से नहीं पढ़ा जाता, और न इसी विचार से कि किसी एक यथार्थ परिणाम का पता चले। इसी लिए इस विपरीतता का कारण भी टल जाता है, और यह शान के साथ विचार करने का अवसर मिल जाता है कि उस समय भी हममें तत्व था—हम सजीव थे।

"प्लासी में, असाई में फिर फिर जो हमने अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए भी विजय प्राप्त की, उससे हम अपनी जातीय (अथवा देशीय) प्रभुता भलीभांति बघार सकते हैं, और सोच सकते हैं कि हिन्दुओं की अपेक्षा वास्तव में हम देव-समान हैं। परन्तु क्या इसी स्थिति से झंझट मिट सकती है? मान लो कि अंग्रेज़ी सिपाही अकेला दस या बीस हिन्दुओं के बराबर है। क्या तब भी हम एक क्षण के लिए सोच सकते हैं कि भारत पर हमने विजय प्राप्त की? उस समय अंग्रेज़ों की कुल संख्या १,२०,००,००० से किसी प्रकार अधिक नहीं थी। इसके अतिरिक्त इङ्गलैंड को और भी लड़ाइयों में भाग लेना था। जब क्लाइव उधर भारतवर्ष में अपनी कार्यवाही कर रहा था तो इधर यूरोप में 'सात वर्ष की लड़ाई' छिड़ी हुई थी। जिस समय लार्ड वेलेसली भारतवर्ष में प्रान्तों को अपने अधिकार में कर रहे थे उस लक्ष्य हमारा यहां नेपोलियन से युद्ध हो रहा था। हम लोग भिक्षोपजीवी जाति तो हैं नहीं, उस समय हमको इस बात का तो दावा न था कि जब चाहें एक फ़ौज युद्ध के लिए उपस्थित कर सकें। अतः यूरोपीय युद्धों में विशेषकर हम अपने जहाज़ी बेड़ों को काम में लाते थे। अब रहा स्थल-युद्ध, उसमें हम एक एक जाति से अलग अलग लड़े, एक बार आस्ट्रिया से दूसरी बार प्रशा से।

"इन सब त्रुटियों के रहते हुए भी हम ऐसे अवसर पर भारत ऐसे बड़े देश का अधिक अंश जीत सके? हमारी सेना पर क्या आपत्ति आई होगी। हमारे ख़ज़ाने पर कितना भार पड़ा होगा। नहीं यह बात नहीं है, हम लोगों को कुछ जान भी न पड़ा। यूरोपीय युद्धों के कारण हमें जितना क़र्ज़ लेना पड़ा, हम कभी नहीं दे सके; परन्तु भारतीय युद्ध ने जातीय क़र्ज़ की ओर भी पूर्ति नहीं की। जो जो कठि-नाइयां आईं उनका पता निशान भी न रहा।

"इसमें कुछ भूल अवश्य है कि कुछ अंग्रेज़ी सिपाही भारतवर्ष में गये, और वहां उन्होंने अपनी शूरता के कारण इतना बड़ा देश जीत लिया। सन् १८१८ की अन्तिम मरहठों की लड़ाई में हमारे एक लाख मनुष्य रणक्षेत्र में थे, और वह ऐसा समय था कि जब नेपोलियन की लड़ाई के कारण जन-संख्या बहुत घट गई थी। फिर क्या यह सम्भव था कि वाटरलू की लड़ाई के तीन ही वर्ष बाद, जितनी लार्ड वेलिङ्गटन के पास स्पेन में थी उससे भी अधिक सेना लेकर हम हिन्दुस्तान में हों? फिर आज भारतवर्ष में हमारी सेना प्रायः दो लाख है। क्या दो लाख सेना होते हुए भी हम भिक्षो-पजीवी जाति नहीं हैं। सब कुछ होते हुए भी वास्तविक दशा यही है।

"बात यह है कि भारतीय सेना में केवल अंग्रेज़ ही नहीं हैं। वहां अधिकतर हिन्दुस्तानी सिपाही ही हैं। २,०६,००० में ६५,००० ही—अर्थात् तिहाई से भी कम—अंग्रेज़ हैं। फिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लवे के समय में तो हमारे पास केवल ४५,००० ही अंग्रेज़ी सेना थी, और हिन्दुस्तानी सेना २,३५,००० थी, अर्थात् हमारी सेना पांचवें हिस्से से भी कम थी। सन् १८०८ में २५,००० अंग्रेज़ी और १,३०,००० हिन्दुस्तानी सेना थी। सन् १७७३ में भी जब रिग्युलेटिङ्ग ऐक्ट पास हुआ है, यही हाल था। उस समय कम्पनी के पास ६,००० अंग्रेज़ और ४५,००० हिन्दुस्तानी सिपाही थे, और पहिले आइये तो अंग्रेज़ इससे भी कम मिलेंगे, और यदि आरम्भ में देखा जाय तो कम्पनी के पास प्रायः सभी हिन्दुस्तानी थे। कर्नल चेज़नी के कथनानुसार भारत में कम्पनी के सेना-विभाग की स्थापना सन् १७४८ में हुई, यह भी फ्रेंच लोगों की देखा देखी ही अपनी रक्षा के लिए, उस समय कुछ अंग्रेज़ भी रक्खे गये जो जहाज़ों में फालतू थे, और जो कम्पनी के जहाज़ों में इङ्गलैंड से भगा लाये गये थे।

"आरम्भिक लड़ाइयों में—जैसे आरकाट, प्लासी, बक्सर—जिनके द्वारा कि कम्पनी की धाक बँध गई थी—कम्पनी की ओर से लड़ने-वाले भारतवासियों ही की संख्या अंग्रेज़ों से अधिक थी। एक बात पर और भी ध्यान देना आवश्यक है, यह कभी भी नहीं सुना गया कि हिन्दुस्तानी सिपाहियों ने कम्पनी की ओर से लड़ने में कुछ ढिलाई की या जीत विशेषकर अंग्रेज़ी सेना के कारण ही हुई या केवल अंग्रेज़ी सेना ही मरी कटी!

"जिस किसी ने भी इस बात पर ध्यान दिया है कि इतिहास लिखनेवाले प्रायः बड़े जोश के साथ अपनी जातीय अहम्मन्यता में गोते लगाते हैं, वह स्थिति देखकर चकित न होगा कि अंग्रेज़ लोग इन लड़ाइयों का हाल लिखते समय हिन्दुस्तानी सिपाहियों को भूल ही गये। क्लाइव के विषय में मेकाले का निबन्ध पढ़िए, उसमें प्रत्येक स्थान पर आपको यही मिलेगा कि—"The Impeial people"—राज-जन।

"The Mighty Children of the Sea"—समुद्री वीर बालक।

"None could resist Clive and his Englishmen"—क्लाइव और उसके अंग्रेज़ों के वेग को रोकने के लिए कोई समर्थ न हुआ।

"परन्तु जब एकबार यह बात मानी जा चुकी है कि हिन्दुस्तानी सिपाही संख्या में सदा अंग्रेज़ों से अधिक रहते थे—कभी साथ नहीं छोड़ते थे—और सिपाही होने में भी उनमें कोई त्रुटि नहीं थी तो यह कल्पना कि हमारी जीत केवल हमारी अमित सांसिद्धिक श्रेष्ठता का फल है, मिट्टी में मिल जाती है। उन लड़ाइयों में जिनमें कि विपरीत सेना दशगुणी रहती, यदि यह सत्य है कि एक अंग्रेज़ उनके दस सिपाहियों के बराबर था तो यह भी कहा जा सकता है कि हमारी ओर का एक हिन्दुस्तानी सिपाही भी वैसे दस सिपाहियों के बराबर था। मिल साहब के बताये हुए भारत-विजय के कारणों को देखिये। वह यह नहीं कहते हैं कि अंग्रेज़ों में कोई स्वाभाविक श्रेष्ठता थी। उनका मत है कि—भारत पर विजय प्राप्त करने के दोही मन्त्र थे:—

(१) हिन्दुस्तानी सिपाही अच्छी तरह सिखाई गई यूरोपीय सेना का सामना नहीं कर सकते थे।

(२) यूरोपवालों के यहां रहनेवाले हिन्दुस्तानी बहुत सुगमता से अंग्रेज़ी-युद्ध-शिक्षा-प्रणाली का अनुकरण कर सकते थे।

मिल साहब यह भी लिखते हैं कि इन दोनों बातों का आविष्कार फ्रेंच लोगों ने ही किया।

"फिर मान भी लिया जाय कि अंग्रेज़ हिन्दुस्तानियों से अच्छा लड़ सकते थे, और जीत में (यद्यपि भारतवासियों का भी पूर्ण अंश है) उन्हीं की अधिक शाबाशी है, तो भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह कह देना कि अंग्रेज़ों ने भारतवर्ष पर विजय प्राप्त की, सर्वथा मिथ्या है। भारतवर्ष एक सेना-द्वारा जीता गया है, जिसमें कि अंग्रेज़ी सिपाहियों की संख्या पांचवे हिस्से से अधिक न थी। हम अपने पराक्रम को केवल बढ़ा चढ़ाकर ही नहीं लिखते हैं, बल्कि उसका विपरीतार्थ लेते हैं, और असत्य कहते हैं। उस सेना के, जिसने कि भारतवर्ष पर विजय प्राप्त की, शेष चार अंश कहां से आये थे, हिन्दुस्तानियों में से ही। 'हिन्दुस्तान विदेशियों से जीता गया है', यह कभी नहीं कहा जा सकता। हिन्दुस्तान स्वयं जीता गया है। हिन्दुस्तान हमसे जीता गया, यह हम नहीं कह सकते। फिर हम नहीं कह सकते हैं कि हिन्दुस्तान ने राज-विप्लव से बचने के कारण एक राज्य की छाया में आना चाहा, चाहे वह राज्य विदेशियों के ही हाथों में क्यों न हो।

"परन्तु यह कहना भी उतना ही असत्य और भ्रमोत्पादक होगा जितना कि ऊपर कहा हुआ, अथवा यह विचार करना ही अयोग्य है कि 'हिन्दुस्तान कोई सजीव राजनैतिक सङ्गठन था।' सत्य तो यह है कि भारत भौगोलिक अर्थ में छोड़ कर राजनैतिक या और ही किसी अर्थ में—भारत—कहा ही नहीं जा सकता था। भारत भौगोलिक अर्थ में-भारत-था, इसीलिए शीघ्र जीत भी लिया गया, जैसे कि नैपोलियन ने जर्मनी और इटली को जीत लिया था। उस समय एक सङ्गठित जर्मनी न था, इसलिए नैपोलियन एक प्रान्त को दूसरे प्रान्त से भिड़ाकर एक ओर आप भी मिल जाता। इस प्रकार जब उसे आस्ट्रिया और प्रशा से लड़ना होता तो उसके सहायक बवेरिया और उर्टेम्बर्ग रहते। जिस प्रकार नैपोलियन ने इधर यह ढंग निकाला उसी प्रकार डुप्ले को भी भारत में राज्य स्थापित करने की सूझ मिल गई, और उसको पता चल गया कि वहां कारख़ाने स्थापित करनेवाले यूरोपीयों को बड़ा लाभ है, क्योंकि उस समय भारत की भी दशा ऐसी ही थी। उस समय भारत में एक दल दूसरे दल से लड़ रहा था। इस आपस की लड़ाई को देख कर डुप्ले समझ गया कि विदेशी इनके झगड़ों में हस्तक्षेप करने से दोनों के बीच की एक स्थिति पर दृढ़ हो सकता है। उसने किया भी ऐसा ही। अतः यहीं से भारत में यूरोपीय राज्य-स्थापन का इतिहास आरम्भ होता है। निज़ामुल्मुल्क की मृत्यु (१७४८ ई०) के उपरान्त जो कलह उठा उसी में डुप्ले ने प्रथम हस्तक्षेप किया।

"अब मुख्य बात तो यह है कि भारतवर्ष को विदेशियों के साथ कुछ द्वेष तो था नहीं, इसी से भारतवर्ष में कोई राजनैतिक सङ्गठन भी नहीं था—न भारतवर्ष था और न भारतवर्ष के लिए विदेशी—अभी तक हम यूरोपीय इतिहास से मिलता जुलता उदाहरण देते आये हैं; परन्तु हमें यह ध्यान में रखना चाहिये कि भारतवर्ष में जातीयता का भाव बिल्कुल मर गया था। उतना भी नहीं था जितना कि अस्सी वर्ष पहिले जर्मनी में। तभी यह हमारी समझ में आसकेगा कि अङ्गरेज़ों ने सिपाहियों-द्वारा भारतवर्ष को कैसे जीत लिया। नैपोलियन ने जिस प्रकार एक प्रान्त को दूसरे प्रान्त से लड़ाकर और वहीं की सहायता से जर्मनी पर अधिकार जमाया, उसीके ठीक जोड़ का उदाहरण हिन्दुस्तान में भी है। इसीका उदाहरण यूरोप में और मिल जाता, यदि इङ्गलैंड फ्रान्स पर आक्रमण करता, और फ्रेञ्च सिपाहियों के द्वारा ही (उन्हें ख़ूब वेतन देकर) फ्रांस पर अधिकार कर लेता। यह बात हां कैसी असम्भव है क्या एक फ्रेञ्च सेना अपने देश से लड़ने के लिए चुप चाप मान जाय? परन्तु यदि इतिहास पर ध्यान दिया जाय तो यह बात सम्भव है। १२वीं शताब्दी को देखने से हमें ज्ञात होता है कि उस समय फ्रांस में कोई जातीयता का भाव न था, जब कि पेरिस पर राज्य करनेवाले और रूयेन पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राज्य करनेवाले राजाओं में लड़ाई हुआ करती थी। यदि हम फ्रान्स के और प्रान्तों की ओर दृष्टिपात करें--जहां दूसरे दूसरे राज्य थे और जो विदेशियों के अधीन थे--तो और भी स्पष्ट हो जाय। वास्तव में दूसरे राज्य के अधिकार में रहते रहते वहां से जातीयता का भाव पूर्ण रूप से उठ गया था। अभी भी बहुत हिस्से विदेशियों के अधिकार में थे। हम भलीभांति ऐसी अवस्था को विचार सकते हैं, जब कि विदेशी राज्यों से देश क्षत हो गया है--देशीयता का भाव जाता रहा है--देश किराये पर चलनेवाले उन सिपाहियों से भरा है, जो देशी विदेशी दोनों ही ओर से रुपया मिलने पर काम करने के लिए तैयार हैं।

"ठीक यही भारत की दशा थी। अङ्गरेज़ों ने वहां पर विदेशी राज्य नहीं फैलाया। वहां विदेशी राज्य पहिले ही से था। वास्तव में हमारा विचार बिल्कुल विपरीत है,·········जातीयता का भाव भारतवर्ष में भ्रम जान पड़ता है। स्वजातीय और विदेशीय का भाव एकदम उठ गया। ११वीं शताब्दी से भारतवर्ष को मुसलमानों के आक्रमण की लहर ही नहीं ढके हुए थी, बल्कि यदि हम और पहिले देखें तो हमें मालूम होगा कि इससे बहुत पहिले भी वहां जातियों की सम्मिश्रता थी।·········वास्तव में अपने को सन्तोष दिलाने के लिए हमें इतने पहिले की बातों पर विचार नहीं करना चाहिये। केवल इतना ही कहना बस होगा कि महमूद ग़ज़नवी के ज़माने से भारतवर्ष में लगातार मुसलमानों के आक्रमण होते रहे। मुग़लों के आने के पूर्व ही भारत के अधिकतर राज्य मुसलमानी हो थे। अतः इसी समय से हिन्दुस्तानी राज्यों में जातीयता का बन्धन टूट गया था, स्वत्व जाता रहा, और देशभक्ति पर विशेष ध्यान न रहा।

"हिन्दुस्तानियों को अङ्गरेज़ों से नीचा न मानकर ऐसी अवस्था में जो "अङ्गरेज़ों की भारत पर विजय" कहलाता है, समझाई जा सकती है। हम इसको मनुष्य का कर्तव्य समझते हैं कि अपने देश के लिए वह विदेशी से लड़े। परन्तु उसका देश ही क्या है ? जब इसका विचार करते हैं तो हमें पता चलता है कि इसके पहिले, कि हम अपना एक देश मानें, यह आवश्यक है कि हम वहां पर एक जाति में पले हों; और उस जाति को एक बड़े कुटुम्ब के सदृश मानते हों, जिससे कि यह स्वाभाविक ही है कि उस भूमि को हम अपनी माता के तुल्य देखें। परन्तु यदि जाति में एक बड़े कुटुम्ब का भाव ही नहीं है, वरन् वहां दो या तीन भिन्न मतानुयायी हैं, देश नहीं ग्राम ही अपने कुटुम्ब सदृश माना जाता है तो इसमें भारतवासियों का दोष नहीं कि उनमें देश-भक्ति के स्थान पर ग्राम-भक्ति ही हो। एक विदेशी राज्य के सामने सर झुकाना दूसरी बात है, और एक विदेशी राज्य की छाया से दूसरे विदेशी राज्य की छाया में आना बिल्कुल दूसरी बात है।

"भारत-विजय में, जैसा कि ऊपर कह आये हैं, आश्चर्यजनक बात तो यह है कि इसके लिए हमने कुछ किया ही नहीं, और इङ्गलैंड बिना किसी कठिनाई या प्रयास के ही भारत पर विजय प्राप्त कर सका। अंग्रेज़ों को किसी प्रकार का कर नहीं देना पड़ा, अंग्रेज़ी शासनाध्यक्षों को कोई क़र्ज़ नहीं लेना पड़ा, जन-संख्या में थोड़ी भी क्षति नहीं दिखलाई दी, न लड़ाई ही का भार हमें जान पड़ा, यद्यपि हम प्रायः यूरोप के बराबर आबादी वाला देश जीत रहे थे। यह बात असम्भव सी जान पड़ती है, परंतु इसका कारण मैंने ऊपर दे दिया है। अब इन लड़ाइयों की आर्थिक स्थिति की ओर ध्यान दीजिये। इसकी भी वही साधारण व्यवस्था है जो प्रत्येक युद्ध में सङ्गठित होती है। "Conquest pays it own expense" विजय स्वयं अपना ख़र्च चुका देती है। नेपोलियन को कभी कोई आर्थिक कठिनाई नहीं हुई, क्योंकि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह उन्हींके रुपयों का अधिकारी हो जाता जिनको वह युद्ध में पराजित करता। ठीक इसी प्रकार हिन्दुस्तान पर भी विजय प्राप्त की गई। वास्तव में अपने ही ख़र्च में हिन्दुस्तान जीता गया। अब मुख्य विचार इस बात का है कि हम फ़ौज कैसे ला सके; परन्तु अब हम विचार करते हैं कि सदा हमारे सहायक पांच में चार हिन्दुस्तानी सिपाही ही रहते थे तो यह कठिनाई भी दूर हो जाती है।

"इस महत्वपूर्ण विषय पर यदि हम अपना ध्यान आकर्षित करें तो (यदि मेरा भ्रम नहीं है) हमें भलीभांति मालूम हो जाय कि जिस अर्थ से ईस्ट-इंडिया-कम्पनी के अधिकार प्राप्त करने के कारण हम भारत के साथ 'विजय' शब्द का उपयोग करते हैं वह केवल असत्य ही नहीं है, बल्कि महा भ्रमोत्पादक भी है, और इस विषय को हम ऐसी सूची में डालने के लिए बाधित होते हैं जिसके साथ इसका कुछ वास्तविक सम्बन्ध नहीं है।......... 'विजय' शब्द उस स्थान पर उपयुक्त है जब कि एक राज्य दूसरे राज्य पर कुछ कार्यवाही करे। दो राष्ट्रों में लड़ाई होती है—एक ओर की सेना दूसरे दल पर आक्रमण करती है—राज्य पलट देती है या कम से कम ऐसी कोई बात उसके ऊपर डाल देती है जिससे उसकी स्वाधीनता का हरण हो जाय—यथार्थतः यही 'विजय' है। जब हम यह कहते हैं कि इंगलैंड ने भारतवर्ष पर विजय प्राप्त की तो हमें यह समझना चाहिये कि कुछ इस प्रकार की बात अवश्य हुई होगी। जब अलक्षेन्द्र (Alexander) ने फ़ारस के राज्य पर आक्रमण किया, और फ़ारस को पराजित किया था तब अलक्षेन्द्र ने विजय प्राप्त की थी।.........परन्तु भारतवर्ष पर ऐसा कुछ नहीं हुआ। अंगरेज़ों ने मुग़लों अथवा किसी अन्य ही नव्वाब या राजा पर धावा नहीं बोला था। अंग्रेज़ी राष्ट्र का प्रायः इससे कुछ भी सम्बन्ध न होता, यदि अंग्रेज़ों और फ़रासीसियों में पाँच बार लड़ाई न होती, जब कि भारत में फ्रेंच अधिकार बढ़ता जाता था। यह लड़ाइयां भारतवर्ष में भी हुईं, इसीसे कुछ हिन्दुस्तानी राज्यों की लड़ाइयों के साथ भी मिश्रित हो गईं। यदि हम यथार्थ अवस्था का निरूपण करना चाहें तो हमें चाहिये कि इस सामयिक और अनिश्चित घटना का पर्दा हटा दें, और तब देखेंगे कि 'विजय' ऐसी कोई वस्तु तो हुई ही नहीं। बात क्या हुई ? वह यही कि कुछ सौदागर बन्दरगाहों में रहते थे, जो राष्ट्र-विप्लव के कारण इसके लिए बाध्य हुए कि अपनी रक्षा के लिए एक फ़ौज रक्खें, और इस फ़ौज ने धीरे धीरे भारतवर्ष की प्रायः सभी भूमि को अपने अधिकार में कर लिया—ये सौदागर दैववश अंग्रेज़ ठहरे, और जो फ़ौज इन्होंने सङ्गठित की थी उसमें से (बहुत नहीं) एक छोटा अंश अंग्रेज़ों का भी था।

"विदेशी-द्वारा यह विजय नहीं कहलाती। यह तो आन्तरिक परिवर्तन है। किसी देश में जब राष्ट्र-विप्लव होता है तो यही नियम है कि शेष बची हुई शक्तियां आपस में लड़तीं हैं, और उनमें से जो सब से बलिष्ठ और प्रभावशालिनी हुई, वही अपना राज्य स्थापित कर लेती है। भारत में भी यही बात हुई। सन् १७५० में भारतवर्ष में राष्ट्र-विप्लव हुआ था, जिसका मुख्य कारण औरँगज़ेब का सन् १७०७ में मरण था। राजकीय शक्ति का प्रभाव जाता रहा, और साधारण नियम उदाहत होने लगा। सभी ओर छोटे छोटे राज्य अपनी प्रभुता फैलाने लगे। इनमें से मुख्य ज़ोर किराये पर काम करनेवाले सिपाहियों का था। इनके नायक तीन प्रकार के थे।

(१) राजकीय प्रान्तों में नियुक्त किये गये प्रधान कर्मचारी, जैसे निज़ाम जो हैदराबाद में नियुक्त थे।

(२) कोई साहसी सिपाही जो अवसर पाकर अपना प्रभाव बढ़ाने के लिए सामने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकल आया हो, जैसे हैदरअली जिसने मैसूर राज्य की स्थापना की।

(३) कोई राजा जो मुग़ल सम्राटों-द्वारा पूर्ण अधिकार में न लाया गया हो, जैसे पेशवा।

ये तीनों प्रकार के नायक ऐसे सिपाहियों-द्वारा एक दूसरे से लड़ा भिड़ा और लूट मार किया करते थे। ऐसी अवस्था पर नई शक्तियों के विकाश का अच्छा अवसर था, क्योंकि सिपाही सब जगह मिलते, और जो कोई उन्हें रुपया देता उसीके लिए वह लड़ते। फिर जिसके पास ऐसे सिपाहियों की फ़ौज है वही सब से बड़ा अधिकारी है, क्योंकि यदि उस समय किसी की शक्ति थी तो इन्हीं सिपाहियों की।

"अब रही भारतवर्ष की उन शक्तियों की बात जो एक राज्य स्थापित करने के लिए बढ़ीं। उनमें कुछ अंग्रेज़ी सौदागर भी थे जिनको कुछ सफलता की आशा थी। ये विदेशी अवश्य थे, परन्तु जैसा ऊपर लिख आये हैं, हिन्दुस्तानियों को देशी और विदेशी से क्या मतलब? ईस्ट-इन्डिया-कम्पनी के इस उत्थान पर बहुत से लोग आश्चर्य प्रकट करते हैं। परन्तु आश्चर्य की बात तो तब होती जब प्रत्यक्ष कारण न मिलते। ईस्ट-इंडिया-कम्पनी के पास कुछ बल पहिले से ही था, उसके पास कुछ क़िले थे, समुद्र पर भी उसका कुछ अधिकार था, और सब से मुख्य बात तो यह थी कि कम्पनीवालों का एक सङ्गठन था, जिससे उसके नाश होने का भी विशेष भय न था। जब एक व्यक्ति का बड़ा भारी अधिकार हो जाता है तो हमें बहुत आश्चर्य नहीं होता। फिर हैदरअली ऐसे लोगों के लिए आश्चर्य करने की आवश्यकता है न कि कम्पनी के लिए। अस्तु, हमारा मतलब यह है कि विजय का जैसा अर्थ हम लेते हैं वैसा हमें न लेना चाहिये। यह एक ऐसी घटना है जिसमें दो राष्ट्र सम्मिलित नहीं थे, और न विदेशी बातों ही से इसका कुछ सम्बन्ध था।

"मानलो कि जिन सौदागरों ने भारतवर्ष पर अधिकार जमाया वह अंग्रेज़ न होकर पारसी होते तो भी यही स्थिति रहती, वह भी प्लासी और बक्सर की लड़ाई लड़ते, और वह भी मुग़लों से दीवानी वसूल करते। इस अवसर पर कम्पनी ने अपना अधिकार जमाया, यह कोई आश्चर्यजनक बात न थी। कम्पनी को इङ्गलैण्ड से भी कुछ सहायता मिलती थी।

"हमारे इस अधिकार प्राप्त करने पर 'आश्चर्यजनक', 'तअज्जुब' ऐसे शब्द कहे जाते हैं। परन्तु यह विजय पर न कहे जाने चाहिये, यह अधिकार प्राप्त करने पर कहे जाने चाहिये। एक बात आश्चर्यजनक हो सकती है, यद्यपि उसका गूढ़ कारण नहीं जान पड़ता.........।

"जो कुछ विजय पर मैंने कहा है उससे यह मतलब है कि विजय का अर्थ जैसा हम लेते हैं वैसा नहीं लिया जा सकता। अंग्रेज़ों ने भारत पर विजय नहीं प्राप्त की है। बात यह हुई कि दैववश भारत में कुछ अंग्रेज़ थे, जिन्होंने मिलकर रणजीतसिंह अथवा हैदरअली की तरह अपनी प्रभुता सारे भारत पर फैला ली है। अंग्रेज़ों की विजय नहीं हुई, बल्कि आन्तरिक परिवर्तन के कारण ही अंग्रेज़ों ने अपना अधिकार जमा लिया।"

पाठक! अब आप कुछ देर सेली महोदय की उक्तियों पर ध्यान दीजिये। आशा है कि आप भी लेखक से सहमत हो जायँगे कि "अंग्रेज़ों ने वास्तव में भारतवर्ष पर विजय नहीं प्राप्त की बल्कि राष्ट्र-विप्लव के कारण जो आन्तरिक परिवर्तन हुआ उसी की भीड़भाड़ में भारत के राज्याधिकारी बन गये हैं। दूसरी बात नहीं है, और न उनका भारत पर कुछ थोड़ा भी स्वत्व था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत में डाक लेजाने की रीति।

[लेखक—श्रीयुत कृष्णविहारी मिश्र ।]

भारत के इस नवीन युग में प्रत्येक मनुष्य का किसी न किसी कारण डाक-विभाग से कुछ सम्बन्ध रहना ही है। यदि अंगरेज़ी शिक्षा से दीक्षित जेन्टेलमैन को दैनिक समाचारपत्र पढ़ने के कारण पोस्टमैन की बाट जोहनी पड़ती है तो अशिक्षित ग्रामवासी किसान को भी अपने दूरवासी नातेदारों का समाचार पाने के हेतु डाकिये का स्वागत करना पड़ता है। इसी के प्रताप से प्रयाग के 'लीडर' को आप उसी दिन मद्रास में तथा मद्रास से प्रकाशित 'हिन्दू' को उसी दिन प्रयाग में पढ़ सकते हैं। श्रीनगर (काश्मीर) में स्थित अपने मित्र को 'श्री रंगपट्टन' से आप पत्र भेजिये, उन्हें तीसरे दिन अवश्य ही प्राप्त होगा। डाक-प्रबन्ध आवागमन की सरलता पर विशेष निर्भर है। इसके लिए उत्तम सड़कों की बड़ी आवश्यकता है। इस विषय पर लार्ड मेकाले ने अपनी जो सम्मति प्रकट की है, उसका आशय है:—

"गमन-सुविधा-सम्बन्धी प्रत्येक प्रकार की उन्नति से मनुष्य की नैतिक, मानसिक और शारीरिक शक्तियों को लाभ पहुंचता है। भिन्न २ प्रान्तों की उपज और कला के विनिमय ही में सुविधा नहीं होती है, वरन् जातीय और प्रान्तीय द्रोह को दूर कर मनुष्य-जाति की भिन्न भिन्न शाखाओं को एकत्रित करने में बड़ी सहायता मिलती है।"

अब हमें यह जानने की आवश्यकता है कि प्राचीन समय में हमारे देश में सड़कों की क्या अवस्था थी। हमारे यहां इतिहास-ग्रन्थों की एक प्रकार से न्यूनता ही है। कोई भी इतिहास का विश्वस्त ग्रन्थ संस्कृत में नहीं देख पड़ता, तथापि अन्य ग्रन्थों के देखने से ज्ञात पड़ता है कि सड़कों का प्रचार भारतवर्ष में चिरकाल से वर्तमान है। रामायण, महाभारत आदि में राजधानी की उत्तम सड़कों का बड़ा ही मनोहर वर्णन देख पड़ता है। वस्तुतः वर्तमानकाल की सब सुविधाओं के न होते हुए भी भारत में सड़कों का सम्यक् प्रचार था। इसमें किसी प्रकार का सन्देह करना वृथा है। अँगरेज़ों ने बौद्धों के समय में इस प्रणाली के पूर्ण रूप से प्रचलित होने को इतिहासों में स्वीकार ही किया है। मुसलमान राजाओं में फ़ीरोज़, शेरशाह और अकबर ने सड़कों की उन्नति के विषय में बहुत कुछ यत्न किया था। निदान १६वीं और १७वीं शताब्दी में भारत भलीभांति सड़कों से जकड़ा जा चुका था। प्रसिद्ध इतिहास-लेखक टैलब्वाइज़ व्हिलर के कुछ वाक्यों का आशय है:—

"सभ्यता के हेतु सब से मुख्य बात यह है कि लोगों को बेरोकटोक तथा सरलतापूर्वक आने जाने का सुभीता हो, अर्थात् वे अनेक विघ्न-बाधाओं से निरापद हो देश-पर्यटन कर सकें। १७वीं शताब्दी में भारत में इस विषय की कुछ भी न्यूनता न थी। शाहजहां तथा औरंगज़ेब के समय में मोगल-साम्राज्य में सड़कों और डाक का जो प्रबन्ध था वह फ्रांस के चौदहवें लुई के राजत्व-समय के तथा इङ्गलेंड के द्वितीय चार्ल्स के समय के डाक-प्रबन्ध से यदि अधिक उत्तम न था तो वैसा तो अवश्य ही था। यह बात विवादग्रस्त है कि इस प्रणाली के आविष्कारकर्त्ता तातार-वंशज मोगल ही थे, अथवा अशोक, शिलादित्य जैसे प्राचीन हिन्दू राजाओं की चलाई हुई प्रणाली के अनुसरण-मात्र करने का सौभाग्य उन्हें प्राप्त था। परन्तु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इससे उस समय की आने जाने में जो सुविधा थी उसमें किसी प्रकार का फ़र्क़ नहीं पड़ता है।"

अवश्य ही समय में सड़कों की दशा उत्तरीय भारत ही में अच्छी थी। आर्यगण की निवासस्थली तथा यवन राजाओं की विस्तृत साम्राज्य-भूमि को प्रकृति ही ने कुछ अद्भुत गुण प्रदान किये हैं। नाना प्रकार की नदियों के जल से पूर्ण तथा समतल-धरासम्पन्न उत्तरीय हिन्द की भूमि में जैसी सड़कों की आशा की जा सकती है वैसी दक्षिण प्रान्त की ऊबड़-खाबड़ भूमि में नहीं हो सकती है, और वास्तव में बात है भी ऐसी ही। मोग़ल-राजत्व-काल में आगरा भारत की सड़कों का केन्द्र-स्थल था। वहां से दिल्ली, लाहौर, काबुल और इस्पहान तक सड़क लगी थी। उधर प्रयाग, काशी और पटना से होती हुई ढाका तक एक ही सड़क चली गई थी। बुरहानपूर और देवगढ़ होते हुए गोलकुन्डा तक भी प्रशस्त पथ था, और दक्षिण जाने का वही एकमात्र मार्ग था। सूरत, भरौंच, बरौदा, राजपूताना, ग्वालियर आदि भी सब बड़ी बड़ी सड़कों के किनारे ही पर स्थित थे, पर सबका सम्बन्ध आगरा ही से था। प्रायः ये सब मार्ग सघन वृक्षावलियों से आवृत रहते थे, अर्थात् दोनों ओर वृक्षों की पंक्तियाँ रहती थीं। कुछ कुछ दूर पर कुओं का भी प्रबन्ध था, कहीं कहीं पर सरायें भी थीं। बैलगाड़ी, रथ, घोड़े, हांथी और ऊंटों ही पर लोग प्रायः यात्रा करते थे।

इन सब तत्कालीन प्राप्त सुविधाओं के होते हुए भी एक स्थान से दूसरे स्थान को जाना निरापद न था। जंगली पशु, डाकू आदिकों के अतिरिक्त सड़कों की अवस्था भी वर्तमान काल की ऐसी न थी। पक्की सड़कों से आज भारत जकड़ दिया गया है, ग्रेटट्रङ्क रोड आदर्श-स्वरूप स्थित है। पर उस समय की सड़कों की स्थिति जानने के हेतु, यदि देहात के किसी गलियारे में वर्षा ऋतु में चले जाइये तो आर-इस सूरता से उस समय की सड़कों की अव-स्था विदित हो जायगी। दिल्ली का प्रतिद्वन्द्वी लखनऊ नगर, यद्यपि भारतवर्ष के मुसलमानी राजत्व-काल के इतिहास में भली भांति प्रसिद्ध है, और उस समय में वह अपनी षोड़श कलाओं से देदीप्यमान हो रहा था, दूर दूर तक उसकी प्रशंसा फैली थी, वहां का रहन-सहन बोल-चाल आदर्श माना जाता था, इस नगर में जनता के हित-सम्बन्धी कार्य भी प्रायः हुआ करते थे, तथापि देखिये, प्रसिद्ध कवि बेनीजी निम्नलिखित कवित्तों से वर्षा-काल में लखनऊ की दुर्दशा का कैसा परिचय देते हैं:—

कवित्त।

अड़ि जात बाजी औ गयन्द गन गड़ि जात,
सितुर अकड़ि जात मुशकिल गऊ की।
दामन उठाय पांय धोखे जो धरत होत,
आप गड़ि कांप रहि जात पाग मऊ की॥
बेनी कवि कहैं देखि थरथर कांपै गात,
रथन को पथ न विपति बरदऊ की।
बारबार कहत पुकारि करतार तोसों,
मीचु है कबूल पै न कीचु लखनऊ को॥ १॥

एकै पिछलत तिन्हैं लखे पिछलत एकै,
एकै परे कीच मैं विधाता को बकत हैं।
ठौर ठौर नदी उमड़ी है नापदानन की,
हाथीवान हूँ लै हाथी जाय ना सकत हैं॥
बरसत मेंह ऐसो दशा होत लखनऊ बीच,
बरणत शेषहू के आनन थकत हैं।
देवता मनाये पुन्य पिछली सहाय जो,
डेरे पहुंच जाय ताके पूरन बखत हैं॥ २॥

एकै खरे रोवैं एकै बसन निचोवैं, एकै,
जखम को टोवैं देखि देह थहराति है।
एकै लेत थाहैं ऊँची करि करि बाहैं,
एक जोर को उमाहैं ना जुगुति ठहराति है॥
बेनी कवि कहै और कहां लौं बखान करौं
ऐसेई सकल मुशकिल दिन राति है।
एकै फंसे कटि लगि एकै गरेवान लगि
आप गड़ि कांप रहि माला सी फहराति है॥३॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

झीला के परत झील गली गली भरें
और ऊपर पनारन के झरना झरत हैं।
हाथिन के दल के तुरङ्ग बड़े बल के
शुतुर खर खच्चर बिलोकि बिडरत हैं॥
आगे भीर भारी पीछे पुलिस पुकारी
लोग तरकस कैसे तीर टारे न टरत हैं।
सकटे सकट, रथ अटके अनेक जहां
लपटे दिवालन में रपटे परत हैं॥ ४॥

सहृदय पाठकगण! उपर्युक्त छन्दों में अतिशयोक्ति होते हुए भी उस समय की शोचनीय मार्ग-दशा का दिग्दर्शन आप लोगों को अवश्य हो गया होगा। औरँगज़ेब आलमगीर देश में बहुत घूमा करता था, अतः सड़कों की दशा उसके समय में उत्तम रहती थी। "पत्रवाहक" शब्द का व्यवहार बहुत प्राचीन समय से हमारे पूर्व-साहित्य में पाया जाता है, जिससे जान पड़ता है कि पत्र भेजने की प्रथा इस देश में बहुत प्राचीनकाल से प्रचलित है। बौद्ध राजाओं के समय में तो इसके प्रचार का पूर्ण प्रमाण मिलता है। क़ासिद, डाकिया, हरकारा आदि यवनों के समय में अवश्य थे; परन्तु उन्हें 'राज-पत्रवाहक' ही कहना उपयुक्त होगा। दिल्लीश्वर भिन्न भिन्न प्रान्तों के शासकों के निकट अपनी आज्ञा भेजने ही के हेतु इन्हें नियुक्त करता था। अँगरेज़ इतिहासकारों के मतानुसार शेरशाह सूर ने पहिले पहिले अश्वारोही सवारों के द्वारा डाक ले जाने की व्यवस्था की, पुनः अकबर ने इसका संशोधन किया, आलमगीर के समय में यह भली भांति प्रचलित थी। इसके पूर्व पैदल डाक ले जाने की जो प्रथा थी उसका किंचिदाभास कदाचित् हमारे प्रेमी पाठकों को अरुचिकर न होगा। उसका दिग्दर्शन करा देना उचित प्रतीत होता है। टालब्वाइज़ व्हिलर ने इस विषय में जो कुछ लिखा है उसका भावार्थ यह है—

"भारत में पैदल डाक ले जाने की प्रथा भी अत्यन्त उत्तम थी। सर टामस रो के पश्चात् जितने पथिक इस देश में आये हैं उन सब ने इसका उल्लेख किया है। साम्राज्य के भिन्न भिन्न नगरों से बादशाह को समाचार भेजने के हेतु कर्मचारीगण इन्हीं हरकारों को काम में लाते थे। सड़कों पर प्रत्येक ६ मील के अन्तर पर एक झोपड़ा या डाकघर रहता था। प्रत्येक हरकारा इसी डाकघर के फ़र्श पर पत्र फेंक देता था। किसी के हाथ में पत्र दे देना अशुभ समझा जाता था। यहां से दूसरी मंज़िल तक ले जानेवाला हरकारा उसे उठाकर तुरन्त अपनी शक्ति भर दौड़ता हुआ चल देता था। रात्रि को सड़क के दोनों ओर लगे हुए वृक्षों के कारण उसे सीधे पथ पर जाने में कठिनता न होती थी। जहां वृक्षों का अभाव होता था वहां निकट के ग्रामवासीगण प्रत्येक ५०० क़दम पर कुछ पत्थरों का ढेर एकत्रित कर उसे चूने से पुतवा देते थे, इससे हरकारे को मार्गान्वेषण का कष्ट नहीं उठाना पड़ता था। इन सब उपायों के फलस्वरूप हरकारा अश्वारोही डाक से पहिले पहुंचता था। घोड़े के दोनों ओर पथप्रदर्शन के हेतु मशालची चलते थे, इस कारण उनके बराबर रहने के कारण घुड़सवार धीरे धीरे चलने को बाध्य रहता था। पैदल चलनेवाले को इस प्रकार की किसी झंझट में नहीं पड़ना पड़ता था, चाहे घोर अन्धकार या आंधी हो, क्यों न हो। बस, यही पैदल डाक लेजाने की व्यवस्था थी, और शेरशाह सूर के पूर्व इसीका पूर्ण प्रचार था। राजाज्ञा को देश के भिन्न भिन्न अंचलों में पहुंचाने का यही एकमात्र साधन था। कभी कभी राजदरबार के प्रभावशाली व्यक्ति भी इस प्रकार पत्र भेजने का साहस करते थे। परन्तु साधारण जनसमुदाय का इससे किसी प्रकार का सम्बन्ध न था।

अंग्रेज़ों ने १८३७ ई० में पहिले पहिल डाक-प्रबन्ध की वर्तमान प्रणाली के अनुसार कार्य आरम्भ किया। कहना नहीं होगा कि इनका भी प्रबन्ध स्वहित-साधन ही के हेतु था। स्वार्थ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को कम्पनी बम्बई और मद्रास-कम्पनियों की यथार्थ दशा जानते रहने के कारण ऐसा प्रबन्ध करने को अग्रसर हुई थीं। रेल का उस समय तक भारत में कोई नाम भी न जानता था, अतएव डाक नौका-द्वारा अथवा स्थलपथ पर उक्त उपायों से इन भिन्न भिन्न स्थानों को पहुंचाई जाती थीं। बम्बई तक समाचार पहुंचाने में १ या १॥ मास लग जाता था। एक साधारण पत्र का डाक-व्यय ॥।) लगता था। जितना ही दूर पत्र भेजने का स्थान होता उतना ही डाकव्यय बढ़ता जाता था। तौल के अनुसार भी डाकव्यय में परिवर्तन होता था। उस समय के डाक-प्रबन्ध में एक बड़ी असुविधा यह थी कि जब पत्र पानेवाला लेने से इनकार करता तब प्रबन्धकों को बड़ी कठिनता में पड़ना पड़ता था। इन्हीं कठिनाइयों को दूर करने के हेतु वर्तमान समय में प्रचलित टिकटों की सृष्टि हुई थी। आज दिन डाक-विभाग के टिकटों का प्रचार समग्र संसार में विशद रूप से है, तथापि १८४० ई० के पूर्व इन टिकटों का कोई नाम भी न जानता था। आज जो सम्बन्ध जल और मीन का है, जो सम्बन्ध अग्नि और धुआं का है, जो सम्बन्ध हंस और मानसरोवर का है, जो सम्बन्ध फूल और फल का है प्रायः वही सम्बन्ध डाक-विभाग और टिकटों का है। इन टिकटों की उत्पत्ति-कहानी बड़ी विचित्र है, अतएव उसे हम यहां दे देना उचित समझते हैं:—

"सन् १८४० ई० में एक पथिक महाशय उत्तरी इंगलैंड में भ्रमण कर रहे थे। संध्या समय वे एक सराय में जा टिके। एक साधारण किसान की लड़की वहां पहिले ही से ठहरी हुई थी। संध्या समय एक पोस्टमैन पत्र लेकर आया, और उस लड़की को उनमें से एक पत्र देने लगा। लड़की ने शीघ्रता से पत्र लेकर उलट पलट कर देखा, पश्चात् आंखों में आंसू भर कर उसने पत्र पोस्टमैन को लौटा दिया, और दुःखित होकर बोली कि वास्तव में यह पत्र मेरा ही है, और मेरे भाई ने मेरे पास भेजा है, परन्तु मुझ जैसी धनहीना के पास इतना द्रव्य कहां कि डाकव्यय दे सके, अतएव आप इसे वापस ले जायं। उन पथिक महाशय को यह समाचार सुन दया आगई, और उन्होंने तुरन्त डाकव्यय देकर पत्र लड़की को दिलवा दिया। पोस्टमैन के चले जाने के पश्चात् उस लड़की ने उन पथिक महाशय से कहा कि आपने इतना कष्ट व्यर्थ ही उठाया। वास्तव में इस पत्र के अन्दर कुछ भी नहीं है। ऊपर ही कुछ नियमित चिह्न ऐसे बने हैं जिनसे मैं भाई साहब के शुभ सम्वाद जान गई। हम सदा ही इसी प्रकार से पत्र-व्यवहार करती आई हैं, और डाकव्यय कभी कुछ भी नहीं दिया। यह सुन उन महानुभाव को बहुत आश्चर्य हुआ, और ऐसी वञ्चकता पर बड़ा क्रोध उत्पन्न हुआ। इन महानुभाव का नाम रालैंड हिल था। इस घटना से इनके चित्त पर ऐसी चोट बैठी कि वे इस वञ्चकता को दूर करने का उपाय सोचने लगे। अन्त में इनके ध्यान में टिकटों की बात आई। फिर क्या था, इस प्रस्ताव को उन्होंने सरकार के समक्ष उपस्थित किया। बहुत वाद-विवाद के पश्चात् प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। तदनुसार पहिले पहल १० जनवरी १८४० ई० को लन्दन नगर में -) के टिकट प्रचलित हुए।"

भारत में टिकटों का प्रचार १८५४ ई० में हुआ, उसी वर्ष "इंडियन पोस्टल ऐक्ट" पास हुआ। १८७६ ई० में भारतवर्ष का डाक विभाग यूनिवर्सल पोस्टल यूनियन में सम्मिलित हो गया। तभी से संसार के अन्य देशों से डाक-द्वारा पत्र-व्यवहार कर सकने का स्वत्व भारत को भी प्राप्त हुआ। वी० पी० की प्रथा का प्रचार १८७७ ईस्वी से हुआ। १८७९ ई० में भारतीय डाक-विभाग ने एक पैसेवाले पोस्ट कार्डों का प्रचार आरम्भ किया। तत्कालीन देशी समाचारपत्रों ने इस प्रथा की तीव्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से आलोचना की । उनका कहना था कि रहस्य खुल जाने के भय से लोग बहुत कम पत्र लिखेंगे । लार्ड मेकाले ने वास्तव में ठीक कहा कि बहुत से लोग नवीन बात का केवल इसी कारण विरोध करते हैं कि वह नवीन है । निदान इस विरोध का कुछ फल न हुआ, और पोस्टकार्डों को दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति होती गई । यहां तक कि भारत में पोस्टकार्डों ही का इस समय अधिक प्रचार है । सन् १८८० ई० में विदेश में रहनेवालों के सुभीते के लिए इंगलैंड मनीआर्डर-प्रथा को भी सम्मिलित किया । मलेरिया ज्वर से आक्रान्त मनुष्यों को मरते देख सरकार ने दयापूर्वक १८९२ ई० से प्रत्येक डाकघर में कुनैन की बिक्री का प्रबन्ध कर दिया । १८९८ में इंडियन पोस्टल ऐक्ट का संशोधन हुआ, और उसी के अनुसार) के टिकटों का प्रचार भी आरम्भ कर दिया गया । डाक-विभाग की उन्नति विशेषकर लार्ड डलहौसी के द्वारा हुई, डाक-द्वारा किस २ प्रकार के पत्र कितने मूल्य में जाते हैं, यह जानने के हेतु पोस्टल गाइड पुस्तक पढ़नी चाहिये । डाक-विभाग में संलग्न सेविंग बैंक्स द्वारा मनुष्य अपने अल्प धन को भी अपव्यय से बचा सकता है । डाक के टिकटों में समय समय से परिवर्तन होता आया है । विक्टोरिया के समय का एक पैसे का टिकट लाल रंग का होता था; परन्तु आज कल वही भूरे रंग का प्रचलित है । प्रयाग-प्रदर्शिनी में ऐसे अनेक टिकटों के नमूने रक्खे गये थे ।

भारतीय समाज पर इस विभाग का बड़ा ही उत्तम प्रभाव पड़ा है । इस विभाग के द्वारा वाणिज्य की दशा बहुत कुछ सुधरी है । रजिस्ट्री और बीमा की प्रथा ने यथासाध्य जालसाज़ी का मुख मर्दित करने का उद्योग किया है । वी० पी० और मनीआर्डर के प्रबन्ध से भी नाना भांति के कष्ट दूर हो गये हैं । पुस्तकों और पेटेन्ट दवाओं के व्यापार की तो मानो वी० पी० की प्रथा ही सब कुछ है । देहात में ग्राम्य लोग घर बैठे उचित मूल्य पर रामायण मँगा सकने में अपना अहोभाग्य मानते हैं । ग्रामों में मनीआर्डर ले जानेवाले डाकिये का आशातीत सम्मान होता है । देहात में डाक ले जाने में ये डाकिये बड़ी असावधानी करते हैं, और वहां के लोगों को डाक-विभाग के उत्तम प्रबन्ध से अधिकांश में वञ्चित रहना पड़ता है । प्रसिद्ध कवि कूपर ने इंगलैंड के डाकियों का बड़ा ही मनोहर वर्णन पद्य में किया है । उनके कतिपय पद्यों का भावार्थ हम हिन्दी-पद्य में देते हैं:—

अति सरल चित जो पत्रवाहक शीत दुःख उठाय,
पै तऊ हर्षित देखि हो तेहि चलत है जब धाय ।
लहि पत्र तासों जन अनेकन जात रहि करि हाय,
पै कछुक नर पढ़ि सुभ संदेशन जात हैं हरषाय ।
कहुं भस्म गृह की कथा है कहुँ नाशधन दरसाय,
कहुं जन्म मृत्यु विवाह वर्णन को पढ़त चितलाय ।
कहुं नेत्र-बुन्दनसों मलिन जब पत्र कर में लाय,
तब सुमिरि लेखक की दशा सम्पूर्ण पढ़ो न जाय ।
कोऊ लिखत है प्रियतमा को विरह-दुःख जनाय,
पुनि साऊ पति को देति उत्तर कष्ट विविधि उठाय ।
नित प्रति बांटत रहत है ऐसे पत्र अनेक,
तिन में लिखित विवाद नहिं व्यापत ताको एक ।

प्राचीन समय में विदेश-स्थित भाईबन्दों के समाचार किसी विशेष आदमी ही के भेजने पर प्राप्त होते थे । इसमें बहुत कुछ व्यय हो जाता था । परन्तु अब यह सब काम एक पैसे के पोस्टकार्ड ही से चल जाता है । इसी कारण पत्र लिखने की सामर्थ्य प्राप्त करने की चाह लोगों में बढ़ रही है, और अनेक लोग केवल इसी कारण से पढ़ने का श्रम उठाते हैं । इस प्रकार डाक-विभाग विद्यादान का भागी बन रहा है । अकेले सन् १९०३ ई० में २५ लाख ४०. हज़ार से ऊपर पोस्टकार्ड भारतवर्ष में लिखे गये थे । निदान अशिक्षितों को पत्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखने की चाट लगाकर शिक्षित बनाने और शिक्षितों की बुद्धि का विकाश सामयिक, दैनिक, साप्ताहिक एवं मासिक पत्रों के प्रचार-द्वारा करने का पूर्ण अभिमान इस विभाग को प्राप्त है।

१६०२ से इस समय समाचारपत्रादि का भारत में अधिक प्रचार है। यहां तक कि दुगुने तिगुने तक संख्या पहुंच गई है। १६०२ में सामयिक पत्रों की संख्या १२८५ थी। तार और डाक से गवर्नमेन्ट की वार्षिक आय सात करोड़ अस्सी लाख है। इस प्रकार केवल १० लाख वार्षिक की बचत होती है, जो विशेष करके इसी विभाग की उन्नति में व्यय की जाती है। तार और टेलीफ़ोन के कारण डाक-विभाग को कुछ धक्का पहुंचा है, क्योंकि जो काम डाक-द्वारा सिद्ध होता है वही इनके द्वारा अत्यन्त शीघ्रता से सम्पन्न हो जाता है। तथापि विशेष आशङ्का की कोई बात नहीं है, क्योंकि इनके द्वारा समाचार भेजने में व्यय अधिक पड़ता है, और समाचार गुप्त पर प्रकट हो जाता है। इस कारण आवश्यक अवसरों को छोड़कर जनसाधारण इसका अवलम्बन बहुत कम लेते हैं।

भारत में आज चारों ओर शिक्षा-विस्तार की धूम मची है। अनिवार्य शिक्षा का प्रस्ताव गवर्नमेंट के विचाराधीन है। जाति-सेवकगण अपने भिन्न भिन्न विश्वविद्यालयों-द्वारा निज निज जाति को शिक्षित बनाने में कोई कसर नहीं रक्खा चाहते हैं। यदि ईश्वर की कृपा रही तो "एक दिना नतु एक दिना प्रिय भारत के दिन फेरि फिरंगे।" यहां भी प्रति शतक में शिक्षितों की संख्या उतनी ही पहुंच जायगी जितनी कि इंगलैंड या अमेरिका में है। उस समय डाक-विभाग की भी यथेष्ट उन्नति अवश्य होगी, और नहीं तो जिस प्रकार आज भारतीय किसान तम्बाकू पीने के आदी हैं वैसे ही समाचारपत्र पढ़ने के अवश्य होंगे। यदि ऐसा समुज्वल भविष्य भारत के भाग्य में बदा है तो भारतीय डाक-विभाग का पथ भी पूर्णरूपेण परिष्कृत होगा, इसमें किसी प्रकार का सन्देह नहीं है। हमारी ईश्वर से प्रार्थना है कि वह भारत को ऐसा दिन शीघ्र दिखाये।

भारतीय शिक्षा का प्रश्न।

[लेखक—श्रीयुत भगवन्नारायण भार्गव।]

राष्ट्रीय शिक्षा के प्रश्न, उनका चाहे जिस प्रकार आप उत्तर दें, राष्ट्रों के जीवन-मरण से सम्बन्ध रखते हैं। वाइकाउण्ट मौर्ले ब्लेकबर्न।

(१)

यह ठीक ही कहा गया है कि विचार और शब्द कर्म के आदि रूप हैं, और प्रति संस्था, जो यह समझती है कि उसके नैतिक और चारित्रिक अधिकार उसके अस्तित्व को स्थायी रखने में असमर्थ हैं, मनुष्यों के न केवल कार्य किन्तु उनके विचार और शब्दों को भी स्वाधीन रखती है। प्रत्येक राज्य, जो आरम्भिक अवस्था की रक्षा करना चाहता है वह, सदैव इसी प्रयत्न में रहता है कि मनुष्यों के विचारों और मतों को न केवल शासन-सम्बन्धी विचारों में ही किन्तु मनुष्यवर्ग के समस्त कार्यक्षेत्र के विविध भागों में परिवर्तित करे। इस प्रकार स्वाधीन करने का उत्तम मार्ग यही है कि जातीय शिक्षा-यन्त्र को प्रभावपूर्ण उपाय से अपने वश में कर ले। फ्रांस-राज्य की प्रजा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तंत्रता जाति पर उसकी शिक्षानीति-द्वारा ही अधिकार जमा रही है, जैसे कि प्रशिया का शासकतन्त्र विश्वविद्यालयों को राज्याधीन रख-कर अपने को स्थायी बना रहा है।

यह सिद्धान्त, जो चिरकाल से प्रत्येक शक्तिशाली पद का मुख्य आश्रय रहा है, भारतीय ब्रिटिश शासन की शिक्षा-नीति का आदर्श है। वास्तव में हमारे देश में शिक्षा कभी स्वतन्त्र और अनियन्त्रित नहीं रही। ब्राह्मण-प्रधान भारत के समय में पूरा २ प्रयत्न इसका किया जाता था कि शिक्षा की अवस्था ऐसी रहे जिससे ब्राह्मणों की ऊँची पदवी बनी रहे। समालोचक सुगमता से ब्राह्मण-शिक्षा-नीति में वर्तमान शिक्षा के दोषों के समान छिद्र ढूंढ़ सकता है। यदि हम यह कहें कि हमको विदेशी भाषा द्वारा शिक्षा दी जाती है तो ब्राह्मणों के समय में भी संस्कृत द्वारा शिक्षा देना अनिवार्य था, जो उस समय के बहुत से निवासियों के लिए वैसी ही थी जैसे कि हम लोगों के लिए अङ्गरेज़ी है।

यदि अब हम यह कहें कि ब्रिटिश शासन में हमको सामुद्रिक तथा सैनिक शिक्षा और उच्च कलाकौशल तथा शिल्प-ज्ञान की शिक्षा नहीं दी जाती तो यह भी कहा जा सकता है कि जो शूद्र वेदमन्त्रों को सुन भर लेता था उसको गात्र काट लेने का दंड दिया जाता था, और भारतीय इतिहास के किसी समय में शिक्षा के ऐसे दोष प्रचलित नहीं थे जैसे अधिक और अन्यायपूर्ण ब्राह्मणों के भारत में।

यह तर्कना हमारे उद्देश्य के लिए हानि-कारक नहीं है। निःसंदेह इससे हमारा सिद्धान्त सिद्ध होता है कि प्रत्येक शक्ति शिक्षा-यन्त्र-द्वारा प्रजा के विचारों को नियन्त्रित रख-कर अपने को स्थायी बनाती है। ब्रिटिश तथा ब्राह्मण-भारत में जाति-विशेष की उच्चता रखना नीति का मुख्य और स्थायी मूलमन्त्र है। यही स्वतन्त्रता का अविश्वास मुख्य बात है, जिसको हमको सामना करना है, और भारतीय शिक्षा के पुनः संगठन के पहिले समाज की उन्नति के प्रति इस दोष-प्रधान भाव का परिवर्तन होना चाहिये। भारतीय शिक्षा आजकल पूर्ण-तया राज्याधीन है। शिक्षा-सम्बन्धी नीति तथा आदर्श का प्रबन्ध और परिष्करण उसी रूप से राज्य के हाथों में है जैसे कि ब्राह्मण-काल या जीज़ियट समय में थे। विश्वविद्यालयों की स्थापना सरकारी आज्ञाओं से होती है, और उनका अस्तित्व उसी की आज्ञा और इच्छा पर निर्भर है, इनके प्रबन्धकारी भी राज्याश्रित होते हैं। सरकारी नौकरी के लिए उनकी परीक्षाएँ द्वार हैं, और इस प्रकार स्वतन्त्र-शिक्षा का उद्योग नष्ट किया जाता है। वह शिक्षाप्रणाली का निरीक्षण करके कुछ विषयों के अध्ययन को रोकती और कुछ की शिक्षा को उत्तेजित करती है, और मानसिक शक्ति को परिमित चक्र में नियन्त्रित करती है। वह अध्यापक के कर्म-शीलत्व को परिमित करती है, उसको ज्वलन्त समस्याओं पर सम्मति प्रकट करने से रोकती है, और उसे ऐसे कर्तव्यों से बाँध देती है जिन को एक स्वाभिमानी और देशभक्त नागरिक अङ्गीकार नहीं कर सकता। भारतीय शिक्षण-नीति का इतिहास, स्वतन्त्रता के इस अविश्वास के उन्नतिशील संस्करण का, राज्याधीन शिक्षा के सिद्धान्त की वृद्धिशील स्वीकृति का और इस सिद्धान्त के ज्ञान की रीति के विकाश का इतिहास है।

यह स्वतन्त्रता का अविश्वास, जो राष्ट्रवादी के शिक्षा-आदर्श को आज्ञाबद्ध बना देता है, न केवल उच्च शिक्षा ही में दृष्टिगोचर होता है, किन्तु प्रारम्भिक शिक्षा की, अधिकारीतन्त्र की, नीति में अधिक स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। उस पर विचार करने से एक बात असंदिग्ध है कि अधिकारीतन्त्र प्रजा को शिक्षा देने से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डरता है। इससे बढ़कर भारत से ब्रिटिश अधिकारीतन्त्र की आत्मिक हीनता नहीं है कि वह अनिवार्य प्रारम्भिक शिक्षा को विशेष रूप से धक्का पहुंचाता है। उच्च शिक्षा के व्यय की वृद्धि करके जनता की उच्च शिक्षा में बाधा डाली गई है। उनको सार्वजनिक प्रारम्भिक शिक्षा न देकर जनता को मूर्ख रखने का यत्न किया गया है, और उसमें सफलता भी प्राप्त हुई है। हमारे राष्ट्रीय अस्तित्व के कठिन प्रयत्न में यह एक हीनता है कि समस्त शिक्षा सम्बन्धी संस्थाएं अधिकारीतन्त्र के अधीन हैं। काशी विश्वविद्यालय के समान संस्थाएं भी, जो सरकारी कृपा से ही उत्पन्न हुई हैं, भारतीय अधिकारीतन्त्र के विस्तृत और बलिष्ठ अधिकार से मुक्त नहीं रह सकीं। उस पर शंका की जाती है, और उसका निरीक्षण रक्खा जाता है। सरकार को यह अधिकार है कि किसी अध्यापक की नियुक्ति के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दे। शिक्षा के माध्यम के लिए वह हिन्दी को अस्वीकार करती है। जब ऐसी २ अधीन संस्थाएं भी संदिग्ध दृष्टि से देखी जाती हैं तो फिर गुरुकुल और शान्तिनिकेतन के तुल्य स्वतन्त्र संस्थाएं कैसे उस दृष्टि से बच सकती हैं। सरकार उनका निरीक्षण करती है और हमको निश्चय रखना चाहिये कि शिक्षा-सम्बन्धी दासत्व की नीति में इन संस्थाओं को वह हस्तक्षेप नहीं करने देगी।

केवल यही दोष शिक्षा नीति का नहीं है। जिस शिक्षा का उद्देश्य विशेष व्यवस्था के सम्बन्धों को रखना ही है वह निःसंदेह दिखावटी और नियमबद्ध हो जाती है। उसकी प्रणाली स्थिर हो जाती है, और उसका लक्ष्य नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है। क्योंकि उसका उद्देश्य उन्नति-सिद्धान्त से प्रेरित न होकर शिक्षायन्त्र को अच्छा बनाने की इच्छा से उत्तेजित होता है, इसलिए उसकी अवास्तविकता चीन के निश्चल समाज के तुल्य स्थिर और अनुन्नत हो जाती है। ऐसा होना अवश्यम्भावी है, और सन् १८३४ से सरकारी नीति ने पूर्णरूप से यह दिखला भी दिया है।

उस साल मिकाले ने अपनी सर्वसम्मतिपूर्ण सम्मति लिखी थी। उन्होंने सदा के लिए शिक्षा की एंग्लो-इण्डियन प्रणाली के सिद्धान्त को स्थिर कर दिया था। हमको यहां उस नीति की आलोचना नहीं करनी है, किन्तु इस निबन्ध में भारतीय राष्ट्रवाद के शिक्षा के आदर्श अर्थ का विस्तृत वर्णन करना है। एंग्लो-इण्डियन प्रणाली के सम्बन्ध में हमको यह समझना है कि १८३४ की साल से उसकी यही नीति रही है कि दिन प्रति दिन अनुपयुक्त रूप को धारण करती जाए, यहां तक कि आज वह एक ऐसा यन्त्र होगई है कि हमारी उन्नति को रोक दिया है। उसकी असत्यता के कारण उससे न कोई अर्थ प्रकट होता है, न वह इसके योग्य ही है। उस प्रथा के विस्तार से हमको क्लेश होता है, और अपनी निःसारता से हमारे मन और आत्मा को हानि पहुंचाती है।

लार्ड कर्ज़न शिक्षा पर विशेष विचार करते थे। इस वर्ष से जो हानि हो रही थी उसको उन्होंने पहिचाना, और वीरता के साथ उसके सुधार का उद्योग किया। शिमला की शिक्षा-परिषद् में उन्होंने अपनी प्रारम्भिक वक्तृता में एंग्लो-इण्डियन प्रथा के प्रत्यक्ष दोष दिखलाये थे। उन्होंने इस बात का तीव्र प्रतिवाद किया कि योरप की विशेष छोटी छोटी शिक्षा की बातों से बिलकुल दूसरी प्रकृति के देश को भर दिया जाय। लार्ड कर्ज़न ने इसका भी बार बार विरोध किया कि परीक्षा-चक्र के विस्तार का, जिससे मनुष्य का शिक्षा-सम्बन्धी भाग्य स्थिर होता है, कभी अन्त नहीं होता। उन्होंने कहा है कि भारतीय शिक्षा का उद्देश्य परिमित और प्रणाली नाशकारी हैं। वह कहते हैं कि "आदर्शाय क्लर्क, मुन्सिफ और वकीलों का बनाना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
गुरुकुल कांगड़ी

निरर्थक है, यदि राष्ट्र की मानसिक शक्ति की इससे क्षति पहुंचती है।"

ब्रिटिश सरकार की शिक्षा-नीति की आलोचना लार्ड कर्ज़न ने पूर्णरूप से की, परन्तु उनका सुधार-उद्योग असफल हुआ, यह मानना पड़ेगा। उनका लक्ष्य स्वतन्त्र शिक्षा न था, किन्तु राज्याश्रित शिक्षा। 'पर्याप्त' के पुजारी विविध आदर्श और प्रणालियोंवाली संस्थाओं को पसन्द नहीं करते। उनका संचालन राज्य द्वारा होना आवश्यक है। जो विश्वविद्यालय सरकारी अधिकार में हैं वे सरकार के अधीन पूर्णरूप से होने चाहिये, अन्यथा वे पूर्णतायुक्त न होंगे, और शिक्षा-सम्बन्धी संस्थाओं का लक्ष्य पूर्णता प्राप्त करना ही है। राले कमीशन ने वही रिपोर्ट दी जो लार्ड कर्ज़न चाहते थे। सर गुरुदास बनर्जी के विरोध करने पर भी कमीशन ने यह निश्चय किया कि उच्च-शिक्षा का व्यय बढ़ा देना चाहिये, और विश्वविद्यालयों पर सरकारी अधिकार बढ़ाने से शिक्षा-संबंधी पूर्णता प्राप्त होगी।

भारत की राष्ट्रीय संस्था लार्ड कर्ज़न की इस क्षेत्र की अस्थिर कर्मण्यता को चिन्ता से देखती थी। अन्त में जब लार्ड कर्ज़न के हस्तक्षेप ने यह दिखला दिया कि देश के भविष्य की एंग्लो-इण्डियन कमेटी कुछ परवाह नहीं कर रही है तब राष्ट्र-सभा ने इस प्रश्न के महत्व के संबंध में आंखें खोलें। अभी तक राष्ट्र-सभा इस महत्वपूर्ण विषय की उपेक्षा करती रही। शिक्षा के राष्ट्रीय कार्यक्रम की भारी आवश्यकता, राष्ट्र के युवकों की शिक्षा, शिक्षा पर राज्य के अधिकार भय, जो राजनैतिक जीवन पर दृष्टि डालनेवाले साधारण पुरुषों का प्रत्यक्ष था, इन बातों पर राष्ट्रीय सभा ने किञ्चित ध्यान नहीं दिया था।

यह सत्य है कि राष्ट्रीय सभा के कुछ अनुरागियों ने इस प्रश्न की आवश्यकता का समझ लिया था। बालगङ्गाधर तिलक, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, गोपालकृष्ण गोखले और अन्य कुछ सज्जनों ने अपने कर्मण्य जीवन के आरम्भ ही में जान लिया था कि शिक्षा पर राष्ट्र का अधिकार होना चाहिये, और यह भी निश्चित रूप से मान लिया था कि राष्ट्रीय शिक्षा के प्रश्न से राष्ट्रीय मरण-जीवन का घनिष्ठ सम्बन्ध है। सरकार से स्वतन्त्र उन्होंने अपने २ कार्यक्षेत्र में इस प्रश्न के हल करने का उद्योग किया था। परन्तु कांग्रेस (राष्ट्रीय-सभा) विशिष्ट राजनैतिक प्रश्नों पर ही तुली रही, मानो वह मूल कारण, जहां से राजनैतिक कार्य अपना उत्तेजक बल प्राप्त करते हैं, राजनीति के प्रश्न से नितान्त असम्बद्ध हैं।

परन्तु वाइसराय के हस्तक्षेप की भयकारी कर्मण्यता ने कांग्रेस को उसकी सहज-निद्रा से जगा दिया। कांग्रेस का परिवर्तित स्वभाव, उसका नूतन और उग्र राष्ट्रवाद, बम्बई के पक्षावलम्बन से उसका मोक्ष, इन सब कारणों से उस संस्था का कर्मशील जीवन और भी बढ़ गया, जिसको उसने कर्ज़न के समय के अंत में प्रकट किया। इसी लिए उच्चशिक्षा के व्यय की वृद्धिवाले लार्ड कर्ज़न के प्रस्ताव का प्रत्यक्ष विरोध हुआ। काशी की कांग्रेस ने 'राष्ट्रीय अधिकार में राष्ट्रीय शिक्षण' की नीति की परिभाषा कर डाली। बाद को घटनाओं से प्रकट हुआ कि यह नीति दोनों पक्षों ने दो प्रकार से भिन्न भिन्न समझी। राजनीति से असम्बद्ध इस कार्यक्रम के अर्थ को समझने में दोनों पक्षों ने भारी भेद खड़ा किया। गोखले के नरम दलवालों ने राष्ट्रीय अधिकार और राष्ट्रीय शिक्षा से आशय निकाला कि नौकरी का क्षेत्र भारतीयों के लिए बढ़ा दिया जाय, और विश्वविद्यालयों में भारतीय विषयों को अधिक शिक्षा हो। राष्ट्रवादियों ने इसका अर्थ कुछ और ही किया। उन्होंने यह समझा कि शिक्षा-सञ्चालन-यन्त्र सर्वथा राष्ट्रीय कर दिया जाय,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और फिर संस्थाओं से सरकारी भाग का सम्बन्ध भी हो उनका बहिष्कार कर दिया जाय। इस प्रकार कांग्रेस ने एक ऐसी संदिग्ध नीति को धारण किया, जिसमें अन्य नीतियों के समान मतभेद की विशेषता रही। जब १६०५ की साल में एकस्वर से कांग्रेस राष्ट्रीय अधिकार में राष्ट्रीय शिक्षा के लिए चिल्ला रही थी। उस समय सूक्ष्मद्रष्टा यह देख सकता था कि नरमदल और गरमदलवालों में घोर विरोध था।

जब इस विषय को कांग्रेस के वाद-प्रतिवाद के प्रदेश से कार्यक्षेत्र में लाने का यत्न किया गया तब मतभेद स्पष्ट हो गया। बङ्गाल ने राष्ट्रीय शिक्षा की परिषद् स्थापित की, और कुछ समय के लिए ऐसा प्रतीत हुआ कि शिक्षा पर से सरकार का अधिकार उठा जाता है, परन्तु बङ्गाल का उद्योग निष्फल गया, जैसा कि निश्चय था। जब धन और मस्तिष्क में आकर भेद पड़ जाता है तो वास्तव में सफलता हो ही नहीं सकती। रासबिहारी घोष की अध्यक्षता में नरमदलवाले धन पर अधिकार जमाये हुए थे, और अरविन्द घोष के नेतृत्व में मस्तिष्कों पर। जैसा कि उनमें से एक ने कहा था—'वे अब भी ब्रिटिश शासन के उज्ज्वल फल रूप' थे।

नूतन राष्ट्रवाद-संस्था का लक्ष्य हिन्दू पुनरुत्थान था, जिसका प्रभाव नरमदलवालों पर कुछ न पड़ा। वे अब भी इङ्गलैण्ड से उत्तेजना की आशा रखते थे। शिक्षा को पूर्ण रूप से राष्ट्रीय बनाने को वे उद्यत नहीं थे, क्योंकि ऐसा न हो कि "ब्रिटिश शासन के उज्ज्वल अनुभव का पता न चले।" अरविन्द और उनके साथियों को इसका भय न था। वे उत्साह के लिए भारत की ओर आशा-दृष्टि लगाये हुए थे, न कि यूरोप की ओर। जैसे २ राष्ट्रीय शिक्षा का व्यावहारिक कार्य आरम्भ हुआ वैसे २ मतभेद अधिकाधिक प्रत्यक्ष होता गया। कुछ वर्षों में समस्त संगठन भ्रष्ट हो गया। इस योजना की असिद्धि पर शोक न करना चाहिये। इससे फिर यह राजनैतिक मूल सिद्धान्त स्पष्ट हुआ कि सब संस्थाएं, जो राष्ट्रों के भाग्य का निर्माण और सुधार करती हैं, व्यक्तियों से, न कि संगठित दलों द्वारा आरम्भ की जाती हैं। शिक्षा-सम्बन्धी विप्लवकारी बल के पूर्व जोसस को सभा एक शक्ति थी, जिसका आविर्भाव इग्नेशियस् लोयोला के मस्तिष्क से हुआ था। कोमिनियस् पेस्टालोज़्ज़ाई फ्रोबेल और वे सब बड़े गुरुजन, जिन्होंने शिक्षा सम्बन्धी प्रणालियों में विप्लव मचा दिया था और मनुष्यवर्ग के विचार और विकाश को भिन्न २ रूपों में परिवेष्टित कर दिया था, व्यक्ति ही थे, और जो संस्थाएं उन्होंने प्रचलित कीं उनकी उत्पत्ति किसी दल की संग्रहीत प्रेरणा से नहीं हुई। जिन बातों को समाज असम्भव, स्वप्नवत् समझ कर उनकी हँसी उड़ाता है उन्हीं को जानने के लिए व्यक्तिगत उद्योगों द्वारा इस तथा अन्य विषयों में सफलता व्यक्तियों के कर्मशीलत्व से हो सकती है। मौलिकदोष बङ्गाल की शिक्षा-सम्बन्धी राष्ट्रीय सभा का था। राष्ट्रीय शिक्षा का परिज्ञान एक व्यक्ति के लिए छोड़ दिया गया था, जो चैतन्य के पश्चात् बङ्गाल ने उच्च रूप में प्रकट किया है। इस प्रकार बोलपुर की रवीन्द्रनाथ की पाठशाला इस समस्या के हल करने में बङ्गाल से सहायता दे सकती है। इस पर हम फिर विचार करेंगे।

शिक्षा-क्षेत्र में, बङ्गाल-कौंसिल 'गोर' और 'उन्नतिकर' भारत का उद्योग रूप थी। परन्तु अत्यन्त महत्वपूर्ण अनुभव, जो शिक्षा के आदर्श और शानदार प्रणाली के सम्बन्ध में हुआ, वह पञ्जाब से प्राप्त हुआ न कि बङ्गाल से। आर्यसमाज और हिन्दू पुनरुत्थान के कारण मानसिक शिक्षा और आर्य धर्म का नवीन अर्थ किया गया, और नूतन विचार उसके सम्बन्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में उत्पन्न हुए। कांग्रेस दल की अपेक्षा आर्यों ने इस बात को अधिक जान लिया कि भारतीय समाज के सिद्धान्तों के पुनः संगठन और संस्करण के पहिले शिक्षा की स्वतन्त्र प्रणाली का विकाश होना आवश्यक है। इस नूतन विचार और भाव ने हरिद्वार के गुरुकुल का स्वरूप धारण किया। गुरुकुल की शिक्षा का आदर्श न केवल गोरों की प्रणाली से किन्तु वर्तमान देश के किसी भी शिक्षा-सम्बन्धी लक्ष्य से विभिन्न है। इसका उद्देश्य है कि वह प्राचीन हिन्दू सभ्यता और शिक्षा के स्वार्थविहीन भाव को पुनरुज्जीवित करे, उसका यह उद्योग है कि हम वर्तमान विज्ञान को आवश्यकतानुसार प्राचीन सभ्यता के साथ २ समझें और सीखें। गुरुकुल एक भारतीय विश्वविद्यालय की, जो सब प्रकार भारतीय हो, स्थापना चाहता है, जिससे उस नवीन भारतीय राष्ट्र का जन्म होगा, जो वेदों की प्राचीन और पवित्र भावनाओं से परिपूर्ण होगा, और जो आधुनिक राष्ट्रों के विज्ञान, साहित्य और विचार के उपयोगी और सुन्दर भागों का भी स्वादु लेगा। यद्यपि भारत में इस प्रकार की कई संस्थाएं हैं, परन्तु वे भी पूर्णरूप से स्वतन्त्र नहीं हैं, अतएव हमारा कर्तव्य है कि राष्ट्रीय शिक्षालय खोलने और राष्ट्रीय विश्वविद्यालय की उन्नति करने का पूरा पूरा उद्योग और आन्दोलन करें।

स्वायत्त-शासन की योग्यता।

(७)

[लेखक—बा० रामानन्द चटर्जी एम० ए० ।]

साम्पत्तिक योग्यता भी बहुत से देशों में आवश्यक है। बिना समझे बूझे यह कह देना सम्भव नहीं है कि एक नियत साम्पत्तिक योग्यता के कितने मनुष्य भारत में हैं; अतएव हम निवास तथा उम्र और शिक्षा की योग्यताओं पर दृष्टि रखकर निर्वाचकों की सम्भवपर संख्या का विचार करेंगे। बहुतेरे क़ानूनी प्रयोजनों की दृष्टि में भारतीय बालक १८ वर्ष की अवस्था में पुरुष हो जाते हैं। किन्तु निर्वाचनाधिकार के लिए हम हंगारी की भांति २० वर्ष की, अथवा अन्य अनेक देशों का अनुकरण करते हुए २१ वर्ष की अवस्था व्यवहार्य-वयस समझें। अब यह देखना चाहिये कि ई० १९११ की मनुष्यगणना के अनुसार बीस या उससे अधिक अवस्था के कितने पढ़े लिखे आदमी प्रत्येक ब्रिटिश प्रान्त में हैं, और कुल पुरुष-जनता का वह कौनसा भाग है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रान्त।	कुल पुरुष।	बीस वर्ष या अधिक अवस्थावाले लिखे पढ़े पुरुष।	कुल संख्या में अवस्था प्राप्त पढ़े लिखों की सैकड़ा पीछे संख्या।
आसाम	३४६७६२१	२२०६५२	६.०
बंगाल	२३३६५२२५	२३६३२५०	१०.०
बिहार और उड़ीसा	१६८५४४२४	१००८१३७	५.०
बम्बई	१०२४५८४७	६२१३०१	६.०
बर्मा	६१४५४७१	१८०२५७३	२६.०
मध्यप्रदेश बरार	६९३०३६२	३५६२५७	५.०
मद्रास	२०३६८६५५	२११२०३८	१०.०
पश्चिमोत्तर सीमान्तप्रदेश	११८२१०२	५३२४४	४.५
पंजाब	१०६६२०६७	५६५७१६	५.०
संयुक्तप्रदेश	२४६४१८३१	१०६७०६७	४.४
भारत	१२४२१३४४०	१०५००२६८	८.६

यह पहले कह चुके हैं कि दस लाख फिलपाइन मतदाता फिलिपाइन द्वीप का समस्त पुरुष-जनता में सैकड़ा पीछे लगभग साढ़े चार पड़ते हैं। ऊपर दिये हुए लेखे से प्रकट होता है कि भारत के बहुत ही पिछड़े हुए प्रान्तों में पढ़े अवस्था-प्राप्त पुरुषों की, जो पढ़ लिख सकते हैं, संख्या समस्त पुरुष-जनता में सैकड़ा पीछे इतना (४.४) या इससे कुछ अधिक है, और समस्त ब्रिटिश भारत में तो पढ़े लिखे अवस्था-प्राप्त पुरुषों की संख्या समग्र पुरुष-जनता में सैकड़ा पीछे ८.६ के हिसाब से है; और इसमें सन्देह नहीं कि निर्वाचन में मताधिकार का उपयोग उतनी ही बुद्धिमानी से ये भी कर सकेंगे जितनी बुद्धिमानी से सब स्वतंत्र देशों और विशेषतः फिलिपाइन के सामान्य मतदाता करते हैं।

सत्यतापूर्वक यह अस्वीकार नहीं की जा सकती है कि हमारी सामान्य बुद्धि उन बहुत ही कम उन्नत स्वतंत्र देशों की अपेक्षा कम है जिनमें किसी न किसी प्रकार की प्रतिनिधि-शासन-प्रणाली है। यदि न्यूज़ीलैंड के माओरी, काफ़िर और हाटेनटाट मताधिकार का उपयोग कर सकते हैं तो भारतीय क्यों नहीं कर सकते? भारत में ऐसे बहुत अपढ़ लोग हैं जिनके मँझोले दर्जे की दुकानें या खेतियां हैं, और वे सफलतापूर्वक उनका प्रबन्ध कर रहे हैं। उन्हें मत देने का भी अधिकार होना चाहिये। इसमें कोई सन्देह नहीं कि निवास और उम्र की योग्यताओं के साथ साथ साम्पत्तिक अथवा शिक्षा-सम्बन्धी किसी भी योग्यता के अनुसार (उदाहरणार्थ पुर्तगाल में यदि कोई मनुष्य लिख पढ़ सकता है तो उसमें साम्पत्तिक योग्यता की आवश्यकता नहीं समझी जाती), भारत के प्रत्येक प्रान्त में यथेष्ट व्यापक निर्वाचक-मण्डल बन सकता है। अनादि-काल से हमारी जातिवाले जातीय और ग्रामीण संगठनों में प्रतिनिधि-प्रणालियों के अभ्यस्त हो रहे हैं। सामाजिक मामलों से नागरिक मामलों में पहुंच

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाना बहुत कठिन बात नहीं है, और ग्राम्य पंचायतों, संघों, म्यूनीसिपैलिटियों लोकल बोर्डों, ज़िला-बोर्डों, प्रान्तिक और भारतीय व्यवस्थापिका सभाओं से सम्बन्ध रखनेवाले निर्वाचनों के कारण लोगों को निर्वाचनों से परिचय हो गया है। हम अपने पूर्वपुरुषों की नागरिक और राजनैतिक करतूतों का यहां पर उल्लेख करना उचित नहीं समझते। क्रमशः

कोरिया या 'वृहत्तर जापान'।

(३)

[लेखक—'प्रवासी भारतवासी'।]

फ़ूसन से स्यूल की यात्रा।

आज ६ बजे प्रातःकाल ही हमारा जलयान घाट पर इधर उधर आगा पीछा कर १ घंटे में किनारे लगा। जेटी पर ही दूसरी ओर रेल खड़ी थी। हमने अपना असबाब नौका में से उतार रेल में रखवा दिया। पूछने से मालूम हुआ कि अभी रेल के रवाना होने में एक घंटे की देर है। इस अवसर को भी व्यर्थ न जाने देने के ख़याल से मैंने एक पथप्रदर्शक को साथ ले नगर देखना चाहा। पथप्रदर्शक एक जापानी महाशय मिले। यहां के जापानी और जापान के जापानियों में भेद है। यहां के जापानी चाहे कुली ही क्यों न हों किन्तु वे प्रभुवर्ग के होने के कारण एक प्रकार के भिन्न प्रकृति के हो जाते हैं। जिस प्रकार एक ग़रीब और एक अमीर के तथा एक शिक्षित और एक अशिक्षित के मनन और विचार-प्रणाली में भेद है उसी प्रकार विजेता और विजित, प्रभु और दास की विचारशैली में भी अन्तर होता है। ठीक है जिसके पैर में बेवाई नहीं फटती वह, दूसरे को उस अवस्था में क्या दुःख होता है, नहीं समझ सकता। पाश्चात्य विद्वानों ने आनुषंगिक विचार-गति को भलीभांति मनन करने के लिए इस विषय की पृथक श्रेणियां विश्वविद्यालयों में स्थापित की हैं। हार्वर्ड विश्वविद्यालय के इस विषय के अध्यापक से मेरे एक भारतीय मित्र ने प्रश्न किया था कि क्या उन्होंने इस पर भी विचार किया है कि स्वतंत्र मनुष्य और दास मनुष्य एक प्रश्न पर एक ही दृष्टि से विचार नहीं करते, उनका विचारशैली में विभिन्नता होना सम्भव है। इस प्रश्न ने उन्हें चकित कर दिया। वे न जाने कितनी पीढ़ियों से स्वतंत्र हैं, वह प्रश्न उनके सामने कभी उपस्थित ही न हुआ था। अब उन्होंने इस पर विचार करने का वचन दिया है।

इस समय मेरे सम्मुख एक प्रश्न और उपस्थित होता है, वह यह है कि स्त्रियों और पुरुषों के विचारों में भी विभिन्नता है कि नहीं। संसार के कतिपय प्रश्नों पर अधिकतर केवल पुरुषों के ही विचार मिलते हैं, स्त्रियों के विचार बहुधा अप्राप्त हैं। यदि अनुभवी शिक्षित स्त्रियां इस पर प्रकाश डालें तो संसार का उपकार होगा। उदाहरण के लिए निम्नलिखित प्रश्न मैं दिग्दर्शन-रूप से लिखता हूं। एक पुरुष जब कभी किसी सुन्दर स्त्री को देखता है तो उसके हृदय में एक प्रकार का भाव उत्पन्न होता है जो पुस्तकों तथा काव्यों में वर्णित है। स्त्री के भिन्न भिन्न अंगों के देखने से पुरुष के मन पर भिन्न भिन्न प्रभाव पड़ता है। अब यह जानने की आवश्यकता है कि युवा पुरुष के दर्शन से एक स्त्री के मन पर क्या प्रभाव होता है। पुरुष के किन किन अंगों की सुडौलता का क्या क्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभाव महिला के मन पर पड़ता है। पुरुष चाँदनी रात्रि में वर्षा की घनघोर घटा में सुन्दर स्त्रियों के दर्शन से एक प्रकार के विचित्र भाव का अनुभव करता है। अब प्रश्न यह है कि स्त्रियों पर इनका प्रभाव किस भाँति से पड़ता है? इसका उत्तर केवल अनुभवी विचक्षणा स्त्रियां ही दे सकती हैं।

हां, अब मैं अपने सूत्र को फिर पकड़ता हूं। ये पथप्रदर्शक महाशय मुझे सिविल कार्टर में ले चले। पहिले उन गलियों और सड़कों पर घुमाया जो "जापानियों की नई आबादी" के नाम से पुकारी जा सकती हैं। यहां प्रायः जापानी ही देखने में आये। सभी दूकानें उन्हीं की थीं, और सारी जापानी सामान से भरी थीं। यहां से आप मुझे नेटिव कार्टर में ले गये, और बिचारे पददलित देशवासियों की कुटी दिखा मुझसे कहने लगे—"नेटिव लोग बड़े गन्दे हैं।" मैंने भी मन ही मन प्रभुता को प्रणाम किया, और कुढ़ता हुआ लौटा। यहां राह में बहुत से मज़दूर देखे। ये लोग एक विचित्र रंग के काठ की तिपाई के द्वारा पीठ पर बोझा उठाते हैं। राह में बाज़ार देखा, जहां चावल, मूंग तथा अन्य भिन्न प्रकार की बड़ी छोटी दालें थीं। सब्ज़ी मंडी में सूखी मछली, गोभी, बैंगन, कुम्हड़ा तथा अन्य अनेक प्रकार की तरकारियां और शाक थे, जो प्रायः सभी अपने देश में मिलते हैं। अब हम रेल घर पर लौट आये। थोड़ी देर में रेल भी चल दी। यह नगर पहाड़ के दामन में बसा है। ऐसा और नगर, स्यूल पहुंचने तक, रास्ते में नहीं देखा। ११ बजे दिन से चलकर ६ बजे रात्रि में मैं स्यूल पहुंचा। यह एक विशाल नगर आधुनिक रीति पर बन रहा है। रास्ते में सिवाय छोटी पल्लियों के बड़ा ग्राम भी देखने में नहीं आया। सभी मकान अपने देश की भांति छप्परों से छाये तथा मट्टी के बने थे। कहीं २ एकाध जो अच्छे मकान देख पड़ते थे वे प्रायः जापानियों के थे, जो इस देश में आ बसे हैं। फ़सल अधिकतर यहां धान ही की देख पड़ी। जगह २ बाजरा, मक्का और उरद भी देख पड़े। सींचने के लिए यहां भी दोरी चलती है, और अन्य प्रकार के अपने देश केसे तरीक़े बर्ते जाते हैं। रास्ते में हमारी गाड़ी जिस राह से जा रही थी वह एक प्रकार से पहाड़ों के बीच की घाटी थी। यद्यपि पहाड़ दो तीन मील की दूरी पर थे, पर थे दोनों ओर। हम दक्षिण से सीधे उत्तर की ओर जा रहे थे। ये पहाड़ भी दक्षिण से उत्तर को ही जाते हैं। ६ बजे रात्रि में हम स्यूल पहुँच गये। रेलवे-होटल के एक मनुष्य ने आकर हमारा असबाब संभाल हमें होटल में पहुंचाया। इस होटल का नाम 'चोसेन होटल' है। यह रेल-विभाग के अन्तर्गत है। यहां की रेल सरकारी है, इसलिए यह होटल भी सरकारी है। कहने का अभिप्राय यह है कि इसका सब व्यय सरकार ही को उठाना पड़ता है। होटल का और पूरा वृत्तान्त न लिखकर इतना ही लिखना अलम् होगा कि इस टक्कर के होटल, जापान की तो बात ही न्यारी है, यूरोप और अमेरिका में भी एकाध ही होंगे। लन्दन का 'सिसिल होटल' शायद इसका मुक़ाबिला कर सके। किन्तु यहां इतने यात्री नहीं होते कि उनके द्वारा इसको लाभ हो। कहते सुना कि पारसाल ही बीस हज़ार यन सरकार को इसके लिए घाटा सहना पड़ा। यह क्यों? इतना घाटा सहकर भी कोई व्यापार चलाया जाता है? उत्तर है, नहीं। पर यह व्यापार की दृष्टि से नहीं वरन् जापान की प्रभुता स्थापित करने के लिए बना है। रेल बन जाने से यह मार्ग यूरोप का शाहराह बन गया है। जापान की ओर से इस मार्ग से लन्दन पहुंचने में रेल द्वारा १२ दिन लगते हैं। समझा जाता है कि युद्ध के उपरान्त चीन और जापान इत्यादि में यूरोपनिवासी इसी राह से आवेंगे। जापान के राष्ट्र में से होकर जाते समय यात्रियों को ठहरने का उचित प्रबन्ध न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो, यह जापान सहन नहीं कर सकता । इसी विचार से यहां तथा अन्य कई जगहों पर, जहां से होकर यह रेल-सड़क गुज़री है, बड़े २ अच्छे होटल बने हैं । इनमें लाभ-हानि का ख़याल नहीं किया जाता ।

मिशन का दोमुंहा कार्य ।

संसार में कोई भी ऐसी जगह नहीं है जहां अमेरिकावालों का ईसाई मिशन न देख पड़े । पृथ्वी के कोने २ में जंगल, पहाड़ और रेगिस्तानी जगहों में भी इन लोगों का अड्डा मिलता है । समस्या यह उठती है कि क्या ये मिशन महात्मा ईसा का संदेश ही जगत् को पहुंचाने के लिए जंगल जंगल और बन बन के पत्ते खोजते फिरते हैं ? उत्तर क्या दें, सो समझ में नहीं आता । अमेरिका को जब कोलम्बस ने खोज निकाला तब वहां के वहशियों को मनुष्य बनाने स्पेन के ईसाई लोग चले । जिसमें ईसाई पिताओं को वहशियों से कष्ट न पहुंचे, इस कारण स्पेन की फ़ौज भी इनके साथ होली । ईसाई धर्म के प्रचार का परिणाम उस महान् भूमण्डल में क्या हुआ सो किसी से छिपा नहीं है । आज दिन पुराने अमेरिकानिवासियों को देखने के लिए चिड़ियाख़ानों में जाना पड़ता है । अफ्रीका तथा एशिया के भिन्न २ देशों में भी धीरे २ इनके प्रचार ने यूरोपवालों का झंडा उड़ा दिया है, यह किसी से छिपा नहीं है । दूर क्यों जायँ, स्वयम् अपने ही देश को क्यों नहीं देखते ? युद्ध के आरम्भ होने के साथ ही जर्मन और आस्ट्रियन पादरी भी देश में नज़रबन्द कर लिए गये या निकाल दिये गये । यह क्यों ? क्या इनमें भी शत्रुता की बू आती थी ? क्या ये ईसा के धर्म के प्रचारक भी साधुवृत्ति को छोड़ क्षात्रवृत्ति धारण कर सकते थे ? हां । ख़ैर कहने का तात्पर्य यह है कि ईसाई मिशन को केवल धार्मिक संस्था समझना नितान्त भूल है । यह संस्था पूरा राष्ट्र-दूत का कार्य करती है । व्यापार के न्योक, देश के भौगोलिक ज्ञान देश में आपस के कलह इत्यादि का पता लगाकर अपनी सरकार को पहुंचाती है । पहिले यह नाना रूप से अपना प्रभाव देश के राज्य-कर्मचारियों पर डालने का प्रयत्न करता है । जो इसमें सफलता हो गई तो ठीक है, नहीं तो अन्य उपाय भी होते हैं । इनके रहन-सहन के ढंग से ही इसका पता चल जाता है कि ये धर्म का कितना प्रचार करते हैं ।

हम जब अमेरिका से जापान आरहे थे तो रास्ते में एक पादरी महाशय से मुलाक़ात हुई । आपका शुभ नाम ऐविसन महाशय है । आप कोरिया में २० वर्षों से धार्मिक जीवन व्यतीत कर रहे हैं । आप डाक्टर हैं, इस कारण चिकित्सा-द्वारा लोगों पर महात्मा ईसा का प्रभाव डालना चाहते हैं । थोड़े दिन हुए, यहां अमेरिका के एक धनी 'सेवरेन्स' महाशय भ्रमणार्थ आये थे । आप पर एविसन महाशय का प्रभाव पड़ गया, इस कारण आपने यहां एक चिकित्सालय बनवा दिया । इसका नाम 'सेवरन्स इन्स्टिट्यूट' है । यहां चिकित्सा भी होती है, और योरअमरीका के ढंग पर आयुर्वेद भी पढ़ाया जाता है । स्कूल में पहुंचते ही हम इन महाशय के पास गये । उन्होंने बड़ी आवभगत से हमें अपना अस्पताल और आयुर्वेदशाला दिखाई । पाठशाला में शिक्षा अभी कोरिया-भाषा द्वारा दी जाती है । अंगरेज़ी भी विद्यार्थियों को पढ़नी पड़ती है । किन्तु जापानी सरकार के नियम के अनुसार परीक्षा जापानी भाषा में होनी चाहिये, इससे अब जापानी का भी प्रचार हो रहा है । यहां कई अन्य अमेरिकन सज्जन काम करते हैं । एविसन महोदय कनैडा निवासी हैं, किन्तु कार्य अमेरिकन संस्था के अन्तर्गत कर रहे हैं ।

आपने एक दूसरे पादरी सज्जन का पता हमको बताया, और उनसे मिलने का भी हमें परामर्श दिया । हम इनसे मिलकर बड़े प्रसन्न हुए । आपका नाम महाशय 'गेल' है । आप ... ३० वर्षों से कोरिया में रहते हैं । ... का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोना कोना छान डाला है। देशी भाषा भी भली प्रकार सीखी है। आप अधिक विद्वान् और इसी कारण उदार भी हैं। आपने बुद्ध-धर्म का कोरिया में जो पता मिलता है उसका अच्छा अध्ययन किया है। आपने बात २ में कहा कि मैं बुद्ध-धर्म पर इतना मोहित हूं कि यदि महात्मा ईसा की शरण में न आगया होता तो बुद्ध भगवान की शरण लेता। इनका एक छोटा पुत्र है वह बड़ा ही प्यारा लगता है। स्यात् इसने पहिले कभी किसी रंगीन पुरुष को नहीं देखा था। हमें देख माता से कहने लगा— "मा, यह काला मुंह वाला कहां का आदमी है?" मां ने कहा, बेटा ये हमारे भाई भारत-निवासी हैं। उसपर बालक बोल उठा—"हम भारतीयों से लड़ेंगे। माता-पिता बालक के इस व्यवहार पर ज़रा शर्मा से गये, पर बराबर हँसते ही रहे। इस बात के कहने का अभिप्राय केवल यह है कि हम अपने बालकों को बहुत तंग करते हैं, ज़रा २ सी बात पर पीटते हैं, उनके स्वाभाविक भाव को बढ़ने नहीं देते, बालपन से ही गुलामी की कड़ी ज़ंजीर हमारे पैरों में पड़ जाती है। परिणाम होता है कि हम बड़े होने पर भी निकम्मे रह जाते हैं, और स्वतंत्रता की बू भी पास नहीं आने पाती।

एक दिन एविन्सन महोदय ने हमें ब्यालू करने के लिए बुलाया। वहां गेल महोदय भी सपत्नीक आये थे, तथा अन्य तीन स्त्रियां भी थीं। खाते समय नाना प्रकार के साधारण विषयों पर वार्त्तालाप होता रहा। भोजन के उपरान्त कुछ गम्भीर बातें होने लगीं। पहिले दिन एविन्सन महाशय की पत्नी ने यह प्रश्न किया था कि भारतवर्ष में ईसाई धर्म की क्या अवस्था है? मेरे मित्र ने उत्तर दिया कि बुद्धिमान पढ़े लिखे मनुष्य एक भी ईसाई नहीं होते हां, भूखे दूखे पुरुष क्षुधा के कष्ट तथा अन्य कारणों से ईसाई बनाये जाते हैं। यह सुन कर उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ, तथा एक प्रकार का आघात सा लगा। उन्हें यह जानकर भी दुःख हुआ कि हम लोग भी ईसाई नहीं हैं। आज प्रसंगवश एक स्त्री ने पूछा कि भारत में "हीदन" लोगों की क्या अवस्था है? कल मैं चुप था। आज अच्छा मौक़ा पाकर मैंने उत्तर देना प्रारंभ किया। मैंने पूछा—"आप 'हीदन' से क्या समझती हैं?" उत्तर मिला जो पुरुष ईश्वर की उपासना नहीं करते। मैंने कहा कि आपको यह कैसे ज्ञात हुआ कि भारत में एक ईश्वर की उपासना नहीं होती? उत्तर मिला कि पादरियों से सुन रक्खा है। मैंने कई प्रकार से इस भ्रम को दूर करने की चेष्टा की, पर सब निष्फल हुई। निष्फल होना ठीक भी था। मामूली आदमी के हृदय से परम्परा के विश्वास को मिटाना सरल नहीं है। क्या किसी हिन्दू की समझ में यह बात जल्दी आसकती है कि मुसलमान तथा ईसाई लोग भी उसी प्रभु की उपासना करते हैं जिसकी उपासना हिन्दू अपने ढंग से करते हैं। यदि हिन्दुओं की समझ में यह बात आनी कठिन है तो ईसाई भी इसे नहीं समझ सकते।

ख़ैर, थोड़ी देर बाद मैंने ज़रा बात टाल कर उनसे एक प्रश्न किया। मैंने पूंछा कि अब विज्ञानवालों ने मनुष्य का लाखों वर्ष पूर्व से पृथ्वी पर होना साबित कर दिया है, और ईसाई धर्म-पुस्तक के अनुसार आदम बाबा को उत्पन्न हुए भी पांच ही हज़ार वर्ष हुए, और महाशय ईसा तो अभी दो हज़ार वर्ष के हो पूर्व थे, तो यदि यह सच है कि बिना महात्मा ईसा पर ईमान लाये मोक्ष नहीं मिल सकता तो उन बेचारे जीवों की क्या अवस्था हुई जो महात्मा ईसा के पूर्व इस संसार में उत्पन्न हो मर गये? इस प्रश्न ने उन्हें ज़रा चकित कर दिया। गेल महाशय गम्भीरता से इस पर विचार करने लगे। मैंने उत्तर का अवकाश न दे एक और प्रश्न कर दिया। मैंने पूंछा कि आप ईश्वर को इतना पक्षपाती क्यों समझते हैं कि उसने अपने पुत्र को ख़ास एक जगह भेजा, अन्यत्र नहीं?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईश्वर ने मनुष्य को इतना बुद्धिहीन क्यों बनाया कि उन्हें बुरे भले की तमीज़ का माद्दा नहीं? इन प्रश्नों ने उन लोगों को अवाक् कर दिया। कोई उत्तर न सूझा। बात उड़ाकर उनमें से एक स्त्री बोली—"किन्तु आप यह तो मानेंगे कि संसार में एक ही धर्म सत्य है?" मैंने उत्तर दिया, नहीं, यह कोई बात नहीं है। धर्म रास्ते का नाम है, किसी विशेष सत्यता का नहीं। एक ही स्थान पर पहुंचने के कई मार्ग हो सकते हैं। भिन्न २ मार्ग से चलकर भी मनुष्य निर्दिष्ट स्थान पर पहुंच सकता है। काशी पहुंचने के लिए कलकत्ता-निवासी को पश्चिम और बम्बई-निवासी को पूर्व जाना पड़ता है। मोटी निगाह से वे उलटे मार्ग पर चलते देख पड़ते हैं, किन्तु अन्त में दोनों एक ही जगह पहुंच जाते हैं। मैंने यह भी कहा कि हिन्दुओं ने प्राचीन समय में कभी भी यह धृष्टता नहीं की कि अपने उपदेशक अन्य देशों में भेजें। वे समझते थे कि यदि परमात्मा ने हमें ज्ञान दिया है तो दूसरों को भी दिया होगा। हमें अपने विचारों को दूसरों पर ज़बरदस्ती लादने का कोई हक़ नहीं है। प्राचीन हिन्दू मानव सन्तान उद्धार बुद्धियुक्त तथा ईश्वर के निरपेक्ष ज्ञान का विश्वास करते थे। उन्हें अन्य लोगों पर विश्वास था। वे दूसरों को "हीदन" "नास्तिक" "मलेच्छ" "काफ़िर" इत्यादि समझने की धृष्टता नहीं करते थे। इसीसे प्राचीन हिन्दू इतिहास धर्म के नाम पर मनुष्य-हत्या के रक्त से नहीं रंगा है। यह ईसाई जगत् के लिए ज़रा नये ढंग के विचार थे। गेल महाशय ने थोड़ी देर सोच कर कहा कि मनुष्य को आधार की आवश्यकता होती है, इसीसे हमें महात्मा ईसा के नाम से शान्ति मिलती है। मैंने उत्तर दिया कि आपका कथन ठीक है, किन्तु आपको यह भी समझना चाहिये कि यदि आपको महात्मा ईसा के नाम से शान्ति मिलती है तो एक दूसरे पुरुष की श्रद्धा महात्मा मुहम्मद, भगवान बुद्ध तथा अन्य नर-देहधारी महात्माओं के चरित्र पर है। यदि आप अपने विचार में सुख पाते हैं तो दूसरों को उनके विचारों में भी सुखी होने दीजिये। दूसरों का दिल कड़ी आलोचना से दुखाना उचित नहीं है। हां, ऊँचे दार्शनिक प्रश्नों की कथा अलग् है। वह सर्वसाधारण का विषय भी नहीं है, वह विद्वानों का विषय है। वे आपस में विचार कर सकते हैं। थोड़ी देर और बातचीत करने के बाद हम लोग विदा हुए।

स्यूल नगर के दर्शनीय पदार्थ।

स्यूल नगर में अब अधिक प्राचीन समय की कोई वस्तु देखने को नहीं है। पुराने मंदिरों को देखने के लिए नगर से बहुत दूर २ बड़े ही विकट मार्ग से जाना पड़ता है, जिसके लिए अधिक समय और विशेष प्रकार के प्रबन्ध करने की आवश्यकता होती है। हमारे पास दोनों ही का घाटा था, इससे उसकी इच्छा पुनः भविष्य-यात्रा पर छोड़ दी।

आज प्रातःकाल एक जापानी पथप्रदर्शक के साथ नगर देखने चले। कोरियन पथ-प्रदर्शक आज खोजने से भी नहीं मिला। ये महाशय अंग्रेज़ी भी अच्छी न जानते थे, और यहां के हालचाल से भी अनभिज्ञ थे। फिर न जाने क्या समझकर इन्होंने पथप्रदर्शकता स्वीकार की थी? स्यात् इसी ख़याल से इन्हें अपनी अपूर्णता का ज्ञान नहीं होगा कि वे यहां शासनवर्ग के मनुष्य हैं।

ख़ैर, हम इनके साथ पहिले उस ओर चले जिधर प्रधान शासक का कार्यालय है। इस समय यहां के प्रधान शासक उसी मकान में रहते हैं, जिसमें पूर्व समय में जापानी राजदूत (एलची) यहां रहते थे। वाइसराय के रहने के लिए एक नया मकान नगर से ३ मील बाहर बनाया गया था। सरकार की इच्छा थी कि राजधानी उसी उजाड़ में बसाई जाय, किन्तु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुराना नगर छोड़, नगरनिवासी बाहर नहीं गये। इसकारण उस बेहूदे ख़याल को छोड़ वाइसराय को यहां आकर रहना पड़ा। अब इनके लिए नया भवन बनेगा। यह जगह नगर के बाहर एक ऊंचाई पर है। यह एक प्रकार की छोटी पहाड़ी है, यहां से नगर का सारा दृश्य देख पड़ता है। नगर के प्रधान भाग में सब मकान जापानियों के बन गये हैं। देश-निवासी बिचारे हटते २ दूसरी ओर चले गये हैं। देशी तथा विदेशियों के महल्ले में ठीक उसी प्रकार का भेद है जैसा अपने देश में स्वदेशी और विदेशी महल्लों में होता है, अथवा जैसा काशी में सिकरौल तथा शहर में है। थोड़ी देर नगर की शोभा देखने के उपरान्त हम यहां का संग्रहालय देखने चले। यह स्थान इस पहाड़ी से कोई ३ मील दूर था। शहर के हर प्रकार के महल्लों में घूमते हुए हम यहां आ पहुंचे। यह यहां के पूर्वी महल में है। पहिले हम जिन जगहों में गये वहां पुराने समय के राजाओं तथा राव-उमरावों के चलने के ताम-झाम एवम् एक प्रकार के सुखपाल बहुत से रक्खे हुए थे। दूसरी दालान में पुराने कपड़ों के नमूने रक्खे थे, जिनमें बहुत से रागनी भी थे। यहां विक्रम के पूर्व के भी कपड़े, घड़े और हंडियां देखी गईं। शिलालेख भी यहां अनेक प्रकार के देखे। यहां से होकर नये भवन में गये। इस भवन में बुद्ध भगवान् की अनेक मूर्तियां तथा अन्य वस्तुएँ हैं। यहां बीच में एक बुद्ध भगवान की लोहे की ढली मूर्ति रक्खी है। यह विशाल मूर्ति है। पहिले कभी लोहे की देवमूर्ति मैंने कहीं नहीं देखी थी। यहां अनेक छोटी बड़ी मूर्तियां हैं। बाज़ बाज़ मूर्ती पर एक प्रकार से कपड़ा लपेटने के बाद रंगसाज़ी की हुई है। यहां पुराने चित्र, राजाओं के निज के सामान तथा अनेक अन्य वस्तुओं का संग्रह है। वर्तमान युग के पूर्व के पत्थर के चाकू, तीरों की नोकें इत्यादि भी रक्खी हैं। सोने-चांदी के सामान भी यहां हैं। यहां से होकर हम यहां के अधिष्ठाता के पास आये। उन्होंने एक पुस्तक पर हमारे हस्ताक्षर कराये। इस पुस्तक में सिंहलद्वीप-निवासी भिक्षु धर्मपाल जी के भी हस्ताक्षर देखे, जिससे मेरा यह भ्रम मिट गया कि मैं ही प्रथम भारतवासी यहां आया हूं। किन्तु यह ठीक है कि यहां धर्मपाल जी के सिवाय और कोई भी भारतनिवासी थोड़े दिन पूर्व—एक मनुष्य के जीवनकाल में—यहां नहीं आया है।

यहां से मैं होटल लौट आया, और मध्याह्न-भोजन के उपरान्त यहां का दक्षिणी महल देखने चला। आजकल यहां बड़े ज़ोर शोर से काम लगा है। आगामी अक्तूबर मास में यहां एक प्रदर्शनी होनेवाली है, जिसमें यह प्रदर्शित किया जायगा कि गत पांच वर्षों के शासन-काल में जापान ने इस देश का कितनी उन्नति कला-कौशल में की है। यहां प्रायः कोरियन वस्तुएँ ही प्रदर्शित होंगी। कार्य बड़े धूमधाम से हो रहा है, और अच्छी तैयारी मालुम पड़ती है। महल के बाहरी घेरे में यह प्रदर्शनी बन रही है। भीतर दो घेरे और हैं, जिनमें पुराने दीवान आम और दीवान ख़ास की इमारतें हैं। ये इमारतें चीनी ढंग की बड़ी उत्तम हैं। दीवान आम का कमरा बहुत बड़ा है। छत काठ के मोटे खम्भों पर खड़ी है। छत पर घोड़िये और शहतीरों की जालीसी बन गई है। ये बड़ी खूबसूरती से चित्रित हैं। सिंहासन के पीछे ड्रागोन जन्तु की तस्वीर बनी है। यह विचित्र ख़यालो सांप, जिसके हाथ पैर और सींग भी होते हैं, चीनी तथा कोरियन चित्रकला में एक प्रधान भाग होता है। चित्रों को छोड़ लकड़ी तथा पत्थर के नक़ाशी के काम में भी ये लाये जाते हैं। इस महल को देखने के उपरान्त हम मर्मर के पगोदा को देखने पगोदा उद्यान में गये। यह एक १८ फ़ुट ऊंचा १३ खण्ड का पगोदा बड़े ही सुन्दर नक़ाशी के काम का बना है। बुद्ध भगवान् तथा देवमण्डली इसमें बड़ी अच्छी बनाई गई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। कहा जाता है कि १३७०-१३६६ वी० उ० में यह पगोदा मंगोल नृपति ने चीन में बनवा कर यहां भेजवाया था। हिदयोशी ने जब कोरिया पर हमला किया था तो इसे जापान उठा लेजाना चाहता था, किन्तु अत्यन्त भारी होने के कारण ले जाने में इसके टूटने का भय था, इससे वह यहां रह गया। यहां से हो हम इधर उधर सैर करते नगर के बाहर निकल गये। कोरियन बस्ती को देखते हुए संध्या को लौटे। यहां नगर के बाहर एक फाटक बना है, जिसे स्वतन्त्रता का द्वार कहते हैं। यह उस समय बना था जब कोरिया चीन-जापान युद्ध के बाद चीन से स्वतन्त्र किया गया था। मैं इसका नाम गुलामी का दर्वाज़ा ही रखना चाहता हूं, क्योंकि वही समय था जब से कोरिया की यथार्थ गुलामी का सूत्रपात हुआ। कोरिया नाममात्र ही को चीन के अधीन था, वास्तव में वह एक प्रकार से पूर्णतया स्वतन्त्र ही था।

आज हम एक कोरियन पथप्रदर्शक के साथ राजप्रासाद देखने चले। वह पूर्वी महल के नाम से प्रसिद्ध है। यहां अब भी पुराने नृपति, जिनसे ज़बरदस्ती अपने नाबालिग़ पुत्र को राज दिलवाया गया था, और उनके पुत्र पुराने राजा, जिन्होंने अपना राज्य खुशी से त्याग दिया, भिन्न २ महलों में रहते हैं। इनसे मिलने और उन महलों के देखने की आज्ञा किसी को नहीं है। यात्रियों को वे महल देखने को मिलते हैं, जिनमें अब कोई नहीं रहता। महल ख़ूब सजा है, किन्तु उसकी सजावट उसी भांति की की है जैसे बिना निमक के उत्तम खाद्य पदार्थ फीके होते हैं। इसे देख हमें चित्तौर के पर्वत और दिल्ली के खंडहर याद आगये। आँखों में आंसू भर आये, और हम यहां अधिक न रह सके। संध्या को नगर के बाहर रानी की समाधि देखने गये। यहां कोई विशेष घटना नहीं हुई।

रात्रि को कोरियन ढंग का भोजन और यहां की गान्धर्व विद्या को देखने के लिए हम एक स्वदेशी उपहारगृह में गये। नगर को अवस्था देखने से समझा था कि यह एक मामूली घर होगा, किन्तु यहां जाने से होश ठिकाने आ गये! कोरियन रियासत का दृश्य इस टूटी हालत में भी देखने को मिल गया। जिस कमरे में हम बैठाये गये वह अत्यन्त साफ़ सुथरा था। बैठने के लिए ज़मीन पर बड़ा अच्छा फ़र्श बिछा था। बड़े बड़े व छोटे तकिये भी कार्चोबी काम के लगे थे। सभी सामान शाही था, पर सादगी और सुथरापन हद दर्जे का था। भोजन एक छोटी चौकी पर रखकर आया। खाने के कोई तीस प्रकार के पदार्थ अलग अलग चांदी, फूल तथा चीनी की कटोरियों में था। एक प्रकार की दाल की तरकारी एक विचित्र पात्र में रक्खी थी; जिसमें आबगर्मा की भांति बीच में आग रखने की जगह थी। यह यहां की बड़ी ही उत्तम वस्तु समझी जाती है। दो प्रकार की कचरी थी, दो तीन प्रकार की भुजिया थी, कई प्रकार की मिठाई थी, उसमें एक चावल की गादी थी जो बहुत अच्छी लगी। कमलगट्टे की घुघनी भी अच्छी थी।

गानेवाली दो स्त्रियां भी इसी समय आ सामने बैठ गईं। यह यहां का रिवाज है। खाते समय मदिरा तथा अन्य भोजन के संबन्ध में गीत गाये जाते हैं। ये नर्तकियां साफ़ सुथरे और सादे लिबास में थीं। बाजेवाले छः आदमी थे, तीन शहनाई बजाते थे, एक चिकारा, एक मृदंग और दूसरा नगाड़ा बजाता था। मृदंग को (छंगू) तथा नगाड़े को (पू) कहते हैं। शहनाई और चिकारे का नाम नहीं जान पड़ा। गाने का स्वर अच्छा और मधुर था। ताल-स्वर अपने यहां से मिलते जुलते थे। जापानियों के गान के मुक़ाबिले हमें यहां का गान अधिक रुचिकर प्रतीत हुआ। भोजन के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपरान्त नृत्य प्रारंभ हुआ। इसे मैं सैंएडो की कसरत कहूंगा नृत्य नहीं, क्योंकि इसमें कसरत का भाग अधिक था। पीछे तलवार का नाच हुआ। यह बहुत अच्छा था। नाचनेवाली स्त्रियों में कुचेष्टा के हाव भाव तथा खिस्सूपन का बिलकुल अभाव था। वे गम्भीर देख पड़ती थीं। यहां से हम कोरियन नाटक देखने गये। यहां केवल अंत में एक वृद्ध गायक का गान बहुत अच्छा लगा। यह व्यक्ति राज-दर्बार का गवैया है, किन्तु अब यह वहाँ जाने नहीं पाता। वृद्ध हो जाने पर भी इसका गला कमाल का है। पञ्चम में गाते २ एकदम खरज में उतर आने में यह कमाल कर देता था। ताल-स्वर सब अपने यहां के से जान पड़ते थे।

आज नगर के बाहर एक पहाड़ पर मन्दिर देखने जाने की बात थी, पर वर्षा के कारण जाना नहीं हुआ, इससे दिन घर के भीतर ही व्यतीत हुआ। प्रातःकाल पोर्ट आर्थर के लिए पयान हुआ।

मुकदन-यात्रा।

आज प्रातःकाल नित्य-कृत्य से निपट कु जलपान कर स्टेशन चल दिये। यहां से गाड़ी पर सवार हो मुकदन की ओर चले। फूसन से स्यूल आते समय दक्षिणी चोसेन के भाग को देखने का अवसर मिला था, आज उत्तरी और पश्चिमी भाग देखने को मिला। रास्ते में कोई भी बड़ा कस्बा देखने को न मिला। इधर की अवस्था भी दक्षिणी प्रान्त की भांति अति शोचनीय है। धान के साथ जुआर बाजरा और उड़दी की खेती भी इधर देख पड़ी। यहां के पर्वत चोटी तक घास से भरे होने पर भी वृक्ष-हीन थे। इसका कारण यह नहीं है कि पहाड़ों पर वृक्ष उग नहीं सकते, वरन् देश के अत्यन्त दरिद्र और शीत-प्रधान होने के कारण यहां की जनता शीतकाल में सर्दी से बचने के लिए वृक्षों को काट कर जला देती है, इससे वृक्ष नहीं रहने पाते। अब सुना है कि जापानी सरकार पर्वतों पर वृक्षारोपण का विशेष प्रबन्ध कर रही है।

दिन भर चलने के उपरान्त संध्या समय हम कोरिया की उत्तर-पश्चिम सीमा पर पहुंच गये। कोरिया और मंचूरिया को यहां की प्रधान नदी 'यालू' एक दूसरे से पृथक् करती है। यह इन दोनों देशों की बहुत बड़ी और प्रधान नदी है। इस समय इसका पाट काशी के श्री गंगाजी के पाट से कम न था। थोड़े दिन पूर्व तक इस नदी को तरणी-द्वारा पार करना पड़ता था, किन्तु अब इस पर सुविस्तृत और दृढ़ लोह-सेतु बन गया है। इसी से होकर रेल दौड़ती हुई नदी के वक्षस्थल पर से एक ओर से दूसरी ओर चली जाती है। यन्त्र-कला का यह एक जीवित-जाग्रत उदाहरण है, जिसके लिए जापानी यन्त्र-शास्त्रियों को उचित अभिमान है। हमारी रेल ने जिस समय इस सेतु को लांघा उस समय रात्रि हो गई थी। कोई ८ बजे का समय था, किन्तु आकाश में चन्द्रदेव का पूर्ण साम्राज्य था। शीतल ज्योत्स्ना चारो ओर फैली हुई थी। नदी के उस पार नगर की दीपशिखा चारो ओर जगजगा रही थी। नदी में भी इधर उधर सैलानियों की डोंगियां घूम रही थीं, जिन पर के टिमटिमाते हुए दीप नदी की शोभा बढ़ा रहे थे।

अब हम जापानी साम्राज्य से निकल जापानी प्रभाव-मण्डल मञ्चूरिया में आगये। इस नगर का नाम अन्तंग नगर है। रूस-जापान-युद्ध का प्रथम सूत्रपात १९६१ सम्वत् के मई मास में यहीं हुआ था। यही स्थान वह पवित्र तीर्थक्षेत्र है, जहां पर घोर अमेरिका की राक्षसी विचार-तरंग को प्रथम धक्का लगा। यहीं पर पहिले पहिले जापानी क्षत्रिय वीरों ने रूसियों को पराजित कर जगत् में घोषणा की थी, घोर अमेरिका की बाढ़ का अब अन्त हो गया। इसी जगह पहिले पहिले यूरोप की शक्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की वह डरावनी मूर्ति—वास्तव में काग़ज़ का रावन जलाया गया था जिसके मायाजाल में फ़ंसकर आज डेढ़ शताब्दी से एशिया कांप रहा था। एशिया-निवासियों को मोहनिद्रा से जगाने के लिए प्रथम २ यहीं शंखनाद हुआ था। इसी लिए एशियानिवासियों के वास्ते यह एक पुण्यक्षेत्र, तीर्थ-स्थान बन गया है। जिस प्रकार भागीरथी की पुण्यधारा में स्नान करने से आत्म-बाधा कटती है उसी भांति यालू नदी के पवित्र तट पर आने से ही भविष्य में भव-बाधा कटेगी। जिस प्रकार गंगा-तटस्थ काशी और प्रयाग में लाखों नर-नारी धार्मिक पिपासा मिटाने आते हैं उसी प्रकार भविष्य में यालू-तटस्थ अन्तंग में सांसारिक बन्धनों से मुक्त होने के लिए, पवित्र क्षात्र धर्म सीखने के लिए लोग आवेंगे। हे अन्तंग नगर! तुमने एशियावासियों का भ्रम दूर किया है, उन्हें अपनी भूली हुई शक्तियों का स्मरण कराया है। तुम्हें कोटि बार प्रणाम है।

अन्तंग नगर में जापानी सरकारी रेल से उतर हमें जापानी व्यवसायी रेल पर चढ़ना पड़ा। यहां चीन के शुल्क-विभाग ने हमारे सामान की जांच की। जांच करनेवाले कर्मचारी सब के सब जापानी हैं। जांच नाममात्र का खेलवाड़ है। यह जांच ठीक उसी प्रकार से होती है जिस प्रकार सौत के लड़के की जांच हुआ करती है। अब हम चीनी देश में आगये, किन्तु इसे चीनी देश उसी रूप में कहा जा सकता है जिस प्रकार अभी कुछ दिनों पूर्व तक मिश्र देश तुर्की देश के अन्तर्गत था, अथवा जिस प्रकार इस समय फ़ारस देश फ़ारस का है। इस रेल-मण्डली का नाम दक्षिणी मञ्चूरिया रेलवे है। यह मण्डली ठीक उसी तरह की है जिस तरह की ईस्ट-इण्डिया कम्पनियां डच, पुर्तगोज़ तथा फ़रासीसियों इत्यादि ने १८वीं शताब्दी में बनाई थीं। इस कम्पनी के अन्तर्गत केवल रेल ही का प्रबन्ध नहीं है, वरन् उन सब इलाक़ों का प्रबन्ध भी है जहां जहां से रेल जाती है, और जो २ भूमि रेल-कम्पनी की मिलकियत है। यह रेल-कम्पनियां उस जापानी प्रभाव-मण्डल के जाल की डोरियां हैं, जो मञ्चूरिया पर धीरे धीरे फैल रही हैं, अथवा उस चरसे के कतरन हैं जिसे बिछा कर एक चरसे के बराबर ज़मीन के बदले एक नगर का नगर किसी समय में भारत में किसी बिदेशी ने घेर लिया था। आज कल के ज़माने में किसी भी कमज़ोर देश में एक बित्ता भर भी भूमि किसी शक्तिशाली विदेशी को देने का वही परिणाम होता है जो साढ़े तीन हाथ भूमि दान देने से बलि राजा का हुआ था। ये विदेशी शक्तियुक्त जातियां पैर रखते ही त्रिविक्रम की भांति त्रैलोक्यव्यापी स्वरूप धारण कर सारे देश ही को हड़प कर जाने का विचार रखती हैं।

घंटे भर के उपरान्त अब हमारी गाड़ी फिर चल दी। रात्रि के दस बजे थे। सोने का समय आया तो एक समस्या उपस्थित हुई। प्रायः १६ मास घर छोड़े हुए तब से अपने ओढ़ने, बिछौने का कोई काम ही नहीं पड़ा था। जहाज़ में, रेल में, होटल में, सभी जगह ओढ़ना बिछौना वहीं से मिलता था। ओढ़ना ही बिछौना क्या आवश्यकता की सभी वस्तुएं मिलती थीं। चट्टी जूता, रात्रि के पहिनने के कपड़े, साबुन, तौलिया, कंघी, आईना किसी वस्तु के साथ रखने की आवश्यकता न थी। इसीलिए ओढ़ना-बिछौना साथ में न था। अब हम जापान को भी लांघकर मध्य एशिया में आ गये। यहां थोर अमेरिकन यात्री बहुत नहीं आते जाते, इससे प्रतिदिन सेजगाड़ी यहां नहीं चलती, यह केवल सप्ताह में एक दो दिन चलती है। आज हमें अपने देश की भांति मामूली रेल की संकरी गद्दी पर ही सोना पड़ा, सो भी ओढ़ना-बिछौना नदारद! ख़ैर, पास में एक हवादार तकिया थी जो दिन के लिए साथ में रक्खी थी, उसी में हवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भर, सिर के नीचे रखने का काम चलाया। सर्दी के कारण बिना कुछ ओढ़े गुज़ारा होना कठिन था, किन्तु पास में ओढ़ना था नहीं, होता क्या! ख़ैर, बरसाती कोट की बहारी पैर में डाल और दामन सिर तक खींच ओढ़कर किसी प्रकार रात्रि बिताई। सुबह आँख खुलने पर अपने को एक उर्वरा भूमि में पाया। चारो ओर खेत हरे भरे लहलहा रहे थे। किन्तु ये धान के खेत न थे, जुआर, बाजरा, टांगुन, उड़द आदि इन्हीं की यहाँ प्रधानता थी। इधर उधर जो ग्राम देख पड़े वे भी सुखी मालूम पड़ते थे। ईंटों के घर, खपड़ों की छाजन तथा पञ्जाबी प्रथा के मिट्टी की छत के अधिकांश गृह देखने में आये। घरों के आसपास छोटे छोटे बगीचे भी थे। घरों के सामने पत्थर के बड़े बड़े जोते भी गड़े थे। मनुष्य भी लम्बे चौड़े सुखी देख पड़ते थे। पीठ पर लम्बी चोटी, नीले रंग में रंगा लम्बा अंगा पहिरे, इधर उधर घोड़ों और गदहों पर चढ़े घूम रहे थे। स्त्रियाँ कुओं से पानी ले जा रहीं थीं, बच्चे खेल रहे थे, सारांश यह कि मंचूरिया चोसेन से प्रसन्न और सुखी देख पड़ा। देखते देखते हमारी गाड़ी मुकदन के स्टेशन पर पहुंच गई। उन्हीं लम्बी लम्बी चोटीवाले नील वस्त्रधारी मनुष्यों ने आकर हमारा सामान संभाला, और रेलवे-होटल में ले गये। यह होटल भी रेल-कम्पनी के अन्तर्गत है। यह ठीक स्टेशन पर बना है, नीचे स्टेशन का काम होता है, ऊपर होटल है। अब यहां विचित्र प्रकार का एशियाई शोर सुन पड़ने लगा। होटल के कमरे के बाहर से 'हैयो, हैयो' की आवाज़ आरही थी। खिड़की से बाहर सर निकाल कर देखा तो मालूम हुआ कि ५०, ६०, मज़दूर रस्सियों के द्वारा एक भारी घन को ऊपर खींचकर नीचे गिराते हैं। इस क्रिया-द्वारा वे एक मोटे लट्ठे को ज़मीन में धंसा रहे थे। इसी को खींचने के समय वे "हैयो हैयो" की आवाज़ लगाते थे।

जाति-मानसशास्त्र और सार्वजनिक आन्दोलन।

[अनुवादक—श्रीयुत कृष्णदत्त शर्मा पालीवाल।]

समाजशास्त्र और तत्वज्ञान के सब सन्देहों और कठिनाइयों में एक यह तत्व स्पष्ट और निश्चित है कि संसार में जातियां हैं। जो मनुष्य इस तत्व को समझे बिना ही अपने सहजीवियों की भलाई के लिए कार्य करता है वह बस ज्योतिष के समान है जो आकर्षण-शक्ति के नियम से अनभिज्ञ है। अन्धे और मूक-बधिर भी जानते हैं कि संसार धनी और दीनों में बँटा हुआ है। सब समाजों में धन के विषम विभाग से उत्पन्न छिन्नता और प्रतिपन्नता दर्शाने के लिए शब्द हैं। सधन और निर्धन, ज़मींदार और आसामी, शासक और शासित, पूंजीवाले और श्रमजीवी—ये शब्द उस जाति-विभाग की कथा कहते हैं जो समस्त संसार में मनुष्य समाज की एकता को भंग करता है।

समाज, सर्वत्र, अनेक साम्पत्तिक समूहों में विभाजित है। परन्तु विभाग की मोटी रेखा दोनों सामाजिक अवस्थाओं को पृथक् २ कर देती है:—प्रथम वे जो अपने हाथ से काम करते हैं, दूसरे वे जो हाथ से काम नहीं करते। खेत, कार्यालय या खानों में हाथ से काम करना, मनुष्यों को प्रथम जाति का बताता है, और आजीविका-उपार्जन की इस अवस्था का न होना मनुष्यों को दूसरी जाति का प्रकट करता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। यथार्थ में संसार में यही दो जाति हैं। अन्य विभाग प्राकृतिक नहीं। जो श्रमजीवी हैं वे प्रायः उन लोगों की अपेक्षा अधिक ग़रीब हैं जो श्रमजीवी नहीं हैं। इसी लिए हम देखते हैं कि श्रमजीवी अपने बालकों को अधिकतर उन्नत या सम्पत्तिवान् जाति में उठाने की चेष्टा करता है। लगभग सर्वत्र—बिना किसी अपवाद के—बढ़ई, लुहार या कृषक, राजा, मंत्री, जज, वकील, प्रोफ़ेसर, ज़मींदार, धर्मोपदेशक और बैंकर से कम धनोपार्जन करते हैं।

समाज की कोई शक्ति इन दो जातियों के मध्य की खाई का पुल नहीं बाँध सकती।

वे सब पदार्थ, जो जीवन को रहने योग्य बनाते हैं, धन के अधिक भाग के साथ रहते हैं, जैसे विश्राम, शिक्षा, कला, स्वच्छता, स्वास्थ्य और दीर्घजीवन। निर्धनों को सदा और सर्वत्र रुग्ण और घृणितजीवी होने का अपराध लगाया जाता है। वे अपने को शिक्षित बनाने का अवसर कभी नहीं पाते, वे केवल पेट भर खाने के लिए घंटों परिश्रम करते हैं। उधर शिक्षित धनी लोग, स्वादिष्ट भोजन का उपभोग करते हैं, गाड़ियों में बैठते हैं, अपने आलसी शरीर में तैल लगाते हैं, रेशमी वस्त्र पहिनते हैं, और सदैव सुसमय में रहते हैं।

यह प्रश्न किया जा सकता है कि पदार्थों की इस अनोखी व्यवस्था का प्रादुर्भाव क्योंकर हुआ? इसका कारण क्या है कि एक मनुष्य, जो सूत कातता है, कपड़ा सीता है, अथवा भूमि जोतता और आटा पीसता है, उस दूसरे मनुष्य से अधिक ग़रीब है जो व्याख्यान देता है, वकालत करता है, न्याय करता है, शासन करता है, प्रार्थनापत्र पढ़ता है अथवा बिलकुल कुछ नहीं करता? क्या व्यापार या ज़मींदारी समाज के लिए कृषि, कला-कौशल और वस्तु-निर्माण से अधिक उपयोगी है? और क्यों किसी मनुष्य को कोर्ट में कुछ घंटे बैठ कर कुछ मनुष्यों को क़ैद में भेजने के लिए उस मनुष्य से अधिक वेतन मिलना चाहिये जो धान्य उत्पन्न करता है या जूते गांठता है? क्या राजा व्यापारी या शासक अधिक उपयोगी कार्य करता है? इसका क्या कारण है कि कुछ आदमी बिना कठिन परिश्रम किये विलासिता से रह सकते हैं जब कि दूसरे लोग तमाम दिन परिश्रम करने पर भी कठिनता से जीवन की आवश्यक वस्तुएँ पाते हैं? क्या कारण है कि एक मनुष्य पंखा खींचता है जब कि दूसरा मनुष्य ठंढे कमरे के भीतर खुर्राटे की नींद सो रहा है? इस दूसरे मनुष्य को पंखा क्यों नहीं खींचना चाहिये?

जो लोग अन्न, दूध, फल और तरकारी का उपभोग करते हैं, परन्तु उन्हें उत्पन्न नहीं करते, वे उन्हें अवश्य ही उन लोगों के परिश्रम के कारण पाते हैं, जो उनको पैदा करते हैं। इस साधारण तत्व को समझने के लिए किसी भारी तत्वज्ञान की आवश्यकता नहीं है। जो कपास उगाने, कातने, बुनने का कोई कार्य किये बिना ही कपड़े पहिनते हैं, निस्संदेह वे अपना भाग उन लोगों के परिश्रम से पाते हैं जो प्रथम कच्चा माल उत्पन्न करके तब उससे वस्तु-निर्माण करते हैं। जब हम देखते हैं कि वे, जो कभी भूमि नहीं जोतते, वास्तव में उनसे अधिक अच्छा भोजन करते हैं जो धान और साग पैदा करते हैं, तो हम अवश्य विचार करेंगे कि कहीं न कहीं, कुछ न कुछ, गड़बड़ है। सर्व-दर्शन-संग्रह में वर्णित तत्वज्ञान की १६ प्रणालियों में से किसी के अध्ययन-द्वारा, यह पहेली हल नहीं हो सकती। जीवन और मृत्यु-सम्बन्धी प्राचीन प्रश्नों के स्थान पर हमें यह भयावह प्रश्न पूछने दो:—“एक ओर धनिक, शिक्षित, आलसी और खुशामदी तथा दूसरी ओर दीन, अनभिज्ञ, श्रमजीवी और सम्पत्ति उत्पन्न करनेवाली ये दो जातियाँ क्या हैं”; समस्त कार्य, जो इस प्रश्न को नहीं मानते, अस्थायी और हानिकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं, चाहे वे धार्मिक हों या राजनैतिक, जातीय हों या अन्तर्जातीय।

यदि हम इन दोनों जातियों को एक कर दें तो 'मनुष्यजाति' या 'जातीयता' का कोई अर्थ नहीं रहता। क्योंकि कभी जान बूझ कर और कभी अनजाने धनी निर्धनों के बैरी हैं।

धनी अपना रुपया निर्धनों से प्राप्त करते हैं। वे उसे स्वर्ग से प्रसाद की भांति तो पाते ही नहीं, और न वे रसायन-विद्या ही का अभ्यास करते हैं। राजा, मन्त्री और जज बिना कठिन परिश्रम किये सुविधा से इसलिए रहते हैं कि कृषक उन्हें कर देते हैं। ज़मींदार अपना समय आलस्य में या कुकर्मों में क्यों व्यय कर सकता है? इसलिए कि आसामी उसे लगान देते हैं। बैंकवाले सर्वदा आराम से बैठे बैठे भी इसलिए धनवान हो जाते हैं कि क़र्ज़ लेनेवाले व्याज अदा करते हैं। पूंजीवाले कार्यालयों में हिस्सा ख़रीद कर सकते हैं, और मुनाफ़े का भाग इसीलिए ले सकते हैं कि मज़दूरों को कम वेतन मिलता है। वकील बार-रूम में बैठकर और यदाकदा व्याख्यान देकर सैकड़ों रुपये प्रति माह क्यों पैदा कर सकता है? इसलिए कि वह धनियों की उनके सम्पत्ति-संबंधी झगड़ों में, सहायता करता है, और दीनों को लूटने खाने में उन्हें मदद देता है। इसी तरह और भी। यदि कहीं तुम किसी मनुष्य को बिना कठिन परिश्रम किये सुखपूर्वक खाते देखो तो विश्वास रक्खो कि कहीं न कहीं कुछ गोलमाल है। सारांश यह कि खुशामदी जाति कभी भी श्रमजीवी जाति के उठाने की इच्छा नहीं कर सकती। क्योंकि पिछली का शनैः २ उत्थान-कार्य खुशामदीपने की मृत्यु का घंटा सदा के लिए बजावेगा। यदि कोई कर ही न दे तो राजा, पार्लामेंट के मेम्बर, जज और वकील क्यों कर रह सकते हैं? और यदि श्रमजीवी न लुटे जाते तो कार्यालयों के मैनेजर लखपति कैसे हो जाते? एक संस्कृत श्लोक का अर्थ है कि भक्षक और भक्ष्य का परस्पर प्रेम अस्वाभाविक और असम्भव है।

'सिंह और भेड़ के मेमने को एक साथ सोना चाहिये'—इस सुप्रसिद्ध लोकोक्ति का उल्लेख करते हुए एक हास्य-लेखक ने टिप्पणी की है—"हाँ अवश्य, परन्तु मेमना सिंह के पेट में होगा।"

धर्म या देशभक्ति का कोई विचार इस जाति के खुशामदीपने की बुराइयों पर सन्तोषजनक मात्रा तक कम नहीं कर सकता। क्या मुसलमान ज़मींदार आसामी के मुसलमान होने पर उससे कर लेना छोड़ देता है? क्या हिन्दू बैंकर अपने सहधर्मी से पूरा एक पौंड मासिक नहीं लेगा? क्या सिक्ख राजा या मन्त्री सिक्ख किसानों से सम्पत्ति लूटने में आत्मा की अशान्ति अनुभव करते हैं? क्या पूंजीवाले अँग्रेज़ अंग्रेज़ मज़दूरों की मज़दूरी घोर आन्दोलन के बिना बढ़ा देते हैं? क्या स्कौच ज़मींदार स्कौच लोगों को अमेरिका जाने से रोकने के लिए उनके वास्ते अपने पार्क खोल देते हैं? यदि कोई एक ऐसा सत्य है, जिसे इतिहास अन्य सत्यों से अधिक बलपूर्वक सिद्ध करता है तो यह है—धनिक जाति और सब वस्तुओं की अपेक्षा धन को अधिक प्यार करती हैं। आत्म-रक्षा का भाव, धार्मिक विश्वास, राजनैतिक मत या जातीय विचार से अधिक प्रबल है। धर्म या देशभक्ति अपने अपने स्थान पर भले हैं, परन्तु वे धनिकों को अपनी संपत्ति भूल जाने के लिए विवश नहीं कर सकते। मनुष्यता के इतिहास में ऐसा ही होता आया है, और उस समय तक ऐसा ही होता रहेगा, जब तक संसार में धनी और निर्धन रहेंगे।

टालस्टाय, बुद्ध और क्रोपौटकिन के समान कुछ महापुरुष जीवनोत्सर्ग भले ही कर दें, परन्तु एक बताशे से समुद्र का जल मीठा नहीं हो सकता। धनी स्वजाति के स्वभावानुसार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बल से, छल से या अन्य किसी उपयोगी यन्त्र से अपना पद स्थिर और सुरक्षित रखते हैं। खुशामदी जाति स्वभाव ही से और प्रायः अनजाने अपने स्वार्थ ही के लिए कार्य करती है। खुशामदी लोग अन्य जातियों की आकांक्षाओं एवं इच्छाओं को नहीं समझ सकते। यथार्थ में केवल दो जाति हैं—धनी और निर्धन—और इन दोनों में परस्पर बिलकुल सहानुभूति नहीं है। अधिकांश मनुष्य तीव्र कल्पनावाले नहीं होते। वे भिन्न समाज के, देशकालानुसार प्रचलित, विचारों की प्रकृति का अनुभव नहीं कर सकते। यह जाति-विभाग मनुष्यों को दूसरी जाति के भावों और आवश्यकताओं के सीखने से वंचित रखता है। इस प्रकार, स्वार्थ के अतिरिक्त अन्य भी सबल शक्तियां हैं, जो धनियों को निर्धनों के प्रतिकूल बनाती हैं। मनुष्य के विचार तथा भाव उसके अनुभव के अनुसार होते हैं, और धनी निर्धनों के जीवन का अनुभव नहीं रखते। उनका विचार-क्षेत्र स्वजाति-कार्य तक सीमाबद्ध है, जिसके बाहर उनके लिए समाज एक अपरिचित भूमि है। जाति-विभाग मनुष्य के सामाजिक सिद्धान्त-सम्बन्धी मानसशास्त्र का निश्चय करने के लिए अत्यंत बलशाली उपाय है। यद्यपि समस्त समाज की भलाई करने की इच्छा रखते हों, तथापि प्रायः धनिक ऐसे ही कार्य आरंभ करते हैं जो केवल उनकी जाति को लाभप्रद होते हैं। एक अद्भुत विधान के द्वारा, खुशामदी जाति के अधिकतर मनुष्य विश्व-सुख और समाज-सेवा के ऊंचे विचार रखते हुए भी जाति-आदर्श के संकीर्ण क्षेत्र में कार्य करने के दोषी ठहराये जा सकते हैं। मनुष्य-जाति के इतिहास में, इसके कारण आत्मिक शक्ति का जो नाश होता है, इससे अधिक हृदय-विदारक कार्य बहुत ही कम होंगे। उच्चादर्श वाला धनी निर्बलों की सहायता करने को तत्पर रहता है, परन्तु जब अन्त में वह देखता है कि उसने केवल धनी और बलवानों की सेवा की है, तब उसका हर्ष शोक में परिणत हो जाता है। परन्तु अनेक उत्साही सज्जन कभी २ अपनी भूल नहीं जान पाते, और इस विश्वास में मर जाते हैं कि उन्होंने 'मनुष्य जाति' और दीनों की सेवा में जन्म बिताया है।

ऐसे दुःखपूर्ण विचार उस मनुष्य के हृदय में उठते हैं जो वर्तमान समय में भारत के सार्वजनिक कार्यों के पूर्ण क्षेत्र की माप करता है। एकआध मनुष्यों के द्वारा कुछ थोड़े और अधूरे प्रयत्नों को छोड़ कर, राजनैतिक तथा सामाजिक सुधारों के संसार में भारतीय सार्वजनिक जीवन मध्यकक्षा के शिक्षित लोगों के आस पास ही घूमा करता है। मैं यह दिखा सकता हूं कि उन सामाजिक शिक्षा-सम्बन्धी और राजनैतिक आन्दोलनों से, जिन्होंने तीस वर्ष से शिक्षित-समुदाय का ध्यान आकर्षित कर रक्खा है, हमारे देश की सर्वसाधारण जनता ने कुछ भी लाभ नहीं उठाया है, और यह परिणाम कितना स्वाभाविक है। प्रत्येक आन्दोलन उन लोगों का प्रतिनिधि है जो उसमें सम्मिलित होते, और उसका प्रबन्ध करते हैं। मध्यकक्षा के अधिकांश सुधारक कृषकों और श्रमजीवियों के जीवन में तल्लीन नहीं हो सकते। वे अपनी जाति की ही आवश्यकताओं, आकांक्षाओं और दुःखों को जानते हैं, उनका मानसिक कार्य-क्षेत्र सीमाबद्ध है, और उनके अनुभव पर निर्भर है। वे उस दीवार को नहीं लांघ सकते, जो इन दो जातियों को पृथक् करती है। कृषक आन्दोलनकर्ताओं ने देश की हानिकर बुराइयों को मिटाने के लिए भिन्न उपायों और भिन्न आदर्शों को ग्रहण किया होता। अधिकांश मनुष्य सदा जाति-विचारों के अनुसार सोचते और कार्य करते हैं। वे अपने मत और आकांक्षाओं के कारण से भी अनभिज्ञ हैं। वे सोचते हैं कि वे समस्त मनुष्यों का, देश का और मनुष्य-जाति का उपकार कर रहे हैं; परन्तु यह भ्रम जाति-मानस-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शास्त्र की मृगतृष्णा से उत्पन्न होता है, जो सामाजिक इतिहास में सब से अधिक कूट और भ्रमात्मक शक्तियों में से है। इतिहास की बातें हमेशा जैसी वे दीख पड़ती हैं वैसी नहीं होतीं। सामाजिक तत्वज्ञानी इन रहस्यों को भलीभांति समझ सकता है, अतः वही इसके कारणों और प्रकारों की उत्तम टीका भी कर सकता है।

मैं यह निबन्ध इसलिए लिखता हूँ कि मैं विश्वास करता हूं कि जो लोग हमारे प्रेम और सन्मान के योग्य पात्र हैं वे केवल श्रमजीवी और कृषक हैं। कारलाइल का वह प्रसिद्ध वाक्य जो "मैं दो मनुष्यों का आदर करता हूं, तीसरे का नहीं" इन शब्दों से आरम्भ होता है, अंग्रेज़ी साहित्य के विद्यार्थियों को ज्ञात है। मैं इससे भी आगे बढ़ूंगा, और कहूंगा कि मैं केवल एक मनुष्य को आदर देता हूं, दूसरे को नहीं, और वह मनुष्य श्रमजीवी अर्थात् मज़दूरी से संपत्ति पैदा करनेवाला है।

वे भिन्न भिन्न आन्दोलन जिन्होंने तीस वर्ष से भारत में हलचल मचा रक्खी है, साधारणतः निम्नलिखित समूहों में विभाजित हो सकते हैं:—

(१) राजनैतिक। (२) शिक्षा-सम्बन्धी। (३) सामाजिक और धार्मिक। मैं यह दिखाने का प्रयत्न करूंगा कि ये आन्दोलन मुख्यतः मध्य श्रेणी के लोगों के प्रतिनिधि हैं, और भारत के सर्वसाधारण के उत्थान के लिए जो गांवों और नगरों के दीन स्थानों में रहते हैं, इन्होंने कुछ नहीं किया है।

(१) राजनैतिक आन्दोलन ने यद्यपि कई रूप धारण किये हैं। पर एक बात स्पष्ट है कि जो परिणाम हुआ है उसने सर्वसाधारण को कोई स्थायी लाभ नहीं पहुंचाया। न इंडियन नेशनल कांग्रेस अपने उद्देश और क्षेत्र में मध्य श्रेणी की संस्थाओं का उदाहरण-स्वरूप है। इसकी मुख्य आकांक्षाएँ ऐसी हैं, जो केवल मध्यकक्षा के लोगों-द्वारा संगठित समाज के मन में उठ सकती हैं। कांग्रेस न तो कृषक और श्रमजीवियों के दल की भांति सोच ही सकती है, और न कार्य ही कर सकती है। यह ग्रेजुएटों, वकीलों, प्रोफ़ेसरों और सौदागरों-द्वारा स्थापित है, और अनिवार्यतः इसका कार्यक्रम भी इसी जाति की आकांक्षाओं के अनुसार सोचा गया। कोई कार्य एक ही समय पर धनियों और दीनों के भले के लिए नहीं हो सकता। समाज के इतिहास में यह कार्य उतना ही असम्भव है जितना गणित में वृत्त का वर्ग बनाना, और भौतिक विज्ञान में निरन्तर कार्य की खोज। कांग्रेस देश के शासन में अधिक भाग लेना चाहती है, यह भाग किस को मिलेगा? कांग्रेसी देशभक्त जिन पदों के इच्छुक हैं, उन्हें कौन प्राप्त करेगा? शासन-विभाग में भारतीय नौकरों की वृद्धि से लाभ कौन उठावेगा? निस्संदेह इनसे कृषकों को कुछ लाभ नहीं। सिविल सर्विस में अधिक भारतीयों के प्रवेश पाने से एक भी कृषक या मज़दूर अधिक अच्छे भोजन-वस्त्र, घर या शिक्षा नहीं पा सकता। उन कृषकों के लिए, जो कर देते हैं, और समस्त गवर्नमेंट के भार को अपने कंधों पर लिये हुए हैं, देश की प्रचलित अनियंत्रित शासन-प्रणाली में अधिक भारतीयों को पद-प्राप्ति के लाभ का उपभोग करना निरर्थक है। कांग्रेस ने यह कभी नहीं कहा है कि सिविल-सर्विस के भारतीय मेम्बरों को अँग्रेज़ साथियों से कम वेतन मिलना चाहिये, जिससे कर देने-वालों का भार कुछ हलका हो जाय। यह स्पष्ट है कि अनियंत्रित शासन में अधिक हिन्दुस्तानियों के प्रवेश पाने को कांग्रेसवाले भी केवल इसी कारण न्यायसङ्गत कह सकते हैं कि इससे शासन-व्यय में कमी हो जायगी, परन्तु उन संस्था के मन्तव्यों में ऐसा कोई सू-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं पाया जाता । मेरी समझ में तो ऐसा आन्दोलन केवल मध्य-कक्षा के लोगों के समाज में ही उठ सकता है । मध्य-कक्षा के लोग अपने पुत्रों के लिए अधिक अर्थकर धन्धे चाहते हैं । वकील हाईकोर्ट की बेंचों पर चाह भरी दृष्टि डालते हैं । तीव्र बुद्धि ग्रेजुएट्स विशेषण-विभूषित डिपार्टमेंटों में प्राविन्शियल और सिविल-सर्विस के पदों के भूखे हैं । यह विचार कि कुछ इनेगिने शिक्षित चापलूसों-द्वारा ऐसे लाभों की प्राप्ति देशोत्थान का कारण होगी, केवल उन्हीं लोगों के हृदय में उठ सकता है जो 'देश' और 'मध्य-कक्षा' के भेद को नहीं समझते, भ्रमवश मध्य-कक्षा ही को देश समझे बैठे हैं । आगे कांग्रेस का सुधार व्यवस्थापक कौन्सिलों की वृद्धि है । अब हमको विचारना चाहिये कि क्या यह गुप्तौषधि किसी तरह सर्वसाधारण को लाभ पहुंचा सकती है । कौन्सिलों में कौन चुने जाते हैं ? क्या वे अपने काम के लिए रुपये नहीं पाते ? क्या वे चुने जाने पर सामाजिक प्रसिद्धि और आदर नहीं प्राप्त करते ? "माननीय" शब्द प्रसिद्धि की उपाधि है या स्वदेशार्थ आत्मत्याग का स्मारक ? क्या कौन्सिल का चुनाव आत्मत्याग और कठिनतापूर्ण जीवन व्यतीत कराता है या सोलहो आने इसके विपरीत है ? ये प्रश्न पूछने और उत्तर देने योग्य हैं ।

कौंसिलों के लाभों के विषय में, प्राचीन वादविवाद को छोड़कर, यह ध्यान देने योग्य है कि ऐसा कार्यक्रम केवल उसी जाति के यहां पैदा हो सकता है, जिसके सदस्य कौंसिल में मेम्बरों की वृद्धि से लाभ उठा सकते हैं । वकील, सौदागर, बैंकरों की कुछ संख्या का व्यवस्थापक-कौंसिल में चुना जाना उन लाखों के भाग्य पर क्या प्रभाव डालता है जो गावों में कठिन परिश्रम करते और भूखों मरते हैं ? क्या यह भूमि-कर कम करा देगा या मज़दूरी बढ़ावेगा, अथवा ग्रामनिवासियों के लिए स्वच्छ जल की प्राप्ति का प्रबन्ध करा देगा, या उनके मन से अकाल, प्लेग, बेगार और पुलिसमैनों के निरन्तर भय का हरण करेगा ? क्या इसका परिणाम "गावों में पाठशालाओं और पुस्तकालयों का स्थापन" होगा ?

कौंसिल में हिन्दुस्तानियों की संख्या अधिक हो जाने से इनमें से एक भी बात न होगी । इसका एकमात्र परिणाम यह होगा कि उपाधियों के भूखे कुछ शिक्षित चापलूस रुपया और सामाजिक प्रभाव हस्तगत कर सकेंगे, और उस समाज में, जो प्रथम ही भयंकररूप से बिगड़ा हुआ है, अभिमान के साथ ऐंठते फिरेंगे । समस्त विचारशील, सार्वजनिक मनुष्य जानते और मानते हैं कि यह उन्नति का मार्ग नहीं है । परन्तु वे यह नहीं जानते कि क्यों और कैसे यह अवस्था उत्पन्न होती और वृद्धि को प्राप्त होती है । वे इस स्थिति को तभी समझ सकते हैं जब वे एकबार यह जान लें कि ये सर्वकार्य मध्य-कक्षा के लोगों के भावों के आभास हैं, जो कृषक और श्रमजीवियों की भलाई से कदापि सम्बन्ध नहीं रख सकते । इस प्रकार हम देखते हैं कि राजनैतिक दल की सुधार-सम्बन्धी नीति केवल मध्य-कक्षा के लोगों की सम्पत्ति और उपयोगिता बढ़ा सकती है । इसने बेगार, प्लेग, भूमिकर, निमक पर कर, नहर की दर और कृषि-शिक्षा ऐसे विषयों से बहुत ही कम सम्बन्ध रक्खा है, और यही विषय कृषकों को लाभदायक हैं । वे व्यवस्थापक कौंसिल और सिविल-सर्विसों-द्वारा कुछ लाभ नहीं उठा सकते । वे सन्मान और पद नहीं चाहते, किन्तु रोटी, स्वास्थ्य और स्वतंत्रता चाहते हैं । यह सच है कि कांग्रेस ने कभी कभी अपने प्रस्तावों में इन विषयों को भी स्थान दिया है, परन्तु उसने इन पर अधिक ज़ोर नहीं दिया । गौण विषयों की भांति चलते फिरते उनका उल्लेख किया गया है । गवर्नमेंट जानती है कि मध्य-कक्षा के मन में क्या है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मध्यकक्षा के लोग ऐसे राजनैतिक सुधार चाहते हैं, जो उन्हें शासन में भाग दिलायें। परन्तु वे ग्रामीणों के दुःखों की अधिक परवा नहीं करते। अतः गवर्नमेंट भी "सर्वसाधारण" के मत को तृप्त करने के लिए उन्हें सेक्रेटरी आफ़ स्टेट कौंसिल में जगह और सिविल-सार्विस तथा व्यवस्थापक कौंसिल में पद देता है। इस प्रकार के सच्चे उत्साही स्त्री-पुरुषों की वीरता और आत्मत्याग का परिणाम हास्यास्पद हुआ है, जिससे कृषकों को कुछ भी रियायत नहीं मिली।

आसामी के अधिकारों के प्रश्न पर भारत के सर्वसाधारण के मत के झुकाव का अध्ययन शिक्षाप्रद है। राजनैतिक दल आसामियों की अधिकार-रक्षा के लिए ज़मीदारों के विरुद्ध कभी नहीं लड़ा हुआ है, यद्यपि हमारे सहस्रों देशबन्धु ऐसे हैं, जिन पर संयुक्त प्रान्त और बंगाल में लाभी ताल्लुक़दारों और ज़मींदारों-द्वारा अधिक कर लगाया गया है। जो आन्दोलन इस प्रश्न को अपने प्रोग्राम के अग्रभाग में स्थान नहीं देता वह सर्वसाधारण का अर्थात् भारतीय किसानों का प्रतिनिधि होने का दावा नहीं कर सकता।

अपने संगठन में, इस कमी के कारण, कांग्रेस दोषी नहीं, क्योंकि वह उन विषयों पर ध्यान ही नहीं दे सकती जो उसके सदस्यों की आवश्यकताओं से सम्बन्ध नहीं रखते। केवल जूता पहिननेवाला ही जानता है कि उसका जूता पैर के किस भाग को दाबता है। भूमिकर तथा बेगार भारत के शिक्षित-समूह को दुःखप्रद नहीं। कृषकों की कांग्रेस भिन्न प्रस्ताव पास करती, और भिन्न दुःखों के निवारणार्थ भिन्न प्रतिकार करती।

(२) शिक्षा-सम्बन्धी आन्दोलन—राजनैतिक आन्दोलन में हम थोड़ा आत्मत्याग नहीं करना पड़ा। बहुमूल्य जीवन इसकी सेवा में नष्ट हो चुके हैं। परन्तु शिक्षा-सम्बन्धी आन्दोलन ने भी हमारे परोपकारी, समाज-सेवी पुत्र और पुत्रियों के समय का अधिक भाग लिया है, पर परिणाम यहां भी निराशाजनक हुआ। क्योंकि केवल मध्य-श्रेणी के उद्देश्यों की पूर्ति की गई है। हमारे श्रेष्ठ मनुष्यों ने अनेक समाज और शिक्षा-सभाओं से सम्बन्ध रखनेवाले कालेज और हाई-स्कूल स्थापित किये हैं। कोई पूछ सकता है कि देशभक्तों के हृदय में कालेज स्थापित करने का विचार क्यों उठा? उन्होंने गावों में मदरसे खोलकर कार्य आरम्भ क्यों नहीं किया, जो सस्ते और अधिक उपयोगी होते? उन्होंने वकील और द्वितीय श्रेणी के अध्यापक तैयार करने में अपनी शक्ति व्यय करना क्यों पसंद किया? शिक्षा-सम्बन्धी आन्दोलन ने इस मार्ग का अवलम्बन क्यों किया? इस सामाजिक तत्व की व्याख्या करना जाति-मानस-शास्त्र का काम है। एक उदाहरण लीजिये—पंजाब के उत्साही आर्यसमाजियों के मन में पंजाब-विश्वविद्यालय से सम्बन्ध रखनेवाला कालेज स्थापित करके स्वामी दयानंद के कार्य का स्मारक बनाने का अद्भुत विचार क्यों उठा? स्वामी दयानंद का मिशन और एक गवर्नमेंट यूनीवर्सिटी कालेज, इन दो का सम्बन्ध ही क्या? वह क्यों हुआ? इसलिए कि अनुयायी-गण स्वयं मध्य-श्रेणी के ग्रेजुएट थे। यदि स्वामी दयानंद-स्मारक का स्थापन कार्य संस्कृत के पारंगत पंडितों के हाथ में होता तो उन्होंने और ही कुछ सोचा होता। यदि पहिले किसान आर्य-समाजी हो जाते तो सचमुच वे समाज के लिए कालेज स्थापित न करते किन्तु वे कोई भिन्न ही कार्य करते। सभाओं की शिक्षा-सम्बन्धिनी संस्थाएँ मध्य-श्रेणी के लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति करने और उन्हें जीविकोपार्जन में सहायता देने के लिए खुली हैं। समाज के सदस्य मध्यश्रेणी के हैं, अतः उसकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्थाओं से उस श्रेणी के लोगों का जीवन और भाव प्रकट होते हैं। यह नियम ऐसी ऐसी सर्व संस्थाओं के लिए लागू है।

दक्षिण के देशभक्तों ने शिक्षा-प्रचार में बहुत आत्मत्याग किया है; परन्तु किसकी शिक्षा के लिए? उन्होंने सहस्रों मध्य-कक्षा के युवकों को जीविकोपार्जन करने और उन्नत विचारों को हृदय स्थित करने में सहायता दी है, परन्तु उन्होंने कृषक-समाज के लिए क्या किया है? जो वकील और प्रोफ़ेसर यहां से निकलते हैं वे सर्वसाधारण के परिश्रम पर रहते हैं, किन्तु वे खुशामदी जाति के हैं। आत्मत्यागी देशभक्तों की भक्ति और बुद्धि से सर्वसाधारण कोई भी प्रकाश, ज्ञान, या आत्मिक उत्तेजना नहीं पाते। यदि वे अपने प्रसादों को मध्य-श्रेणी में नष्ट करने के बदले प्राचीन ऋषियों की भांति सीधे कृषक-समाज में चले जाते तो क्या यह अधिक श्रेष्ठ नहीं होता? यह जटिल प्रश्न है, जिसे कर्त्तव्यशील युवकों को कभी न भूलना चाहिये। मध्य-श्रेणी में अपने प्रेम और अपनी सेवा को सीमाबद्ध न करो। सर्वसाधारण के पास जाओ। हम सब मध्य-श्रेणी के हैं, अतः हम अपनी जाति की सेवा करने का भ्रमात्मक विचार कर सकते हैं। हमें इस आपत्ति से सावधान रहना चाहिये।

स्त्री-शिक्षा का प्रश्न भी मध्य-श्रेणी का कार्य है। हमारी कन्या-पाठशालाओं में कृषक-कन्याएं शिक्षा नहीं पातीं। यथार्थ में गावों में जहां मनुष्य भी अपढ़ हैं, ऐसा कोई प्रश्न ही नहीं। शिक्षित पुरुषों के लिए पढ़ी लिखी बहुओं की आवश्यकता है, इसी कारण इस प्रश्न का अस्तित्व है। इसका परिणाम, मध्य-कक्षा के सुख और पूर्णता की वृद्धि हुई। परन्तु इस कक्षा के उन्नत घर, कृषकों की झोंपड़ी तथा नगरनिवासी श्रमजीवियों की मैली और अन्धकारपूर्ण कुटियों के क्लेश और गंदेपन को कम नहीं करते। मध्य-कक्षा के लोगों के जीवन में चाहे जितना ज्ञान तथा उत्साह भर दिया जाय वह उस उदासी और शोक पर, जिसमें श्रमजीवी अपना जीवन व्यतीत करते हैं, कुछ प्रत्यक्ष प्रभाव नहीं डाल सकता। निस्सन्देह कृषकों और श्रमजीवियों को थोड़ासा लाभ पहुंचता है, परन्तु सब मिला कर विचार करने पर ज्ञात होता है कि यह आन्दोलन उन्हें दुःख ही में छोड़ देता है।

यदि शिक्षा-सम्बन्धी-आन्दोलन कृषकों के लाभ के लिए होते तो वे निरक्षरता दूर करने के लिए गावों में प्रारम्भिक पाठशालाएं खोलते। शिक्षित कृषकों की अधिक संख्या बिना के देश में वास्तविक सार्वजनिक जीवन की वृद्धि नहीं हो सकती। आगे बढ़ने से पहिले हमें यह नींव अवश्य डाल लेनी चाहिये।

(३) सामाजिक और धार्मिक कार्य—सामाजिक और धार्मिक प्रश्नों का जन्म देनेवाली भी यही मध्य-श्रेणी है। ये प्रश्न किसानों की आत्मा पर अधिक प्रभाव नहीं डालते क्योंकि अभी उनका मन उन्नति के उचित पद पर नहीं पहुंच सका है। परन्तु मध्य-कक्षा के लिए यह अवश्यम्भावी है। इसने आत्मिक बल के प्रशंसनीय उदाहरण उपस्थित किये हैं, सुधार तथा पुनरुत्थान का प्राचीन प्रश्न, जिसके विषय में हम इतना सुना करते हैं, मध्य-कक्षा की मानसिक और सामाजिक आवश्यकताओं के कारण उत्पन्न हुआ है। उत्तरीय भारत में पर्दा-प्रथा का दूर करना मध्य-कक्षा ही के लोगों का विषय है, ग्रामीय जीवन से वह कुछ सम्बन्ध नहीं रखता। मैं वर्तमान युग के समस्त धार्मिक और सामाजिक कार्यों के सम्पूर्ण प्रोग्रामों का उल्लेख कर सकता हूं, और दिखा सकता हूं कि वे केवल मध्य-कक्षा के भाव और आदर्श प्रकट करते हैं। गांवों और नगरों में श्रमजीवी अपने भिन्न प्रश्न रखते हैं। इस प्रकार इस जाति-विभाग के कारण एक ही देश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में आन्दोलनों को भिन्न भिन्न मार्गों का अव-लम्बन करना पड़ा है।

उपसंहार में, मैं उत्साही युवक और युवतियों से सामाजिक और राजनैतिक प्रश्नों को कृषकों और श्रमजीवियों की दृष्टि से अध्ययन करने की प्रार्थना करता हूं। जो यथार्थ में भारतवर्ष के सर्वसाधारण हैं। मैंने मनुष्य-जाति के उत्थान में सच्चे और योग्य कार्यकर्ताओं के कार्यों पर, विचार में बठे बिना ही, भारत के सामयिक कार्यों की व्याख्या करने का प्रयत्न किया है। इतिहास का पथ तिमिराच्छन्न है, कोई विचारक अपने अधिकार में करुणा और सच्चा यार्ड रखने की शेखी नहीं मार सकता। समस्त सत्कर्म फलप्रद होते हैं। भूलें श्रेष्ठतर वस्तुओं के लिए रास्ता साफ़ करती हैं। मैं केवल स्वदेशवासियों को आदर्श चूकने के भय से सूचित करने का प्रयत्न करता हूं। जागृति के किसी समय में सब लड़कें रोम को नहीं जातीं। हमको पग पग पर ठहरना और विचारना पड़ता है, जिससे हमारा आत्मत्याग सचमुच उन लोगों के सुख को बढ़ाये, जिन्हें हम प्यार करते हैं। हमको गोथी की वह प्रसिद्ध कहावत—"कार्य में अज्ञानता से अधिक भयजनक और कुछ नहीं"—(There is nothing more dangerous than ignorance in action) स्मरण रखनी चाहिये।*

---

* सन् १९१४ की 'माडर्न रिव्यू' की फरवरी की संख्या के X. Y. Z. नामधारी लेखक के लेख का भाषानुवाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गेय-गीत ।

(४)

(द्रुतविलम्बित-छन्द)

[लेखक—श्रीयुत लक्ष्मणसिंह क्षत्रिय—"मयंक" ।]

भरत ! भारत को अपनाइए ।

१—नवल चित्र-पटी पलटी, अहा !
अरुणिमा तम से लपटी, अहा !
दुखमई रजनी विघटी, अहा ।
सुखमई सुषमा प्रघटी, अहा ॥
प्रकृति की कृति पै चित लाइए । ।
भरत ! भारत को अपनाइए ॥

२—तुम अभी सुख-पूर्वक सो रहे,
पुरुष होकर पौरुष खो रहे;
सबल थे; पर क्या अब हो रहे ?
अहह ! क्यों रसमें विष बो रहे !
जगत-जाग्रति को न भुलाइए ।
भरत ! भारत को अपनाइए ॥

३—विभव भी भव में सुपदार्थ है,
सुखद-जीवन भी पुरुषार्थ है,
यदपि स्वत्व-उपार्जन स्वार्थ है,
पर भरा उसमें परमार्थ है;
जगत को सपना न बताइए ।
भरत ! भारत को अपनाइए ॥

४—प्रिय तुम्हें कुछ भी यदि मान है,
यदि तुम्हें रखनी निज शान है,
उचित तो करना अभिमान है:—
"कि हममें गुण, गौरव, ज्ञान है"।
स्वपथ मे पग वेगि बढ़ाइए ।
भरत ! भारत को अपनाइए ॥

५—यदि पड़ें पथ में बहु विघ्न भी,
गुरु-अनिष्ट अड़ें अथवा सभी;
पर न 'आह' कढ़े मुख से कभी,
सुलभ स्वत्व तुम्हें तब हो सभी;
पुरुष हो ! पुरुषार्थ दिखाइए ।
भरत ! भारत को अपनाइए ॥

६—सफलता ध्रुव-धैर्य जहाँ, वहीं;
विफल यत्न न हो सकते कहीं ।
त्रिदिव, नन्दन-कानन है यहीं;
मरण, जीवन के रण में नहीं;
पतन से डरिए न डराइए ।
भरत ! भारत को अपनाइए ॥

७—सुख, स्वराज्य सदा निज स्वत्व है,
जननि का हित-साधन सत्व है;
प्रणय-पूर्ण-प्रभुत्व महत्व है;
जगत का हित ही अमरत्व है,
मनुज ! जीवन-ज्योति जगाइए ।
भरत ! भारत को अपनाइए ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारा पुस्तकालय।

स्त्री-चरित्र-संगठन—लेखक श्रीयुत दयाचंद्र गोयलीय, बी० ए०, और प्रकाशक राजपूताना हिन्दी-साहित्य सभा, झालरापाटन। पृष्ठ-संख्या ११२, मूल्य ॥)। प्रकाशक के पते से प्राप्य।

प्रस्तुत पुस्तक इसी नाम की बँगला पुस्तक के आधार पर लिखी गई है। भिन्न भिन्न विषयों पर इसमें २४ निबन्ध हैं जो प्रायः शिक्षात्मक हैं। पुस्तक स्त्रियों के पढ़ने योग्य है।

गल्पमाला—लेखक और प्रकाशक श्रीयुत श्यामलाल वैश्य। वार्षिक मूल्य २), प्राप्ति-स्थान साहित्य-कार्यालय, मुरार ग्वालियर।

यह गल्पमाला मासिक है। प्रस्तुत अङ्क इसका प्रथम पुष्प है। इसमें चार कहानियां हैं, जो मनोरंजक और शिक्षाप्रद हैं। बालकों के लिए यह माला विशेष उपयोगी होगी, इस प्रकार की गल्पों को वे रुचि से पढ़ेंगे। भाषा यद्यपि सरल है, परन्तु बालकों के लिए और अधिक सरलता आवश्यक है।

पद्य-पारिजात—प्रणेता और प्रकाशक श्रीयुत भगवानदीन पाठक "विशारद"। पृष्ठ-संख्या ६०, मूल्य ।), प्राप्ति-स्थान—नागरी-निकेतन, कूंचा सांवलदास, प्रयाग।

प्रस्तुत पुस्तक में पाठकजी की स्फुट कविताओं का संग्रह है। रचना-शैली उत्तम है। कुल ३२ कविताएं हैं, जो प्रायः सुन्दर और सुपाठ्य हैं। पुस्तक देखने और संग्रह करने योग्य है।

शास्त्रार्थत्रय—लेखक और प्रकाशक श्रीयुत विष्णुदयालु मिश्र मंत्री श्रीमर्यादापुरुषोत्तम सनातनधर्म सभा कानपुर। पृष्ठ-संख्या २३४, मूल्य ॥।) प्राप्ति-स्थान—पण्डित कामताप्रसाद दीक्षित अमरौधा, कानपुर।

उपर्युक्त सभा की ओर से गत अप्रैल मास में श्रीसनातनधर्म और आर्यसमाज के विद्वान पण्डितों में तीन महत्वपूर्ण विषयों—१ पुराण वैदिक हैं, २-श्राद्ध, ३-मूर्तिपूजा—पर जो तीन शास्त्रार्थ हुए थे उन्हीं का संग्रह इस पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया गया है। उभय-पक्ष के विद्वानों के पारस्परिक विवाद और प्रश्नोत्तरों से पुस्तक में एक प्रकार की रोचकता आगई है। धार्मिक जिज्ञासु इसे पढ़ कर आनंद प्राप्त कर सकते हैं।

करामात तैल कान बहने, कम सुनने, निपट बहरेपन शब्द होने, परदों की कमज़ोरी व कान के सर्व रोगों की अनुभवी रामबाण दवा है। मूल्य फ़ी शीशी १।)।

वल्लभ ऐण्ड को०, पीलीभीत यू० पी०।

अभ्युदय प्रेस, प्रयाग में बद्रीप्रसाद पाण्डेय के प्रबन्ध से छपकर प्रकाशित हुई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नक्कालों से सावधान रहिये

सुधासिंधु

यह सरकार से रजिस्ट्री की हुई एक स्वादिष्ट सुगंधित दवा है जो केवल पानी में डालकर पीने ही से कफ, खांसी, हैजा, दमा, शूल, संग्रहणी, अतिसार, बालकों के हरे पीले दस्त, कै करना, दूध पटक देना आदि रोगों को एक ही खुराक में फायदा दिखाती है। कीमत फी शीशी ॥) डा० ख० १ से ६ तक ≡)

दद्रुगजकेसरी

बिना किसी जलन और तकलीफ के दाद को जड़ से खोनेवाली यही एक दवा है। कीमत फी शीशी ।) १२ लेने से २) में घर बैठे देंगे।

बालसुधा

यदि आपको दुबले पतले और सदैव रोगी रहनेवाले बच्चों को मोटा ताजा और तन्दुरुस्त बनाना है तो हमारी इस जायकेमन्द दवा को मंगाकर पिलाइये कीमत फी शीशी ॥।) डा० ख० ।≈)

पूरा हाल जानने के लिए चार धाम का चित्र सहित सूचीपत्र मुफ़्त मंगाकर देखिये।

मंगाने का पता—

सुखसंचारक कम्पनी, मथुरा।

रोजगार या विज्ञापनबाजी हमारा काम नहीं

केवल परोपकार के लिये।

स्वदेशी जड़ी बूटियों की अद्भुत शक्ति

सर्पनाशक

बिना मारे अपनी अद्भुत शक्ति से सांपों को भगा देने तथा काटे हुए मनुष्यों और पशुओं को मिन्टों में अकाल मृत्यु से बचाने वाली महौषधि, मूल्य, गरीब भाइयों से कुछ नहीं, केवल एक कार्ड पर स्थानीय पोस्टमास्टर-नंबरदार इत्यादि सज्जन से बतौर सिफारिश लिखा देना चाहिये और योग्य पुरुषों से लागत मात्र बड़ी डिब्बी ॥।) छोटी ।≈) लिया जाता है और जो धनवान सज्जन ग़रीबों को धर्मार्थ बांटने के लिये मंगाते हैं उनसे दर्जन बड़ी ६।।।), १५ छोटी ४।) महसूल माफ। नोटिस इत्यादि मुफ़्त। प्रिय पाठको आपसे यह बात छिपी हुई नहीं है कि सांपों के कारण हमारे लाखों भाई प्रति वर्ष अकालमृत्यु से काल के मुख में चले जाते हैं इसलिये प्रत्येक देशहितैषी सज्जन को उचित है कि इस परोपकारी कार्य में हमारा हाथ बटा कर पुण्य के भागी बनें। आशा है कि आप इसको विज्ञापन नहीं बल्कि एक धर्मकार्य समझ कर दूसरे अनपढ़ ग़रीब भाइयों को भी सुना देंगे ताकि वह लोग मुफ़्त मंगा सकें। एजेन्टों को कमीशन से अलग २०-२५ रु० मासिक वेतन भी मिलता है)॥ का टिकट भेज नियम मंगाकर देखो। (नोट) हमारे प्रत्येक ग्राहक को उचित है कि चाहे जिसको कैसाही विषधर सांप क्यों न काट गया हो हताश न होकर औषधी दें परमात्मा की कृपा से अन्तिम समय तक भी यह औषधी अपना अमृत रूपी गुण दिखाये बग़ैर न रहेगी प्रत्येक सज्जन से प्रार्थना है कि हर समय १ डिब्बी अमूल्य औषधी को पाकेट में रक्खें।

पता—सर्पनाशक ब्रांच नं० ५ राय साहब पं० कुन्दन लाल, जगाधरी (पञ्जाब)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२००) रुपये दूंगा

बिना औषध के जन्मभर का रोग दूर।

स्वप्नदोष और शीघ्रपतन बड़े भयङ्कर रोग हैं। स्वप्नदोष नौजवानों के शरीर और दिमाग़ को मिट्टी कर देता है, याददाश्त का तो यह दुश्मन है। शीघ्रपतन गृहस्थों का घातक है समय पर लज्जित होने से लोग मर जाना अच्छा समझते हैं, सन्तान भी नहीं होती। मुझे एक ऐसी क्रिया-विधि प्राप्त हुई है जिससे ये दोनों रोग जन्मभर के लिए जाते रहते हैं। यह कोई दवाई नहीं केवल एक साधन है इस पर भी यदि प्रयोग करने पर रोग दूर न हो तो २००) रु० दंड दूंगा जोकि आप अदालत द्वारा मुझसे वसूल कर सकते हैं। इसके बताने की फ़ीस राजाओं से १००) धनवानों से ५) सर्वसाधारण व विद्यार्थियों से २) रु०। डाक मह०।) आना।

नोट—उक्त क्रिया पत्रद्वारा लिखकर बताई जायगी, साथ ही एक बूटी भी भेजी जायगी जिसका सेवन एक सप्ताह तक आवश्यक है।

प्रकाशक—

चन्द्रशेखर शर्मा धर्मोपदेशक,

(नं० २) पो० जलाली ज़ि० अलीगढ़।

'मर्यादा' की विशेष संख्याएँ।

कुछ प्रतियां बच रही हैं। जिन सज्जनों को मंगाना हो उनको शीघ्रता करनी चाहिये।

(१) स्त्रियों की विशेष संख्या, जुलाई १९१२ ॥=)

(२) स्वराज्य संख्या १)

(३) दक्षिण अफ्रीका की संख्या, दिसम्बर १९१२ ॥=)

मैनेजर "मर्यादा", प्रयाग।

महात्माओं के चित्र।

हमने बड़े प्रयत्न से भारत के मान० नेताओं देशभक्त महिलाओं तथा चिरस्मरणीय महानुभावों के चित्र तैयार किये हैं। लीजिये, इन आदर्श महात्माओं के चित्रों से घरों को पावन और सुशोभित कर नेत्रों को सफल कीजिये। चित्रों की सूची निम्नलिखित है:—

देशोद्धारक स्वर्गीय मि० गोखले।
मान० पं० मदनमोहन मालवीय।
भारत के वयोवृद्ध ऋषि दादाभाई नौरोजी।
सर फ़ीरोजशाह मेहता।
लोकमान्य मि० तिलक।
देश के सच्चे सपूत महात्मा गांधी सपत्नीक।
श्रीमती एनी बीसेन्ट।
प्रसिद्ध विदुषी श्रीमती सरोजनी नायडू।
महात्मा गांधी के प्रिय शिष्य भारत के शुभचिन्तक मिस्टर पोलक।
साहित्य-सम्राट् श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुर।
स्वर्गीय महादेव गोविन्द रानाडे।
विद्यानुरागी स्वर्गीय सर सैयद अहमद खां।
मान० बिशुननारायण दर।
मान० गोकर्णनाथ मिश्र।
श्रीमान् बाबू गङ्गाप्रसाद वर्मा।
मि० अरंडेल। मि० वाडिया।
श्री० डा० सतीशचन्द्र। सर सुब्रह्मण्य ऐयर।
श्रीकृष्णस्वामी ऐयर। मि० बोमन जी।
लाला लाजपत राय सुरेन्द्रनाथ बनर्जी।

इन सब चित्रों का इनलार्जमेंट १०×१२ माउन्टेड १४×१८ दाम प्रत्येक का १०)।

केबिनट साइज़ के प्रत्येक चित्र का दाम ॥।) मर्यादा के ग्राहकों से डाकखर्च और पैकिंग माफ़। औरों से नहीं।

१ अक्टूबर १९१८ के बाद बढ़ा दिये जायँगे प्रत्येक चित्र इसी ता० तक ॥।) में मिलेगा बाद को दाम १) हो जायगा।

पता=पी० एन० वर्मा एन्ड कंपनी,

मेडेलियन फ़ोटोग्राफ़र्स, जानसेनगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिनिधि-शासन।

स्वतंत्रता-प्रिय अंग्रेज़ों की अधीनता में डेढ़ सौ साल से अधिक रहने पर अब सारे हिन्दुस्थान में स्वराज्य यानी 'प्रतिनिधि शासन' की धूम मच गई है और भारतवर्ष की सारी जनता 'प्रतिनिध-शासन' को अपनाने के लिये लालायित हो रही है। परन्तु वह 'प्रतिनिध-शासन' क्या है, जिसके बल से आज अमेरिका, फ्रान्स प्रभृति विलायती देश इस उन्नति के शिषर पर चढ़े हुए हैं—वह अजेय 'प्रतिनिध-शासन' किस प्रकार सफल होता है—अपार शक्तिशाली 'प्रतिनिध-शासन' को सफल बनाने के लिये किन किन बातों की आवश्यकता होती है इत्यादि इत्यादि विषयों की जानकारी के लिये विलायत के प्रसिद्ध विद्वान, फिलास्फर और राजनीतिविद् पंडित जान स्टुअर्ट मिल की प्रसिद्ध पुस्तक Representative Government का हिन्दी अनुवाद यह 'प्रतिनिध-शासन' प्रकाशित किया जा रहा है। देश के प्रेमियो, भारतवर्ष को उन्नति के शिषर पर चढ़ानेवाले उद्योगियो और मातृ-भूमि भारतवर्ष की सारी जनता को एक बार इस पुस्तक को पढ़ 'प्रतिनिध-शासन' की भलाई, बुराई को अवश्य जान लेना चाहिये। मूल्य २॥) पुस्तक छप रही है; शीघ्र प्रकाशित होगी। पर जो लोग अभी से ग्राहक श्रेणी में नाम लिखा लेंगे, उनसे डाकखर्च नहीं लिया जावेगा और जो लोग मनीआर्डर से १॥) रुपया अभी भेज देंगे उनको पुस्तक घर बैठे पहुंचा दी जावेगी।

मैनेजर—साहित्य-सरोज-माला,

उपन्यास बहार आफिस, काशी, बनारस।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या आतंकनिग्रह औषधालय आपने सुना है ?

१—न सुना हो तो सूचीपत्र मंगाकर देखो, अगर न पढ़ा हो आज ही आज "काम शास्त्र" नामक पुस्तक मंगाकर जीवन की महत्ता और संरक्षण के नियम देखलो।

२—उक्त औषधालय में तय्यार होनेवाली "आतंक निग्रह गोलियां" अस्वस्थ को स्वस्थ बनानेवाली निर्बल को बल देनेवाली, कम पुरुषत्व वाले को पुरुषत्व देनेवाली और स्वस्थ को विशेष बलवान, पुष्ट और दीर्घायु करनेवाली है।

मूल्य गोली ३२ की डिब्बी १ का १) एक रुपया।

वैद्यशास्त्री मणिशंकर गोविन्द जी,

आतंक निग्रह औषधालय,

जामनगर—काठियावाड़।

आठ आने में पत्र।

सचित्र मासिक 'विश्वमित्र' के निर्भीक राजनीतिक लेख और चित्ताकर्षक व्यङ्ग चित्र इस पत्र की विशेषता बतानेवाले होंगे। इसमें बड़े आकार के हर महीने ४०,५० पृष्ठ रखनेका विचार है। डाक व्यय समेत मूल्य केवल १) साल रक्खा गया है। दीपावली अर्थात् अक्तूबर के अन्ततक मूल्य देकर ग्राहक बननेवाले आठ आनेही में साल भरतक बराबर पत्र पायेंगे। प्रजा में जागृति और राष्ट्रभाषा का विस्तृत प्रचार करने के लिए हिन्दी में यह नवीन उद्योग किया गया है। पत्र-प्रेमी इस अवसर को हाथ से न जाने दें। फौरन मूल्य भेजकर ग्राहक बन जायें। पत्र निश्चित संख्या में ही छापे जायेंगे। इससे एक सज्जन के नाम एक ही पत्र जारी हो सकेगा।

पता—मेनेजर 'विश्वमित्र' कार्यालय

बड़ाबाजार, कलकत्ता।

हिमालय।

सुलेखकों के सारगर्भित लेखों से समलंकृत

धार्मिक सामाजिक औद्योगिकादि विविध विषयों का उपरोक्त मासिकपत्र रानीखेत जिला अलमोड़ा से यथाशीघ्र प्रकाशित होनेवाला है। अग्रिम मूल्य २) रु० वार्षिक। यदि घर बैठे शैल-शिरोमणि, चमत्कार रत्नागार; देवर्षि सिद्ध गन्धर्वादि के प्रियतमावास श्रेष्ट तपोभूमि की सैर करना चाहते हैं तो शीघ्र मूल्य भेज ग्राहक बनिये। पहले २५० ग्राहकों को एक इनाम २५) रु० का मिलेगा तथा प्रति ग्राहक एक अपूर्व पुस्तक भी मिलेगी। विज्ञापन—पहले पच्चीस विज्ञापनों की छपाई में निश्चित मूल्य से २५) रु० सैकड़ा की कमी की जायगी शीघ्र विज्ञापन का नमूना भेजकर मौका हाथ से न जाने दीजिये।

मैनेजर "हिमालय" रानीखेत,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिहारी की सतसई

पद्मसिंह शर्मा कृत

सतसई संजीवन भाष्य

छप रहा है॥

पुस्तक कई भाग में होगी। पहला भाग विजयदशमी तक प्रकाशित हो जायगा। इसमें सतसई के महत्व पर कई विस्तृत और गवेषणापूर्ण निबंध हैं। जिनमें सतसई का उद्भव, सतसई के आदर्श ग्रंथ, अर्थापहरण विचार प्रकृत, संस्कृत, उर्दू और हिन्दी कवियों की कविता से सतसई की मनोरंजक समालोचनात्मक तुलना, बिहारी का विरह वर्णन, बिहारी की भाषा, बिहारी का व्यापक पांडित्य, सतसई की मनोहर सूक्तियों के नमूने आदि चमत्कृत प्रबंधों के साथ सुप्रसिद्ध "सतसई संहार" भी सम्मिलित है। सुन्दर टाइपों में डबल क्राउन १६ पेजी आन्टिक कागज़ पर कोई ३५० पृष्ठ की पुस्तक छप रही है। पहले से ग्राहकों में नाम लिखाने वालों को डाक व्यय न देना पड़ेगा। शीघ्र नाम लिखवाइये। पता साफ साफ लिखिये।

स्वराज्य का मसविदा

सरकार की आज्ञा मिल गई।

भारतीय शासन प्रबन्ध सम्बन्धी सुधारों का आवेदनपत्र।

प्रथम खण्ड के प्रकाशन की निषेधाज्ञा उठ गयी। अब लोग इस पुस्तक को मंगाकर इस से लाभ उठा सकते हैं। इस खंड का मूल्य ||=) है। दूसरा खंड भी शीघ्र ही तैयार होगा। उस के लिए ग्राहक रजिस्टर खुला है। इस खंड में वर्तमान राजनीतिक स्थिति तथा इसके कारणों की सरकारी आलोचना है जो बड़ी ही मनोरञ्जक और शिक्षाप्रद है। तीसरा खंड तैयार हो रहा है जिसमें इस सरकारी मसविदे की आलोचना छपेगी जो कांग्रेस, लीग, देश के अग्रगण्य नेता, तथा मुख्य मुख्य संस्थाओं और हमारे विदेशीय हितचिन्तकों ने की हैं।

शिवप्रसाद गुप्त।

संचालक ज्ञानमंडल काशी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

राष्ट्रीय संख्या

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जनवरी में प्रकाशित होगी। यह नई विशेष संख्या होगी। संख्या कैसी होगी इस संबन्ध में हमको इतनाही कहना है कि मर्यादा की विशेष संख्याएँ जैसी निकल चुकी हैं उन्हीं के समान यह भी होगी। मि० बेसेन्ट, ला० लाजपतराय, मि० सी० पी० रामस्वामी ऐयर, मि० कामठ, मिसेज़ सरोजनी नायडू, मि० तैलङ्ग, मि० केलकर आदि देश के नर-रत्नों के लेखों से संख्या सुशोभित होगी। ग्राहक बनिये तथा जो ग्राहक नहीं हैं उनसे ग्राहकों की श्रेणी में नाम लिखवाने का अनुरोध करिये।

मैनेजर "मर्यादा", प्रयाग।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Regd. No. A. 533.

भाग १६ संख्या ५

मासिक **मर्यादा** पत्रिका

नवम्बर सन् १९१८

विषय-सूची ।

विषय	पृष्ठ
१-बिछड़नेवाले यों बिछड़े (कविता) "सनेही"	१८९
२-विलायती अबलाओं का बल	१९०-१९२
३-हिन्दू और हिन्दी-श्रीयुत शालिग्राम एम्० एस० सी०	१९३-१९९
४-विचित्र दशा (कविता)-श्रीकान्त कुसुमाकर	१९९
५-समर्पण-श्रीयुत विश्वम्भर नाथ कौशिक	२००-२०६
६-फूल (कविता)-श्रीयुत विष्णु-प्रसाद दीक्षित "उपेन्द्र"	२०६
७-मैं कौन हूं-श्रीयुत रुद्रदत्त भट्ट	२०७-२०८
८-यूरोप के इतिहास पर एक दृष्टि	२०९-२१४
९-छत्रपति शिवाजी महाराज की श्रेष्ठ योग्यता-श्रीयुत लक्ष्मीसहाय माथुर	२१५-२१६
१०-भारत प्रशस्ति (कविता)-श्रीयुत रामराज सिंह	२१६-२१७
११-एक तुलना	२१७-२२०
१२-हालते चमन (कविता)-श्रीयुत विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक	२२०-२२१
१३-क्षणिक सन्धि की शर्तें	२२१-२२६
१४-सम्पादकीय टिप्पणियां	२२६-२२८

वार्षिक मूल्य ३॥) एक संख्या का ॥)

अभ्युदय प्रेस, प्रयाग से छपकर प्रकाशित ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मर्यादा' की नियमावली।

'मर्यादा' का अग्रिम वार्षिक मूल्य डाक महसूल सहित ३॥) है। एक संख्या का मूल्य डाक महसूल सहित ।) है। नमूने की संख्या का भी यही मूल्य है। जनवरी मास से दिसम्बर तक वर्षगणना होती है और जनवरी से एक वर्ष का मूल्य लिया जाता है। वर्ष के बीच में ग्राहक होनेवालों से भी जनवरी से मूल्य लिया जायगा किन्तु जो सज्जन चाहें वे जुलाई मास से भी ग्राहक हो सकते हैं।

लेख, प्रबन्धादि यदि स्वीकृत न होंगे तो लौटा दिये जायगे किन्तु इसके लिए टिकट का आना आवश्यक है।

किसी लेख का प्रकाश करना या न करना सम्पादक की रुचि पर है। कोई लेख क्यों नहीं छापा गया इसका कोई कारण नहीं दिया जायगा।

पत्रोत्तर के लिए टिकट या जवाबी कार्ड आना चाहिये नहीं तो जवाब न दिया जायगा।

'मर्यादा' में विज्ञापन की छपाई।

कवर पेज पर	... १५)	प्रतिमास
१ पृष्ठ या २ कालम की छपाई	... १२)	"
आधा पृष्ठ या १ कालम "	... ७)	"
$\frac{1}{3}$ या आधे कालम "	... ५)	"
$\frac{1}{8}$ या चौथाई कालम की "	... ४)	"

१—विज्ञापन के बिना देखे छापने की स्वीकृति नहीं दी जाती।

२—एक कालम या इससे अधिक विज्ञापन छपानेवाले को 'मर्यादा' बिना मूल्य भेजी जाती है। औरों को नहीं।

३—विज्ञापन की छपाई पेशगी देनी होगी।

पत्रव्यवहार इस पते से करना चाहियेः—

मैनेजर 'मर्यादा', प्रयाग

वर्षों की आजमूदा रजिस्टर्ड

पीयूषसिन्धु

कफ़, खाँसी, हैजा, दमा, पेचिस, पेटदर्द, संग्रहणी, बच्चों के हरे पीले दस्त, जाड़े का बुखार, कै होना, जी मिचलाना, नजला, जुकाम, आदि रोगों की स्वादिष्ट और सुगंधित दवा। दाम फी० शी० ॥) आ० डा० ख० अलग १ दर्जन का दाम ४) रु० डा० माफ

दद्रुदावद

दाद की शर्तिया दवा बिना किसी जलन और तकलीफ के हर तरह के दाद को २४ घंटे में जड़ से खोनेवाली दवा दाम फी० शी० ।) आ० डा० ख० अलग। १ दर्जन १॥=) डा० ख० माफ

मंगाने का पताः—

सुन्दर श्रृंगार म० मथुरा।

गांधी-ग्रन्थ-माला

के पैम्फलेटों को मँगाकर पढ़िये। बहुत लाभ होगाः—

सत्याग्रह—लिओ टाल्स्टाय)

समय नहीं है—कृष्णकान्त मालवीय =)

साधन मौजूद नहीं—कृष्णकान्त मालवीय)

निष्क्रिय प्रतिरोध नहीं सत्याग्रह—महात्मा गांधी)

मनेजर "मर्यादा" प्रयाग।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्राहकों को अत्यावश्यक सूचना ।

१-पत्र-व्यवहार में अपना ग्राहक नं० अवश्य लिखना चाहिये अन्यथा उत्तर देने में अथवा किसी कार्य में विलम्ब होने का कार्यालय उत्तरदाता नहीं ।

२-वी० पी० के स्थान में मनीआर्डर भेजकर पत्र मँगाने में अति सुबिधा है-क्योंकि वी० पी० का रुपया प्राप्त होने पर नाम ग्राहक श्रेणी में लिखा जाता है । इस प्रकार वी० पी० भेजने के उपरान्त दो एक अंक निकल जाते हैं तब वी० पी० का रुपया प्राप्त होता है ।

३-वी० पी० से पत्र मंगानेवालों को एक दो सप्ताह संतोष रखना चाहिये । पत्र-व्यवहार करना व्यर्थ होगा ।

मैनेजर मर्यादा, प्रयाग ।

आठ आने में पत्र ।

सचित्र मासिक 'विश्वमित्र' के निर्भीक राजनीतिक लेख और चित्ताकर्षक व्यङ्ग चित्र इस पत्र की विशेषता बतानेवाले होंगे । इसमें बड़े आकार के हर महीने ४०,५० पृष्ठ रखनेका विचार है । डाक व्यय समेत मूल्य केवल १) साल रक्खा गया है । दीपावली अर्थात् अक्तूबर के अन्ततक मूल्य देकर ग्राहक बननेवाले आठ आनेही में साल भरतक बराबर पत्र पायेंगे । प्रजा में जागृति और राष्ट्रभाषा का विस्तृत प्रचार करने के लिए हिन्दी में यह नवीन उद्योग किया गया है । पत्र-प्रेमी इस अवसर को हाथ से न जाने दें । फौरन मूल्य भेजकर ग्राहक बन जायें । पत्र निश्चित संख्या में ही छापे जायेंगे । इससे एक सज्जन के नाम एक ही पत्र जारी हो सकेगा ।

पता—मैनेजर 'विश्वमित्र' कार्यालय
बड़ाबाजार, कलकत्ता ।

क्या आतंकनिग्रह औषधालय आपने सुना है ?

१—न सुना हो तो सूचीपत्र मंगाकर देखो, अगर न पढ़ा हो आज ही आज "काम शास्त्र" नामक पुस्तक मंगाकर जीवन की महत्ता और संरक्षण के नियम देखलो ।

२—उक्त औषधालय में तय्यार होनेवाली "आतंक निग्रह गोलियां" अस्वस्थ को स्वस्थ बनानेवाली निर्बल को बल देनेवाली, कम पुरुषत्व वाले को पुरुषत्व देनेवाली और स्वस्थ को विशेष बलवान, पुष्ट और दीर्घायु करनेवाली है ।

मूल्य गोली ३२ की डिब्बी १ का १) एक रुपया ।

वैद्यशास्त्री मणिशंकर गोविन्द जी,

आतंक निग्रह औषधालय,
जामनगर—काठियावाड़ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नक़्क़ालों से सावधान रहिये

सुधासिन्धु

यह सरकार से रजिस्ट्री की हुई एक स्वादिष्ट सुगंधित दवा है जो केवल पानी में डालकर पीने ही से कफ, खांसी, हैज़ा, दमा, शूल, संग्रहणी, अतिसार, बालकों के हरे पीले दस्त, कै करना, दूध पटक देना आदि रोगों को एक ही खुराक में फायदा दिखाती है। कीमत फी शीशी ॥) डा० ख० १ से ६ तक ≡)

दद्रुगजकेशरी

बिना किसी जलन और तकलीफ के दाद को जड़ से खोनेवाली यही एक दवा है। कीमत फी शीशी ।) १२ लेने से २) में घर बैठे देंगे।

बालसुधा

यदि आपको दुबले पतले और सदैव रोगी रहनेवाले बच्चों को मोटा ताज़ा और तन्दुरुस्त बनाना है तो हमारी इस जायकेमन्द दवा को मंगाकर पिलाइये कीमत फी शीशी ॥) डा० ख० ।≈)

पूरा हाल जानने के लिए चार धाम का चित्र सहित सूचीपत्र मुफ़्त मंगाकर देखिये।

मंगाने का पता—

सुखसंचारक कम्पनी, मथुरा।

रोज़गार या विज्ञापनबाजी हमारा काम नहीं केवल परोपकार के लिये

स्वदेशी जड़ी बूटियों की अद्भुत शक्ति

सर्पनाशक

बिना मारे अपनी अद्भुत शक्ति से सांपों को भगा देने तथा काटे हुए मनुष्यों और पशुओं को मिन्टों में अकाल मृत्यु से बचाने वाली महौषधि, मूल्य, गरीब भाइयों से कुछ नहीं, केवल एक कार्ड पर स्थानीय पोस्टमास्टर-नंबरदार इत्यादि सज्जन से बतौर सिफारिश लिखा देना चाहिये और योग्य पुरुषों से लागत मात्र बड़ी डिब्बी ॥।) छोटी ।≈) लिया जाता है और जो धनवान सज्जन ग़रीबों को धर्मार्थ बांटने के लिये मंगाते हैं उनसे दर्जन बड़ी ६।।।), १५ छोटी ४।) महसूल माफ़। नोटिस इत्यादि मुफ़्त। प्रिय पाठको आपसे यह बात छिपी हुई नहीं है कि सांपों के कारण हमारे लाखों भाई प्रति वर्ष अकालमृत्यु से काल के मुख में चले जाते हैं इसलिये प्रत्येक देशहितैषी सज्जन को उचित है कि इस परोपकारी कार्य में हमारा हाथ बटा कर पुण्य के भागी बनें। आशा है कि आप इसको विज्ञापन नहीं बल्कि एक धर्मकार्य समझ कर दूसरे अनपढ़ ग़रीब भाइयों को भी सुना देंगे ताकि वह लोग मुफ़्त मंगा सकें। एजेन्टों को कमीशन से अलग २०-२५ रु० मासिक वेतन भी मिलता है)॥ का टिकट भेज नियम मंगाकर देखो। (नोट) हमारे प्रत्येक ग्राहक को उचित है कि चाहे जिसको कैसा ही विषधर सांप क्यों न काट गया हो हताश न होकर औषधी दें परमात्मा की कृपा से अन्तिम समय तक भी यह औषधी अपना अमृत रूपी गुण दिखाये बग़ैर न रहेगी प्रत्येक सज्जन से प्रार्थना है कि हर समय १ डिब्बी अमूल्य औषधी को पाकेट में रक्खें।

पता—सर्पनाशक ब्रांच नं० ५ सर्प साहब पं० कुन्दन लाल, जगाधरी (पञ्जाब)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गृहस्थमात्र के काम की तत्काल फ़ायदा करनेवाली, अमूल्य दवा।

वर्षों से दुनियाँ में विख्यात सरकार से रजिस्टरी की हुई हज़ारों प्रशंसापत्र प्राप्त।

सिर से लेकर पांव तक किसी रोग में दे दो, जादू का असर करती है बूढ़ा, बच्चों, जवानों, पुरुषों तथा स्त्रियों के कुल रोगों को जो घरों में होते रहते हैं तत्काल फायदा

करती है बल्कि पशु पक्षियों के रोगों को भी अच्छा करती है। की० १) रु० । बड़ी शीशी १॥।) वी० पी० ।) । तीन लेने से वी० पी० माफ । १२ लेने से ८) रु०। बड़ी शीशी १५॥।) रु०। वी० पी० माफ। २४ लेने से रोशनी वाच इनाम।

ख़िजाब ! ख़िजाब !!

न्यू ईजाद मनमोहन केशकल्प।

एक दफ़े के लगाने से भूरे और सफेद बाल भौंरे के रंग के समान काले चमकीले हो जाते हैं। जिल्द पर धब्बा नहीं आता। हाथ काले नहीं होते। विशेष तारीफ यह है कि एक दफा लगाने से जो बाल काले हो जायँगे फिर वह उमर भर सफेद नहीं होंगे। बराबर इस्तेमाल कीजिये। कीमत १।) वी० पी० ।-)। तीन लेने से ४) वी० पी० माफ।

गोरे और खूबसूरत बनने की दवा

सुगंधित फूलों का दूध।

यह दवा विलायती खुशबूदार फूलों का अर्क़ है। इसे विलायत के एक प्रसिद्ध डाक्टर ने बनाकर अभी भेजा है। इसको ७ दिन बदन और चेहरे पर मालिश करने से चेहरे का रंग गुलाब के समान हो जाता है। बदन से खुशबू निकलने लगती है। गालों के स्याह दाग, मुहासे, झीप, झुर्रियां, फोड़ा फुन्सी, खुजली आदि दूर होकर एक ऐसी खूबसूरती आजाती है कि काली रंगत चांद की चमकने लगती है। जिल्द मुलायम हो जाती है। लगाकर देखो, अपनी प्राणप्यारी को चंद्रमुखी बना लो। दाम एक शीशी १।) वी० पी० ।-) तीन लेने से ४) रु० वी० पी० माफ़।

सुगंधित बालों को उड़ानेवाला साबुन।

बिना किसी तरह के कष्ट के बालों को ५ मिनट में उड़ाकर साफ कर देता है। की० ३ बट्टी के १ बक्स का ॥।) वी० पी० ।) । १२ लेने से २) वी० पी० माफ। तीन दर्जन लेने से रोशनी वाच इनाम।

पता—जसवन्त ब्रादर्स नं० २, मथुरा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुप्रसिद्ध डोंगरे का बालामृत पीने से

छोटे बच्चे ताक़तवान् होके उनका वज़न बढ़ जाता है] और [वह मधुर होने के कारण बच्चे बहुत खुशी से पीते हैं।

शीशी का दाम १२ आना,
डाक म० ४ आना।

इलाहाबाद एजेन्टः—बलदेवप्रसाद एन्ड ब्रदर्स।

के० टी० डोंगरे कं० गिरगाँव—बम्बई।

हिन्दी में स्वराज्य।

स्वराज्य-सम्बन्धी पुस्तकें, साहित्यिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक, जीवनी, उपन्यास, जिस प्रकार की पुस्तकों की आपको आवश्यकता हो "मर्यादा पुस्तक-भंडार" को लिखिये, हिंदी की सभी प्रेसों की प्रसिद्ध पुस्तकें घर बैठे आपको पहुंच जायँगी। कुछ पुस्तकों के नाम :—

गोखले के व्याख्यान	१।)	स्वराज्य-माला	२)
जापान रहस्य	॥=)	चतुर जापानी	१॥=)
कर्मक्षेत्र	।॥=)	अरण्य-बाला	१।)
लो० तिलक की जीवनी	≡)	मोहिनी	॥=)
देवी एनी बेसेन्ट	।=)	आर्थिक सफलता	।=)

तिलक के १२ व्याख्यान १)

'मर्यादा पुस्तक-भंडार,' प्रयाग।

बाटलीवाले की स्वदेशी।

असली कुनैन की १ ग्रेनवाली १०० गोलियों की शीशी, असली कुनैन की २ ग्रेनवाली २०० गोलियों की शीशी बुखार, मलेरिया और जुक़ाम के लिए, एग मिक्सचर, कमज़ोर और थके हुए लोगों के लिए ताक़त की गोलियाँ दाँतों की जड़ को मज़बूत करनेवाला दन्तमंजन, दाद और खुजली का मलहम, ये दवाएँ सब दवाफरोशों से या डाक्टर एच० एल० बाटलीवाला सन्स एन्ड० को० लिमिटेड वारली, १८ बम्बई से मिल सकती हैं।

Dr. H. L. Batliwalla Sons & Co. Ltd
Warli, 18 Bombay.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

मर्यादा ।

मासिक पत्रिका ।

भाग १६] नवम्बर सन् १९१८ । [संख्या ५

बिछुड़नेवाले यों बिछड़े ।

बिछुड़ने वाले यों बिछुड़े ।
तरु से सुमन सुमन से सौरभ ज्यों जा दूर पड़े ॥
॥ बिछुड़ने० ॥
शोभा, श्री, सौंदर्य कहाँ वह सूने महल खड़े ।
द्वार चकित मुँह बाये से हैं हृदय गवाक्ष गड़े ॥
॥ बिछुड़ने० ॥
किस दुनियाँ में गये—सोचकर, यह जी है उमड़े ।
धैर्य्य और संतोष बहे हैं निर्झर नयन झड़े ॥
॥ बिछुड़ने० ॥
अटल अभी समझे थे जिनको पल भर भी न अड़े ।
सके सँभाल न निज छाती पर ऐसे वार कड़े ॥
॥ बिछुड़ने० ॥
हाय जवानी और उमंगें वे हौसले बड़े ।
मिट्टी में मिल गये साथ ही फूटे अमृत घड़े ॥

"सनेही" ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विलायती अबलाओं का बल ।

इस महायुद्ध के आरम्भ होने के पहले विलायत में भी कई लोग ऐसे थे जिनका विश्वास था कि स्त्रियां पुरुष के सब कामों में भाग नहीं ले सकतीं। अर्थात् उनका विचार था कि प्रकृति ने महिलाओं को खास काम के लिए और पुरुषों को किसी विशेष कार्य के लिए बनाया है। इसी कारण एस्क्विथ सरीखे उदार प्रधान मंत्री और कर्ज़न समान संकीर्ण दली स्त्रियों को 'वोट' अपने प्रतिनिधि चुनने का अधिकार, देने के बड़े विरोधी थे।

किन्तु जब पुरुषों के रणभूमि को चले जाने पर महिलाओं ने उनके स्थान पर काम करना आरम्भ किया और ऐसा कोई भी व्यवसाय न रहा जिसको अबलाओं ने पूर्ण योग्यता से सम्पादित नहीं किया तब स्त्रियों को 'वोट' राजकीय सत्व देने के विरोधी सभी लोग, 'टाइम्स' पत्र तक महिलाओं को 'वोट' दिलाने लगे और परिणाम यह हुआ कि अब आगामी पार्लामेंट के सभासदों के चुनाव के समय स्त्रियां भी अपने प्रतिनिधियों को चुन सकेंगी और आशा है कुछ स्त्रियां स्वयं पार्लामेंट की सभासद चुनी जायँगी। इस सब परिवर्तन का कारण यह है कि स्त्रियों की कई पल्टने खड़ी हो गई हैं जो रणक्षेत्र में मोटर गाड़ी चलाती हैं, मोटरों पर कई प्रकार के युद्ध-सम्बन्धी कार्य करती हैं और रणभूम में अपनी योग्यता और वीरता का परिचय देती हैं। यह सभी लोग स्वीकार करते हैं कि बिना "अबलाओं" की सहायता के इस टापू के लोग इतनी सेना खड़ी नहीं कर सकते थे और न इतनी युद्ध की सामग्री ही तय्यार कर सकते थे।

इस समय इङ्गलैण्ड में साठ लाख औरतें मरदों की जगह काम कर रही हैं। इसका अर्थ यह है कि औरतों ने ६० लाख सिपाही लड़ने के लिए भेज दिये हैं।

स्त्रियां निम्नलिखित संख्या में कई कामों में लगी हैं।

लोहे रसायन इत्यादि काम पर	२१,०८,०००
फौजी और जहाजी कामों पर	२,१०,०००
तिजारत बैंक इत्यादि में	४,४६,०००
ट्राम रेल गाड़ी में	१,११,०००
सर्कारी दफ़्तरों में	२,३१,०००
कृषि कार्य में	७३,०००
सफाखानों में	६४,०००
सर्कारी नौकरी में	१,६०,०००
होटल इत्यादि में	२,०७,०००

गोला बारूद बनाने के कारखानों में स्त्रियां इस संख्या में काम कर रही हैं।

१९१४—१५	में	२५,०००	नई
१९१५—१६	"	२,६३,०००	"
१९१६—१७	"	३,३३,०००	"

अर्थात तीन साल में ६,२१,००० औरतें शस्त्र बनाने के काम में और (नई) भर्ती हुईं। याने यह नई संख्या गोला बारूद बनाने के काम में युद्ध के कारण लगीं।

साठ लाख अबलायें जो इस देश की रक्षा परोक्ष रूप से कर रही हैं उनकी सहायता की सराहना यहां के लोग भली भांति कर रहे हैं। तभी तो हेरल्ड बेगबी नामी एक महाशय ने लिखा है—

"Our amazons have saved us. We could not have continued the struggle without their help. They have not only enabled millions of men to be enrolled in the army; they have doubled and trebled the output of munitions of war.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थात् "हमारी वीराङ्गनाओं ने हमारी रक्षा की, हमारी नाक रख ली। हम इस महा-युद्ध को जीत नहीं रख सकते थे यदि महिलाएँ हमारी सहायता के लिए खड़ी न होतीं। उन्होंने मर्दों का काम अपने हाथों में लेकर लाखों आदमियों को फौज में भर्ती होने दिया है और फ्रांस में, स्वतन्त्रता के लिए लड़ने को भेजा है। इसके साथ ही लड़ाई की सामग्री शस्त्र इत्यादि वे तिगुना अधिक बनाने लगी हैं।"

यहां की महिला इस युद्ध में जो काम कर रही हैं वही फ्रांस और जर्मनी की रमणियाँ भी इस घोर संग्राम के लिए कर रहीं हैं।

इस युद्ध ने महिलागण की शक्ति का दिग्दर्शन करा सारे संसार की आँखें खोल दी हैं। भारतवासियों को भी इस विषय पर विचार करना चाहिये कि यदि हम अपनी महिलाओं से अपने राष्ट्रीय कार्य में काम लें तो वे कितनी सहायता दे सकती हैं। इस समय जातीय कामों के लिए हिन्दुस्तान की केवल आधी शक्ति काम में आ रही है। हमको पूर्ण शक्ति से काम लेना चाहिये। 'अबला' को 'सबल' की सहयोगिनी बनाना होगा। तभी भारत का भविष्य उदय होगा।

महिलाओं की हड़ताल।

१,११,०००, महिला जो ट्रामगाड़ी इत्यादि के काम पर हैं उनमें से प्रायः आधी लन्दन की ट्राम और बसों में गाड़ी चलाने और टिकट देने इत्यादि का काम करती हैं।

हाल में उनके सहयोगी मर्दों की तनख्वाह ५ शिलिंग फी हफ़्ता बढ़ाई गई थी। पर स्त्रियों को इस बढ़ती का हिस्सा नहीं मिला। अतएव १६ अगस्त को इन अबलाओं ने सभा कर तय किया कि जब तक हमारा वेतन भी नहीं बढ़ाया जायगा हम गाड़ियां नहीं चलाएँगी। इस हड़ताल का यह परिणाम हुआ कि ६ दिन तक लन्दन की ट्राम और 'बस' गाड़ियों का चलना बन्द हो गया। लोगों को अपने पैरों से काम लेना पड़ा और उनको वे उपयोगी वस्तु समझने लगे! पाताल लोक वाली 'ट्यूब' Tube गाड़ी के समीपवाले लोग उनसे ज़्यादे काम लेने लगे। ज़मीन के भीतर वाली रेल गाड़ियों में भी इतनी अधिक भीड़ बढ़ गई थी कि टिकट घर और स्टेशनों के फाटक बन्द करने पड़े और मुसाफिरों को अपनी अपनी बारी से जाने के लिए घंटों टिकट लेने के लिए "क्यू" बनाये खड़ा रहना पड़ा।

कुछ असुविधा हुई परन्तु ६ दिन शान्तिपूर्वक कटे। ट्राम और बसों की कड़कड़ाहट, भड़भड़-भर्रों से कानों को ६ दिन के लिए कुछ आराम मिला। जनसमूह सड़कों पर निडर घूमने और फिरने लगा क्योंकि सभ्यता के 'जगन्नाथ रथ' के नीचे कुचले जाने का अंदेशा न रहा। लोग सुविधे के साथ प्रकृति की शोभा अवलोकन करने लगे।

प्रत्यक्ष परिणाम यह हुआ कि सर्वसाधारण की आँखें खुल गईं। उनको मालूम हो गया कि स्त्रियां कितना काम कर रही हैं और एकता तथा हड़ताल में कितना बल है।

कुछ मज़दूर लोगों को डर था कि औरतें बड़ी सहनशील, तकलीफ बर्दाश्त करने की आदी और स्वभाव से भीरु होती हैं। अतएव कदाचित वे कम वेतन से सन्तुष्ट होने लगेंगी और इस तरह मर्दों की मज़दूरी कम हो जायगी। इनका यह भी ख़याल था कि कदाचित स्त्रियाँ अपने दुख दूर कराने वा वेतन बढ़ाने के अभिप्राय से काम करने से इन्कार अथवा हड़ताल करने के लिए तैयार नहीं होंगी। पर अब इनका यह ख्याल दूर हो गया और वे रमणियों की सराहना करने लगे हैं।

शुक्रवार को ट्राम और 'बस' चलानेवाली महिलाओं की हड़ताल शेष हुई, शनिवार को ज़मीन के अंदरवाली रेलों में काम करनेवाली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अबलाओं ने हड़ताल आरम्भ की। इस वार पुरुषों ने भी इनका साथ दिया।

हड़ताल अर्थात् 'स्ट्राइक'।

यहां के मज़दूरों के हाथ में यह बड़ा शक्तिशाली शस्त्र है। प्रायः सदैव इसका प्रयोग कर काम करनेवाले लोग अपने मालिकों, ठेकेदारों को परास्त करते हैं। इस शान्तिमय, शक्तिशाली शस्त्र का प्रयोग और इस प्रकार होता है।

मज़दूरों को जब कभी अपना वेतन बढ़वाना होता है या काम के घंटे कम कराना होता है तो वे एका कर अपने मालिकों को सूचित करते हैं कि यदि अमुक दिन तक हमारा वेतन न बढ़ाओगे वा हमारा दुःख दूर न करोगे तो हम काम करना बन्द कर देंगे। अवधि पूरी होने पर वे काम छोड़ देते हैं और तब तक वे फिर काम नहीं आरम्भ करते जब तक उनकी सुनवाई न हो जाय और उनका दुःख दूर न हो जाय। जिस बीच ये काम करनेवाले लोग काम छोड़ घर बैठे रहते हैं उन दिनों उनकी जीविका के लिए उनके संघ (व्यवसायी समितियां) Trade unions उनको तनखवाह देती हैं।

यहां जितने व्यवसाय हैं सब के अपने अपने संघ अथवा समितियां हैं। जिस समय कोई व्यक्ति किसी काम पर भर्ती होता है उसी समय वह अपने पेशे के संघ का सभासद थोड़ी सी फीस देकर बन जाता है। सब से नवीन संघ वा समिति आज दिन फौज से-मुक्त-सिपाहियों की है। इस समिति का कर्तव्य है कि जहां कहीं ये मुक्त (नौकरी से खारिज) सिपाही काम पर लगें उन्हें पूरी तनखाह दिलवायें इत्यादि। जब किसी व्यवसाय के कामकाजी अपना वेतन बढ़वाना चाहते हैं या कोई और दुःख दूर करवाना चाहते हैं तो वे अपनी एक सभा करते हैं और उसमें मन्तव्य निर्णय कर के अपने 'संघ' (समिति) के संचालकों के पास भेजते हैं कि वे उन मन्तव्यों के अनुसार मज़दूरों का हित-साधन करें। समिति के संचालक लोग मज़दूरों के मालिकों से मामला तय करते हैं। जो मालिकों ने उनकी न सुनी तो वे मज़दूरों को 'हड़ताल' करने की आज्ञा देते हैं। बहुधा ऐसा होता है कि संचालक लोग (कार्यकारिणी समिति के सभासद) The Executive of the union मालिकों की तरफ हो मामला तै करने का उद्योग करने लगते हैं और 'हड़ताल' की आज्ञा नहीं देते। ऐसा होने पर मज़दूर लोग अपनी समिति के संचालकों Executive (कार्यकारिणी सभा) की एक नहीं सुनते और स्वयं एका कर हड़ताल आरम्भ कर देते हैं। महिलाओं की हड़ताल में ऐसा ही हुआ था। कार्यकारिणी के सदस्य रमणियों को फुसला कर शान्त करना चाहते थे। उन्होंने उनके समझौते को न माना और स्वयं हड़ताल कर विजय प्राप्त की और संसार के मज़दूरों के इतिहास में नवीन अध्याय आरम्भ किया।

लंदन } मुकुन्दीलाल वर्मा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दू और हिन्दी।

[लेखक—श्रीयुत शालिग्राम एम० एस० सी० ।]

इस निबन्ध का विभाग इस प्रकार समझना चाहिये :—

(१) हिन्दुओं के कर्तव्य हिन्दी के प्रति क्या है ?

(२) क्या वे उनका पूर्णतया पालन कर रहे हैं ?

(३) यदि नहीं तो इसके क्या कारण हैं ?

(४) वे कारण क्यों कर दूर हो सकते हैं ?

इस बात के कहने से पहले कि "हिन्दी के प्रति हिन्दुओं के क्या कर्तव्य हैं" प्रसंगवश कुछ थोड़ासा यह बतलाना उचित जान पड़ता है कि वास्तव में हिन्दुओं का हिन्दी से क्या नाता है ?

यह सभी जानते होंगे कि मनुष्य-समाज का कोई अङ्ग सचमुच उस समय तक "जाति" की पदवी ग्रहण करने का अधिकारी नहीं बन सकता, जब तक उसके साधारण व्यक्ति कुछ मुख्य मुख्य बातों में परस्पर समानता न रखते हों। यद्यपि आकृति और रङ्ग रूप की सदृश्यता की भी इस कोटि में गणना हो सकती है, जैसे गोरी जातियां, काली जातियां और पीली जातियां इत्यादि, परन्तु मेरा तात्पर्य यहां आन्तरिक भावों की समानता से है अर्थात् उनके सर्वहितकारी काम अधिकांश एक से हों, उनका लक्ष एक हो, उनका उद्देश एक हो, अपने जीवन-यात्रा का उद्देश वे प्रायः एक समझते हों और मुख्य बात यह कि उनमें परस्पर प्रेम हो, एक दूसरे के सुख दुःख को अनुभव करते हों इत्यादि, परन्तु यह सब तब ही हो सकता है जब वे सुगमता के साथ अपने अपने मनोभावों तथा विचारों को एक दूसरे पर प्रकट कर सकते हों, और ऐसे मतभेदों का जो उनको मिल कर काम करने में बाधक हों, पक्षपात रहित होकर परस्पर वाद विवाद से निवारण कर सकते हों।

स्पष्ट है कि

भाषण और लेखन

केवल यही दो इसके मुख्य साधन हैं। कहने का सार यह निकला कि उनकी भाषा एक हो, उनकी लिपि एक हो। यदि हमें यह अभिमान है और उचित अभिमान है कि संसार की सभ्य-जातियों में से हम भी एक हैं, तो हमारी कोई जातीय व राष्ट्र भाषा अवश्य होनी चाहिये। हम यह जानते हैं कि भारतवर्ष जैसे विस्तृत और खंड खंड में विभक्त देश के विविध प्रान्तों की प्रचलित भाषाओं का किसी एक रूप में परिणित होना असम्भव है, क्योंकि उनका अस्तित्व और प्रचलन कुछ आज से नहीं बहुत दिनों से है, तथापि उनमें जो सब से सुगम हो अर्थात् सब से अधिक बोली जाती हो वा यों कह लीजिये कि जिसके बोलने और समझने वाले अधिक हों, उससे समस्त पढ़े लिखे हिन्दुओं का अपनी अपनी प्रान्तिक भाषाओं के साथ परिचित होना कुछ कठिन नहीं है।

कौनसी भाषा इस उच्च स्थान का प्राप्त कर सकती है, हमें इस विषय पर अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है। हिन्दी की योग्यता कहिये अथवा उसकी देशव्यापकता कहिये, किसी कारण से भी हो, उसका राष्ट्र भाषा होना स्वीकार कर लिया गया है। विविध प्रान्त के बड़े बड़े विचारशील और भाषा-विज्ञान सम्पन्न विद्वानों ने पूर्ण विचार के पश्चात् यह निर्णय कर दिया है कि हिन्दी ही हमारी राष्ट्रभाषा हो सकती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब यह बात अच्छी तरह साफ हो गई कि हिन्दी से हमारा क्या नाता है ? अर्थात् वह हमारी जातीय भाषा है। हमारे जातीय जीवन का उसके साथ घनिष्ट सम्बन्ध है। हमारा अस्तित्व और अभ्युदय बहुत कुछ उसके ऊपर निर्भर है। यदि हिन्दू जाति की समानता एक शरीर से की जाय तो हिन्दी को वाणी-सम्पन्न जिह्वा के तुल्य समझना होगा। वाणी-सम्पन्न का विशेषण इसलिए लगाया गया कि यों तो गूंगों के भी मुख में जिह्वा का आकार होता है; परन्तु वे उससे अपने मनोभावों को दूसरों पर प्रकट नहीं कर सकते। यह तो हमारा हिन्दी से क्या सम्बन्ध है, इस विषय में हमारा निवेदन है अब यह देखना है कि उसके प्रति

हमारा क्या कर्तव्य है ?

आप जानते हैं एक ओर हमारे सिख भाई हैं, जो पञ्जाब में हिन्दी के प्रचार में बाधा डाले हुए हैं। वे पञ्जाबी को ऐसा अपनाए हुए हैं कि बेचारी हिन्दी की ओर आंख उठाकर देखना भी नहीं चाहते अस्तु, पञ्जाबी हिन्दी ही का बिगड़ा हुआ रूप है, और हमारे केशधारी भाई भी चाहे आज किसी कारण से अपने को हिन्दुओं से पृथक समझते हों परन्तु वे अवश्य ही हिन्दू जाति के एक अङ्ग हैं। दूसरे उस प्रान्त में आर्यसमाज उत्साह के साथ हिन्दी प्रचार के लिए घोर उद्योग कर रहा है। इसलिए हमें आशा रखनी चाहिये कि कभी न कभी हमारे सिक्ख भाई राह पर आजायँगे। परन्तु दूसरी ओर बहुत बड़ा दल मुसलमान भाइयों का है, जो देश के इस सिरे से उस सिरे तक हिन्दी के स्थान में उर्दू का साम्राज्य स्थापित करना चाहता है। यदि आप उनके उद्योग को देखें तो चकित रह जायँगे। कुछ दिन हुए मध्य-प्रदेश के छोटे लाट महोदय से वहां के स्कूलों में उर्दू शिक्षा के विशेष प्रबन्ध के लिए इन लोगों ने प्रार्थना की थी, जिसका उस समय इन्हीं (लाट महोदय) ने उचित समाधान कर दिया था। पर ये हमारी तरह आलसी नहीं हैं। अपने धुन के बड़े पक्के हैं। कभी अपने ध्येय को नहीं छोड़ेंगे। यदि एक बार उनको अपने उद्योग में सफलता प्राप्त नहीं होती तो कभी उनका उत्साह भंग नहीं होता। वे अँगरेज़ी के "Try and try again" के सिद्धान्त के अनुसार फिर फिर उसी बात को लेकर खड़े होते हैं। अहो! हिन्दुओं में इस गुण का विकाश कब होगा। फिर इतना ही नहीं अब वे इस भाषा के साहित्य को भी विविध प्रकार की विद्याओं से सम्पन्न बनाने की चेष्टा कर रहे हैं। ऐसी अवस्था में आप स्वयम् सोच सकते हैं कि कितने अधिक बल के साथ आपको हिन्दी की सेवा करने की आवश्यकता है ? यहां बात बात में मतभेद रूपी व्याधि आकर खड़ी हो जाती है, जिसके मारे कोई काम मिलजुल कर यथेष्ट बलपूर्वक नहीं होने पाता। यह सौभाग्य समझना चाहिये कि हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के विषय में अधिकांश देश के सभी हिन्दू सहमत हैं। यह बड़ा अच्छा अवसर है। हमें चाहिये कि हिन्दी को लोकप्रिय और सर्वोपयोगी बनाने के लिए तन, मन, धन से तत्पर हो जायँ। ऐसा न हो कि हमारी शिथिलता के कारण यह प्रवाह कुछ रुक जाय, किसी और ओर बह जाय। तात्पर्य यह है कि हिन्दी को जातीय भाषा बना कर हमें उससे काम लेना है तो हमारा सब से पहला कर्तव्य यह है कि इसके साहित्य भंडार को कलाकौशल व्यापार और विज्ञान आदि समस्त आवश्यक विषयों की पुस्तकों से परिपूर्ण करें। पञ्जाबी का साहित्य हिन्दी की अपेक्षा अवश्य निर्धन है, परन्तु उर्दू को उसके लगभग समझना चाहिये। यदि सामयिक-पत्र-पत्रिकाओं की संख्या से तुलना की जाय तो मेरा ऐसा अनुमान है कि इस अंश में उर्दू हिन्दी से आगे बढ़ गई है। बंगला और मराठी के विषय में तो कुछ पूछना ही नहीं है। हिन्दी हर अंश में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनसे पीछे हैं, गुजराती के साहित्य का मुझे ठीक ज्ञान नहीं, पर सुनता हूं कि श्रीमान् बड़ौदा नरेश की कृपा से उसका साहित्य भी किन्हीं किन्हीं अंशों में हिन्दी से आगे बढ़ गया है। तामील और तैलंगी आदि दक्षिणीय सीमा-प्रान्त की भाषाओं के विषय में मैं कुछ नहीं कह सकता कि उनका साहित्य हिन्दी से कितना आगे वा पीछे है। परन्तु दूर की चिन्ता छोड़ कर यदि हम बँगला और मराठी ही को ले लें, जो हमारे पड़ोस की भाषाएँ हैं, तो हमें उनकी बराबरी करने में अभी बड़े परिश्रम की आवश्यकता है, और यह स्पष्ट है कि जब तक हम इन सब भाषाओं से हिन्दी के साहित्य को ऊँचा न कर दिखाएं कभी हम उसे सर्वग्राह्य नहीं बना सकते।

इसके अनन्तर हमारा दूसरा कर्तव्य

हिन्दी का प्रचार

है, अर्थात हमें अपने बच्चों को सब से पहले हिन्दी के ही द्वारा शिक्षा दिलाना चाहिये। जब तक वे अच्छी तरह उसमें लिख पढ़ न सकें, कोई दूसरी भाषा उनको न सिखाई जाय। हमारा पत्र-व्यवहार हिन्दी में हो, हमारे घर का हिसाब किताब हिन्दी में हो, चिट्ठियों पर पते हिन्दी में लिखे जायँ, जिससे डाकखाने के कर्मचारियों को हिन्दी सीखना आवश्यक हो, हिन्दू रियासतों में जहां उर्दू में दफ़्तर हों उनको हिन्दी में परिणित कराने का उद्योग किया जाय। सारांश यह कि हमको चाहिये कि जहां हम एक ओर हिन्दी साहित्य के भण्डार को विविध प्रकार के विद्या रूपी रत्नों से परिपूर्ण करने की चेष्टा करें, वहां दूसरी ओर सर्वसाधारण में उसके प्रचार करने को भी हम अपना एक मुख्य उद्देश समझें, परन्तु यह तब ही हो सकता है जब हम हिन्दी को आगे रख लें और अन्य भाषाओं को पीछे। इस कथन का यह अर्थ कदापि न समझना चाहिये कि अन्य भाषाओं से घृणा की जाय वा उनको तुच्छ समझा जाय, किन्तु कहने का तात्पर्य यह है कि हिन्दू होने की दृष्टि से हिन्दी को अपनाना हमारा पहला काम है, तत्पश्चात् अन्य भाषाओं से सम्बन्ध जोड़ना।

क्या हिन्दू इस समय अपने परम कर्तव्य का यथोचित पालन कर रहे हैं? खेद के साथ कहना पड़ता है कि कदापि नहीं, हम तो यह कहेंगे कि उन्होंने समष्टि रूप से यही नहीं समझा कि हिन्दी के प्रति उनका कुछ कर्तव्य भी है वा नहीं? कोई महाशय हमारे इस कथन को अत्युक्ति न समझें। यदि निज भाषा के प्रति मुसलमान भाइयों के प्रेम और अनुष्ठान को देखा जाय तो यह बात अच्छी तरह समझ में आजायगी। नीची श्रेणी के लोगों को छोड़ कर हम मध्यम श्रेणी के हिन्दू मुसलमानों की कुछ तुलना करते हैं।

प्रत्येक मुसलमान अपने बालक को कुरान के प्रथम अध्याय से विद्या आरम्भ कराना अपना परम कर्तव्य समझता है। परन्तु हज़ारों हिन्दू हैं, जिनके शिशुओं को "ओम्" और "श्रीगणेश" के स्थान में प्रथम "बिस्मिल्लाह" उच्चारण कराया जाता है। मुसलमानों की कोई धर्म पुस्तक हिन्दी में नहीं है। हिन्दुओं के वेद तक उर्दू का चोला धारण किये हुये हैं। किसी मुसलमानी रियासत में हिन्दी में दफ़्तर नहीं है। परन्तु कितने ही हिन्दू राजाओं के यहां उर्दू का डंका बज रहा है। उदाहरणार्थ जैपुर आदि दूर की रियासतों को ढूंढ़ने की आवश्यकता नहीं है, महाराज काशी नरेश ही के राज्य में, जिनके द्वार पर नागरी प्रचारिणी सभा उपस्थित है, देख लीजिये अब तक दफ़्तर उर्दू में मौजूद हैं। क्या ही उत्तम होता यदि महाराज नवीन राज्यधिकार प्राप्ति के स्मारक में अपने दफ़्तरों को हिन्दी में बदल देते। उन प्रान्तों में भी जहां दफ़्तर उर्दू में नहीं हैं, प्रत्येक लिखा पढ़ा मुसलमान इतनी उर्दू अवश्य जानता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि वह अपना पत्र व्यवहार उस भाषा के द्वारा करता है, अपने धार्मिक ग्रन्थों और उर्दू के समाचार पत्रों को पढ़ लेता है। परन्तु जिन प्रान्तों में उर्दू में दफ़्तर हैं, उनमें काम करने-वाले हिन्दू बहुत कम ऐसे मिलेंगे जो किसी हिन्दी पत्र के ग्राहक हों, या अपने निज का काम काज हिन्दी में करते हों। पूर्वोक्त प्रान्तों के मुसलमान दफ़्तरी भाषा से इतना ही नाता रखते हैं जहां तक कि जीविका के लिये उनको आवश्यकता है। परन्तु उपर्युक्त प्रान्तों के हिन्दू अपने समस्त कामों में दफ़्तरी भाषा के आश्रित रहते हैं। इसका परिणाम यह है कि एक कश्मीर का मुसलमान एक अपने मद्रासी भाई से उर्दू के द्वारा भली भांति पत्र व्यवहार कर सकता है। परन्तु एक हिन्दू जब तक एक विदेशीय क्लिष्ट भाषा अर्थात् अंग्रेज़ी का आश्रय न ले कुछ नहीं कर सकता। गत मनुष्यगणना में मुझे भी कुछ काम करने का अवसर मिला था। जो मुसलमान किञ्चितमात्र भी उर्दू की वर्णमाला से परिचित थे वे आग्रह कर के अपनी मातृभाषा उर्दू लिखवाते थे परन्तु कितने हिन्दू ऐसे मिले जो कहते थे कि "क्या हम गँवार हैं जो हिन्दी अपनी बोली लिखाएँ, हमारी तो जनाब उर्दू ज़बान है"।

लोग आश्चर्य करते हैं कि यद्यपि मुसलमानों से जो उर्दू के पक्षपाती समझे जाते हैं हिन्दुओं की संख्या अधिक है और हिन्दू उनसे धन तथा शिक्षा में आगे हैं, फिर क्या कारण है कि जहां उर्दू में एक नहीं अनेक दैनिक पत्र प्रकाशित हो रहे हैं वहां हिन्दी में दो तीन ही हैं, कारण यह है कि हिन्दुओं का एक बड़ा दल हिन्दी से विमुख हो कर, हिन्दी को भुलाकर उर्दू के व्योहार और उसकी सेवा में तत्पर है। उदाहरणार्थ संयुक्त प्रान्त ही पर दृष्टि डालिए। कायस्थ और कश्मीरी भाइयों की तो मानो मण्डली की मण्डली ही हम से उर्दू ने छीन ली है, भला हो प्रयाग के "श्री दर्पण" का जो कश्मीरी पण्डितों में हिन्दी का बीज बो रहा है नहीं तो इनका नम्बर हिन्दी से पृथक रहने में सब से आगे था। मेरठ डिवीज़न के अधिक और आगरा डिवीज़न के भी कुछ अग्रवाल वैश्य कानपूर, उन्नाव और इटावा की ओर के कानकुब्ज ब्राह्मण, रुहेलखंड के पश्चिमीय भाग के वैश्य, बिश्नोई और कुछ गौड़ ब्राह्मण लगभग कायस्थों के समान उर्दू को अपनाए हुये हैं। खत्री पञ्जाब की अपेक्षा इस प्रान्त में बहुत कम हैं, परन्तु जहां हैं, विशेषकर अवध और पश्चिमीय शहरों और क़स्बों में वहां उनका भी झुकाव उर्दू की ओर कुछ कम नहीं है। राजपूत और क्षत्रियों में शिक्षा कम है, परन्तु जितनी है उसे देखते हुए उनको भी इसी कोटि में रखना पड़ता है। प्रयाग और लखनऊ प्रान्त के अधिक तो नहीं पर कुछ कुछ भार्गव महाशय भी अब इस ओर झुकने लगे हैं।

ऊपर के कथन में जो "उर्दू को अपनाने" "उर्दू की ओर झुकने" आदि पदों का प्रयोग किया गया है इसका तात्पर्य यह है कि वे हिन्दी जानना इतना आवश्यक नहीं समझते जितना कि उर्दू। वे न केवल वृत्ति या धनोपार्जन के निमित्त अपने सन्तान को प्रारंभिक शिक्षा उर्दू द्वारा दिलाते हैं किन्तु उनमें यह भाव उत्पन्न हो गया है कि बिना उर्दू पढ़े सभ्यता नहीं आती।

अब हम उर्दू के प्रति शिक्षित हिन्दुओं को साहित्य सेवा का संक्षिप्त वृत्तान्त सुनाना चाहते हैं क्योंकि बिना इसके यह प्रसंग अपूर्ण रहेगा।

आज उर्दू जगत में लखनऊ के मौलवी अब्दुल हलीम शरर, पाश्चात्य ढंग पर उपन्यासों के एक अद्वितीय लेखक समझे जाते हैं, परन्तु कोई पक्षपातरहित मुसलमान विद्वान इस बात से इन्कार नहीं कर सकता कि इस नवीन लेखन-प्रणाली के आविष्कारक स्वर्गवासी पंडित रतननाथ सर्शार थे, जिन्होंने "फ़िसाना आज़ाद"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरीखे बृहत और विख्यात उपन्यास को आदर्श रूप लिखकर उर्दू उपन्यासकारों को अनुकरण करने के लिए एक मार्ग दर्शा दिया है। मु० ज्वाला प्रसाद "बर्क़" का कुछ ही समय हुआ शरीरान्त हुआ है। आपने अंग्रेज़ी और बङ्गला के बड़े बड़े उत्तम उपन्यासों का अनुवाद करके उर्दू साहित्य के भण्डार को परिपूर्ण कर दिया है। मु० द्वारिकाप्रसाद "उफ़ुक़" ने बाल्मीक रामायण, महाभारत और टाडरचित राजस्थान ऐसे बड़े बड़े ग्रन्थों के उर्दू अनुवाद को समाप्त करके एक और ऐसा ही बड़ा ग्रन्थ लिखना आरंभ किया था जो कदाचित अब समाप्त हो चुका है। कविता में लीजिये मु० दुर्गासहाय सरूर, मु० त्रिलोकचन्द्र महरूम, मु० कुन्दनलाल शरर और पं० बृजनारायण चकबस्त इत्यादि उर्दू में नवीन कविता प्रणाली के ऐसे उत्तम कवि निकले कि आज उर्दू की बड़ी बड़ी पत्रिकाएं उनके मधुर तथा मनोरञ्जक कविताओं से अपने अङ्कों को सुशोभित करना अपना सौभाग्य समझती हैं। वाहरी भाग्यशालिनी उर्दू तुम्हारी सेवा में हमारे पुरुषों ही की संख्या क्या कम थी कि अब कुछ दिनों से एक हिन्दू रमणी ने भी उक्त सेवा का व्रत धारण किया है। आपका शुभ नाम है "श्रीमती चांदरानी साहिबा" उर्दू की प्रसिद्ध प्रसिद्ध पत्रिकाओं में आजकल बहुधा आपके गद्य पद्य लेख निकला करते हैं। इसमें कुछ सन्देह नहीं कि आपके लेखों में अधिकांश हिन्दू स्त्रियों के लिए साधारण उपदेश हुआ करते हैं परन्तु यह सोचने की बात है कि इनके उर्दू में लिखित उपदेशों से कितनी हिन्दू देवियां लाभ उठा सकती हैं। देवीजी के विचार बहुत उत्तम हैं यदि वे उनको हिन्दी में लेख बद्ध करने का अभ्यास करें तो निस्सन्देह हिन्दू स्त्री जाति का बहुत कुछ उपकार हो सकता है। परन्तु खेद के साथ कहना पड़ता है कि कोई हिन्दू सम्पादक उनको ऐसा सुझानेवाला नहीं है। क्या ऐसा विचित्र उदाहरण और किसी जाति में मिल सकता है?

फिर यह बात भी दृष्टिपात करने के योग्य है कि उस मण्डली में जिसकी जातीय भाषा की ये इस प्रकार से सेवा कर रहे हैं इनके कामों का कहां तक आदर किया जाता है? मु० दुर्गासहाय सरीखे विख्यात कवि का जिनकी मनोहर पद्य रचना से "मख़ज़न" इत्यादि मुसलमानी पत्रिकाएं भी उनके जीवन में लाभ सञ्चय किया करती थीं, युवा अवस्था में देहान्त हो गया। उर्दू कान्फ़रेन्स ने इस दुःखमय घटना पर मौखिक रूप से चार आंसू बहाना भी आवश्यक नहीं समझा। दिल्ली के ला० श्रीराम एम० ए० ने उर्दू की एक अद्वितीय सेवा की है। अकारादि क्रम से बड़े बड़े अङ्कों में वह एक ऐसा साङ्गोपाङ्ग सम्पूर्ण ग्रन्थ लिखकर प्रकाशित कर रहे हैं जिसको उर्दू के समस्त कवियों और उनकी कविता का विश्वकोष कहना अनुचित नहीं है। परन्तु उक्त मण्डली के किसी पत्र में हमने उसकी ऐसी प्रशंसा नहीं देखी वास्तव में जिसके वह योग्य है।

अब मैं थोड़ा सा सामयिक पत्रों के विषय में कहूंगा। इस कहने में हिन्दुओं का पक्षपात और मुसलमानों की निन्दा कदापि न होगी कि इस प्रान्त में दैनिक से लेकर मासिक तक जितने उत्तम पत्र उर्दू के हैं उन सबके सञ्चालक, प्रकाशक और लेखक हिन्दू ही हैं। सब जानते हैं कि "अवध अख़बार" उर्दू का सबसे पहला दैनिक पत्र है। एवम् यह बात मान ली गई है कि यदि देश भर में नहीं तो कम से कम इस प्रान्त के उर्दू साप्ताहिक पत्रों में "हिन्दोस्तानी" से उत्तम और सर्वप्रिय कोई दूसरा पत्र नहीं है जो अब अर्ध साप्ताहिक हो गया है। मासिक पत्रिकाओं की कोटि में इनके कहने में किञ्चित सङ्कोच ही नहीं हो सकता कि "ज़माना" और "सुबहे उम्मीद" के सम-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहां आज देश भर में कोई पत्र नहीं है। जैसा कि मैंने ऊपर बतलाया इन सबके आधार हिन्दू ही हैं।

सोचने की बात है कि इस प्रकार से शिक्षित हिन्दुओं का एक बड़ा भाग उधर निकल गया और इस न्यूनता को पूरा करने के लिए इस प्रान्त के तो क्या उन प्रान्तों के मुसलमानों से भी कदापि आशा न रखनी चाहिये जहां के दफ़्तर तक हिन्दी में हैं क्योंकि उनका अगाध स्वजातीय-भाषा प्रेम उन्हें हिन्दी की ओर झुकने की आज्ञा नहीं देता। अब बताइये कि हिन्दी के सेवक आवें कहां से? यही कारण है कि हिन्दी की उन्नति इस वेग के साथ नहीं हो रही है जैसा कि हिन्दुओं की संख्या को देखते हुये आशा होनी चाहिये।

इस कहने का यह मतलब नहीं है कि हिन्दू उर्दू की ओर से वैसा ही आंख मूंद लें जैसा मुसलमान इस समय हिन्दी की ओर से मूंदे हुये हैं। नहीं नहीं। वे उर्दू से कदापि अनभिज्ञ न रहें, विशेषकर इन प्रान्तों में जहां कचहरियों में उर्दू प्रचलित है। परन्तु वे इसके हाथ बिक न जायँ और न बच्चों को प्रारंभिक शिक्षा इसके द्वारा दिलायें यही हमारा यह सब कहने का उद्देश्य है। वे उर्दू पुस्तकें पढ़ें लिखें और समाचार पत्रादि भी निकालें परन्तु वहीं तक जहां तक कि ऐसा करने के लिये वे विवश हैं। जैसे उर्दू पुस्तकों और पत्रों का अवलोकन तथा उनका सम्पादन करना यहां तक तो उचित और ठीक है कि हम देख सकें कि हमारे विषय में उर्दू जगतवालों की क्या राय है? यदि हमारे ऊपर वे कभी दोषारोपण करते हैं तो उसमें कहां तक सत्यासत्य है, यदि सत्य है तो हम शीघ्र ही अपने त्रुटियों को जान कर यथोचित उनका संशोधन कर सकें, और यदि मिथ्या हों तो उसके समाधान के लिये तुरन्त लेखनी उठा सकें, फिर यह भी सम्भव है कि उर्दू साहित्य में कभी कोई ऐसा उत्तम विषय देख पड़े जो हिन्दी में इस समय नहीं है तो हमें इसको अपनाने में कठिनता न होनी चाहिये। ये और इसी प्रकार की और आवश्यकताएँ हैं जिनके निमित्त उर्दू का भी जानना बुरा नहीं है। बस इसी के लगभग इसकी सीमा समझनी चाहिये। यह नहीं कि हम सोलहो आना इसी के हो रहें। यहां तक कि देवताओं के स्तोत्र, भजन कीर्तन, धार्मिक ग्रन्थों का पठन-पाठन, अपनी सभा-समाजों की कार्यवाही और घर के लिखने पढ़ने के सम्बन्ध के सारे काम हम उर्दू के अर्पण कर दें।

शोक है कि समष्टि रूप से हिन्दुओं में हम अभी ऐसा भाव नहीं पाते। कारण क्या है कि विविध शाखाओं में विभक्त होने से प्रथम तो उनकी अधिकांश जनसंख्या जातीय सङ्गठन के लाभ का यथोचित ज्ञान ही नहीं रखती। जो रखती भी है उनमें कुछ लोग अपनी वर्तमान छिन्न भिन्न दशा को देखकर उसके एकत्व से निराश हो रहे हैं। जो आशा भी रखते हैं उनमें से बहुतों का तो यह मत है कि जातीय संगठन के लिये एक लिपि वा एक भाषा के ग्रहण करने की कुछ ऐसी आवश्यकता नहीं है, और जो कुछ आवश्यकता भी समझते हैं उनमें कितने इस भय से कि हमारे मुसलमान भाई रुष्ट न हो जायँ हिन्दी के नाम लेने का साहस नहीं करते।

इस शोचनीय अवस्था में आवश्यकता है कि ऐसे हिन्दुओं को यह मर्म बताया जाय। यह धारणा उनके मस्तिष्क में स्थिर की जाय कि उनके जातीय संगठन की वर्तमान दुर्दशा तथा अधःपतन का एक बड़ा कारण यह भी है कि उनकी कोई अपनी एक लिपि और एक भाषा नहीं है। उर्दू इस योग्य नहीं। रोमन और अंग्रेज़ी इस काम की नहीं। यदि कोई लिपि समस्त हिन्दुओं को एक सूत्र में पिरो सकती है तो वह देवनागरी है। यदि कोई भाषा देशव्यापी होकर विविध प्रकार के हिन्दुओं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को एक दूसरे से परिचित करा सकती है तो वह हिन्दी है। निस्सन्देह यह यशकीर्ति देवनागरी और हिन्दी ही के भाग्य में बदा है कि वे एक दिन सम्पूर्ण भारतवर्ष पर अपना विजय-पताका फहराएंगी, जिसके नीचे क्या पूर्वीय का पश्चिमीय और क्या दक्षिणीय सभी आकर एकत्रित होंगे।

यह काम एक दिन का नहीं है, पर निराश होकर बैठ नहीं जाना चाहिये। आशा से प्रफुल्लित एक ही पुरुष संसार में बहुत कुछ कर सकता है, परन्तु साहसविहीन मनुष्य अपने मुख पर से मक्खी तक नहीं उड़ा सकता। बस एक बार अधिक बल लगाने की आवश्यकता है फिर बेड़ा पार है। सच जानिये जहां आपने इस उलटी दिशा की ओर बहते हुये प्रवाह का मुख निरन्तर उद्योग के बल से दूसरी ओर फेर दिया फिर स्वयम् लोग उसके वेग में बहते हुये चले जायँगे। हिन्दी से विमुख हिन्दुओं विशेषतया नवयुवकों का चित्त जहां एक बार इस ओर झुका दिया गया कि हिन्दी को अपनाना तुम्हारे जातीय अस्तित्व का एक मुख्य साधन है, तुम्हारे समाज की मर्यादा का एक अङ्ग है, फिर आप देखेंगे कि यह बात एक चाल अर्थात् रिवाज या फ़ैशन का रूप धारण कर लेगी और अनन्तर हमें इसके लिये अधिक उपदेश करने की आवश्यकता न रहेगी।

आइए, ईश्वर का नाम लेकर दृढ़ प्रतिज्ञा करें कि आज से प्रत्येक हिन्दी से अनभिज्ञ हिन्दू के हृदय में यह भाव उत्पन्न करने का हम यथाशक्ति उद्योग करेंगे कि वह हिन्दू कहलाने के योग्य नहीं यदि उसे हिन्दी से प्रेम नहीं है। परमात्मा हमें इस शुभकार्य के लिए साहस और बल दें।

विचित्र दशा।

तुझे अब ऐ प्यारे वतन देखते हैं।
निराला ही तेरा वज़न देखते हैं॥
जहां देखते थे बहारों की खूबी।
वहीं अब तो उजड़ा चमन देखते हैं॥
न इज़्ज़त रही है न दौलत ही बाक़ी।
इरादों को तेरे दफ़न देखते हैं॥

रहा पास तेरे न इल्मो हुनर अब।
अजब तौर का तेरा मन देखते हैं॥
ग़ुलामी से लागर हुआ इस क़दर तू।
इसी लय में तुझको मगन देखते हैं॥
रही शान जिसकी ज़माने से ऊँचा।
उसे आज हम ख़ाक़ेतव देखते हैं॥

श्रीकान्त कुसुमाकर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समर्पण ।

[लेखक—श्रीयुत विश्वम्भरनाथ कौशिक ।]

(१)

शाम के पांच बज चुके हैं। विक्टोरिया पार्क में एक बेञ्च पर दो युवक बैठे आपस में बातचीत कर रहे हैं। एक युवक के बहुमूल्य वस्त्र उसके धनाढ्य होने का पता दे रहे हैं और दूसरे युवक के साधारण, किन्तु स्वच्छ वस्त्र उसकी ग़रीबी को प्रकट कर रहे हैं।

बातें करते करते बहुमूल्य वस्त्रधारी युवक ने कहाः—"भाई व्रजमोहन, तुम्हारी यह गल्प तो बड़ी सुन्दर रही। वास्तव में अब तुम अच्छे गल्प लेखक होते जा रहे हो, यदि तुम ऐसे ही लिखते रहे तो एक दिन हिन्दी संसार में तुम्हारी गल्पों की धूम मच जायगी"।

व्रजमोहन सिर झुका कर बोला—"अरे भाई मेरे ऐसे भाग्य कहां? यह आप लोगों का प्रेम है जो मेरी गल्पों को आपकी दृष्टि में सुन्दर प्रकट करता है, अन्यथा मैं तो कुछ जानता वानता नहीं।

दूसरा युवक मुसकुरा कर बोला—ख़ैर यह तो तुम दुनियांदारी की बातें करते हो और तुम्हारे मुंह में शोभा भी यही देती है किन्तु सच बात तो यह है कि तुम अच्छी उन्नति कर रहे हो। पिता जी भी तुम्हारी प्रशंसा कर रहे थे।

व्रजमोहन मुंह घुमाकर दूसरी ओर देखने लगा मानो उसने मित्र की बात सुनी ही नहीं।

युवक कुछ क्षण तक चुप रह कर फिर बोलाः—मेरी इच्छा तो यह है कि तुम कोई उपन्यास लिखो। व्रजमोहन चौक पड़ा। उसने मित्र की ओर बड़े ग़ौर से देखा तत्पश्चात् कुछ मुसकुरा कर बोला—"क्यों भाई; उपहास कर रहे हो क्या? तुम्हें मालूम है कि मैं उपहास का बहुत कम प्रेमी हूँ"।

"क्या हुआ कम प्रेमी होते हुए भी कभी कभी उपहास किया जा सकता है।

"नहीं इस समय यह बात नहीं—मैं जो कुछ कह रहा हूं गम्भीरतापूर्वक कह रहा हूं—तुम कोई उपन्यास लिखो।

"तुम मेरी योग्यता को आवश्यकता से महत्व दे रहे हो।

क्या तुम यह कहना चाहते हो कि तुम में उपन्यास लिखने की योग्यता नहीं?

मैं तो यही समझता हूँ।

तब तो मुझे कहना पड़ेगा कि तुम को अपनी योग्यता का पता नहीं। मेरा तो विचार है—विचार क्या विश्वास है—कि तुम उपन्यास लिख सकते हो और अच्छा लिख सकते हो।

कैसे कहूँ। उपन्यास लिखना कोई साधारण बात नहीं। पहली बात तो यह है कि उपन्यास के लिए प्लाट कहां से लाऊंगा?

अजी प्लाट की क्या कमी है प्लाट सैकड़ों।

व्रजमोहनलाल हंस कर बोला—भला एक बताओ तो सही।

बताना क्या—तुमने कोई घटना देखी अथवा सुनी है। उसीको लेलो बस उसी को घुमा फिरा कर, कुछ काल्पनिक बातें मिलाकर प्लाट बना लो।

करना उतना सहज नहीं है जितना कि कह देना।

कौन, यदि मैं तुम्हारी तरह लिखना जानता होता तो हर महीने एक उपन्यास लिखता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसमें क्या संदेह है ?

"और आप लिख सकते हैं किन्तु मैं तो नहीं लिख सकता। मुझे तो जब कोई प्लाट सूझेगा तभी लिखूंगा।

अरे भाई कोई घटना ले लो।

घटना भी तो हो—मेरे जीवन में तो अभी कोई घटना ऐसी हुई नहीं जिसे मैं उपन्यास के रूप में रख सकूं।

मेरी इच्छा एक और है।

वह क्या ?

यही कि तुम उपन्यास लिखो और मुझे समर्पण कर दो।

हां हां यह कौन बड़ी बात है यदि उपन्यास लिखूंगा तो ऐसा भी कर दूंगा।

और उसमें मेरा चित्र भी रहे।

यह भी हो सकता है, यह तो सब कुछ हो सकता है किन्तु मुख्य तो उपन्यास है पहले वह तो लिखा जाय।

वह तो लिखा ही सा है, तुम चाहोगे तो लिख जायगा।

अभी इस वर्ष तो मैं कुछ करूंगा नहीं बी० ए० की परीक्षा देनी है इसके पश्चात् देखा जायगा।

हां यह मैं कब कहता हूं कि तुम परीक्षा के पहले ही लिखो।

ब्रजमोहन लाल चुप होकर कुछ सोचने लगा मित्र ने उसे इस दशा में देखकर पूछा:— क्यों क्या सोचने लगे ?

ब्रजमोहन ने उत्तर दिया कुछ नहीं योंही।…

समर्पण की बातें याद रखना।

अवश्य।

और चित्र भी।

ज़रूर मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूं कि यदि मैं उपन्यास लिखूंगा तो पहला उपन्यास तुम्हें तुम्हारे चित्र सहित समर्पण करूंगा।

(२)

ब्रजमोहन लाल एक ग़रीब परिवार का लड़का है। उसके पिता की स्थिति तो ऐसी नहीं है कि उसे कालिज की शिक्षा दिला सके। किन्तु यह ब्रजमोहन ही के उद्योग का फल है कि वह कालेज में शिक्षा प्राप्त कर रहा है। वह उद्योग क्या है? वह उद्योग है ट्यूशन, इधर उधर दो चार ट्यूशन, करके वह अपनी शिक्षा का ख़र्च निकाल लेता है। जहां तक हो सकता है अपने पिता को ख़र्च के लिए कष्ट नहीं देता।

जिस शहर में वह पढ़ता था उसी शहर में एक रईस आदमी रहते थे। उनका लड़का प्यारेलाल उसका सहपाठी था। इन्हीं प्यारेलाल से बाग़ में उपर्युक्त बात चीत हुई थी। प्यारेलाल से ब्रजमोहनलाल की बड़ी मित्रता थी। ब्रजमोहनलाल अपने गुणों तथा सद्व्यवहार ही के कारण एक धनाढ्य के मित्र बनने में सफलता प्राप्त कर सके थे, अन्यथा दरिद्र और धनवान की मित्रता, मित्रता के सच्चे अर्थों में निभना, ज़रा टेढ़ी खीर होती है। इसके अतिरिक्त उनका सहपाठी होना भी उनकी घनिष्टता का कारण हो सकता है, क्योंकि इस स्थिति में अमीरी और ग़रीबी का प्रश्न प्रायः कम उठता है।

उपर्युक्त घटना के पश्चात् ब्रजमोहन केवल एक वर्ष तक कालिज में और रहे। यह एक वर्ष पहले तो बहुत बड़ा दिखाई देता था, किन्तु बीत जाने पर पलक झपकने के समान हो गया। ब्रजमोहन तथा प्यारेलाल की बी० ए० की परीक्षा समाप्त ही हो चुकी थी।

अब ब्रजमोहनलाल को अपना घर याद आया। परीक्षा समाप्त ही हो चुकी थी, अतएव उन्होंने घर जाने की तैयारी कर दी। जिस दिन वह जानेवाले थे उसी दिन प्रातःकाल वह प्यारेलाल से विदा होने आये।

प्यारेलाल ने उनको उदास देखकर पूछा:— क्यों भाई आज उदास कैसे हो ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रजमोहन ने एक लम्बी सांस लेकर कहा—आज घर जाने की इच्छा है?

ऐं! घर जाओगे?

हां।

इतनी जल्दी, चार छः दिन तो और ठहरते।

भाई अब तो घर की याद अधीर कर रही है।

यह तो तुम ने बुरी सुनाई किन्तु......।

किन्तु क्या?

वहां जाना भी आवश्यक है, तुम्हारे माता-पिता तुम्हें देखने के लिए बेचैन होंगे।

हां होंगे तो अवश्य।

तो किस गाड़ी से जाओगे?

शाम को पांच बजेवाली से।

अच्छी बात है, हो आओ। परन्तु तुम इतने उदास क्यों हो, घर ही तो जा रहे हो, तुम्हें तो प्रसन्न होना चाहिए, उदासी का क्या कारण है?

ब्रजमोहन सूखी हँसी हँसकर बोले—अब कदाचित् मैं न लौटूं, इसी लिए—

प्यारेलाल चौंक पड़े, और बात काट कर बोले—ऐं! यह क्यों? लौटोगे क्यों नहीं?

यदि पास हो गया तो अब पढ़ना छोड़ दूंगा, और कहीं नौकरी नौकरी करूंगा, क्योंकि अब दो साल तक प्रतीक्षा करना मेरे लिए अत्यन्त कष्टदायक होगा। मेरे घर की अवस्था तुम्हें सब मालूम ही है।

हां यह तो ठीक है, इस समय तुम्हारे पिता को तुम्हारी सहायता की अत्यंत आवश्यकता है। वह बिचारे न जाने कितने दिनों से इसी आशा को हृदय से लगाये बैठे हैं कि लड़का पढ़ लिख ले तो बोझ कुछ हल्का हो।

बस यही करण है। जिससे अब मैं आगे नहीं पढ़ सकता।

ख़ैर—इतना भी क्या थोड़ा है।

इसी लिए मैं यह सोच कर दुखी हूं कि कदाचित् हमारी तुम्हारी यह अन्तिम भेंट हो।

प्यारेलाल कुछ करुणस्वर से बोले—नहीं नहीं यह कैसे हो सकता है, क्या अब तुम यहां न आओगे?

आऊंगा तो, किन्तु नौकरी से छुट्टी मिलेगी तब ना।

अरे तो क्या नौकरी से चार छः दिन की छुट्टी भी न मिलेगी। तुम भी क्या बातें करते हो।

दूसरे जीवन का कोई भरोसा नहीं।

पागल हो, भरोसा क्यों नहीं, ऐसे क्यों मौत किसी के पीछे पीछे घूमती है?

इसके अतिरक्त साल भर में दस पांच दिन के लिए मिले भी तो क्या—वह बात तो कोसों दूर गई। चौबीस घंटे में दस बारह घंटे साथ रहता था।

प्यारेलाल के हृदय से एक ठंडी सांस निकली। उन्होंने कहा—हां वह बात तो कोसों दूर गई। इसी प्रकार एक घंटे तक बात चीत होती रही। एक घंटा बीत जाने पर ब्रजमोहन लाल उठकर बोले—अच्छा तो अब बोर्डिङ्ग जाता हूं, अभी भोजन करना है और असबाव असबाब बांधना है।

प्यारेलाल बोले—पांच बजे की गाड़ी से जाओगे न।

हां।

तो स्टेशन तक मैं भी चलूंगा। मैं चार बजे अपनी गाड़ी पर बोर्डिङ्ग आजाऊंगा, उसी पर चले चलेंगे।

ज़रा बाबू जी से भी मिल लूं।

वह तो कल रात बाहर चले गये।

ख़ैर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चार बजे प्यारेलाल अपनी गाड़ी पर सवार होकर बोर्डिङ्ग पहुंच गये। ब्रजमोहन उनकी प्रतीक्षा ही कर रहे थे।

ब्रजमोहन अपने अन्य सहपाठियों से, जो बोर्डिङ्ग में रहते थे, विदा होकर प्यारेलाल के साथ स्टेशन की ओर चल दिये।

इन लोगों के स्टेशन पर पहुंचते ही गाड़ी आगई। ब्रजमोहनलाल ने तीसरे दर्जे का टिकट लिया था, अतएव उन्होंने उसी दर्जे के एक कमरे में असबाब रखवा दिया।

प्यारेलाल ने कहा—अब देखो कब मिलें।

हां यही मैं भी सोच रहा हूं।

यदि तुम न आसकोगे तो मैं तो अवश्य आऊँगा, ब्रजमोहन ने कृतज्ञतापूर्ण नेत्रों से प्यारेलाल की ओर देखा।

प्यारेलाल बोले—हां देखो, एक बात याद रखना—प्रति सप्ताह मुझे पत्र लिखा करना।

अवश्य लिखूंगा।

और मेरे योग्य जो कार्य हो निस्संकोच लिखना।

ब्रजमोहनलाल ने सिर झुका लिया, कुछ उत्तर न दिया।

हां एक बात मुझे और कहनी है—नौकरी करना तो जहांतक हो सके, क्लेरिकल लाइन में मत आना, किसी स्कूल की टीचरी कर लेना, किन्तु क्लर्क न बनना। क्लर्की से अधिक बुरी नौकरी और कोई नहीं। हां एक बात मुझे और कहनी है—गल्प लिखना मत छोड़ना, और शीघ्र ही कोई उपन्यास आरम्भ कर देना।

ब्रजमोहन ने हंस कर कहा—किन्तु प्लाट तो अभी कोई सूझा नहीं, और न कोई घटना ही ऐसी हुई जिस पर कोई प्लाट बांध सकूं।

अरे यह कितनी बात है।

हां एक बात तो तुम कहना भूल ही गये।

वह क्या?

सचित्र समर्पण।

प्यारेलाल हँस पड़े, हँसते हुए बोले—वह तो तुम्हारा काम है, अब उसके लिए मैं कुछ न कहूंगा।

उसी समय गार्ड ने सीटी देकर हरी झंडी दिखाई। ब्रजमोहनलाल गाड़ी में चढ़ गये। उधर इंजिन ने सीटी दी, इधर ब्रजमोहन ने खिड़की से हाथ निकाल कर प्यारेलाल की ओर बढ़ाया। प्यारेलाल ने बड़े प्रेम से उनका हाथ अपने हाथ में लेकर हिलाया। उधर इंजिन ने स्टीम छोड़ी, इधर दोनों मित्रों ने ठंढी सांसें। गाड़ी चल दी। प्यारेलाल ने देखा कि ब्रजमोहन की आंखों में आंसू छलछला रहे हैं।

प्यारेलाल मन ही मन बोल उठे—ब्रजमोहन का हृदय बड़ा कमज़ोर है, और इसका कारण केवल इसकी दरिद्रावस्था ही है।

(३)

प्यारेलाल तथा ब्रजमोहन की अन्तिम भेंट होने के तीन महीने पश्चात् तक तो उन दोनों में ख़ूब पत्र-व्यवहार होता रहा। प्रति सप्ताह पत्र आते जाते रहे। तीन महीने पश्चात् पत्रों के आने जाने का क्रम शिथिल पड़ने लगा, किंतु ब्रजमोहन की ओर से नहीं वरन् प्यारेलाल की ओर से—प्यारेलाल ने ठीक समय पर उत्तर देने का क्रम तोड़ दिया—कभी पन्द्रह दिवस पश्चात् उत्तर देते कभी बीस दिन पश्चात, कभी एक महीना पश्चात्।

ब्रजमोहन ने पत्र-द्वारा इसका कारण पूछा। प्यारेलाल ने उत्तर दिया कि हमें काम काज से अवकाश कम रहता है, इसी कारण ठीक समय पर उत्तर नहीं दे सकते।

इसी प्रकार तीन महीने और बीत गये। अब पत्रों का उत्तर आने में अधिक विलम्ब होने लगा; इसके अतिरिक्त पत्रों की भाषा भी कुछ उखड़ी उखड़ीसी और संक्षिप्त होने लगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस समय व्रजमोहनलाल एक हाईस्कूल में सेकेंड मास्टर हो गये थे, और उन्हें सवा सौ रुपये मासिक वेतन मिलता था।

प्यारेलाल से विदा होने के आठवें महीने व्रजमोहनलाल ने एक पत्र उन्हें लिखा, किन्तु उसका उत्तर न आया। पन्द्रह दिवस पश्चात् एक पत्र और लिखा, किन्तु उसका उत्तर भी न मिला। इसी प्रकार व्रजमोहन ने चार पत्र लिखे, किन्तु कोई उत्तर न मिला। व्रजमोहनलाल इस परिणाम को समझे हो बैठे थे, उन्होंने समझ लिया था कि वह दिन निकट है जब कि प्यारेलाल उनसे कोई सम्बन्ध न रक्खेंगे। इसका उन्हें जितना दुःख हुआ वह क्या लिखा जाय। अब उन्होंने भी पत्र लिखना बिलकुल बंद कर दिया। हां कभी कभी उसी शहर के किसी अपने सहपाठी से प्यारेलाल का कुशल-समाचार मँगा लेते थे। इसी प्रकार दो वर्ष बीत गये। इस बीच में व्रजमोहनलाल की कई बार यह इच्छा हुई कि प्यारेलाल के पास जाकर उनसे इस निष्ठुरता का कारण पूंछें, किन्तु उनके हृदय ने इसे स्वीकार न किया; अतएव उन्होंने अपना यह विचार भी त्याग दिया।

अब व्रजमोहन ने एक उपन्यास लिखना आरम्भ किया। किन्तु उन्हें अवकाश कम मिलता था, इस कारण लिखने का कार्य बहुत धीमा चलता था। कभी कभी पन्द्रह बीस दिन तक उन्हें लिखने का समय ही न मिलता था। अंत को एक वर्ष में उन्होंने उपन्यास लिखकर समाप्त किया। उपन्यास समाप्त करने के तीन ही चार दिवस पश्चात् वह बीमार हो गये। बीमारी और कुछ नहीं, केवल ज्वर आने लगा।

ज्वर साधारण समझा गया, और चिकित्सा भी साधारण होती रही। किन्तु दस दिन बीत गये, उनका ज्वर न हटा। अब उनके माता-पिता को कुछ चिन्ता हुई। अधिक योग्य चिकित्सकों को दिखाया गया—उनकी बताई हुई औषधियां भी दी गईं—किन्तु कुछ लाभ नहीं। इसी प्रकार बीस दिन बीत गये। अब व्रजमोहन में इतनी शक्ति नहीं रही कि वह शय्या से उठ सकें।

उनके घरवालों की चिन्ता बढ़ने लगी। दवादारू भी ख़ूब जमकर होने लगी।

अब व्रजमोहनलाल ज्वर में अंडबंड बकने भी लगे। और लोगों के लिए तो वह अंडबंड था, किन्तु वह अंडबंड नहीं था, उनके हृदयगत भावों का उद्गार था।

प्रायः वह यही कहा करते थे :—प्यारेलाल प्यारेलाल, यह देखो क्या है—हां ठीक समाप्त करूंगा—चित्र भी दूंगा—किन्तु तुम पत्र क्यों नहीं लिखते—वह सब झूठ—तुम बड़े ख़राब आदमी हो, लेके उपन्यास फाड़ डाला, वाह यह भी कोई भलमनसाहत है। देखो रेल ने सीटी दे दी, अब मैं चलता हूं। हां यह तो बताओ, इतिहास का पर्चा कैसा रहा—हां हां, छप रहा है—क्यों प्यारे की कोई चिट्ठी आई—उनका चित्र मेरे बक्स में रक्खा है—क्या, गलत ? गलत तो अब मैं लिखूंगा नहीं।

ऐसी बातें वह बका करते थे। किन्तु जब होश में होते तो पड़े पड़े केवल ठंढी सांसें भरा करते, और जब अकेले होते तो चिल्ला कर कहने लगते—"शोक! मैं अपनी इच्छा पूर्ण न कर सका—किन्तु अभी समय है यदि मैं बच गया तो………"।

इस प्रकार दस दिन और बीत गये। एक दिन प्रातःकाल व्रजमोहनलाल की दशा अच्छी दिखाई पड़ी उनके मुख पर कुछ कांति भी आगई, कुछ प्रसन्न भी दिखाई पड़े। उनके पिता उनकी यह दशा देखकर बड़े प्रसन्न हुए, और बोले—मालूम होता है आज तुम्हारी तबियत अच्छी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रजमोहन ने मुसकुरा कर उत्तर दिया--हां आज तो अच्छी है, ज्वर भी कुछ कम मालूम होता है।

ब्रजमोहन की दशा सुधरने पर घर के सब लोग आनंदित हुए।

दोपहर को तबियत कुछ और अधिक सँभली। ब्रजमोहन ने अपना लिखा हुआ उपन्यास मँगवाया, उपन्यास लेकर कुछ देर तक इधर उधर उलटते पुलटते रहे, तत्पश्चात् क़लम दावात मँगवाकर उस पर धीरे धीरे कुछ लिखते रहे। आध घंटे में दो पृष्ठ लिख डाले। इसके पश्चात् अपने पिता को बुलाकर उन्हें उपन्यास दिया, और बोले--इसे आप अपने बक्स में रख लीजिए, देखिए इसका एक पृष्ठ भी न खोने पावे। मैं अच्छा हो आऊँगा तब इसे किसी प्रकाशक को दे दूंगा।

इसके पश्चात् ब्रजमोहन ने कुछ खाने की इच्छा प्रकट की। किन्तु घरवालों ने बिना डाक्टर से पूछे खाना देना उचित न समझा; अतएव एक आदमी भेजा गया कि वह खाने के विषय में डाक्टर से पूछ आवे।

× × × × × ×

छः महीने पश्चात् :—

प्यारेलाल एक सजे सजाये कमरे में बैठे कुछ मित्रों के साथ ताश खेल रहे हैं, उसी समय नौकर ने आकर उनके हाथ में एक पैकेट दिया। प्यारेलाल ने पैकेट को लापरवाही से एक ओर रख दिया, और खेल में लगे रहे। पैकेट देखकर एक मित्र ने पूछा, क्या है?

प्यारेलाल बोले—कोई पुस्तक मालूम होती है

मित्र ने कहा—खोलो, देखें कहां से आई है?

अरे आई होगी कहीं से।

मालूम होता है, किसी मित्र ने भेजी है? क्या मालूम।

तुम ने मँगाई होती तो वी० पी० से न आती।

इतने में दूसरा मित्र बोल उठा--अरे वह कहीं से आई, ज़रा खोलो तो।

प्यारेलाल ने खोला। खोलने के पूर्व उन्होंने भेजनेवाले का नाम और पता पढ़ा। पढ़कर बोले--यह तो कोई प्रकाशक हैं।

एक मित्र बोल उठा--तो तुमने अवश्य मँगाई होगी।

प्यारेलाल ने कहा--नहीं, मैंने तो मँगाई वँगाई नहीं।

अच्छा ख़ैर खोलो।

पैकेट खोल कर पुस्तक निकाली गई, पुस्तक का शीर्षक था--"दो मित्र" प्यारेलाल बोल उठे--यह तो कोई उपन्यास है।

लेखक कौन महाशय हैं?

प्यारेलाल ने पढ़ा—स्वर्गीय बाबू ब्रजमोहन लाल। प्यारेलाल कुछ चौंके—आप ही आप बोले—ब्रजमोहनलाल—ब्रजमोहन लाल—कहीं वह तो—किन्तु।

इतना कह कर उन्होंने ऊपर का टाइटिल उलटा, नीचे इनर टाइटिल था, उसे भी उलटा। नीचे प्रकाशक का निवेदन था, उसे पढ़ाः—

यह पुस्तक लेखक की मृत्यु के पश्चात् प्रकाशित की जा रही है। यह बड़े दुःख की बात है कि लेखक अपने परिश्रम को सफल होते हुए न देख सका। हम यहां एक बात कह देना आवश्यक समझते हैं, और वह यह है कि लेखक ने अपने उपन्यास में एक पृष्ठ उपन्यास के प्रकाशक के लिए लिखा था, उसमें उसने इस बात पर बड़ा ज़ोर दिया था कि पुस्तक उसके चित्र सहित प्रकाशित की जाय, जिसे यह समर्पण की गई है, और इसकी एक प्रति उनके पास भी भेजी जाय, "उसके लेखक ने उन महाशय का पता भी लिख दिया था। यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी लिखा था कि जो प्रकाशक ऐसा करना स्वीकार न करें उन्हें इस पुस्तक के प्रकाशन का स्वत्व न मिल सकेगा। हमको यह पुस्तक और समर्पण का चित्र लेखक के पिता से प्राप्त हुआ है, और हम ने लेखक की इच्छा का हर एक अंश पूरा करने की पूरी चेष्टा की है"।

प्यारेलाल ने बड़ी उत्सुकता से वह पृष्ठ उलटा, उस पृष्ठ के उलटते ही उनकी आंखों के सामने उन्हींका चित्र प्रकट हुआ। प्यारेलाल कुछ क्षण तक मूर्तिवत् बैठे अपने चित्र को देखते रहे। तत्पश्चात् उन्होंने चित्र भी उलटा। चित्र के पश्चात् समर्पण था। समर्पण इस प्रकार था:—

प्रियवर!

मैं मृत्युशय्या पर पड़ा हुआ तुम्हें यह पुस्तक समर्पण करता हूं। तुम मुझे भूल गये, किन्तु मैं तुम्हें नहीं भूला। यद्यपि अब तुम्हें न मुझ ही में कोई रुचि रही, न इस क्षुद्र उपन्यास ही में, किन्तु फिर भी मैं तुम्हें उस संध्या की याद दिलाता हूं जिस संध्या को तुमने मुझ से एक उपन्यास लिखने के लिए कहा था—बस इतना ही पर्याप्त होगा। मेरा अंत अत्यंत निकट है। शोक है कि मैं अपने हाथ से तुम्हें यह पुस्तक न दे सका। मैंने यह उपन्यास बहुत दिनों पश्चात् लिखा, इसका कारण कदाचित् तुम पूछो। कारण यही कि मुझे कोई प्लाट न सूझता था; अतएव मैंने तुम्हारे कथनानुसार सच्ची घटना ही पर प्लाट बाँधा। इस प्लाट के लिए मैं तुम्हें धन्यवाद दिए बिना नहीं रह सकता, क्योंकि तुम्हारी ही कृपा से यह प्लाट मेरे मस्तिष्क में आया है। संदेह में यह कि इस प्लाट का नायक तुम्हारे ही समान कठोर हृदय तथा निठुर है।

तुम्हारा स्वर्गवासी मित्र
"ब्रजमोहन"।

प्यारेलाल ने समर्पण पढ़कर एक ठंढी सांस खींची, और आप ही आप बोले—वास्तव में बात का धनी निकला—मरते समय भी—ख़ैर इसमें संदेह नहीं अच्छा आदमी था—यदि मैं ऐसा जानता तो—(पुस्तक एक ओर रख कर मित्रों से) हां भाई किस की चाल है चलो पत्ता फेंको।

फूल !

[लेखक—श्रीयुत विष्णुप्रसाद दीक्षित "उपेन्द्र" ।]

फूलतुम क्यों रोते हो आज ?
देख तुम्हारी दशा न सूझे हमको कुछ भी काज।
क्यों मलीन मन में होते हो, आख़िर हो सिरताज ॥ फूलतुम० ॥
नहीं रहेंगे सदा किसी के एक भांति के साज।
भन भन करते रह जावेंगे सुगल मधुपरसराज ॥ फूलतुम० ॥
गरजेंगे सो बरसेंगे क्या, कहते आती लाज।
लेने दो रस-भेद इन्हें पर, हम भी धीरज वाज० ॥ फूलतुम० ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैं कौन हूं"।

[लेखक—श्रीयुत रुद्रदत्त भट्ट।]

मैं कौन हूं, यह जानने के लिए अनेक पाठक बड़े उतावले होंगे, पर मैं भी यों ही एक दम कह देने वाला नहीं हूं कि मैं कौन हूं। मैं कौन हूं यह जानने के लिये स्वयं मुझे ही अनेक वर्ष कठिन परिश्रम करना पड़ा। तब भला मैं एकदम अपने वर्षों का परिश्रम का प्रतिफल आपको पांच ही शब्दों में क्यों बता दूं। आपको यदि मुझे जानने की इच्छा ही होगी तो आपको तनिक धैर्य धारण करना पड़ेगा। आप चाहें या न चाहें, पर आपको धैर्य अवश्य धारण करना होगा। मेरी इच्छा के अनुकूल यदि मैं आपको धैर्य ही धारण न करवा सकूं तो मेरा बड़प्पन ही कहां रहा? आप घबड़ाइये मत, मेरी इच्छानुसार धैर्य धारण करने को बाध्य किये जाने पर आपको कोई नाम नहीं रक्खेगा, क्योंकि सैकड़ों मनुष्य नित्यप्रति मेरी ही इच्छानुसार चलते हैं—मेरी आज्ञा का कदापि उल्लंघन नहीं करते—और मुझे देखकर इस प्रकार सहम जाते हैं जिस प्रकार छुईमुई की पत्ती अँगुली से छूने पर सहम जाती है। इससे आप कदापि यह विचार न करें कि मुझसे सहमनेवाले मनुष्य मेरा कोई अपराध करते होंगे। नहीं नहीं, मैं ही ऐसा हूं कि मुझको देखनेमात्र से मनुष्य सहम जाते हैं, अब मैं कैसे कहूं कि मैं कौन हूं। आप सैकड़ों अनुसन्धान करिये, पर मैं एकदम बतानेवाला नहीं कि मैं कौन हूं, जैसा मैं हूं वैसा बनने पर जब मैं अपनी जननी—जिसके उदर से मैंने जन्म लिया—जिसके घुटनों पर बैठकर मैंने बालक्रीड़ा की—और जिसने पाल पोष कर मुझे इतना बड़ा किया—के पास गया तो वह भी एक बार सहम गई, और मुझे बड़े प्रयत्न से उसको समझाना पड़ा कि मैं कौन हूं. मेरे बचपन के मित्र जिनके साथ जंगल में जाकर गाय चराने में मुझे बचपन में बड़ा आनन्द होता था वह भी एकदम न पहिचान सके कि मैं कौन हूं। उनको भी समझाने में मुझे अत्यन्त परिश्रम करना पड़ा। मैं कौन हूं, यह बतलाने में मुझे परिश्रम भले ही करना पड़ता है, पर आनन्द भी कुछ कम नहीं आता। मैं कौन हूं यह भले प्रकार समझने पर मनुष्य जिस प्रकार आश्चर्य तथा भयभरी दृष्टि से मेरी ओर ताकते हैं, और मुझसे मीठी २ बातें कर रास्ता नापते हैं उसे देखकर आह्लाद का ठिकाना नहीं रहता, और मेरे पांव ज़मीन पर न चलकर आसमान ही आसमान मुझे उड़ा ले चलते हैं। अब आप ही बतलाइये कि मैं कौन हूं। यह नहीं है कि आपने मुझे देखा न हो और आपका कभी न कभी मुझसे काम न पड़े, पर इतने पर भी आप मुझे न पहिचान सकें तो इससे प्रकट होता है कि आप मुझे अच्छी तरह से नहीं जानते हैं। अच्छा, अब अधिक डामाडोल न कर आपको बतला ही देता हूं कि मैं कौन हूं।

जिस समय गाड़ी पर बैठे आप गाड़ीवान से जल्दी हांकने को कहते हैं उस समय वह जिसको देखकर बड़े तपाक के साथ सलाम करता है वह मैं ही हूं। आपसे स्टेशन पर जो गाड़ीवाला बड़ा हल्ला हुज्जत करता है और मारे शोर के आसमान पाताल एक कर देता है वही गाड़ीवाला जिसके गाड़ी पर बैठने पर एक शब्द भी नहीं निकालता और तुरन्त हांक कर ख़ाली हाथ घर लौटता है वह महान् देवता मैं ही हूं।

आधी रात के समय जब आप घोर निद्रा के वशीभूत हो सुन्दर स्वप्न देखने में मग्न रहते हैं उस समय जो अपनी सुरीली आवाज़ से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपको जगा देता है वह जगानेवाला निशाचर भी मैं ही हूं।

पानी के कुओं के निकट प्रातःकाल से सायंकाल तक घूर २ कर देखनेवाला और उनके निकट किसी को भी वस्त्र इत्यादि न धोने देनेवाला सफ़ाई का जमादार भी मैं ही हूं।

जुवाघरों में रात दिन बैठकर आपको जुवा खेलने में उत्तेजित करके चाहे आप हारें या जीतें, पर स्वयं ख़ूब जेब गरम करके बाहर निकलनेवाला जुवे का पौष्य पुत्र भी मैं ही हूं।

चार पैसे के क़र्ज़ के लिए भी जो दुकानदार मारे तकाज़ों के आपका उस राह से आना जाना बन्द कर देता है उसी के यहां से सैकड़ों रुपयों का उधार सौदा ख़रीदने पर भी जिसकी वह गद्दी से उठकर अभ्यर्थना करता है वह उधारख़ोर भी मैं ही हूं।

रात के समय आपके नगर के चौराहों पर घुर्राटे लेकर आपकी जान माल की हिफ़ाज़त करनेवाला भीमकाय पुरुष मैं ही हूं। मेले इत्यादि में ऊँची पगड़ी बांधे—छत्ता फुलाये—हाथ में सोटा लिये आपको दाहिने से बायें अथवा बायें से दाहिने तरफ़ केवल अपनी आंखों के इशारे से भेजनेवाला आला हाकिम भी मैं ही हूं।

एक बार भी आपके घर के भीतर आने पर सारे पड़ोस में आप ही की चर्चा करा देनेवाला महात्मा मैं ही हूं।

किसी की ख़ानातलाशी लिये जाने पर उसके मकान से मूंछों पर ताव देते बाहर आनेवाला झण्डाधारी मैं ही हूं।

बात की बात में किसी का इज़्ज़त-आबरू ख़ाक में मिला डालनेवाला भस्मासुर मैं ही हूं।

शत्रु तथा मित्र से समान वर्ताव करनेवाला—अफ़सरों को एकदम लैफ़्ट हैन्ड सैल्यूट करनेवाला—बड़े २ ग्रेजुएट व सेठ साहूकारों की बाल भर भी परवाह न करनेवाला—बदमाशों के अड्डों का अधिष्ठाता देवता—गांठकट्टों का माई-बाप—वकील बैरिस्टरों का क़ानूनी गुरू—झूंठे गवाहों का प्रोफ़ेसर—न्याय का जीता जागता ज्वलन्त उदाहरण—शराबी कबाबियों का सहृदय मित्र—चोर डाकुओं पर दूर ही से दृष्टि रखनेवाला, और पनघट चौराहों का रखवाला सब मैं ही हूं। क्या आपने अब भी मुझे न पहिचाना? अब भी न पहिचाना तो मेरा क्या अपराध? आपके घर में चोरी हुई हो—आप उसके दुःख से दुःखी होकर दौड़े हुए जिसके पास आवें, और इस दशा में भी बिना मुट्ठी गरम किये जो आपके दुखड़े पर ध्यान न दे तो समझ लेना कि मैं ही हूं। बस पहिचाना कि मैं कौन हूं।

लोग मुझे अनेक नामों से पुकारते हैं, पर आप मुझे एकदम पहिचान लेंगे, क्योंकि मैं हूं—"पुलिसमैन"।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यूरोप के इतिहास पर एक दृष्टि।

ग्रीस।

(६)

ऐथेन्स का युअभ्दय।

जब पारसीक सैन्य परास्त होकर अपने घर को लौट गई तब ग्रीस की रियासतों की बारी आई। उन्होंने अपनी सामुद्रिक शक्ति एकत्रित कर अपने एशिया-माइनर तटस्थ भाइयों का उद्धार कर फ़ारस को दंड देने का विचार किया।

इस समय ग्रीस में स्पार्टा और ऐथेन्स ही प्रधान रियासतें थीं। ऐथेन्स की नौ-सेना और स्पार्टा की स्थल-सेना को ही पारसीक सैन्य के परास्त करने का अधिक श्रेय प्राप्त था।

परन्तु ऐथेन्स एक नवीन वृद्धि-प्राप्त रियासत थी, स्पार्टा प्राचीन काल से ही ग्रीस की रियासतों का प्रधान माना जाता था। अतः ग्रीस की अन्य रियासतें ऐथेन्स को प्रधान मानने में आनाकानी करती थीं। वे स्पार्टा ही को अपना प्रधान बनाना चाहती थीं। अस्तु, स्पार्टा के राजा लियोटिकिडैस उस बेड़े के प्रधान बनाये गये।

उस बेड़े ने एशियामाइनर के तट पर आक्रमण कर पारसीक नौ-सेना को पराजित किया। अब स्पार्टावासी यह चाहते थे कि एशिया-माइनर तटस्थ ग्रीसवासियों को अपने जहाज़ों पर बैठाकर कहीं दूसरी जगह पहुंचा दें, जहां वे फिर से नगर बसावें। वे दक़ियानूसी ख़्याल के थे। उनका नगर ही उनका देश था, और पेलापोनीस (ग्रीस का दक्षिण भाग) का प्रधानत्व ही उनकी आकांक्षा की चरम सीमा थी। इस पारसीक आक्रमण के समय उन्हें केवल अपने देश पेलापोनीस के बचाने की इच्छा थी। उत्तरी ग्रीस के लिए लड़ने का विचार उनको न था, केवल ऐथेन्स ही के लिए वह उत्तरी ग्रीस में लड़े थे, यद्यपि इसमें भी उनका बड़ा स्वार्थ था, क्योंकि यदि ऐथेन्स की नौ-सेना पारसीक नौ-सेना से मिल जाती तो स्पार्टा के किये कुछ भी न होता। जब पारसीक सैन्य पराजित होकर लौट गई, और उनका देश रक्षित हो गया तब उन्होंने इतना ही बहुत समझा कि अपने जहाज़ों को अपने एशियामाइनर तटस्थ भाइयों को वापस लाने के लिए ही भेज दिया; परन्तु स्वयम् एशिया-माइनर तटस्थ ग्रीक और ऐथेन्स आदि कुछ मुख्य, ग्रीस देश की, रियासतें यह न चाहती थीं। वह अपना देश छोड़ना क्यों पसन्द करतीं। वह चाहती थीं कि फ़ारस से बराबर युद्ध कर उनसे सब ग्रीक शहर छीन लिए जायँ।

अतः स्पार्टा और उसके सहायकों की नौ-सेना शीघ्र ही घर लौट गई; परन्तु ऐथेन्स की नौ-सेना पारसीक सैन्य से बराबर लड़ा की, और उसने बहुत से ग्रीक नगरों का उद्धार किया। एशियामाइनर तटस्थ ग्रीसवासियों और अन्य रियासतों ने जब यह देखा तब उन्हें मालूम हो गया कि स्पार्टा से कोई अधिक आशा नहीं। अतः उन्होंने ऐथेन्स को अपना प्रधान मान लिया। इसके सिवाय स्पार्टा के राजा लियोटिकिडैस और पौसेनियस ने भी स्पार्टा की बदनामी कराने में कोई कसर न उठा रक्खी। जैसा कि पहिले लिखा जा चुका है, बहुत कम स्पार्टन ऐसे थे जो घूंस खाकर अपने देश तक की हानि पहुंचाने के लिए तत्पर न हो जाते। लियोटिकिडैस को स्पार्टा ने एक सेना का प्रधान बनाकर थेसली को दंड देने के लिए भेजा, क्योंकि थेसलीवासी पारसीक आक्रमण के समय पारसीक सैन्य से मिल गए थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परन्तु थेसलीवासियों ने उसे एक अच्छी धन-राशि भेंट दी, और वह घर बैरंग वापस आ गया। इसी तरह पौनेनियस भी पारसीक राज्य से मिल गया। इन बातों से स्पार्टा की बड़ी बदनामी हुई।

शायद स्पार्टा अपने प्रधान पद को फिर से पाने के लिए उद्योग करता, परन्तु इसी समय उसकी शासनप्रणाली के तीसरे दोष ने भी अपनी चोट जमाई। जैसा कि पहिले लिखा जा चुका है, स्पार्टा ने ग्रीस के आदिमनिवासियों को अपना गुलाम बना लिया था। वह सदैव ही विद्रोह करने को उद्यत रहते थे। इसी समय स्पार्टा में एक भयानक भूकम्प हुआ, जिससे बड़ी हानि हुई। गुलामों ने समय देख कर विद्रोह कर दिया। स्पार्टा विद्रोहदमन करने में ही लगा रहा, उसे यह मौक़ा न मिला कि ऐथेन्स को प्रधान पद पाने से रोक सके।

अस्तु ऐथेन्स को प्रायः सब रियासतों ने अपना प्रधान मान लिया। ऐथेन्स ने इन सब रियासतों का एक संघ बनाया। यह संघ "कनफीडरेसी आफ़ डीलास" के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस संघ का मुख्य उद्देश्य फ़ारस के विरुद्ध युद्ध करने, और यदि फ़ारस किसी राज्य पर आक्रमण करे तो उसे सहायता देने का था। प्रत्येक रियासत को प्रति वर्ष कुछ जहाज़ या कुछ धन देना होता था। कोई भी रियासत बिना अन्य रियासतों की इच्छा के इस संघ से अलग नहीं हो सकती थी। ऐथेन्स इस संघ का प्रधान था। ऐथीनियन अफ़सर कोषाध्यक्ष थे। कोष डीलास नामक टापू में रक्खा जाता था।

इस तरह से यद्यपि ऐथेन्स और स्पार्टा दोनों को प्रधान पद पाने का मौक़ा था, बल्कि स्पार्टा को तो सब रियासतें अपना प्रधान मानने को तैयार थीं, जब कि ऐथेन्स को प्रधान मानने में आनाकानी करती थीं, परन्तु अन्त में ऐथेन्स ही प्रधान हुआ। इसका कारण एक ही था—ऐथेन्स की शासनपद्धति।

जैसा कि पहिले लिखा जा चुका है, अपनी शासनपद्धति के कारण ऐथीनियन बड़े कुशाग्र-बुद्धि होते थे। इसके विपरीत स्पार्टन्स को किसी नवीन विचार के ग्रहण करने में बड़ा समय लगता था। स्पार्टावासियों में घूंस खाने की भी बुरी आदत थी, और उन्हें गुलामों का भय भी सदैव ही बना रहा करता था। इसीसे ज्ञात होता है कि ऐथेन्स की शासनपद्धति स्पार्टा की शासनपद्धति से क्यों श्रेष्ठ थी।

(७)

ऐथेन्स संघ का अधिपति कैसे हुआ।

जब ऐथेन्स को ग्रीस देश की प्रायः सब रियासतों का एक संघ "कनफीडरेसी आफ़ डीलास" के नाम से बना लिया तब उन्होंने फ़ारस के विरुद्ध युद्ध फिर से छेड़ दिया। उन्होंने पारसीक सैन्य और नौ-सेना को बारंबार पराजित कर एशियामाइनर तटस्थ समस्त ग्रीक नगरों का उद्धार कर लिया। अब फ़ारस की सामुद्रिक शक्ति बिलकुल नष्ट भ्रष्ट हो गई, और ग्रीक नगरों को उससे कोई भय बाक़ी न रहा। संघ का मुख्य उद्देश्य फ़ारस की शक्ति को नष्ट कर ग्रीक नगरों का उद्धार करना था, वह पूर्ण हो गया, अब संघ के लिए कोई अधिक काम न रहा।

जैसा कि पहिले कहा जा चुका है, संघ की प्रत्येक रियासत को प्रति वर्ष या तो कुछ जहाज़ या कुछ धन जहाज़ बनाने के लिए देना होता था। अब जब फ़ारस की शक्ति नष्ट हो गई तब उन्हें जहाज़ों का देना अखरता था, क्योंकि जहाज़ों के लिए उन्हें मल्लाह भी देने पड़ते थे। धन देना उससे सहल था, इसलिए प्रायः प्रत्येक रियासत संघ की नौ-सेना के लिए धन देने लगी, जब तक कि प्रत्येक रियासत नौ-सेना के लिए जहाज़ देती थी तब तक इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संघ की शक्ति बँटी हुई थी, यद्यपि इसमें कोई संदेह नहीं कि नौ-सेना के प्रधान ऐथेन्सवासी ही होते थे; परन्तु उसके मल्लाह उसी रियासत के निवासी होते थे जो उस जहाज़ को देती थी। परन्तु अब प्रायः सब रियासतें जहाज़ न देकर धन देने लगीं। धन यद्यपि डीलास में रक्खा जाता था, परन्तु ऐथेन्सवासी ही कोषाध्यक्ष होते थे। इस कारण वह बहुत कुछ ऐथेन्स के ही हाथ में रहता था। फिर संघ के रुपये से ऐथेन्स संघ के लिए जहाज़ बनवाता था। वह ऐथेन्स में ही बनते थे, उनके मल्लाह ऐथेन्सवासी ही होते थे, अतः संघ की नौ-सेना बहुत कुछ ऐथेन्स की नौ-सेना हो गई। कुछ ही राज्य ऐसे थे जिनके पास निज के जहाज़ थे। अतः समस्त शक्ति ऐथेन्स के हाथ में आगई। जब अन्य रियासतों ने देखा कि सब शक्ति ऐथेन्स के हाथ में चली जा रही है और फ़ारस का अधिक भय नहीं है तब कुछ रियासतों ने संघ से अलग होना चाहा, परन्तु इस संघ का एक नियम यह भी था कि जब तक सब रियासतें आज्ञा न दे दें तब तक कोई रियासत संघ से अलग न हो सके। ऐथेन्स भला अब यह कब चाहता था कि कोई रियासत संघ से अलग हो जाय, अतः कोई भी रियासत अलग न होने पाती थी। कुछ ने विद्रोह किया; परन्तु संघ की नौ-सेना—जो अब यथार्थ में ऐथेन्स की नौ-सेना हो गई थी—के आगे उनकी कुछ न चली, वह पराजित हुईं। विद्रोह के कारण वह पदच्युत कर दी गईं। अब तक वह सहायक रियासतें समझी जाती थीं, परन्तु अब वह करद रियासतें हो गईं। वे संघ को कर देने को मजबूर की गईं, और संघ की सेना—जो ऐथीनियन सेना ही थी—उनके यहाँ रहने लगी। संघ का तो अब नाममात्र बाक़ी रह गया था, समस्त शक्ति ऐथेन्स के हाथ में थी, वही जो कुछ चाहता था, होता था।

इस तरह से संघ का प्रधान होने से ऐथेन्स संघ की सब रियासतों का अधिपति हो गया।

इस घटना से ज्ञात हो सकता है कि किसी संघ के किसी राज्य के हाथ में समग्र शक्ति का चला जाना उस संघ की दूसरी रियासतों के लिए कितना भयानक है। आजकल ही जर्मनी, आस्ट्रिया, टर्की और बलगेरिया के संघ की प्रधान शक्ति जर्मनी है। इस समय इन सब राज्यों की सेना जर्मनी के अधिकार में है। क्या यह सम्भव नहीं है कि जर्मनी क्रमशः अपना अधिकार बढ़ाते बढ़ाते इन सब राज्यों का अधिपति हो जाय, और बहुत कुछ सम्भावना है कि यदि इन राज्यों ने सचेत होकर बुद्धिमत्ता से काम न किया तो भविष्य में जर्मनी ही इनका अधिपति हो जायगा।

(८)

ऐथेन्स की राज्य-विस्तार की चेष्टा।

अब ऐथेन्स "कनफीडरेसी आफ़ डीलास" का अधिपति था। संघ की समस्त नौ-सेना और सम्पूर्ण धन उसके हाथ में था। यदि ऐथेन्स इतने ही से संतुष्ट हो जाता, और संघ के धन और बल को केवल संघ की रक्षा में लगाता तो कोई संदेह नहीं कि वह बहुत दिनों तक राज्य करता, परन्तु मनुष्य की प्रकृति है कि वह कभी संतुष्ट नहीं होता है, उसे सदैव ही अधिक, और अधिक, की चाह बनी रहती है। इसमें कोई संदेह नहीं कि एक हद तक इसका परिणाम अच्छा होता है। यदि ऐसा न हो तो मनुष्य की उन्नति असम्भव हो, जाय। यही हाल राज्यों का भी होता है, वह भी कभी अपनी दशा से संतुष्ट नहीं होते हैं, और यदि संतुष्ट हो जाया करें तो उनकी भी उन्नति न हो। परन्तु "अति सर्वत्र वर्जयेत्", अधिक असंतुष्टता भी बड़ी हानिकारक होती है। मनुष्य को अगला पैर तभी आगे बढ़ाना चाहिये जब उसका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिछला पैर मज़बूती से रक्खा हो, नहीं तो यह सम्भव है कि, आगे बढ़ना तो दूर रहा, वह अवनति के गहरे खन्दक़ में गिर पड़े, और उसका फिर उठना असम्भव हो जाय। राज्यों को तो और भी अधिक बुद्धिमत्ता से काम लेना चाहिये। उनकी भूल से कुल राष्ट्र को हानि पहुंचती है। उन्हें तो बे अच्छी तरह समझे बूझे कोई काम न करना चाहिये। इसमें कोई सन्देह नहीं कि उन्हें सदैव अपनी उन्नति के लिए प्रयत्न करते रहना चाहिये, परन्तु अच्छा यह हो कि वह आन्तरिक उन्नति को ही अपनी सच्ची उन्नति समझा करें, राज्य-विस्तार के लिए अधिक चेष्टा न किया करें।

अस्तु, अब ऐथेन्स ने अपनी राजनैतिक चतुरता से बिना अधिक रुधिरपात के ही अपने राज्य का ख़ूब विस्तार कर लिया था; परन्तु उसे इतने राज्य से ही संतोष न हुआ। मुख्य ग्रीस की प्रायः सभी रियासतें उसे अपना प्रधान न मानती थीं। उत्तरी भाग की स्वाधीन थीं। दक्षिणी भाग की भी स्वाधीन थीं, केवल युद्ध में स्पार्टा को अपना प्रधान मानती थीं। अब ऐथेन्स को आकांक्षा हुई कि वह किसी तरह मुख्य ग्रीस की रियासतों का भी प्रधान हो जाय। दक्षिण ग्रीस में तो वह स्पार्टा की स्थल-सेना से कुछ भय खाता था, क्योंकि उसकी शक्ति सामुद्रिक थी, स्थल-सेना अधिक शक्तिशाली न थी, परन्तु उत्तरीय ग्रीस की रियासतें अधिक शक्तिशाली न थीं, और वह उसके समीप भी थीं। अतः उसने पहिले उन्हीं की तरफ़ दृष्टि उठाई। उत्तरी ग्रीस की प्रधान रियासतें इस समय थीब्स, कारिन्थ, मेगरा और ईजाइना थीं।

मेगरा और कारिन्थ में इस समय युद्ध हो रहा था। ऐथेन्स ने चट मेगरा से सन्धि कर ली। मेगरा ने ऐथेन्स को अपना प्रधान मान लिया। ऐथेन्स ने मेगरा को सेना भेजी, जिसने कारिन्थ की सेना को भगा दिया।

यदि ऐथेन्स ने उत्तरीय ग्रीस पर अपना प्रधानत्व जमाने का ही विचार कर लिया था तो उसे उचित था कि वह एक एक रियासत पर अपना अधिकार जमाता, परन्तु ऐथेन्स को इससे सन्तोष न था। वह एक ही बार में समस्त उत्तरीय ग्रीस पर अधिकार जमाना चाहता था। थीब्स इत्यादि बिओशिया के नगरों में इस समय दो दल थे। एक प्रजा-तंत्र का पक्षपाती, दूसरा सामंतों का दल। सामंतों का दल इस समय वहां प्रधान था। ऐथेन्स ने प्रजा-दल को सहायता देना प्रारम्भ कर दिया, और थीब्स इत्यादि को भी अपना शत्रु बना लिया।

संघ का मुख्य उद्देश्य फ़ारस के विरुद्ध युद्ध करने का था। अतः ऐथेन्स को फ़ारस के विरुद्ध युद्ध जारी रखना भी आवश्यक था। इस समय मिश्र में फ़ारस के विरुद्ध विद्रोह हुआ। ऐथेन्स ने वहां भी अपना एक जहाज़ी बेड़ा भेज दिया, और फ़ारस से भी युद्ध जारी रक्खा।

कारिन्थ ने ईजाइना से सन्धि कर ली, और ईजाइना भी ऐथेन्स का शत्रु हो गया। इस तरह से ऐथेन्स ने चारों ओर शत्रु पैदा कर लिये। ऐथेन्स का यह काम राजनैतिक दूरदर्शिता के बिल्कुल विरुद्ध था। परन्तु अब भी ऐथेन्स की तबियत न भरी। स्पार्टा की सेना उत्तरी ग्रीस की डोरिस नामक एक छोटी रियासत को फोकिश नाम की रियासत के विरुद्ध सहायता देने गई थी, ऐथेन्स को भय हुआ कि कहीं वह उसके शत्रुओं से न मिल जाय। इसलिए ऐथेन्स की सेना ने उस पर भी आक्रमण कर दिया, और स्पार्टा को भी अपना शत्रु बना लिया। शक्ति का इस तरह से अनेक स्थानों में बाँट देना भयानक भूल थी।

ख़ैर, अब युद्ध आरम्भ हो गया। ऐथेन्स की नौ-सेना ने ईजाइना जीत लिया। ग्रीस के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दक्षिणी भाग के कई नगरों पर अधिकार जमा लिया। थीब्स और बिओशिया की अन्य रियासतों के सामंत-दल को पराजित कर उन्हें अपने संघ में सम्मिलित कर लिया। ऐथेन्स-वाले इस समय अवश्य ही बहुत प्रसन्न हुए होंगे। वह यह न समझे होंगे कि वे अपनी जड़ अपने आप ही काट रहे हैं। एक ऐथेन्स इतनी जगह कब तक लड़ सकता था। कुछ ही दिनों के बाद फ़ारस की नौ-सेना ने ऐथेन्स की मिश्रवाली नौ-सेना को ध्वंस कर दिया। बिओशिया में भी विद्रोह हुआ, और सामंतों के दल ने ऐथेन्स की सेना को खदेड़ दिया। मेगरा और अन्य छोटी रियासतों ने भी ऐथेन्स से नाता तोड़ कर ऐथेन्स की सेना को भगा दिया। इस तरह से ऐथेन्स ने कई वर्षों में जो कुछ कर पाया था वह एक एक ही थपेड़ में मिट्टी में मिल गया। स्वयम् ऐथेन्स को ही अब मुश्किल जान पड़ी, और संधि करनी पड़ी। ऐथेंस को मुख्य ग्रीस में जीतने से जो कुछ मिला था वह वापस दे देना पड़ा। अब वह फिर केवल कनफीडरेसी आफ़ डीलास का अधिपति रह गया। इस तरह उसे इस युद्ध से कोई भी लाभ न हुआ। धन और जन का व्यर्थ ही क्षय हुआ।

यदि ऐथेन्स ने यह भूलें न की होतीं, या राज्य-विस्तार की चेष्टा ही न की होती, अपने कनफीडरेसी आफ़ डीलास के प्रधानत्व से संतुष्ट रह कर उसीकी उन्नति में तत्पर रहता, और उसे प्रसन्न रखता तो अच्छा होता। या यदि यह भूल की होती तो अपनी शक्ति को बांटा न होता, एक ही जगह उसे एकत्रित रक्खा होता तो भी कुछ दिनों तक उसका नाश न होता। एक एक राज्य को जीतकर अपने अधिकार में वह कुछ दिन तक तो अवश्य रख सकता, परन्तु शक्ति के बांटने से उससे न तो मुख्य ग्रीस में, न मिश्र में ही कुछ करते बन पड़ा।

यह भूलें तो ऐथेन्स ने कीं ही, परन्तु आन्तरिक पालिसी की भूलों ने भी उसे बहुत हानि पहुंचाई।

क्लिसथिनीज़ ने जो सुधार किये थे उनके अनुसार प्रत्येक मनुष्य को अधिकार था कि वह राज्यशासन में भाग ले सके। परन्तु अभी तक उन्हें इस काम के लिए कुछ वेतन न मिलता था, अब इस समय के ऐथेन्स के राजनीतिज्ञ पेरिक्लीज़ ने कुछ और भी सुधार किये। अब तक सेना और नौ-सेना के सिपाहियों को कुछ वेतन न मिलता था, क्योंकि वे यह काम सदैव तो करते न थे, केवल युद्ध के समय नगरवासियों में से कुछ मनुष्य इन कामों के लिए चुन लिये जाते थे, परन्तु अब नौ-सेना के सिपाहियों को सदैव ही काम करना पड़ता था। स्थलसेना के सिपाहियों को भी प्रायः बराबर काम करना पड़ता था, इसलिए उन्हें अब वेतन मिलने लगा।

क्लिसथिनीज़ के सुधारों के अनुकूल ऐथेन्स दस भागों में विभाजित था। प्रत्येक भाग अपने वासियों से ६०० मनुष्य चुन लेता था, जो जजों का काम करते थे। इस तरह से ऐथेन्स में ६००० जज थे। अभी तक उन्हें वेतन न मिलता था, अब उन्हें भी मिलने लगा।

यद्यपि लोग इन सुधारों की भी समालोचना करने लगे थे, वे कहते थे कि यह तो प्रत्येक नागरिक के कर्तव्य हैं, इनके लिए वेतन की क्या आवश्यकता, तथापि यहां तक ग़नीमत थी। पर पेरिक्लीज़ ने एक और भी सुधार किया कि यदि कोई मनुष्य ग़रीब हो तो उसे व्यवहारों के व्यय के लिए धन दिया जाया करे। इस सुधार से सिवाय हानि के कोई भी लाभ न था। फिर, अब तक राज्य के अफ़सर सर्वसाधारण-द्वारा चुने जाते थे। पेरिक्लीज़ ने सुधार किया कि वे चुने न जाया करें। प्रति वर्ष लाटरी डाली जाया करे, जिसका नाम निकले वही अफ़सर हो जाय। अतः सभी तरह के मनुष्य अफ़सर होने लगे। इसमें सन्देह नहीं कि इन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुधारों ने ऐथेन्स को पक्का प्रजातंत्र बना दिया, परन्तु इन्होंने उसे बड़ी हानि भी पहुंचाई। अब सर्वसाधारण की समिति के हाथ में सब शक्ति थी। सर्वसाधारण की राय प्रायः ठीक राय नहीं होती, उनमें प्रायः ७५ फ़ीसदी मनुष्य ऐसे होते हैं जो सिर्फ़ यही जानते हैं कि "जैसी बहै बयार पीठ तैसी तब दीजै" उन्हें भलाई बुराई का अधिक ध्यान नहीं होता। यदि किसी में अच्छी वाक्‌शक्ति हो तो वह जोशीली वक्तृता देकर उनसे जो चाहे करवा सकता है। जैसा कि पहिले लिखा जा चुका है, सर्वसाधारण-समिति के प्रत्येक मनुष्य को यह अधिकार था कि वह वक्तृता दे सके। अतः यदि किसी में अच्छी वाक्‌शक्ति होती थी तो वह सर्वसाधारण से जो चाहता था करवा सकता था। ऐथेन्स में बहुत से ऐसे स्कूल खुल गये जो केवल वक्तृता देना ही सिखलाने लगे। यह आवश्यक नहीं कि जिसमें अच्छी वाक्‌शक्ति हो वह अच्छा राजनीतिज्ञ हो जाय, परन्तु इन स्कूलों से वक्तृता देना सीख कर बहुत से लोग सर्वसाधारण की समिति में वक्तृता देने लगे। वह प्रायः अच्छे राजनीतिज्ञ न होते थे, इस कारण प्रायः भूलें किया करते थे, और सर्वसाधारण वही करते थे जो यह वाक्‌पटु, पर राजनीति-शून्य, लोग कराते थे, चाहे उससे राज्य का भला हो या बुरा। इसी तरह से बारम्बार भूलें कर उन्होंने ऐथेन्स का नाश कर दिया। वेतनों के कारण बहुतसा धन, व्यय होता ही था, पेरिक्लीज ने ऐथेन्स में बहुतसी अच्छी अच्छी इमारतें बनवाना भी प्रारम्भ कर दिया। इनके बनने में भी बहुत धन व्यय होता था। पर यह सब धन आता कहां से था? ऐथेन्स में टैक्स बहुत कम थे। यह धन वही धन था जो संघ की रियासतें देती थीं। यद्यपि वह इस धन को फ़ारस के विरुद्ध युद्ध के लिए देती थीं, परन्तु ऐथेन्स इस धन को अपने निजी ख़र्च के लिए व्यय करता था।

सब रियासतें इससे बहुत चिढ़ती थीं। वे कहती थीं कि जब फ़ारस से युद्ध नहीं होता है तब इस धन क्यों दें। कोष में तो बहुतसा धन एकत्रित है, यह धन तो ऐथेन्स अपने लिए व्यय करता है।

रियासतों के चिढ़ने का केवल यही एक कारण नहीं था। ऐथेन्स की जन-संख्या इस समय बढ़ रही थी। ऐटिका में इन सब के लिए जगह न थी। पेरिक्लीज़ ने यह क़ायदा निकाला कि यदि कोई रियासत विद्रोह करे तो उसकी कुछ भूमि छीन ली जाय, और वह ऐथेन्स के उन निवासियों को दे दी जाय जो वहां रहना चाहें। इस बात से भी सब रियासतें बहुत अप्रसन्न थीं।

इस तरह से ऐथेन्स ने बाहरी शत्रु तो बना ही लिये थे, पर यदि वह अपने सहायकों को प्रसन्न रखता तो भी ग़नीमत रहती, उसने उन्हें भी अप्रसन्न कर दिया। वे केवल ऐथेन्स की नौ-सेना से डरते थे नहीं तो कभी के संघ से अलग हो जाते। विद्रोह करने को वे सदैव उद्यत रहते थे। केवल ऐथेन्स की नौ-सेना और इसका भय कि यदि ऐथेन्स सहायता न देगा तो हमारे नगर का सामंत-दल शक्तिशाली हो जायगा, उन्हें इस बात से कुछ कुछ रोके रहता था।

ऐथेन्स की इन भूलों का फल मिलना अवश्यम्भावी था इन्हीं के कारण उसका अधःपतन हुआ। "राम"।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छत्रपति शिवाजी महाराज की श्रेष्ठ योग्यता।

[लेखक—श्रीयुत लक्ष्मीसहाय माथुर।]

हिन्दू प्रजा को उच्च-श्रेणी पर लाने और विजय प्राप्त करनेवाले नर-रत्नों में शिवाजी महाराज का सर्वोच्च-स्थान है। उनके पश्चात् कोई स्वदेश-प्रेमी वीर-पुरुष प्रजा के हित-साधन में सफलता के साथ प्रयास न कर सका।

(१) राज्य-व्यवस्था।

शिवाजी के समय की स्थिति का विचार करने से उनकी स्थापित की हुई राज्य-व्यवस्था तथा देश की शासनपद्धति आश्चर्यजनक प्रतीत होती है। इस सुव्यवस्था से प्रजा को समृद्धि के साथ ही सुख भी मिला था। महाराष्ट्र में अन्तिम अवसर पर बड़ी विपत्ति और अशान्ति फैली, उसका कारण शिवाजी महाराज की पद्धति का त्याग ही था। इस महान् व्यवस्था की योजना करने में शिवाजी को कोई बाहरी सहायता नहीं मिली थी। उन्होंने स्वयं ही विचारपूर्वक उसकी रचना की थी।

(२) सैनिक व्यवस्था।

शिवाजी अपनी सेना की देख-रेख स्वयं ही करते थे। उन्होंने अपने सरदारों में से ही अनेक शूरवीर योद्धा तैयार किये थे। यह सैनिक व्यवस्था कई वर्ष तक प्रचलित रही, और इसी कारण एक शताब्दी के पश्चात् मराठा सैनिकों ने सर्वत्र विजय पाई थी। कई स्थानों पर उनकी प्रशंसा हुई, और दूसरों ने भी अपनी सेना की वैसी ही योजना करने का प्रयास किया था।

(३) शिवाजी का महत्कार्य।

शिवाजी महाराज लिखने अथवा पढ़ने से बिलकुल नहीं उकताते थे। उन्होंने नियमपूर्वक पुस्तकों का अध्ययन नहीं किया था। किसी सुधरे हुए दरबार अथवा सुव्यवस्थित सेना के निरीक्षण का अवसर भी उन्हें प्राप्त नहीं हुआ था, और न उनको किसी अनुभवी राज-मन्त्री अथवा सेनापति से सम्मति अथवा सहायता ही मिली थी। परन्तु, महान् कर्तृत्व-शक्ति, अगाध स्वदेश-प्रेम और नैसर्गिक चतुरता के कारण वे स्वतः ही—बिना किसी की सहायता के—अटल राज्य, अनुपम सैनिक व्यवस्था तथा लाभकारी शासनपद्धति की योजना करने में कृतकार्य हुए थे।

(४) मराठा प्रजा का अस्तित्व।

शिवाजी के शासनकाल के पूर्व मराठे दक्षिण प्रदेशान्तर्गत भिन्न भिन्न मुसलमानी राज्यों में अस्थायी रूप से नौकरी करते थे। शिवाजी ने उन सब को एक सूत्र में लाकर उनकी एक बलवान प्रजा बनाई। उनके इस कार्य में बीजापुर, पोर्तुगीज़, मुग़ल तथा जंजीरा के हब्शी राजाओं ने बहुत ही विघ्न डाले, परन्तु वे भली प्रकार उन्हें पार कर गये। ऐतिहासिक समय में किसी हिन्दू राजा ने इतनी अच्छी कार्य-दक्षता प्रदर्शित नहीं की।

(५) मराठों की पूर्व-स्थिति।

शिवाजी के जन्म के पूर्व मराठे लोग विदेशी और विधर्मी राजाओं के घर भाड़े के नौकर थे। वे लोग उन राज्यों में नौकरी करते थे। परन्तु उनको राजकीय कारबार में कुछ भी अधिकार नहीं मिलता था। वे लोग सेना में उत्साह से युद्ध करके अपने प्राण-विसर्जन करते थे। परन्तु, शान्ति के समय उनकी कुछ भी सत्ता नहीं रहती थी, और उनको सदा मातहती में काम करना पड़ता था। किसी अवसर पर उन्हें सरदारी अथवा कोई अन्य मानपद नहीं मिलता था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(६) स्वतंत्र प्रजा क्या नहीं कर सकती ?

बीजापुर और दिल्ली के महाराजाओं से शिवाजी महाराज ही टक्कर ले रहे थे। उन्होंने अपने प्रबल साधनों से यह प्रमाणित कर दिया कि प्रजा अपनी राज्य-व्यवस्था करने के सर्वथा योग्य है, तथा हिन्दू-जाति आदर्श प्रजा होकर सुराज्य की योजना करने में समर्थ हो सकती है, और शत्रुओं पर विजय-लाभ कर सकती है। इतना ही नहीं, अपनी रक्षा स्वयं करके कला-कौशल तथा साहित्य की उन्नति करती हुई वह व्यापार-वाणिज्य और उद्योगधन्धों में अग्रगण्य हो सकती है, और साथ ही साथ जल-सेना तैयार कर समुद्र की तह पर विदेशियों के साथ बलपूर्वक युद्ध कर सकती है। हिन्दू लोग सुशासनकर्ता, वीर सेनापति तथा राजनीति-विशारद हो सकते हैं।

(७) एक दृष्टान्त।

जहांगीर बादशाह ने प्रयाग के अक्षयवट को समूल नष्ट कर के उसके स्थान पर धधकता हुआ लोहे का स्तम्भ गड़वा दिया, और निश्चय कर लिया कि अब इसका नाश हो गया। परन्तु, एक ही वर्ष में वह वृक्ष फिर उग आया, और उसके उगते ही वह लोहे का स्तम्भ बहुत दूर जा गिरा।

(८) उस दृष्टान्त के साथ मुक़ाबिला।

शिवाजी महाराज ने यह सिद्ध कर दिया कि इसी प्रकार हिन्दू प्रजारूपी झाड़ अभी नष्ट नहीं हुआ है। उसको अनेक शताब्दियों तक परतन्त्रता के बंधन में रहना पड़ा है। राजकीय कारबार से उसको सदा दूर रक्खा गया है, और उसके साथ अन्याय किया गया है, परन्तु वह पुनः पल्लवित हो सकता है। उसमें नये पत्ते अथवा डालियाँ ही नहीं लगेंगी, बल्कि वह अपना शिखर आकाश तक फैला सकेगा।

शिवाजी महाराज का चरित्र ऐसे २ ज्वलंत उदाहरणों के कारण ही हमारे लिए आदर्श है। इसी लिए हम उनके जन्म-दिवस के अवसर पर इतने वर्षों के पश्चात भी उनकी पूजा-अर्चना करते हैं, उनके गुण गान करते हैं, और उनके लोकोपयोगी जीवन के इतिहास का निदिध्यासन करते हैं।*

भारत-प्रशस्ति।

[लेखक—श्रीयुत रामराज सिंह।]

(१)

शीतल सुखद समीर बहत जहँ नित मन मोहत।
कालिन्दी कलनाद गङ्गजल मिलि जहँ सोहत॥
नदी नार जहँ विपुल भारतीयन दुख खोवत।
मग महँ करत कलोल भव्य भारत पद धोवत॥

(२)

अङ्ग वंग कालिङ्ग कोसला जहँ शुभ राजत।
काश्मीर सुराष्ट्र राजपूताना भ्राजत॥
साधारण तरु जहाँ प्रकृति उपवन सों सोहत।
हरी हरी जहँ घास महा मुक्तावलि मोहत॥

(३.)

प्रकृति जहां प्रति दिवस नवाम्बुद तम्बू तानत।
जेहि जगदीश्वर स्वयं आपनो गृह करि मानत॥
शीत न जहां असह्य उष्णता अधिक न होती।
ऊषा जलकण रूप बिछावति जहँ नित मोती॥

(४)

बन उपवन ऋतुराज जहां मालिन सम साजत।
पुष्पान्वित फल नमित लता द्रुम जहां विराजत॥
कलरव करि करि विहँग जहां मनुजन दुख मोचत।
चपल चन्द्रिका जहां मेघ-माला बिच रोचत॥

---

* गुजराती 'विवेचक' के आधार पर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(५)

जाको शिर हिमवान् जगत में ऊँचो राजत।
पद प्रक्षालन करत वारिनिधि जहँ अति भ्राजत॥
सुखमा शीलनिधान राम की भूमि जहां हैं।
जन्मे अर्जुन भीष्म कर्ण सम वीर महा हैं॥

(६)

प्राची की प्राचीन धरा उर्वरा बिराजत।
गर्वान्वित गरिमा-प्रधान भारत जहँ भ्राजत॥
प्रभो न चाहत राज्य न वा स्वर्गहुं हम चाहत।
भारत की प्रिय भूमि-भारती-ही अब चाहत॥

एक तुलना।

महात्मा गान्धी और लोकमान्य तिलक।

आरम्भिक पाठशाला के विद्यार्थियों से प्रायः अकबर और औरंगज़ेब की तुलना कराने का एक साधारण नियम है। तुलनीय मनुष्य की मृत्यु के बाद शताब्दियों के बीत जाने पर ही उसके सम्बन्ध में भय, स्वार्थ, पक्षापक्ष, राग-द्वेष आदि दूर हो पाते हैं। भूतकालीन महापुरुषों की सच्ची तुलना के लिए जो निर्भयता होनी चाहिये, वह कालान्तर में ही प्राप्त होने से, उसी समय वैसी, तुलना करना सरल होता है। इसके विरुद्ध वर्तमान काल के समकालीन महापुरुषों की तुलना करना कठिन काम है। उनकी अतिशय समीपता के कारण उनके कार्यों का जो समदर्शन और सम्पूर्ण दर्शन होना चाहिये, वह नहीं हो सकता। निदान परीक्षा (एनेटोमी) भूतकालीन लोगों की ही योग्य रीति से हो सकती है। तुलना करने का कार्य भी परीक्षा करने के समान है। इन कारणों से लोकमान्य तिलक और महात्मा गान्धी की तुलना भी कठिन है, तथापि करने का हेतु यह है कि उन्होंने आज तक जो पराक्रम किये हैं वे यद्यपि इसी पार्थिव देह से किये हैं, तथापि उसमें भूतकालीन सम्पत्ति भी है। उभय महानुभावों ने अपने सुन्दर चरित्र की रचना के लिए पर्याप्त कर्तव्य कर लिये हैं। भारतीय रंगभूमि पर ये युगल मूर्तियां इतने दीर्घकाल से सुपरिचित हैं कि अब उनके गुण-दोषों के सम्बन्ध में कोई बात अप्रकट नहीं है। मानवी जीवन का कर्तव्य वे बहुत दिन से पूरा कर रहे हैं। वाणप्रस्थ होने के लिए, और उसके पूर्व जो पुरुषार्थ करना चाहिये उससे, इन महात्माओं ने कई गुना अधिक कर डाला है। इन आत्माओं पर देश का अब कोई ऋण शेष नहीं है। यदि इनका स्थान लेने योग्य कोई प्राणी होता तो जनता इन्हें कभी से मुक्त कर देती। यद्यपि महात्मा गान्धी की अवस्था अधिक नहीं है, तथापि इन २० वर्षों में उन्होंने शतायु का काम निपटा डाला है। जनता में उन्होंने नया ही रंग और नवजीवन उत्पन्न कर दिया है। उभय-जन अब जो कार्य कर रहे हैं वह अधिकता में है। देश के लिए उपहार रूप है, और भूतकाल का अनुसन्धान है। तात्पर्य यह है कि इनके जीवन-कर्मों का समूह और उसकी जाति इतनी भिन्न और विस्तीर्ण है कि उसे हम दोनों के तुलनात्मक गुण-दोषों का विचार करने के लिए पर्याप्त सामग्री समझ रहे हैं।

दोनों महानुभाव भारत के अनमोल मणि हैं। इनमें एक गुजरात की खान से, दूसरा महाराष्ट्रीय खान से निकला है। यह बात इनके लिए अत्युक्ति नहीं है कि भारतीय नेताओं में इन्हें मस्तक झुकाने अथवा इनके चरणों में गिरनेवाले सज्जनों की संख्या अधिक है, आत्म-समर्पण करने का उत्साह प्रेरित करने का अधिकार इन्हें ही प्राप्त है। इनसे अधिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रखर विद्वान्, प्रभावशाली वक्ता, दानदाता, सुन्दर लेख अथवा पुस्तक लिखने वाले अनेक होंगे, परन्तु सच्चे नेता होने की कसौटी यह है कि प्रजा उसके विचारों को स्वीकार न भी करे, तथापि उसकी सूचना को आज्ञा के समान समझ कर, पहाड़ या खोह, जहां भी जाने के लिए कहे अर्थात् जिस ओर को अँगुली उठावे उसी ओर उत्साहपूर्वक जाने को तैयार हो जाय। यह शक्ति इन दोनों में इतने प्रमाण में है कि उसका अर्द्धांश भी अन्य मनुष्य में नहीं होगा। यह शक्ति इनमें कैसे आई है, इसकी चर्चा करना इस लेख का उद्देश्य नहीं है। इन दोनों महानुभावों का अनेक रीतियों से परस्पर विलक्षण होते हुए भी प्रजा पर इनका किस कारण से इतना अद्भुत प्रभाव पड़ता है; इसी बात की खोज करनी है। इनकी विलक्षणता क्या है? यही जानने योग्य बात है। पहले हम इन दोनों महानुभावों के समान गुणों की तुलना करेंगे, तत्पश्चात् जो गुण विभिन्न होंगे, उनका उल्लेख किया जायगा।

देश के लिए दोनों के हृदय में समान वेदना है। महात्मा गान्धी ने तो देश के लिए सर्वस्व ही अर्पण कर दिया है, किन्तु महात्मा तिलक ने भी कुछ कम नहीं किया। इनकी आमदनी का साधन "केसरी" पत्र है, और उससे प्राप्ति भी अच्छी होती है, किन्तु वह व्यक्तिगत सम्पत्ति न होकर सार्वजनिक ही है। इसी कारण लो० तिलक का आर्थिक व्यवहार सरलतापूर्वक चल रहा है, किंतु श्रीमान् या धनाढ्य बनने की आपको स्वप्न में भी इच्छा नहीं है।

दोनों आत्माएँ अंतिम विजय प्राप्त होने तक कभी कर्तव्य-पथ से विचलित नहीं होतीं। पराजय से आरंभ करके मानवी शक्ति के अंत हो जाने तक भी ये अवश्य ही विजयी होते हैं। अपने कर्तव्य को पूर्ण पद पर पहुंचाने पर ही ये विश्राम लेते हैं। ये गुण उभय महोदयों में समान हैं।

इसी प्रकार उभय मूर्तियों का एक समान गुण 'सादगी' है। हां, महात्मा गान्धी व्यावहारिक रीति से सन्यासी होने के कारण विशेषता को प्राप्त हो चुके हैं, इसी प्रकार इनकी शारीरिक दुःख सहन करने की शक्ति अधिकांश स्वाभाविक और देश में शिक्षा बढ़ाकर मान्यवर तिलक की अपेक्षा बहुत बढ़ गई है। बहुत करके मांस-मद के भार से रहित हलका और लम्बा शरीर और वय में जवानी ये सभी उन्हें सुशोभित कर रहे हैं। रेलवे के तीसरे दर्जे की मुसीबतवाली मुसाफ़िरी—बैठे बैठे जागरण करना आदि—तिलक महाराज का स्थूल और मधुमेह-पीड़ित शरीर सहसा सहन नहीं कर सकता। इसी कारण वे फ़र्स्टक्लास या पहले दर्जे में सफ़र करते हैं। भोजन, वस्त्र आदि में दोनों की आवश्यकताएँ बहुत थोड़ी हैं। किंतु महात्मा गान्धी की समानता कोई भी नहीं कर सकता। सादगी और आवश्यकताओं की काटछांट को महात्मा गान्धी ने एक प्रधान, प्रश्न, उद्योग अथवा विग्रह का एक शस्त्र, बना दिया है। लोकमान्य तिलक ने उसे केवल सुभीते के लिए और कदाचित् राजनीति का एक अंग समझ कर ग्रहण किया है। दोनों अपने २ प्रान्तों का स्वदेशी पहनाव पहनते हैं। परदेशी वस्त्र तो क्या, विदेशी पद्धति का भी उसमें संसर्ग नहीं आने देते।

निस्संदेह विद्या के प्रकरण में लोकमान्य तिलक महात्मा गान्धी से बढ़ चढ़ कर हैं। महात्मा गांधी ने सर्वधार्मिक सिद्धान्तों का सामान्य, किन्तु विचारपूर्वक, निरीक्षण किया है, परन्तु, लोकमान्य तिलक का संस्कृत साहित्य-विषयक तथा आर्य-धर्म का ज्ञान और अभ्यास अपूर्व है। इसके प्रमाणार्थ गीता-भाष्य और 'ओरायन' आदि ग्रंथ मौजूद हैं। प० गान्धीजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी कुछ कम विद्वान् नहीं हैं। उनकी गुजराती भाषा की शुद्धता अच्छे २ विद्वानों का मुंह बन्द कर सकती है। श्री गान्धी जी के अभ्यास में शुष्क पंडित की अपेक्षा विचार-मनन की अधिकता है। यही विशेषता उन्हें बड़े २ विद्वानों से उच्च बनाये हुए है।

दोनों आत्माएं देशोन्नति की समान और सम्पूर्ण भक्त हैं। किन्तु देशोन्नति की पद्धति में परस्पर बड़ी विभिन्नता है। उस विभिन्नता को विरोध भी कह सकते हैं। इन दो सूर्य-चन्द्रों की भिन्नता इस भूमंडल पर प्रत्यक्ष ही दृष्टिगोचर हो जाती है। महात्मा गांधी संसार की उन्नति के एक अंश-रूप से भारत की उन्नति चाहते हैं, किन्तु यह अन्य देशों को हानि पहुंचा कर हो तो उसे महात्मा जी नहीं स्वीकृत करते। केवल राजनैतिक उन्नति पर उनकी लोकमान्य से छठे अंश की भी श्रद्धा नहीं है। राजनैतिक उन्नति को वे आत्मा की उन्नति से गौण मानते हैं, और राजनैतिक स्वातंत्र्य-विकास को भी वे आत्मा के विकास का साधन मानते हैं। लक्ष्य, साध्य और प्राप्ति के लिए उपयुक्त भाजन वे मन तथा आत्मा की उन्नति और पवित्रता को ही मानते हैं। वे राजनैतिक उन्नति को सम्पूर्ण सुख के स्वरूप अंशरूप में मानते हैं, किन्तु इसके विरुद्ध लोकमान्य तिलक उसे ही कामधेनु और त्रैलोक्य-चिन्तामणि मानते हैं। अन्य प्रकार की उन्नति में उन्हें अश्रद्धा हो, सो नहीं। वरन् वे इसलिए उन्हें गौण मानते हैं कि इनकी उन्नति के लिए शीघ्रता की आवश्यकता नहीं है, न तत्काल ही उनके बिना कोई काम अड़ रहा है, और जो कुछ अन्य प्रकार की उन्नति थोड़े बहुत उपयोग में आती है, वह बिना राजनैतिक उन्नति के प्राप्त हुए कदापि नहीं सध सकती है। राजनैतिक उन्नति ही उसके लिए सरल, सुबोध और हितकर बन जायगी। इससे स्पष्ट प्रकट है कि यदि महात्मा गांधी के विचार व्यापक और सार्वदेशिक हैं तो लोकमान्य के विचार एक प्रकरण और एकदेशगामी हैं। इसी कारण परस्पर की कार्य-पद्धति में फेरफार जान पड़ता है। महात्मा गांधी जब किसी राजकीय कार्य को हाथ में लेते हैं तो वे उसे धार्मिक स्वरूप का जामा पहना देते हैं, किन्तु लोकमान्य तिलक जब किसी धार्मिक प्रश्न का विवेचन करते हैं तो वे उसे भी यत्किंचित् राजकीय रंग में रँग देते हैं। महात्मा गांधी धर्म को राजनीति का महान् अङ्ग मानते हैं तो लोकमान्य तिलक उसे किसी एक अंग में मानते हैं। लोकमान्य केवल साध्य पर दत्तचित्त होकर ध्यान देते और उसके लिए सुगमतानुसार छोटे बड़े सब प्रकार के साधनों का उपयोग करते हैं, किन्तु महात्माजी—साधन भी यज्ञ के बकरे की तरह साध्य और शुद्ध हों, और अमुक गुणयुक्त तथा दोष-रहित होने चाहिये—इस बात की परीक्षा कर के ही स्पर्श करते हैं। लोकमान्य साध्य के उत्तम होने पर प्राप्त करने के उपायों की शुद्धि के विषय में अधिक खींचातानी करने की आवश्यकता नहीं समझते।

महात्मा गांधी जी भले मनुष्य को तो क्या, किन्तु नीच से भी नीच मनुष्य को कभी कड़ी या बुरी बात नहीं कहते, उनकी प्रकृति को देखकर कहना पड़ता है कि मानों वे क्रुद्ध होना जानते ही नहीं हैं। अहंभाव से महात्मा जी बिलकुल मुक्त हैं, किन्तु लोकमान्य का स्वभाव इससे कुछ भिन्न है। इसी कारण महात्मा गांधी का उनके मत से भिन्नता रखनेवाले विरोध नहीं करते, किन्तु इसके विरुद्ध लोकमान्य के विरोधियों की संख्या कम नहीं है।

अपनी कीर्ति, पूज्यभाव, तथा आदर बिना प्रजा पर प्रभाव न पड़ेगा, और प्रभाव न पड़ने पर मैं राजकीय नेता के रूप में नहीं माना जाऊँगा, और इस हेतु मैं राजकीय उन्नति नहीं कर सकूंगा, इसी प्रकार की लोकमान्य की तर्क-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्यकता है। इस कारण जब वे प्रजाजन की ओर से असाधारण मान स्वीकार करते हैं, तब उन्हें न्याय-रूप में कहना चाहिये कि वे अहंभाव से नहीं, वरन् प्रजा के नेता रूप में इस प्रकार प्रजा तथा सरकार पर प्रभाव जमाने के परमार्थी हेतु से उस मान को स्वीकार करते हैं। गाड़ी के घोड़े खोलकर उसे लोग खींच ले जायँ, लोकमान्य को इसमें कुछ रुकावट नहीं है, किन्तु इसके विरुद्ध यदि वैसा व्यवहार किसी की ओर से हुआ तो मैं गाड़ी से उतर जाऊँगा, इस प्रकार की महात्मा गान्धी जी धमकी देते हैं। तात्पर्य यह कि लोकमान्य तिलक अहंभाव को एक प्रकार की राजकीय आवश्यकता समझकर ग्रहण करते हैं, महात्मा गान्धी राजसी वस्तु को क्षणभर के लिए भी सात्विक भावकर उसे अस्वीकार करते हैं।

लोकमान्य तिलक कृष्ण, चाणक्य और डिज़राएली के विशेष भक्त हैं, तो महात्मा गान्धी विदुर, युधिष्ठिर और मेज़िनी अथवा ग्लेडस्टन के शिष्यों से बढ़कर हैं। इनमें श्रेष्ठ और कनिष्ठ कौन है, इस बात का विवेचन करना इस लेख का हेतु नहीं है। हमें तो यहां केवल तुलना करके भेद प्रदर्शित करने का प्रयत्न करना था, और वही हमने यथा-शक्ति किया।*

"उभय नेताओं का अनन्य भक्त"।

हालते चमन।

[लेखक—श्रीयुत विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक।]

(१)

चमन में हाय पड़ा किस ग़ज़ब का पाला है।
ज़बाने बुलबुले शैदा पै आहो नाला है॥
अँधेरा आंखों में छाया है, गो उजाला है।
नहीं है क़तरए शबनम गुलों का छाला है॥
ख़िज़ां ने इस तरह कुछ इस चमन को लूटा है।
उजाड़ बाग़ हुआ गुल रहा न बूटा है॥

(२)

ख़मोश सर्व हैं और क़ुमरी सर पटकती हैं।
गुलों का रंग उड़ा बुलबुलें भटकती हैं॥
हैं फटते सीने ये; कलियां नहीं चिटकती हैं।
ये आंखें नर्गिसे बीमार की खटकती हैं॥
ज़बान बंद है सौसन की सक्ते में शमशाद।
परेशां सम्बुलो रैहाँ हैं लब पै है फ़रियाद॥

(३)

पड़े यों लाले को भी ज़िन्दगी के लाले हैं।
है दाग़ दिल में, ये लिपटे ज़बाँ निकाले हैं॥
इन आबशारों के दिल में बहुत से छाले हैं।
ये क़तरे अश्क के शबनम ने भी तो डाले हैं॥
खड़ा है बाग़बां हसरत से हाथ है मलता।
चमन उजड़ता है बेबस है बस नहीं चलता॥

(४)

नज़र उठाओ ज़रा देखो बाग़ की हस्ती।
उजाड़ हो न कहीं जाय हाय यह बस्ती॥
हैं इसके वास्ते क्या सब मुसीबतें सस्ती।
कहां गई वो बुलन्दी है आई यह पस्ती॥
ऐ बाग़बां ये मुनासिब है कस लो अपनी कमर।
मिले जो पानी तो गुल हों वही, वही हों समर॥

---

* "आर्यप्रकाश" से अनुवादित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय गुरुकुल कांगड़ी

क्षणिक सन्धि की शर्तें।

आस्ट्रिया से।

स्थल-सम्बन्धी।

(१) जल, थल और आकाश में युद्ध तुरंत बन्द हो जायँ। (२) आस्ट्रिया-हङ्गरी की सेना पूरी तरह विसर्जन कर दी जाय, और उत्तर-समुद्र से स्वीज़लैंड तक के युद्धक्षेत्र में जो आस्ट्रो-हङ्गेरियन सेना लड़ रही है वह तुरंत हटा ली जाय। आस्ट्रो-हङ्गेरियन राज्य के अन्दर, जिसकी सीमा तीसरी धारा में निर्धारित की गई है, अधिक से अधिक सेना के २० डिवीज़न रहें, और सेना शान्ति-समय के समान कर दी जाय। जहां अमेरिका और मित्र कहें वहां आधा डिवीज़नल कोर, आधा तोपख़ाना और सामान इकट्ठे कर मित्रों को सौंप दिये जायँ। पहले उन्हीं स्थानों का सामान देने का लक्ष्य रखें जो ख़ाली किये जायं। (३) समर के आरम्भ से आस्ट्रिया-हङ्गरी ने जिन राज्यों पर आक्रमण किया है, वे ख़ाली कर दिये जायँ। आस्ट्रो-हङ्गेरियन सेनाएं मित्रों के सेनानायक की निश्चित तारीख़ के भीतर लिखी सीमा, के अनुसार पीछे हट जायं—इस प्रकार जो स्थान ख़ाली होंगे, उनपर मित्रों तथा अमेरिका की पलटनों का अधिकार होगा। कोयले समेत सब फ़ौज और रेलवे का साज-सामान जहां का तहाँ रहेगा, और भिन्न भिन्न युद्धक्षेत्रों में सहयोगी शक्तियों के सेनायक की विशेष आज्ञा से मित्रों को दे दिया जायगा। जो प्रदेश ख़ाली किये जायंगे, और जिनपर मित्रोंका अधिकार होगा उनमें शत्रुकी पलटनें किसी प्रकार की नई लूट-खसोट तथा नाश न करेंगी, और कोई चीज़ अपने काम के लिये न लेंगी।

(४) सड़क, रेल और जलमार्ग से आस्ट्रिया-हंगेरियन राज्य में जहां चाहें वहां मित्र आ सकें, और बारबरदारी के लिए आस्ट्रिया-हंगरी के आवश्यक साधनों का उपयोग कर सकें। युद्ध-सञ्चालन तथा शान्ति-रक्षा के लिए रणनीति की दृष्टि से आस्ट्रिया-हंगरी में जो महत्व के स्थान हैं, उन पर मित्र जब चाहें अधिकार कर सकें। वे वेतन देकर सहयोगी शक्तियों के सैनिकों से काम ले सकें (५) १५ दिनके अन्दर जर्मन सेना इटालियन और बालकन-युद्धक्षेत्र तथा आस्ट्रो-हंगेरियन राज्य ख़ाली कर दे। उस तारीख़ के अन्दर जो जर्मन सैनिक आस्ट्रिया-हंगेरी में बने रहें वे नज़रबन्द कर दिये जायँ। (६) आस्ट्रिया हंगेरी के ख़ाली किये हुए प्रदेशों का शासन स्थानिक अधिकारियों को दिया जाय, जो उन पर अधिकार करनेवाली सेनाओं के अधीन रहें। (७) जो प्रजाजन नज़रबन्द हुए हैं तथा जो असैनिक अपने घरों से निकाले गये हैं वे भिन्न भिन्न युद्धक्षेत्र में सहयोगी सेनानायकों की बताई शर्तों के अनुसार तुरत लौटा दिये जायँ। मित्र बदले में कोई कार्रवाई न करेंगे। (८) जो बीमार और घायल ख़ाली किये हुए राज्य से नहीं हटाये जा सकते, उनकी देख-भाल आस्ट्रो-हंगेरियन डाक्टर करें, जो आवश्यक औषधियों सहित वहां छोड़ दिये जायँगे।

जल-सेना-सम्बन्धी।

(१) समुद्रों पर लड़ाई तुरत बन्द कर दी जाय। आस्ट्रो-हंगेरियन जहाज़ कहां कहां हैं, इसकी पूर्ण सूचना दी जाय। निरपेक्षों को यह सूचना दी जाय कि राज्य के अधीन समुद्र-भाग में लड़ाकू तथा व्यापारी जहाज़ चलाने की स्वतंत्रता मित्रों और सहयोगी शक्तियों को दी गई है, निरपेक्षता का प्रश्न त्याग दिया जाय।

(२) १९१० से १९१८ तक जो १५ आस्ट्रो-हंगेरियन ग़ोताख़ोर तैयार हुए हैं, और जो जर्मन ग़ोताख़ोर अभी आस्ट्रो-हंगेरियन समुद्र-भाग में हैं या पीछे आवें वे सब मित्रों तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमेरिका को सौंप दिये जायँ, और सब आस्ट्रो-हंगेरियन गोलाखोरों के कर्मचारी तलब देकर बर्खास्त कर दिये जायँ। उनके शस्त्रास्त्र उतार लिये जायँ, और वे मित्रों तथा अमेरिका के अधीन किये जायँ।

(३) पूरे शस्त्रों और सामान सहित मित्रों और अमेरिका के बताये हुए तीन लड़ाकू जहाज़, हलके क्रूज़र, ६ नाशक, १२ टारपीडो बोट, १ सुरङ्ग बिछानेवाला जहाज़ और डैन्यूब नदी पर चलनेवाले ६ मानीटर जहाज़ मित्रों और अमेरिका को दिये जायँ, और सब लड़ाकू जहाज़, जिनमें नदी पर चलनेवाले जहाज़ भी शामिल हैं, मित्रों के बताये हुए आस्ट्रो-हङ्गरी के जल-सेना के अड्डों में जमा किये जायँ। उनके कर्मचारी वेतन देकर छुड़ा दिये जायँ, उनके सब शस्त्रास्त्र उतार लिए जायँ, और उन पर मित्रों और अमेरिका की देखभाल रहे।

(४) ऐड्रियाटिक समुद्र में और डैन्यूब नदी के ऊपरी भाग तथा सहायक नदियों में और राज्यान्तर्गत समुद्र-भाग पर तथा आस्ट्रिया हङ्गरी के राज्य से होकर मित्रों तथा अन्य सहयोगी शक्तियों के कुछ जहाज़ों के आने जाने की स्वतंत्रता रहे। मित्र और सहयोगी शक्तियां सुरंगें तथा दूसरी बाधाएँ हटा सकें, पर इनके स्थान अवश्य बता दिये जायँ। डैन्यूब नदी पर जहाज़ चलाने में कोई बाधा न हो, इसलिए मित्र और अमेरिका सब क़िलेबन्दियों और रक्षा-स्थानों पर अधिकार कर सकें या उन्हें तोड़ सकें।

(५) जैसा घिराव इस समय मित्रों और सहयोगी शक्तियों ने कर रक्खा है वह ज्यों का त्यों रहेगा। आस्ट्रिया-हंगरी के जो व्यापारी जहाज़ समुद्रों पर मिलेंगे, वे पकड़े जा सकेंगे। पर उन्हें छोड़कर जिन्हें मित्रों तथा अमेरिका का मनोनीत कमीशन बरी करेगा।

(६) मित्रों और अमेरिका के बताये हुए आस्ट्रो-हंगेरियन अड्डों में जल-सेना-सम्बन्धी सब हवाई जहाज़ जमा किये जायँ, और उनका विसर्जन किया जाय।

(७) अपनी राष्ट्रीय सीमा के बाहर आस्ट्रिया-हंगरी ने जिन तटों और बन्दरों पर अधिकार कर लिया है उन्हें ख़ाली कर दे, और सब जहाज़, नावें और जल-सेना तथा स्थल-सम्बन्धी बारबरदारी का सब सामान दे दे।

(८) पोला के शस्त्रागार के तक और उसकी रक्षा करनेवाले टापुओं तथा जल और स्थल-सम्बन्धी क़िलों पर मित्र तथा अमेरिका अधिकार कर लेंगे।

(९) आस्ट्रिया-हंगरी को मित्रों तथा सहयोगी शक्तियों के सब व्यापारी जहाज़ लौटा देने होंगे।

(१०) ख़ाली करने, सौंपने या लौटाने के पहले कोई जहाज़ या सामग्री नष्ट न करने दी जायगी।

(११) आस्ट्रिया हंगरी में मित्रों और सहयोगी शक्तियों के जल-सेना तथा व्यापारी जहाज़ों के जो जवान क़ैद हैं वे बिना बदले के लौटा दिये जायं, अर्थात् मित्र इनके बदले अपने यहां के वैसे क़ैदियों को न लौटावेंगे।

रूम से।

दरेंदानियाल और बोसफ़ोरस जल-प्रणालियां तुर्कों को खोल देनी पड़ेंगी, और काले समुद्र पर मित्रों का अधिकार होगा। तुर्की लड़ाकू जहाज़ और रणनीति की दृष्टि से महत्व के सभी स्थानों पर मित्रों का अधिकार हो सकेगा। मित्रों के जवान तथा नज़रबन्द अर्मीनियन बिना किसी शर्त पर उन्हें सौंप दिये जायंगे। अफ्रिका के ट्रिपोली, इटैनिया और साइरेनिका में जितने तुर्क अफ़सर हैं वे इटाली को सौंप दिये जावेंगे। जो तुर्क मित्र राज्यों में क़ैद हैं उन्हें मित्र जैसे चाहेंगे काम में लगावेंगे। असैनिक क़ैदियों और फ़ौज में न भर्ती होने लायक़ तुर्कों को छोड़ देने का विचार किया जायगा। तुर्कों का आस्ट्रिया और जर्मनी से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई सम्बन्ध न रहेगा, और एक महीने के अन्दर उनका कोई मजाजन रूस में न रहेगा। जो बहुत दूर के ज़िलों में होंगे वे जहां तक हो सकेगा इसके बाद ही चले जायंगे। तुर्की सेना तुरंत तोड़ दी जायगी, और देश में शान्ति रखने के लिए तुर्क-सरकार से परामर्श कर जितनी मित्र कहेंगे उतनी ही रक्खी जायगी। हेजाज, असीर, सीरिया और मेसोपोटामिया के दुर्ग-रक्षक आत्मसमर्पण करेंगे, और सिलीशिया से सेना हटा ली जायगी। तार, बेतार के तार, स्टेशनों और रेलों तथा बातूम और बाकू पर मित्रों का अधिकार होगा। उत्तर-पश्चिम ईरान से तुर्क-सेना हटा ली जायगी। ट्रैन्स-काकेशिया प्रदेश के एक भाग से सेना हटाने की आज्ञा दी जा चुकी है, पर वहां की अवस्था समझ कर मित्र पूरा प्रदेश ख़ाली करना चाहेंगे तो किया जायगा। आर्मीनियन विलायतों में उपद्रव होगा तो मित्र उनपर अधिकार कर सकेंगे। शस्त्रास्त्रों तथा विसर्जित सेना के सिपाहियों को भेजने के सम्बन्ध में मित्रों की आज्ञा तुर्क-सरकार को माननी पड़ेगी। तुर्की रसद-विभाग में मित्रों के स्वार्थों की रक्षा के लिए इनका प्रतिनिधि रहेगा।

बलगेरिया से।

(१) यूनान और सर्विया के जो प्रान्त शत्रु के हाथ में हैं वे शीघ्र ही ख़ाली कर दिये जायं।

(२) शीघ्र ही सेना विसर्जन कर दी जाय।

(३) बोट और रेलवे तथा अन्य सब प्रकार की बारबरदारी मित्रों के हवाले कर दें।

(४) स्टोरों में जो शस्त्र जमा किये जायंगे उनका नियन्त्रण मित्र ही करेंगे।

(५) बलगेरिया होकर मित्र स्वतंत्रतापूर्वक आ जा सकेंगे, और सैनिक दृष्टि से महत्व के स्थानों पर मित्रों का अधिकार रहेगा। बलगेरिया के ऐसे स्थानों में ब्रिटिश, फ्रेञ्च और इटालियन सेना रहेगी, और यूनानी ज़िलों में यूनानियों की तथी सर्वियन ज़िलों में सर्वियन सेना का अधिकार रहेगा।

(६) राजनीतिक प्रश्न अन्त में होनेवाली सन्धि-परिषद् में पेश किये जायंगे।

इस प्रकार के प्रबन्ध से बलगेरिया का पूर्ण सैनिक आत्मसमर्पण हो गया है। इस सन्धि का परिणाम बहुत व्यापक होगा।

इस प्रकार बालकन में स्थायी सन्धि स्थापित होने की आशा की जाती है, और इस से अन्त में मित्रतापूर्वक बालकन-सम्बन्धी जटिल प्रश्न को किसी दूसरी स्कीम-द्वारा हल करने का मित्रों को अवसर मिलने की अधिक आशा होती है।

स्थायी संधि की शर्तें।

राष्ट्रपति विलसन की १४ शर्तें।

८ जनवरी, १९१८, को राष्ट्रपति विलसन ने अमेरिकन कांग्रेस को जो संदेश भेजा था, उसमें सन्धि की ये १४ शर्तें लिखी थीं:—

(१) सब के रहने के लिए संसार योग्य और रक्षित बनाया जाय। इसमें संसारभर की जातियों का हित है। इसलिए संसार की शान्ति का प्रोग्राम ही हमारा प्रोग्राम है। सबसे पहले खुल्लमखुल्ला शान्ति-सन्धियां होनी चाहिये, जिसके बाद चुपचुप किसी प्रकार के अन्तर्राष्ट्रीय समझौते न हों, और परराष्ट्र-विषयक बातें स्पष्ट रूप से सब के समक्ष की जायँ।

(२) शान्ति तथा युद्ध के समय भी देश के अधीन समुद्र-भाग के बाहर सर्वत्र समुद्र पर जहाज़ों को आने जाने की पूर्ण स्वतंत्रता रहे, जबतक अन्तर्राष्ट्रीय सन्धियों को मान्य कराने के लिए सारा समुद्र तथा उसका कुछ भाग अन्तर्राष्ट्रीय कार्य से बन्द न किया जाय।

(३) जहां तक सम्भव हो—आर्थिक बाधा एं दूर करनी और उन सब जातियों में व्यापारिक समानता स्थापन करनी चाहिये जो शान्ति-स्थापन के पक्ष में हों, और शान्ति बनाये रखना चाहती हों।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४) इस बात की पूरी गारण्टी होनी चाहिये कि देशों में शान्ति स्थापन करने योग्य ही सेनाएं रक्खी जायँ । उनकी संख्या, जहां तक सम्भव हो, बिल्कुल कम होनी चाहिये ।

(५) उपनिवेश-सम्बन्धी अधिकारों का निपटारा स्वतंत्र और खुले दिल से तथा पक्षपात रहित इस सिद्धान्त पर होना चाहिये कि प्रजा के राजत्व तथा हित का वैसा ही विचार रहे जैसा उस पर अधिकार चाहनेवाली सरकार का ।

(६) रूस का सब राज्य ख़ाली कर देना और रूस-सम्बन्धी सब प्रश्नों का निपटारा कर देना चाहिये, जिससे संसार की अन्य जातियां भी उसकी राजनीतिक उन्नति तथा राष्ट्रीय नीति के निर्धारित करने में बाधा न देकर सहायता ही पहुंचावें ।

(७) सारा संसार इस बात को मानेगा कि बेलजियम को ख़ाली कर देना चाहिये, और अन्य स्वतंत्र राष्ट्रों के समान उसका जो राजत्व है, उसे संकुचित करने की चेष्टा न की जाय । इससे उन अन्तर्राष्ट्रीय क़ानूनों पर राष्ट्रों की जैसी श्रद्धा और जैसा विश्वास होगा वैसा दूसरे कार्य से न होगा, जिन्हें अपने पारस्परिक व्यवहार के लिए उन्होंने बनाया है । इसके बिना अन्तर्राष्ट्रीय क़ानूनों का सारा ढांचा तथा उसका क़ानूनीपन सदा के लिए नष्ट हो जायगा ।

(८) फ्रांस का सब जीता हुआ प्रान्त ख़ाली कर उसे लौटा देना चाहिये, और १८७१ में प्रशिया ने फ्रांस के अलसेस और लोरेन प्रदेश लेकर जो अन्याय किया है और ५० वर्ष से प्रायः संसार की शान्ति भङ्ग कर रक्खी है, उसका अन्त होना चाहिये, जिससे सब के हित के लिए फिर शान्ति स्थापन हो सके ।

(९) इटाली की सीमा का सुधार ऐसा होना चाहिये जिससे जान पड़े कि इटालियन राष्ट्र के लोग इटाली के बाहर नहीं रहें ।

(१०) आस्ट्रा-हंगरी की जातियों के लिए भी स्वराज्य-सम्बन्धी उन्नति करने का अवसर देना चाहिये, जिससे राष्ट्रों में उनका स्थान भी रक्षित और दृढ़ रहे ।

(११) रूमानिया, सर्विया और मांटिनीग्रो ख़ाली हो जाने चाहिये, और जीते हुए प्रदेश उन्हें लौटा देने चाहिये । सर्विया को समुद्र तक पहुंचने के लिए स्वतंत्रता मिलनी चाहिये, और बालकन-राज्यों का पारस्परिक सम्बन्ध मित्र-भाव से परामर्श करके ऐतिहासिक और राष्ट्रीय सीमा के अनुसार निश्चित होना चाहिये, तथा उनकी राजनीतिक और आर्थिक स्वतंत्रता और राज्य-सम्बन्धी पूर्णता की अन्तर्राष्ट्रीय गारंटी होनी चाहिये ।

(१२) वर्तमान तुर्क-साम्राज्य के तुर्की भागों को उनके राजत्व का विश्वास दिलाना चाहिये, पर रूस के अधीन जातियों को भी अपनी जीवन तथा स्वराज्य-सम्बन्धी उन्नति करने की स्वतंत्रता होनी चाहिये ।

(१३) पोलैंड का स्वतंत्र राज्य बनना चाहिये, जिसमें पोलिश बस्तीवाले प्रदेश सम्मिलित हों, यह स्वतंत्रतापूर्वक समुद्र तक पहुंच सके, और इसकी आर्थिक स्वतंत्रता तथा भूमि-संबंधी पूर्णता की अन्तर्राष्ट्रीय गारंटी होनी चाहिये ।

(१४) विशेष प्रतिज्ञा-पत्रों के अनुसार सब राष्ट्रों की एक जेनरल एसोसियेशन बननी चाहिये, जिससे छोटे बड़े सब राष्ट्रों की राजनीतिक स्वतंत्रता तथा भूमि-सम्बन्धी पूर्णता की रक्षा हो सके ।

२६ सितम्बर को रा० विलसन ने कहा था कि स्थायी शान्ति इन नियमों पर हो सकती है:—

(१) जिन लोगों के साथ हम न्याय करना चाहते हैं, और जिन के साथ न्याय करना नहीं चाहते, दोनों के साथ समान रूप से पक्षपात-रहित न्याय किया जायगा ।

(२) निपटारे का कोई ऐसा आधार न होगा जिसका किसी राष्ट्र या राष्ट्र-संघ से ऐसा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वतन्त्र तथा विशेष स्वार्थ होगा जो सब के हित के अनुकूल न होगा।

(३) राष्ट्र-संघ के समान संघ के अन्दर कोई भिन्नता या विशेष सन्धियां अथवा समझौते न होंगे।

(४) विशेषकर संघ के अन्दर कोई विशेष आर्थिक युद्ध या किसी प्रकार के आर्थिक बहिष्कार का उपयोग न किया जा सकेगा। बिना अनुशासन और नियन्त्रण के लिए राष्ट्र-संघ किसी को आर्थिक दण्ड देने के अभिप्राय से संसार के बाज़ारों से बहिष्कृत कर सकता है।

(५) सब अन्तर्राष्ट्रीय सन्धियां और समझौते पूरी तरह से अवशिष्ट संसार का अवश्य पता दिये जाने चाहिये। विशेष संधियां तथा आर्थिक ईर्षा और शत्रुताएँ समर का कारण रही हैं। निश्चित शर्तों से यदि ये कारण दूर न किये गये तो झूठी और अनिश्चित शान्ति होगी।

"भारतमित्र"।

सम्पादकीय टिप्पणियाँ।

हा! बांधवाधिपति।

दुःख की बात है कि ४२ वर्ष की अवस्था में ही लेफ्टिनेन्ट कर्नल हिज़ हाइनेस श्रीमान् सर वेंकट रमण सिंह जी० सी० एस० आई० का स्वर्गवास हो गया। हमको "अभ्युदय" "तथा मर्यादा" में अनेक अवसर पर स्वर्गवासी नरेश की नीति की कटु समालोचना करना पड़ा था किन्तु इसका कारण यह न था कि स्वर्गवासी नरेश में गुण न थे। रीवां राज्य का संगठन और उसका शासन अनेक अंशों में हीन था किन्तु महाराज के प्रत्येक कार्य से यह साफ़ विदित होता था कि वे उच्च कोटि के कूटनीतिज्ञ थे। राजा में जिन गुणों की विशेष आवश्यकता है उनकी श्रीमान् में कमी न थी और वे अपने आदर्श की ओर बराबर तेज़ी से बढ़ते चले जा रहे थे। यदि रीवाँ का कभी इतिहास लिखा जायगा तो स्वर्गवासी नरेश को उसमें वही स्थान प्राप्त होगा जो इङ्गलैण्ड के इतिहास में ट्यूडर राजाओं हेनरी सातवें, हेनरी आठवें आदि को प्राप्त है। ट्यूडर राजाओं की भांति स्वर्गवासी नरेश नोबुल्स ठाकुरों की शक्ति को कम करने में लीन थे और सिंहासन की शक्ति को बढ़ा रहे थे। वर्तमान युग में इतनी इसकी आवश्यकता न थी किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि [illegible] बुद्धि राजा का प्रथम और सर्वोत्कृष्ट कर्तव्य है। स्वर्गवासी नरेश में एक विचित्र प्रकार का स्वातंत्र्य और क्षात्र धर्म का प्रेम था। सेना और आखेट में उनका अधिक समय व्यय होता था और कहा जाता है कि जितना कड़ा परिश्रम वे कर सकते थे उतना कोई भी सैनिक नहीं कर सकता था। श्रीमान् धर्मभीरु थे और उनका चरित्र बड़ा ही उज्वल था। इधर कुछ समय से श्रीमान् ने उदार नीति का अवलंबन किया था और यह आशा होती थी कि अब श्रीमान् प्रजानुरंजन की ओर अधिक ध्यान देंगे। ऐसे समय में यह विछोह महाराज के कुटुम्बियों और रीवां राज्य की प्रजा के लिए बहुत ही बुरा हुआ। महाराजकुमार के विवाहोत्सव की तैयारी हो रही थी, प्रजा उत्सुकता से उस दिन की बाट जोह रही थी कि सहसा यह वज्रपात हुआ और आनन्द के समुद्र की लहरों के स्थान पर दुख का महासागर उमड़ आया। हम महाराजकुमार, बांधवाधिपति के कुटुम्बियों और राज्य की प्रजा के दुःख में समवेदना प्रगट करते हैं और आशा करते हैं हिज़ हाइनेस महाराज गुलाबसिंह जी "ईश्वर इच्छा बलीयसी" की औषधि को पान कर धैर्य के साथ प्रजा पालन में [illegible] होंगे। बाल्यावस्था में ही यह कठिन भार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाराज के ऊपर पड़ा है किन्तु सिंह शावक से हम को विश्वास है और हम उस दिन की शीघ्रही बाट जोह रहे हैं जिस दिन रीवाँ राज्य की प्रजा महाराज गुलाबसिंहजी की देख रेख में सुखी और समृद्धिशालिनी होगी। नूतन महाराज से हमको यही कहना है—

"..

त्वम् बाल एवासि नवञ्च राज्यम्
युक्तः प्रजानामनुरञ्जने स्या-
स्तस्माद्यशो यत् परमं धनं वः"।

इसके साथ ही साथ हमारी प्रार्थना यह है कि अपने राज्य में आप अपने वीर पिता का एक उपयुक्त सजीव स्मारक जो केवल ईंटा पत्थर का ही न होकर वास्तव में उनकी कीर्ति को अचल रख सके बनवा दें।

कृष्णकान्त मालवीय।

युद्ध-ज्वर।

यह सन्तोष की बात है कि इस नाशकारी ज्वर का प्रकोप धीरे धीरे शहरों में कम हो रहा है। ग्रामों में अब भी दशा भयंकर है। जहाँ तक विदित होता है ग्रामों में अधिक मृत्यु संख्या होने का एक विशेष कारण जनता की गरीबी है। जनता के पास न ओढ़ने को कपड़ा है और न पैसा ही पास है कि वह कम्मल, पथ्य या औषधि का प्रबन्ध कर सके। स्थानीय सेवा समिति ने इस सम्बन्ध में प्रशंसनीय उद्योग किया है और उसके उद्योग से आज कितने ही प्राणी भूलोक में विद्यमान हैं।

शीत

के कारण शीघ्र निमोनिया हो जाने से ग्रामों में मृत्यु-संख्या उत्तरोत्तर वृद्धि को प्राप्त कर रही थी। इस दशा को देखकर शहर के कुछ प्रतिष्ठित सज्जनों ने कम्मल वितरण करने का प्रबन्ध किया और वे कम्मल आस पास के ग्रामों में बाँटे जा रहे हैं। इस सम्बन्ध में मिसर्स रामनिरंजन बद्रीदास, बा० कामताप्रसाद रईस, बा० रामप्रसाद रईस, बा० नानकचन्द ज़मींदार, बा० सोमेश्वरदास कक्कड़ रईस, बा० गौरीप्रसाद कन्ट्रैक्टर तथा बा० भगवानदास का दान सराहनीय है। आप लोगों की कृपा से इस समय कुछ ग्रामों के निवासियों को कम्मल मिल गये हैं। कम्मलों, पुराने कपड़ों की आवश्यकता अभी बहुत है और जो उदार सज्जन गरीबों का दुःख दूर करना चाहें वे मैनेजर "मर्यादा" के पते से कम्मल, रज़ाई, पुराने कोट, कमीज़ आदि भेज सकते हैं। दुःखियों का दुःख दूर करना यही सर्वोत्तम पूजा है।

युद्ध समाप्त हो गया।

मित्र-दल की विजय हुई और आशा है अब संसार में गरीब को अमीर, निर्बल को बली न सता सकेंगे, समस्त राष्ट्रों को स्वभाग्य निर्णय का अवसर प्राप्त होगा और अपनी इच्छा और शक्ति के अनुसार वे संसार में अपना स्थान प्राप्त कर सकेंगे। युद्ध स्थगित हो गया है, सन्धि भी शीघ्र ही हो जायगी किन्तु इससे संसार को कोई लाभ होगा या नहीं यह विचारणीय बात है। इतने धन और जन के नष्ट होने का मूल्य

स्थायी शान्ति,

संसार से युद्ध का नामोनिशान उठा देना है और जब तक यह नहीं होता हम इस युद्ध को व्यर्थ ही का समझेंगे। साथ ही जिन लोगों ने अपना मुण्ड आहुति में डाला है, जिन लोगों ने रक्त बहाया है और संसार के बड़े बड़े कष्टों को सुख से सहन किया है वे और उनकी सन्तान इस बात की गैरेन्टी चाहते हैं कि भविष्य में फ़िर कभी उनसे यह काम न लिया जायगा। संसार के राजनीतिज्ञों के सामने यह कठिन समस्या उपस्थित है। गरीब कह रहे हैं कि राष्ट्रों की कूटनीति की सफलता के लिए, या महा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजाओं और श्रीमानों की श्री वृद्धि के लिए हम अपना खून न बहायेंगे। वे कह रहे हैं कि पेट की ज्वाला बुझाने को सेना में हम नौकरी करते थे, अपनी गरीबी के कारण अपने भाइयों की हम हत्या करते थे, पेट के कारण हम अपने दयालु पिता के पुत्रों का—अपने भाइयों का—हनन करते थे। भविष्य में हम न ऐसा करेंगे और न किसी को करने देंगे। ऐसा करना असंभव हो जाय इसलिए वे चाहते हैं कि

संसार से गरीबी

उठ जाय, कोई इतना अमीर न हो कि अपने अमीरी के बोझ से वह किसी को अपनी इच्छा के अनुसार चलने पर विवश कर सके, साथ ही कोई ऐसा शक्तिशाली न हो कि केवल पाशविक शक्ति से वह किसी को दबा सके। वे कहते हैं कि भूमि सरकार की अर्थात प्रजा समुदाय की होनी चाहिये, अर्थात कोई ज़मींदार न हो, गरीब से गरीब मनुष्य के रहने के लिए भी गृह स्वच्छ, सुथरा, हवादार और वाटिका-युक्त होना चाहिये। बीमारी तथा बुढ़ापे के लिए सरकार की ओर से प्रबन्ध होना चाहिये। स्त्रियाँ कह रही हैं कि युद्ध के कारण हमको अपने पतियों पुत्रों का नाश देखना पड़ता है। हमारी गृहस्थी सत्यानाश हो जाती है। जिसके कारण हमारा सर्वस्व बिगड़ जाता है उसके छेड़ने में हमारा हाथ होना चाहिये, उसका छेड़ना उचित है या अनुचित इसमें हमारी राय होनी चाहिये। श्रमजीवी समुदाय, मज़दूर दल कह रहा है कि हमारे ही माथे सब समृद्धिशाली हो रहे हैं, हम

सभ्यता के मेरुदंड

हैं, सब से पहिले हमारी भलाई होनी चाहिये। हमने कोई पाप नहीं किया कि हम दूसरों के लिए कोयला, लकड़ी या पानी ढोयें। हम गरीब के घर पैदा हुए, दूसरा अमीर के घर इसमें हमारा हाथ न था और जिसमें हमारा हाथ नहीं, जिसका उत्तरदायित्व हमारे माथे नहीं उसकी सत्यता या स्थिरता स्वीकार करने को हम तैयार नहीं। न हम जिन्दाहखाते किसी को अमीर होने देंगे और न हम स्वयम् गरीब रहेंगे। हमारे बाल बच्चे भूखे नहीं मरेंगे, उनकी शिक्षा का उनके स्वास्थ्य का, उनके खेलने का, पहिनने का और बुद्धि का वही प्रबन्ध होना चाहिये जो संसार में या समाज में श्रेष्ठ से श्रेष्ठ पुरुष के बच्चे के लिए होता है। समता की बयार यहाँ तक ऊँचे उठ गई है कि लोग कह रहे हैं कि

हम राजा को नहीं चाहते।

उनका कहना है कि राजाओं के कारण ही युद्ध होता है। स्थायी-शान्ति के लिए यह आवश्यक है कि राजाओं की संख्या कम हो। रूस, जर्मनी, बलगेरिया, आस्ट्रिया आदि देशों में यही हवा बह रही है। समस्त यूरोप में भय है कि यह विचार-क्रान्ति ज़ोर पकड़ेगी। संसार के समस्त राजनीतिज्ञों के सामने यही समस्या मुंह बाये खड़ी है। स्थायी-शान्ति का मसला किस प्रकार हल किया जाय इसी विचार सागर में लोग डूबे हुए हैं। जब तक यह समस्या हल न हो जाय युद्ध से छुटकारा न समझना चाहिये।

❀

स्थायी शान्ति

संसार में तभी स्थापित हो सकती है जब संसार की जातियों और राष्ट्रों के हृदय में बलदर्पी, दूसरों पर रंग जमाने और शासन करने की इच्छा न रह जाय। जब संसार में समता ही न स्थापित हो जाय वरन् सब जातियों और राष्ट्रों को अपने विकाश के लिए समान अवकाश और अवसर भी प्राप्त हों। नायक, अधिनायक, ट्रस्टी, वली आदि के सिद्धान्तों का अन्त हो। राष्ट्र-संघ आदि की चर्चा व्यर्थ है जब तक मानव जाति की भलाई को राष्ट्रों और समाजों की भलाई की अपेक्षा ऊँचा स्थान नहीं दिया जाता। प्रत्येक भीषण युद्ध के बाद में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र-संघ की चर्चा सुनाई दी है किन्तु इससे कभी कुछ हुआ नहीं। हम आशा करते हैं कि इस बार संसार के राजनीतिज्ञ अधिक चतुरता प्रदर्शित करेंगे नहीं तो हम तो

भीषण महायुद्ध

को स्थगित हुआ ही समझते हैं। यह संभव है कि दलबन्दी किसी दूसरे प्रकार की हो जाय, लड़नेवालों में फेरफार हो जाय और उसके साथ ही साथ दो चार दस वर्षों में भीषण युद्ध फिर आरंभ हो जाय।

❀

युद्ध-ज्वर और सरकारी दौरा।

आज तीस वर्ष से कांग्रेस इस बात के लिए आन्दोलन कर रही है कि न्याय और शासनविभाग अलग किये जायँ किन्तु वह नहीं हुआ। डिप्टियों के दौरा के कारण मुकदमेवालों को कितना कष्ट सहना पड़ता है यह किसी से छिपा नहीं। इस समय युद्ध-ज्वर का प्रकोप है, दौरे में मुकदमें लड़नेवालों को एक मुकाम से दूसरे मुकाम पर दौड़ना पड़ता है, रात्रि में पेड़ों के नीचे सोना पड़ता है, खाने, पने, ओढ़ने आदि का कोई समुचित प्रबन्ध नहीं रहता। आजकल के दिनों में जब कि निमोनिया और युद्ध-ज्वर का प्रकोप है यह दौरा बहुतों के जीवन का ग्राहक हो सकता है। हम सरकार का ध्यान इस नई विपत्ति की ओर आकृष्ट करते हैं और आशा करते हैं कि इस समय में वह अपने अफसरों से प्रार्थना करेगी कि वे इस शीतकाल में दौरा न करेंगे।

❀

राजतंत्र-नाशक-सप्ताह।

विगत सप्ताह को यदि "राजतंत्र नाशक" की उपाधि दी जाय तो कदाचित अनुचित न होगा। मालूम होता है यूरोप में एक भीषण भूचाल आगया है जिसका उद्देश्य केवल महाराजाओं को सिंहासनविहीन करना है। अब तक मैं भूचाल का दौरा इस प्रकार रहा है:—

शुक्रवार—नवं० १—बलगेरिया के राजा सिंहासन त्याग करते हैं।
नव० ८—बवेरिया के राजा सिंहासन से उतारे जाते हैं।

शनिवार—नव० ६—कैसर सिंहासन का त्याग करते हैं।
ब्रन्सविक के ड्यूक सिंहासन का त्याग करते हैं।

सोमवार—नवं० ११—सेक्सोनी में राजा सिंहासन से उतारे जाते हैं।
ओल्डनबर्ग के ड्यूक उतारे जाते हैं।
मेलकनबर्ग के ड्यूक उतारे जाते हैं।
हेसी के ड्यूक उतारे जाते हैं।
प्रिन्स हेनरी रूस सिंहासन का त्याग करते हैं।

मंगलवार—नव० १२—कैसर कार्ल सिंहासन त्याग करते हैं।

शनिवार—नवं० १६—सेक्सकोबर्ग के ड्यूक सिंहासन त्याग करते हैं।
मेलकनबर्ग सचेरिन के ग्रैंड ड्यूक सिंहासन त्याग करते हैं।

रविवार—नवं० १७—सेक्सी मिनीनगन के ड्यूक सिंहासन त्याग करते हैं।
स्कमबर्गलिपी के ड्यूक सिंहासन त्याग करते हैं।

सम्भव है तिथियाँ बिलकुल ऐसी ही न हों, किन्तु क्रम कुछ ऐसा ही रहा है। हालैण्ड, बेलजियम, स्वीडन और नारवे के भी सिंहासन हिलते नज़र आरहे हैं। दिन दिन राजाओं के प्रति अश्रद्धा यूरोप में विकराल रूपधारण करती जारही है। यूरोप melting pot घरिया में है देखें भविष्य में यह कौनसा नूतन रूप धारण करता है।

अभ्युदय प्रेस, प्रयाग में बद्रीप्रसाद पाण्डेय के प्रबन्ध से छपकर प्रकाशित हुआ।
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२००) रुपये दूंगा

बिना औषध के जन्मभर को रोग दूर।

स्वप्नदोष और शीघ्रपतन बड़े भयङ्कर रोग हैं। स्वप्नदोष नौजवानों के शरीर और दिमाग़ को मिट्टी कर देता है, याददाश्त का तो यह दुश्मन है। शीघ्रपतन गृहस्थों का घातक है समय पर लज्जित होने से लोग मर जाना अच्छा समझते हैं, सन्तान भी नहीं होती। मुझे एक ऐसी क्रिया-विधि प्राप्त हुई है जिससे ये दोनों रोग जन्मभर के लिए जाते रहते हैं। यह कोई दवाई नहीं केवल एक साधन है इस पर भी यदि प्रयोग करने पर रोग दूर न हो तो २००) रु० दंड दूंगा जोकि आप अदालत द्वारा मुझसे वसूल कर सकते हैं। इसके बताने की फ़ीस राजाओं से १००) धनवानों से ५) सर्वसाधारण व विद्यार्थियों से २) रु०। डाक मह० ।) आना।

नोट—उक्त क्रिया पत्रद्वारा लिखकर बताई जायगी, साथ ही एक बूटी भी भेजी जायगी जिसका सेवन एक सप्ताह तक आवश्यक है।

प्रकाशक—

चन्द्रशेखर शर्मा धर्मोपदेशक,

(नं० २) पो० जलाली ज़ि० अलीगढ़।

उदरामृत।

अगर आपको भूख कम लगती हो अथवा मन्दाग्नि, अजीर्ण, पेट दर्द, जी मचलाना, खट्टी या जली हुई डकारों का आना, बवासीर, तिल्ली, हैजा, आदि पेट का कोई भी रोग हो तो हमारा जगत् प्रसिद्ध स्वादिष्ट उदरामृत चूर्ण व्यवहार कीजिये; तत्काल गुण दिखाता है। मूल्य फी शीशी ॥=) दर्जन ५॥।) डा० म० दो तक ।-) १२ पर ॥-)।

पता--ब्राह्मी औषधालय

(डी ब्रांच) पो० जलाली, जिला अलीगढ़।

महात्माओं के चित्र।

हमने बड़े प्रयत्न से भारत के मान० नेताओं देशभक्त महिलाओं तथा चिरस्मरणीय महानुभावों के चित्र तैयार किये हैं। लीजिये, इन आदर्श महात्माओं के चित्रों से घरों को पावन और सुशोभित कर नेत्रों को सफल कीजिये।

चित्रों की सूची निम्नलिखित है :—

देशोद्धारक स्वर्गीय मि० गोखले।
मान० पं० मदनमोहन मालवीय।
भारत के वयोवृद्ध ऋषि दादाभाई नौरोजी।
सर फ़ीरोजशाह मेहता।
लोकमान्य मि० तिलक।
देश के सच्चे सपूत महात्मा गांधी सपत्नीक।
श्रीमती एनी बीसेन्ट।
प्रसिद्ध विदुषी श्रीमती सरोजनी नायडू।
महात्मा गांधी के प्रिय शिष्य भारत के शुभ-चिन्तक मिस्टर पोलक।
साहित्य-सम्राट् श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुर।
स्वर्गीय महादेव गोविन्द रानाडे।
विद्यानुरागी स्वर्गीय सर सैयद अहमद खां।
मान० विशुननारायण दर।
मान० गोकर्णनाथ मिश्र।
श्रीमान् बाबू गङ्गाप्रसाद वर्मा।

मि० अरंडेल।	मि० वाडिया।
श्री० डा० सतीशचन्द्र।	सर सुब्रह्मण्य ऐयर।
श्रीकृष्णस्वामी ऐयर।	मि० बोमन जी।
लाला लाजपत राय	सुरेन्द्रनाथ बनर्जी।

इन सब चित्रों का इनलार्जमेंट १०×१२ माउन्टेड १४×१८ दाम प्रत्येक का १०)।

केबिनट साइज़ के प्रत्येक चित्र का दाम ॥।) मर्यादा के ग्राहकों से डाकखर्च और पैकिंग माफ़। औरों से नहीं।

पता—पी० एन० वर्मा एन्ड कंपनी,

मेडेलिस्ट फोटोग्राफर्स, जानसेनगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

SKB

रजिस्ट्री किया ट्रेडमार्क

कलकत्ते के नामी।

डाक्टर एस, के, बर्म्मन की

३२ वर्ष की प्रसिद्ध

गुणकारी पेटेंट दवाएं।

चर्म रोग की दवा।

सब तरह के चमड़े के रोग—जैसे खाज, खुजली, छाजन, अपरस आदिक इनसे मिट जाते हैं। कोढ़ से बिगड़े हुये चमड़े में भी यह अच्छा गुण देखाती है, चमड़े के रोगों से प्रायः शरीर के खून में भी दोष आजाता है। इस हालत में केवल तेल के लगाने से पूरा फायदा नहीं मिलता। इस लिए साथ तेल लगाने के खून साफ करने की दवा आईओडाईजड सालसा भी पीना चाहिये।

मोल—॥) आठ आने शीशी। डा० म० १ से २ शीशी तक ।-) पांच आने।

कान बहने की दवा।

कान बहना याने कान पक कर कान के भीतर से पीब बहना नया अथवा पुराने के लिए यह दवा विशेष उपकारी है। इसके चिकित्सा में कान को भीतर से धोकर उसमें दवा डालनी पड़ती है, इस लिए पिचकारी की भी दरकार रहती है।

मोल ।) आने शीशी पिचकारी कांच की ।) आने पै० व डा० म० ।-) आने २ शीशी तक ।=) आने

दांत दर्द की दवा।

लगाते ही दर्द मिटाती है। रोने से हंसाती है। एक महीन व मजबूत तिनका व सींक पर जरा रुई लपेट कर इस दवा में डुबा के ठीक दर्द की जगह लगाना। दांत की सन्धि में दर्द होवे तो जरासा रूई इस दवा में डुबा के सींक की नोक पर रखकर उसमें भर देना, झट दर्द बन्द हो जायगा। सावधान! घबड़ा के व्यर्थ जहां तहां होठ व मसूड़ों में न लगाना क्योंकि यह तेज दवा है।

मोल ।) चार आने शीशी। डा० म० १ सें ४ शीशी तक ।-) पांच आने ८ शीशी ।=) छः आने।

डा० एस० के० बर्म्मन ५, ६ ताराचंद दत्त स्ट्रीट कलकत्ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपूर्व ग्रंथ | नयी चीज़

बिहारी की सतसई

पद्मसिंह शर्मा कृत

सतसई संजीवन भाष्य

छप रहा है ॥

पुस्तक कई भाग में होगी। पहला भाग विजयदशमी तक प्रकाशित हो जायगा। इसमें सतसई के महत्व पर कई विस्तृत और गवेषणापूर्ण निबंध है। जिनमें सतसई का उद्भव, सतसई के आदर्श ग्रंथ, अर्थापहरण विचार प्रकृत, संस्कृत, उर्दू और हिन्दी कवियों की कविता से सतसई की मनोरंजक समालोचनात्मक तुलना, बिहारी का विरह वर्णन, बिहारी की भाषा, बिहारी का व्यापक पांडित्य, सतसई की मनोहर सूक्तियों के नमूने आदि चमत्कृत प्रबंधों के साथ सुप्रसिद्ध "सतसई संहार" भी सम्मिलित है। सुन्दर टाइपों में डबल क्रौन १६ पेजी आन्टिक कागज़ पर कोई ३५० पृष्ठ की पुस्तक छप रही है। पहले से ग्राहकों में नाम लिखाने वालों को डाक व्यय न देना पड़ेगा। शीघ्र नाम लिखवाइये। पता साफ साफ लिखिये।

स्वराज्य का मसविदा

सरकार की आज्ञा मिल गई।

भारतीय शासन प्रबन्ध सम्बन्धी सुधारों का आवेदनपत्र।

प्रथम खण्ड के प्रकाशन की निशेषाज्ञा उठ गयी। अब लोग इस पुस्तक को मंगाकर इस से लाभ उठा सकते हैं। इस खंड का मूल्य ॥।=) है। दूसरा खंड भी शीघ्र ही तैयार होगा। उस के लिए ग्राहक रजिस्टर खुला है। इस खंड में वर्तमान राजनीतिक स्थिति तथा उसके कारणों की सरकारी आलोचना है जो बड़ी ही मनोरञ्जक और शिक्षाप्रद है। तीसरा खंड तैयार हो रहा है जिसमें इस सरकारी मसविदे की आलोचना छपेगी जो कांग्रेस, लीग, देश के अग्रगण्य नेता, तथा मुख्य मुख्य संस्थाओं और हमारे विदेशीय हित चिन्तकों ने की हैं।

शिवप्रसाद गुप्त।

संचालक ज्ञानमंडल काशी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रीय संख्या ।

जनवरी में प्रकाशित होगी । यह नई विशेष संख्या होगी। संख्या कैसी होगी इस संबन्ध में हमको इतनाही कहना है कि मर्यादा की विशेष संख्याएँ जैसी निकल चुकी हैं उन्हीं के समान यह भी होगी । मि० बेसेन्ट, ला० लाजपतराय, मि० सी० पी० रामस्वामी ऐयर, मि० कामठ, मिसेज़ सरोजनी नायडू, मि० तैलङ्ग, मि० केलकर आदि देश के नर-रत्नों के लेखों से संख्या सुशोभित होगी । ग्राहक बनिये तथा जो ग्राहक नहीं हैं उनसे ग्राहकों की श्रेणी में नाम लिखवाने का अनुरोध करिये ।

मैनेजर "मर्यादा", प्रयाग ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाग १६] दिसम्बर १९१८ [संख्या ६.

वार्षिक मूल्य ३)] अभ्युदय प्रेस, प्रयागसे प्रकाशित । [एक संख्याका ।/)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मर्यादा' की नियमावली।

'मर्यादा' का अग्रिम वार्षिक मूल्य डाक महसूल सहित ३॥) है। एक संख्या का मूल्य डाक महसूल सहित ॥) है। नमूने की संख्या का भी यही मूल्य है। जनवरी मास से दिसम्बर तक वर्षगणना होती है और जनवरी से एक वर्ष का मूल्य लिया जाता है। वर्ष के बीच में ग्राहक होनेवालों से भी जनवरी से मूल्य लिया जायगा किन्तु जो सज्जन चाहें वे जुलाई मास से भी ग्राहक हो सकते हैं।

लेख, प्रबन्धादि यदि स्वीकृत न होंगे तो लौटा दिये जायँगे किन्तु इसके लिए टिकट का आना आवश्यक है।

किसी लेख का प्रकाश करना या न करना सम्पादक की रुचि पर है। कोई लेख क्यों नहीं छापा गया इसका कोई कारण नहीं दिया जायगा।

पत्रोत्तर के लिए टिकट या जवाबी कार्ड आना चाहिये नहीं तो जवाब न दिया जायगा।

'मर्यादा' में विज्ञापन की छपाई।

कवर पेज पर	... १५)	प्रतिमास
१ पृष्ठ या २ कालम की छपाई	... १२)	"
आधा पृष्ठ या १ कालम "	... ७)	"
¼ या आधे कालम "	... ५)	"
⅛ या चौथाई कालम की "	... ४)	"

१—विज्ञापन के बिना देखे छापने की स्वीकृति नहीं दी जाती।

२—एक कालम या इससे अधिक विज्ञापन छपानेवाले को 'मर्यादा' बिना मूल्य भेजी जाती है। औरों को नहीं

३—विज्ञापन की छपाई पेशगी देनी होगी।

पत्रव्यवहार इस पते से करना चाहियेः—

मैनेजर 'मर्यादा', प्रयाग।

विषय-सूची।

विषय	पृष्ठ.
१—भारत-गीत (कविता)—पं० श्रीधर पाठक	२२९
२—"राजभक्ति" की विलायती परिभाषा—पं० माधवराव सप्रे बी० ए०	२३०—२३३
३—मेरी व्यापक शिक्षा—नररत्न बुकर टी० वाशिङ्गटन	२३३—२३९
४—शिक्षा-कथा—श्रीयुत शोभाराम धेनुसेवक	२४०
५—अगसुद्दैयान जातिवालों के रीति-रस्म—श्रीमती हेमन्त कुमारी देवी	२४१—२४४
६—नरोचित (कविता)—श्रीकान्त 'कुसुमाकर'	२४४
७—यूरोप के इतिहास पर एक दृष्टि—'राम'	२४५—२४८
८—स्वभाग्य-निर्णय का अधिकार—पं० कृष्णकान्त मालवीय	२४९—२५३
९—बड़ौदा राज्य में अनिवार्य शिक्षा—श्रीयुत सन्त निहालसिंह	२५३—२५६
१०—भारत-गीत (कविता)—पं० श्रीधर पाठक	२५६—२५७
११—स्थायी-शान्ति कब हो सकती है?—श्रीयुत वासुदेव शास्त्री	२५८—२६४
१२—सम्पादकीय टिप्पणियां	२६५—२६८

गांधी-ग्रन्थ-माला

के पैम्फलेटों को मँगाकर पढ़िये। बहुत लाभ होगाः—

सत्याग्रह—लिओ टाल्स्टाय	-)
समय नहीं है—कृष्णकान्त मालवीय	=)
साधन मौजूद नहीं—कृष्णकान्त मालवीय	=)
निष्क्रिय प्रतिरोध नहीं सत्याग्रह—महात्मा गांधी	=)

मैनेजर "मर्यादा" प्रयाग।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्षों की आजमूदा रजिस्टर्ड

पीयूषसिन्धु

कफ़, खाँसी, हैजा, दमा, पेचिस, पेटदर्द, संग्रहणी, बच्चों के हरे पीले दस्त, जाड़े का बुखार, कै होना, जी मिचलाना, नजला, जुकाम, आदि रोगों की स्वादिष्ट और सुगंधित दवा। दाम फी० शी० ॥) आ० डा० ख० अलग। १ दर्जन का दाम ४) रु० डा० ख० माफ।

दादकाकाल

दाद की शर्तिया दवा। बिना किसी जलन और तकलीफ के हर तरह के दाद को २४ घंटे में जड़ से खोनेवाली दवा दाम फी० शी० ।) आ० डा० ख० अलग। १ दर्जन १॥=) डा० ख० माफ।

सन् १९१९ का कैलेण्डर और नियम सोल एजेन्सी मुफ़्त मँगाकर पढ़िये।

पता:-सुन्दर श्रृंगार म० मथुरा।

नाटकों का महाराजा

सटीक ! **नाटक रामायण** ! सातो कांड

यह पुस्तक नाटक के रूप में रामायण की शिक्षा देने के लिये परमोपयोगी है। इसके अंदर गज़ल, ठुमरी, कव्वाली, छन्द, दादरा, कवित्त, लावनी, प्रभाती, होली, भजन आदि सब तरह के गान मय तर्ज के दिये गये हैं। इसके सिवाय, पात्रों के वेष, लीला का विधान तथा और सब वे बातें जो नाटक खेलनेवालों के लिये जानना ज़रूरी है इसमें लिख दी गई हैं। दाम १॥) रु० डा० ख० ।-) आना।

सुन्दर श्रृङ्गार कार्यालय मथुरा।

आवश्यकता।

हमारे श्रीमान् राजा साहब ब० के लघु भ्राता श्रीमान लालटीकमदासजी के विवाह के लिये एक उच्चकुल सम्भूता एवं सुशिक्षिता कन्या की आवश्यकता है। जिसकी अवस्था ११ से १५ वर्ष की हो। हमारे श्रीमान राजा सा० ब० निम्बार्क सम्प्रदाय के वैष्णव हैं। कन्या का पिता चतुःसम्प्रदाय वैष्णव अर्थात नीमानन्दी, रामानंदी, हरिव्यासी, (वैरागी) व विष्णुस्वामी में से किसी भी सम्प्रदाय का प्रतिष्ठित सद्गृहस्थ हो तथा उसकी आर्थिक स्थिति भी उच्चश्रेणी की हो। यदि कोई सज्जन मध्यप्रदेश तथा धारकपुर को छोड़कर अन्य किसी भी प्रान्त-निवासी ऐसे प्रतिष्ठित श्रीमान का पता विश्वस्त रूप से लिखकर भेजेंगे उन्हें १००) रु० पुरस्कार-स्वरूप प्रदान किया जावेगा। जिस कन्या के साथ विवाह स्थिर हो जावेगा उसके सम्बन्ध में जिस महाशय का पत्र सब से प्रथम मिला रहेगा उसीको यह पुरस्कार मिलेगा।

श्रीमान राजा साहब बहादुर की ओर से

दाऊ बृजेन्द्रदास प्राइवेट सेक्रेटरी

छुईखदान।

ग्राहकों को सूचना।

१-पत्र-व्यवहार में अपना ग्राहक नं० अवश्य लिखना चाहिये अन्यथा उत्तर देने में अथवा किसी कार्य में विलम्ब होने का कार्यालय उत्तरदाता नहीं।

२-वी० पी० के स्थान में मनीआर्डर भेजकर पत्र मँगाने में अति सुविधा है-क्योंकि वी० पी० का रुपया प्राप्त होने पर नाम ग्राहक श्रेणी में लिखा जाता है। इस प्रकार वी० पी० भेजने के उपरान्त दो एक अंक निकल जाते हैं तब वी० पी० का रुपया प्राप्त होता है।

३-वी० पी० से पत्र मंगानेवालों को एक दो सप्ताह संतोष रखना चाहिये। पत्र-व्यवहार करना व्यर्थ होगा।

मैनेजर मर्यादा, प्रयाग।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मर्यादा।

मासिक पत्रिका।

भाग १६] दिसम्बर सन् १९१८। [संख्या ६

भारत गीत।

शुरू भी हुआ न तेरा काम
मनसूबा करते दिन डूबा, हुई सुबह से शाम १

आठों जाम सोच करने से सूख गया तेरा चाम,
फिर भी रहा सोच ही करता सोच का यही मुक़ाम २

शुरू शुरू में शोर मचाया सोचा नहिं अंजाम,
समझ गये तेरी समझ है कैसी सभी ख़ास और आम ३

शुरू भी हुआ न तेरा काम

श्रीपद्मकोट,
प्रयाग, १३-११-१८

—श्रीधर पाठक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"राजभक्ति" की विलायती परिभाषा ।

[लेखक—पंडित माधवराव सप्रे बी० ए० ।]

यह तो जानी हुई बात है कि विलायत में भारतवर्ष यथेष्ट सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता, और न वहां वाले भारतवासियों की सच्ची अवस्था को जानने की परवा ही करते हैं। या तो उन्हें यह काम अनावश्यक, अथवा महत्वरहित ज्ञात होता होगा, या संभव है कि उन्हें इसके लिए अवकाश ही न मिलता हो। फलतः भारतवर्ष की रीति-नीति, धर्म-कर्म, व्यवहार, सामाजिक और राजनैतिक अवस्था, योग्यता, गुण-दोष आदि बातों के सम्बन्ध में विलायती पुरुषों में घोर अंधकारपूर्ण अज्ञान पाया जाता है। साथ ही सब से अधिक दुःख की बात यह है कि वहां अनेक स्वार्थी और दुरभिमानी लोग भारतवर्ष के सम्बन्ध में बहुत सी मिथ्या कल्पनाएँ और दूषित विचार फैलाये रहते हैं। भारतवर्ष के विषय में सच्चा ज्ञान उत्पन्न कराने के लिए जो पुस्तकें प्रकाशित होती हैं उनमें असत्य और अज्ञानपूर्ण बातों को देखकर और भी अधिक खेद और आश्चर्य होता है, और साथ ही हँसी भी खूब आती है! हम आज इस लेख में पाठकों को एक ऐसी ही विचित्र पुस्तक का उदाहरण देंगे।

कुछ समय पहिले विलायत में "आक्सफ़र्ड सर्वे आफ़ दी ब्रिटिश इम्पायर" नाम का एक बृहत् ग्रंथ प्रकाशित हुआ है। इसके छः भाग हैं, और सम्पूर्ण भागों का मूल्य प्रायः ७०) रुपये के लगभग है। आक्सफ़र्ड का सुविख्यात "क्लैरन्डन प्रेस" इसका प्रकाशक है। छपाई-सफ़ाई के विषय में कुछ कहना ही नहीं। ग्रंथ में ब्रिटिश साम्राज्य के अधीन देशों और उपनिवेशों का वैज्ञानिक ढंग से विस्तृत वर्णन किया गया है। सारांश यह कि यह ग्रन्थ अपने विषय में आदर्श समझा जाता है, और इसलिए विलायत के सुशिक्षित अंग्रेज़ इसे पुस्तकालयों में ढूंढ़ ढूंढ़ कर आगामी पचीसों वर्षों तक पढ़ा करेंगे।

इस ग्रंथ का एक भाग भारतवर्ष से सम्बंध रखता है। उसके चमड़े की जिल्दवाले संस्करण का मूल्य १४) रुपया है। जल-वायु की विद्या, वनस्पतिशास्त्र, स्थूल भौगोलिक वर्णन, खनिज व्यापार आदि बातों का वर्णन सन्तोषदायक है, और नक़्शे भी बहुत अच्छे दिये गये हैं। यहां तक सभी बातें वैज्ञानिक हैं। इससे हमें वही पुरानी बात ज्ञात होती है कि बाहरी बातों का ठीक ठीक पता लगा लेना बहुत सहज काम है। परन्तु भीतरी बातों के सम्बन्ध में—विशेषतः सुशिक्षित भारतवासियों के सम्बन्ध में—जो बातें दी गई हैं उनसे विदित होता है कि लेखक भारतवर्ष के सम्बन्ध में अज्ञान है, और इस दृष्टि से ग्रन्थ को वैज्ञानिक कहना विज्ञान का गला घोंटना है। इस भाग में एक अध्याय "पश्चिमी प्रभाव" पर है, और यह सर रिचर्ड सी० टेम्पल, बैरोनेट, सी० आई० ई० (इंडियन आर्मी रिटायर्ड) के करकमलों द्वारा लिखा गया है। इस अध्याय की अनेक भूलों का वर्णन न करके हम केवल एक ही अंश का वर्णन करेंगे। इस अंश का शीर्षक

"राजभक्ति और राजद्रोह"

है। आरम्भ में भारतवासियों के वर्तमान शिक्षितसमुदाय को सर रिचर्ड सी० टेम्पल ने दो भागों में विभक्त किया है—एक राजभक्त और दूसरा राजद्रोही। [आगे चलकर आपने प्रार्थना-समाज का विलक्षण अनुवाद Enquiry Society किया है। सब से अधिक तमाशे की बात आपने यह कही है कि सरकार की सलाह से चलनेवाले स्कूलों और कालेजों में "व्यावहारिक दृष्टि से मुक्त" शिक्षा दी जाती है।] शिक्षित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतवासियों के दो विभाग करके कुछ प्रस्ताविक वर्णन के अनन्तर अन्त में यह अपूर्व फ़ैसला आपने लिखा है :—

"साधारण शब्दों में कहा जा सकता है कि जिस तरह यह राष्ट्रीय आन्दोलन आधुनिक भारतवर्ष के राजभक्ति पूर्ण सामाजिक विकास का सूचक है उसी तरह नेशनल कांग्रेस को राजद्रोह का सूचक समझना चाहिये। भारतवर्ष में अंग्रेज़ों के द्वारा प्रचलित की गई शिक्षा-पद्धति से इन दो महान् शक्तियों का जन्म हुआ है। इनमें से पहिली (अर्थात् राष्ट्रीय आन्दोलन) अपनी जन्मदात्री सरकार के प्रति पूर्ण निष्ठा रखती है, और स्वभावतः स्थिर है, और दूसरी शक्ति (अर्थात् नेशनल कांग्रेस) का मुख्य तत्व चंचलता और राजद्रोह है।"

इतने थोड़े शब्दों में भारतवर्ष की सच्ची अवस्था के सम्बन्ध में अधिक अज्ञान की प्राप्ति अन्यत्र असम्भव है। फिर तुर्रा यह कि पुस्तक आक्सफ़र्ड यूनिवर्सिटी की देखभाल में छपी है। पाठकगण कदाचित् अभी तक यह न समझ सके होंगे कि लेखक महाशय ने राष्ट्रीय आन्दोलन को भारतवर्ष के समाज-सुधार के आन्दोलन से मिलाकर एक अजीब लखनवी खिचड़ी बना दी है। इससे सिद्ध है कि लेखक को शिक्षित भारतवासियों और विशेषतः नेशनल कांग्रेस के सम्बन्ध में उतना ही ज्ञान है जितना कि उस मनुष्य को होना चाहिये जो सूर्य के पश्चिम में उदय होने का हठ करता है। हां, हम इस बात को सच मान सकते हैं कि हमारे भाग्य-विधाता अंग्रेज़ लोगों को भारतीय राजनीति का अमिश्रित ज्ञान प्राप्त करने के लिए अवकाश बहुत कम रहता है। ऊपर दिये हुए अवतरण में "राष्ट्रीय आन्दोलन" और "नेशनल कांग्रेस" इन शब्दों को भिन्न भिन्न भावों का सूचक मानकर सर रिचार्ड ने अपने भारतवर्ष-सम्बन्धी ज्ञान को बिलकुल उथला सिद्ध कर दिया है।

आगे चलकर सर रिचर्ड सी० टेम्पल, बैरोनेट, सी० आई० ई०, ने वर्तमान भारतवर्ष की राजभक्ति और राजद्रोह की साधक बाधक शक्तियों का अन्वेषण करके लिख डाला है कि अशान्ति रोकने के लिए सहायक शक्ति आजकल के देशी नरेश हैं। आपने देशी नरेशों का जो वर्णन किया है, उसका नमूना देखे बिना कदाचित् हमारे प्रेमी पाठक संतुष्ट न हों। आपने लिखा है :—

"वर्तमान देशी नरेशों की महत्ता ब्रिटिश राज्य के कारण है, और वे राजनैतिक दृष्टि से सरकार पर अवलम्बित हैं। वर्तमान समय में राज्य करनेवाले देशी नरेश अंग्रेज़ी शिक्षा-पद्धति से सुशिक्षित हैं। अंग्रेज़ी पद्धति से भरण पोषण होने के कारण वे यथार्थ में पूरे अंग्रेज़ गृहस्थ के समान हैं। राजभक्त होना और अशान्ति का दमन करना उनके राजनैतिक हित की बात है।"

सर रिचर्ड की इन पंक्तियों से यही ज्ञात होता है कि देशी नरेशों की गणना "राजभक्तों" में की जा सकती है, क्योंकि उन्होंने वह शिक्षा पाई है जिसने उन्हें अपने ही देश में विदेशी बना दिया है। वे "यथार्थ में अंग्रेज़ गृहस्थ" के समान हैं, उनका भरण-पोषण "अंग्रेज़ी पद्धति" से होता है और उनका सभी राजनैतिक हित विलायत में केन्द्रस्थ रहता है। उन लोगों में राजभक्ति तो सचमुच अपने हित और राष्ट्र-विमुखता की बात होती है।

सर रिचर्ड के कथनानुसार हमें यह ज्ञात नहीं है कि काश्मीर, जयपुर और उदयपुर के महाराजा कहां तक "अंग्रेज़ गृहस्थ" हैं। "राजभक्त भारतवासी" शब्द से सर रिचर्ड के मन में किस अर्थ का बोध होता है, उसका पता लगाना कठिन कार्य है। वे राजभक्त से कदाचित् "राष्ट्र-विमुख" का अर्थ लेते हों। जब हम उनके कथन पर अधिकाधिक ध्यान देते हैं तब स्पष्ट हो जाता है कि "राजभक्त"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शब्द से उनका आशय उस भारतवासी से है जो भारतवर्ष में विदेशी के समान रहता हो, और जो सदैव ऐसा ही रहने का प्रयत्न करे। सर रिचर्ड के कथनानुसार राष्ट्र-विमुख होना ही राजद्रोही न होने अथवा राजभक्त होने का पहिला लक्षण है!

पाठक! आइये, हम लोग सर रिचर्ड के साथ आगे बढ़ चलें फिर आप ही ज्ञात हो जायगा कि राजभक्ति क्या वस्तु है।

उनका कथन है कि भारतवर्ष में राजभक्तों में सब से पहिले पारसी सज्जनों की गणना होनी चाहिये, क्योंकि वे आज हज़ार वर्षों से भारतवर्ष में विदेशी की तरह रहे हैं, और "अब भी विदेशी की तरह" रहते हैं। अतएव (सर रिचर्ड कहते हैं) उनका राजद्रोह से बिलकुल सम्बन्ध नहीं है।

अब प्रश्न यह उठता है कि सर रिचर्ड के कथनानुसार पारसी लोग भारतवर्ष में सच-मुच क्या "अब भी विदेशी की तरह" रहते हैं। पारसी समाज के नेतागण इस बात को घृणा की दृष्टि से देखेंगे। यही नहीं, उन्हें यह देखकर अत्यन्त घृणा और क्रोध उत्पन्न होगा, जब कोई उन्हें नेशनल कांग्रेस का विरोधी कहेगा। सच बात तो यह है (जिसे सर रिचर्ड कदाचित् न जानते हों) कि पारसी समाज ने ही नेशनल कांग्रेस को अधिक पुष्ट किया है, और उन्हें इस बात का अभिमान है कि अपनी जाति-संख्या के परिमाण से उन्होंने कांग्रेस के लिए सब से अधिक संख्या में सभापति दिये हैं। क्या सर रिचर्ड ने श्रीयुत दादाभाई नौरोजी, सर फ़ीरोज़शाह मेहता और मिस्टर डी० ई० वाचा का नाम कभी न सुना था?

परन्तु हमारे आश्चर्यों का अन्त यहीं नहीं हो सकता। आगे चलकर सर रिचर्ड हमें बतलाते हैं कि राजद्रोह और अशान्ति के समय सरकार को विश्वसनीय रीति से सहायता देने-वाली अन्य दो "प्रधान" और "प्रभावशाली" शक्तियां हैं—वे आरमीनियन और यहूदी हैं। सर रिचर्ड ने यह कहीं नहीं बतलाया कि कांग्रेस के व्याख्यानों से उत्पन्न होनेवाले राज-द्रोह को रोकनेवाले इन आरमीनियनों और यहूदियों की संख्या ३३ करोड़ भारतवासियों के बीच कितनी है। कदाचित् हम लोगों के मन में यह भाव उत्पन्न हो जाय कि "दाल में हींग" के बराबर ये मुट्ठीभर यहूदी ३३ करोड़ भारतवासियों के राजद्रोह को क्या रोक सकेंगे? परन्तु सर रिचर्ड सी० टेम्पल बैरोनेट, सी० आई० ई०, ने इसका उत्तर पहिले ही से दे रक्खा है। वे कहते हैं कि "शक्ति और मानसिक योग्यता के कारण, संख्या में नगण्य होने पर भी, ये लोग बड़े गम्भीर महत्वपूर्ण हैं।" यदि कोई यह पूछना चाहे कि इस "गम्भीर महत्व" का जन्म कहां हुआ तो उत्तर स्पष्ट है कि:—(१) वे "विदेशी" हैं, और (२) उनमें "राजनैतिक पराधीनता" पाई जाती है। बस, यदि केवल ये दो लक्षण पाये जाते हों तो फिर

"राजभक्ति" का ठेका

अवश्य मिल सकता है!

परन्तु "राजभक्ति" की यह विलायती परि-भाषा अभी तक अधूरी ही रह गई है। उसमें एक और सद्गुण का समावेश किया गया है, क्योंकि यहूदियों के सम्बन्ध में सर रिचर्ड ने उनके "सीधे स्वभाव—Inoffensivee Conduct" पर ज़ोर देते हुए कहा है:—

"यद्यपि आधुनिक भारतवर्ष की उन्नति में हम यहूदियों को एक बड़ी प्रभावशालिनी शक्ति नहीं कह सकते, तथापि उनमें प्रचलित क़ानूनों को मानने और स्वभाव के सीधेपन की शक्ति पाई जाती है, क्योंकि यह ध्यान देने योग्य बात है कि इस जाति का कोई भी मनुष्य आज तक भारतवर्ष के कालेपानी की जगह—अंडमन निकोबार द्वीप—में कभी नहीं भेजा गया है।"

पाठक! राजभक्ति की विलायती परिभाषा पूरी हो गई। यदि आपको राजभक्ति का सार्टी-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ़िकेट लेना है तो सर रिचर्ड सी० टेम्पल, बैरोनेट, सी० आई० ई० (इन्डियन आर्मी रिटायर्ड) के द्वारा तैयार किये गये पाठ्यक्रम के अनुसार आपको चार कक्षाओं में परीक्षा देनी होगी। सब से पहिली बात:—"अपने ही देश में विदेशी की तरह" रहना चाहिये; दूसरी बात:—आपको पूरी पूरी "राजनैतिक पराधीनता" में रहना चाहिये; तीसरी बात:—सभी प्रसंगों में आपको निरुपद्रवी और "सीधे स्वभाव" वाला होना चाहिये; और चौथी बात:—अपनी ज़िन्दगी में आपको अंडमन निकोबार द्वीप के निकट कहीं भी कभी न जाना चाहिये

मेरी व्यापक शिक्षा।*

[लेखक—नररत्न बुकर टी० वाशिंगटन।]

पहला प्रकरण।

मनुष्यों और वस्तुओं की सम्मिलित शिक्षा।

दैवयोग से मेरे समस्त जीवन में एक विकट, किन्तु महत्व का, प्रश्न उत्पन्न हुआ है। आरम्भ में मैं इसे दुर्दैव समझता था, और, मैं कंगाल के घर में जन्मा हूं, यह सोचकर मुझे अपना जीवन सङ्कटमय प्रतीत होता था। इसपर भी मेरा जन्म नीग्रो कुल में हुआ है, यह देख मुझे और भी अधिक संकट प्रतीत होने लगा, तथापि यह मनःस्थिति मैं दूसरों पर प्रकट करते सकुचाता था। हां, अपने समक्ष स्वीकार करने के लिए यह अवश्य मेरी जिह्वा पर आ जाती थी। परन्तु जिस स्थिति में मनुष्य उत्पन्न हुआ हो उस पर संतोष न कर दूसरों के आगे बड़बड़ाना कायरता और दुर्बलता का चिह्न है, यह मुझे अवश्य ही ज्ञात था। बाद में मुझे पूर्ण विश्वास हो गया कि ऐसा मानना ही दुर्बलता और भीरुता नहीं है, किन्तु ऐसा विचार करना भी बड़ी भारी भूल है।

अमेरिका में जिस प्रकार नीग्रो लोगों को कतिपय असुविधाएँ हैं उसी प्रकार कई सुविधाएँ भी हैं, और जितना ही उनको दूसरों की ओर से प्रतिबन्ध होगा, उतना ही वे एक-निष्ठता एवम् अंतःसामर्थ्य से जना चाहें कर सकेंगे, यह मेरा निश्चित मत हो गया। शाला में सीखी हुई एक बात के कहने से मेरा मत स्पष्ट हो जायगा। मेरे शिक्षकों ने एक दिन विद्यार्थीवर्ग को समझाया कि बाष्प

---

* स्वर्गवासी डा० बुकर टी० वाशिंगटन का नाम संसार की विद्वन्मण्डली में भलीभांति प्रसिद्ध है। इसलिए 'मर्यादा' के विज्ञ पाठकों को उनसे परिचित कराने की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती।

डा० बुकर टी० वाशिंगटन की कई पुस्तकें अब तक प्रकाशित हो चुकी हैं, और संसार की भिन्न २ भाषाओं में उनका अनुवाद भी हो चुका है। संतोष की बात है कि हिन्दी में भी उनकी लिखी हुई 'Up from Slavery" नामक पुस्तक का अनुवाद हो चुका है। किन्तु यदि हम बुकर की समस्त पुस्तकों का अवलोकन करें तो प्रतीत होगा कि उनकी लिखी हुई पुस्तकों में से My Larger Education नामक पुस्तक का स्थान सर्वोच्च है। इसलिए मैंने उसके हिन्दी में अनुवाद करने का सङ्कल्प किया है। आशा है कि वह थोड़े दिनों पश्चात् प्रकाशित हो जायगा, किन्तु जब तक वह प्रकाशित होकर हिन्दी संसार के समक्ष प्रस्तुत हो तब तक मैं इसका कुछ अंश 'मर्यादा' के पाठकों के समक्ष उपस्थित करता हूं। अनुवादक—श्रीयुत द्वारकाप्रसाद शर्मा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा ऐसी ही किसी अन्य शक्ति को किसी एक स्थान पर न दाबने से उसका कुछ भी उपयोग न हो सकेगा। शक्ति को एक स्थान पर बन्द रखना चाहिये यदि वाष्प को बायलर में बन्द रक्खा जायगा तो उसमें चलने की शक्ति उत्पन्न होगी। नीग्रो लोगों के सम्बन्ध में भी यही बात लागू है। जैसे ही जातिभेद तथा द्वैतभाव से उनके मार्ग में विघ्न-बाधाएं आती जाती हैं वैसे ही उनमें वाष्प (कार्यशक्ति) एकत्र होती जाती है। इस प्रकार यदि उनमें वाष्प इकट्ठी होती जायगी तो उनमें उन्नति के मार्ग पर चलने की शक्ति का कैसा प्रादुर्भाव होगा, यह स्पष्ट था। किन्तु यदि उस शक्ति का अपव्यय हुआ तो उससे कुछ भी लाभ होने की सम्भावना नहीं।

स्वतंत्रता मिलने पर नीग्रो जाति के मार्ग में जो विघ्न पड़े, वे विघ्न ही मेरी समझ में उसके उत्कर्ष को उत्तेजनदायक होंगे। यह विधान आरम्भ में किंचित् चमत्कारक प्रतीत होगा, किन्तु वास्तव में यह सत्य है। उदाहरणार्थ अंग्रेज़ी भाषा के लिखने और पढ़ने में नीग्रो लोगों ने अर्द्ध शताब्दी में जो प्रवीणता प्राप्त की है उसका कारण केवल उनको उसका ज्ञान प्राप्त करने की मनाही ही थी। अनुभव और निरीक्षण से मुझे ज्ञात हुआ है कि जो मनुष्य जाति अथवा समाज को उन्नत करनेवाली बातों को दबा रखते हैं वे ही वास्तव में उन बातों के प्राप्त कराने में सब से अधिक सहायक होते हैं। अर्थात् उनका विरोध ही सहायक बन जाता है। मैं स्वानुभव से निश्चयपूर्वक कहता हूं कि अल्पावस्था में शिक्षासम्पादनार्थ और बड़े होने पर टस्कगी-संस्था को उन्नत करने के लिए मैंने जो अकाट्य परिश्रम किया था, वह केवल विघ्नों के कारण ही। नीग्रो सन्तान तुच्छ हैं, वे कुछ सीखने के नहीं, और एकाध शिक्षण-संस्था को उन्नत कर अच्छी रीति से चलाने का सामर्थ्य तो नीग्रो लोगों में बिलकुल ही नहीं, यह भ्रामक बुद्धि जो सर्वत्र फैल गई थी, उसीसे मुझे अथक प्रयत्न करने की प्रेरणा हुई, यह सत्य ही है।

संसार की भिन्न भिन्न जातियों में लोगों से जैसा जैसा मेरा परिचय होता गया, वैसे ही वैसे मुझे यह प्रतीत होने लगा कि नीग्रो लोगों की स्थिति अन्य जाति के लोगों की स्थिति से भिन्न नहीं है। यशस्वी पुरुषों के सामने बहुतेरी विघ्न-बाधाएं तथा विकट प्रश्न उपस्थित होते हैं। उन कठिन प्रश्नों को हल करने से उनके मानसिक सामर्थ्य और विशद बुद्धि को जो लाभ पहुंचता है, वह सुख से आयु व्यतीत करनेवाले लोगों को शायद ही पहुंच सकता है।

अनुभव से मुझे ज्ञात हुआ है कि जिस मनुष्य के समक्ष सदा कठिन प्रश्नों और प्रसंगों की समस्याएँ आती रहती हैं, उसकी हँसी उड़ाने का कोई कारण नहीं, वरन् जो व्यक्ति इन प्रश्नों का हल नहीं करता, वही उपहास के योग्य है। अपनी स्वाभाविक शक्ति का अनुशीलन कर उसका विकाश करना, अपने जीवन के रहस्य को जानकर उसका स्वामी बनना, इन बातों का उनको कुछ भी अवसर नहीं मिलता। अर्थात् मनुष्य के लिए सुख एक विशेष प्रकार से दुर्भाग्य है। इस ओर मेरे साथ एक विशिष्ट प्रश्न का संसर्ग होने के कारण मुझे बड़ा लाभ हुआ है, इसका प्रमाण मैं कई बार दे चुका हूं। उदाहरणार्थ, सांसारिक अनुभव प्राप्त करने—व्यापक शिक्षा सम्पादन करने—का मुझे विशेष अवसर मिला है।

इस प्रकार मैं यदि गुलामों के कुल में उत्पन्न न होता तो नितान्त अशिक्षित लोगों के साथ दिनों दिन अधिक सहवास करने और उनकी स्थिति का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने का मुझे अवसर न मिलता। मेरे पहले अनुभवों में सर्वश्रेष्ठ अनुभव यदि कहा जाय तो वह यही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था कि मुझे स्वजाति के लोगों से मिलकर उनके साथ बोलने का अवसर मिला, और मैंने उनसे कई अच्छी अच्छी बातें सीखीं। अब भी एकाध दिन यदि छुट्टी मिलती है तो मैं शहर अथवा रेलवे की ओर लम्बे लम्बे खेतों में जाता हूं, और कृषिकारों तथा उनके कुटुम्बियों के साथ सहवास करता हूं। ऐसा करने से मुझे जो सुख मिलता है वह और किसी भी बात से प्राप्त नहीं होता।

इसके अतिरिक्त यह भी मेरी समझ में आता है कि मैं यदि गुलामों के कुल में उत्पन्न न होता तो नैसर्गिक निरीक्षण तथा भूमि पर प्रेम करने और गाय बैल एवम् अन्य पशु-पक्षियों, वृक्षों, फलों, और कृमि-कीटों से प्रीति-व्यवहार रखने की मुझे बान न पड़ती।

घर से बाहर खुली वायु में रहना मुझे सदैव ही अति रुचिकर लगता है। इसका कारण यही है कि मैं सदा खुली वायु में रहा हूं। यही नहीं, किन्तु मैं बतक तथा मुर्गों के पालने को अत्यंत उत्सुक रहता हूं। बाल्यावस्था से ही मुझे प्राणिवर्ग से प्रेम है।

बालपन में, गुलाम होने के कारण, मुझे अपनी जननी के दर्शन प्रायः नहीं होते थे, क्योंकि उसे सवेरे उठकर अपने बालकों को छोड़ काम पर जाना होता था। अतएव मुझे सबेरे के भोजनों में कठिनाई होती थी। इस घटना ने प्रथम ही पशुओं के साथ मेरा परिचय करा दिया।

उस समय गायों और मुर्गों के खाने को मक्का भूंजकर डाला जाता था। कभी कभी सवेरे को, खाना न मिलने के कारण, मैं जहां मुर्गों और गायों को मक्का दिया जाता था वहां जाकर भूंजा हुआ मक्का खाया करता था। कभी कभी पका भूंजने के स्थान में जाकर पशुओं के आगे ही खा लेता था।

एक दो बार मैं पशुशाला में मक्का चुगाने के समय से देर में पहुंचा तो कांटों में अटके हुए कई दाने मुझे मिले। कुछ लोग कहेंगे कि अन्न प्राप्त करने का यह कोई प्रशस्त मार्ग नहीं, परन्तु मुझे यह बुरा नहीं लगता था। अच्छा भूंजा हुआ मक्का जिसने खाया है वही उसके स्वादु को जान सकता है। अब भी भूंजे हुए मक्के के दाने यदि मेरे सामने आते हैं तो थोड़े से दाने मुंह में डाले बिना मुझसे नहीं रहा जाता।

आज भी काम करने की जो शक्ति और पात्रता मेरे अंगों में है वह घर के बाहर खुली हुई वायु में रहने ही से। अब मुझे घूमने के लिए उतना समय नहीं मिलता। यदि सरसरी तौर से देखा जाय तो प्रति दिन एक घंटे से अधिक समय मुझे घूमने के लिए नहीं मिलता। किन्तु उससे भी मैं बहुत कुछ लाभ उठाता हूं। इसके अतिरिक्त उस घंटे में, मैं क्या क्या करूंगा इत्यादि विचारों से, मुझे अत्यन्त आनन्द प्राप्त होता है।

टस्कगी में, जब घर पर होता हूं तब, प्रातःकाल सवेरे उठकर गायों, मुर्गों, बतकों तथा अन्य पशुओं के देखने में घंटा आध घंटा व्यतीत करता हूं। आज कितने नवीन अंडे उत्पन्न हुए, यह मैं स्वयं देखता हूं। घर में रहते हुए मेरे अतिरिक्त इस काम को कोई नहीं करता। छोटे छोटे झाड़ों से फूटे हुए पत्तों के देखने से जितना आनन्द मुझे प्राप्त होता है उतना ही नवीन अंडों को हाथ में लेने से। आकांक्षा और तृप्ति दोनों मुझे अत्यन्त सुखकर प्रतीत होती हैं। आज मुझे कितने अंडे मिले, कितने बच्चे अंडे फोड़कर बाहर निकले, यह मैं प्रातःकाल ही देखा करता हूं। मुर्गों और बतकों की जाति पर मेरा सब से अधिक प्रेम है। यद्यपि संस्था ने अपनी ओर से बतकखाने में कई प्रकार की बतकें और मुर्गे पाले हैं, तथापि मैं अपने घर में उनसे कुछ विशिष्ट जाति के मुर्गे पालता हूं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुर्गा मेरा प्रिय प्राणी है । पाठकों को यह अच्छा लगेगा, यह मैं नहीं कहता । परन्तु यह सत्य है । मैं 'पर्कशायर' 'पोलैंड' और 'जायंशा' के मुर्गे पालता हूं । उनकी वृद्धि कैसे होती है, यह देखकर मुझे अतीव सुख प्राप्त होता है ।

पुस्तकों के द्वारा मुझे जितनी शिक्षा मिली, उससे अधिक वस्तुओं को प्रत्यक्ष देखने से प्राप्त हुई है । वस्तु को हाथ में लेकर उसका निरीक्षण करना मुझे अत्यन्त सुखदायक होता है । पत्तों की वृद्धि, पशुओं का चालढाल और स्वभाव को देखने से मुझे बड़ा आनन्द होता है । जैसे लुहार लोहे के टुकड़े का उपयोग करता है, वैसे ही वस्तुओं के उपयोग में मुझे सुख प्राप्त होता है । पृथ्वी भर के पदार्थमात्र का अनुभव कर लेना अत्यावश्यक और लाभदायक है । यह मैं स्वानुभव से कहता हूं ।

कुछ वर्ष पूर्व लिखे हुए "आत्मोद्धार" (Up from Slavery) नामक ग्रन्थ में मैंने पूर्वावस्था का वृत्तान्त लिखा है । अपूर्व प्रयत्न करके किस प्रकार मैंने शिक्षा प्राप्त की, 'टस्कगी नार्मल एेन्ड इन्डस्ट्रियल इन्स्टिट्यूट' नामक संस्था कैसे स्थापित की, इत्यादि बातों का उल्लेख मैं उस पुस्तक में कर चुका हूं । टस्कगी-संस्था स्थापित करने के समय तक मैं बहुत कम पढ़ लिख सका था । शिक्षा-पद्धति का मैंने बहुत थोड़ा परिचय प्राप्त कर पाया था । जनरल आर्मस्ट्रांग सरीखे उत्साही और स्फूर्तिदायक गुरु के सहवास से हैम्पटन-संस्था जैसी अद्वितीय शाला में शिक्षण-क्रम पूर्ण करने और तत्पश्चात् शिक्षक बनकर वहां पर रहने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ, तथापि जो पद्धति मैं वहां पर सिखाता था उसमें से तात्विक रचना, समझकर, निकालने का प्रयत्न मैंने कभी नहीं किया, और मैंने नवीन संस्था का निर्माण किया । जब आरम्भ में नई नई और विकट अड़चनें आने लगीं तब उस पद्धति का किस प्रकार उपयोग किया जाय, इसका भी मुझे अनुभव नहीं था । अर्थात् मुझे शिक्षण-शास्त्र का अब जो कुछ परिचय प्राप्त हुआ है वह सब टस्कगी-संस्था की योजना करने और वहां पर शिक्षण पद्धति को व्यवस्था और स्थिरता का स्वरूप देने के लिए प्रयत्न करने से प्राप्त हुआ है ।

टस्कगी-संस्था के कार्य में प्रति वर्ष मुझे बड़ी रक़मों की हुंडियां निकालनी पड़ती थीं, और हर तरह के लोग मुझे मिला करते थे । जब मैं उच्च विद्यापीठों के शिक्षा-प्राप्त तथा अध्ययन और प्रवास से लाभ उठाये हुए लोगों से मिलता था तब मेरी भूलें मुझे स्पष्ट दिखाई देती थीं । जिन बातों का मुझे अत्यंत संदिग्ध ज्ञान था, उन विषयों पर वे लोग जिस सुबोध रीति से बोल सकते थे, उसे मैंने ख़ूब समझा । वे लोग अपने भाषणों में कई ग्रन्थकारों की सम्मतियों का उल्लेख करते थे, परन्तु वे पुस्तकें मैंने कभी न पढ़ी थीं, और कुछ ग्रन्थकारों के तो नाम ही मैंने पहले कभी नहीं सुने थे । इससे मुझे अपने दोषों का अच्छा ज्ञान हुआ, और मैं इस विषय पर जितना ही अधिक विचार करता था उतना ही त्रस्त और खिन्न होता जाता था । इस कमी की पूर्ति करने के लिए मैंने बहुत प्रयत्न किया, किन्तु सुशिक्षित लोगों के किताबी ज्ञान से उसकी समानता न कर सकने का विचार जब मेरे हृदय में आता था तब मुझे बहुत बुरा लगता था ।

कुछ काल के अनन्तर मैंने समझ लिया कि यदि मैं सुशिक्षित लोगों से कई बातों में कम हूं तो कुछ बातों में उनसे श्रेष्ठ भी हूं । बाद में मेरी समझ में आया कि "अपने अनुभव से जीवन के थोड़े से रहस्य को जाननेवाला पुरुष केवल पुस्तकों के द्वारा सर्व ज्ञान प्राप्त किये हुए पुरुष से अधिक श्रेष्ठ है ।" किताबी ज्ञान का उपयोग कर अथवा ग्रन्थकार के वाक्यों को रटकर बताने की अपेक्षा मुझे स्वानुभव तथा निरीक्षण से उत्पन्न ज्ञान अथवा देखी हुई घटनाओं के दृष्टान्त देकर अपने मत को सुदृढ़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रखना अधिक अच्छा प्रतीत होने लगा। इसके अतिरिक्त सूक्ष्म विचारों की ओर मैंने इस प्रकार ध्यान दिया कि ग्रन्थकार जो स्वयं अनुभव करते हैं उसको ग्रन्थ में लिख देते हैं, अथवा जो कल्पना उन्हें प्रत्यक्ष व्यवहार में दिखाई पड़ती है उसीका वर्णन अपनी पुस्तकों में कर देते हैं, अर्थात् उनके वचनों तथा कल्पनाओं का उपयोग करना मानो दूसरों की आँखों से संसार का अवलोकन करना है।

इस विचार का परिणाम यह हुआ कि मुझे किताबी ज्ञान से घृणा होने लगी, और मनुष्यों तथा वस्तुओं से प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने का मैंने निश्चय किया। मैंने सोचा कि "जीवन में स्त्री-पुरुषों के व्यवहार का अभ्यस्त बनूंगा, और संसार में जो कुछ मेरे सामने है उसका निरीक्षण करूंगा।" अतएव अपने कामों से शिक्षा प्राप्त करने और मनुष्य के व्यवहार से जीवन को अभ्यस्त बनाने का मैंने संकल्प किया, और सोचा कि "मैं प्रत्येक मनुष्य से, जो कुछ उसके पास होगा, सीखूंगा, एवम् उसे अपनी पुस्तक समझकर प्रति दिन उसका अध्ययन करूंगा तथा उससे, जितना हो सके, लाभ उठाऊँगा।"। इस प्रकार मनुष्यों से सीखने का भरसक प्रयत्न मैंने आरम्भ किया। छोटे और बड़े, दुर्जन और सज्जन सब से मैंने शिक्षा ग्रहण की। जैसे जैसे मैं यह अभ्यास करने लगा वैसे ही वैसे मनुष्य जाति से मेरा प्रेम अधिक बढ़ता गया। इतना ही नहीं, किन्तु मेरा यह निश्चित सिद्धान्त हो गया कि "प्रत्येक प्रकार के मनुष्य से कुछ न कुछ सीखा जा सकता है।"

उदाहरणार्थ, कुछ वर्ष पूर्व, मुझे सभ्यता और औदार्य की जो शिक्षा मिली थी उसे मैं कभी न भूलूंगा। इस्कगी-संस्था के विषय में सहानुभूति उत्पन्न कराने के लिए मैं एक बड़े नागरिक श्रीमान् से मिलने गया। मैंने उनके आफ़िस में एक आदमी से भेंट की। वह एकदम मेरे साथ अपमानकारक बातें करने लगा, और उसने कुछ भी आर्थिक सहायता न दी। यही नहीं, किन्तु वह मेरी जाति के विषय में ऐसे शब्द कहने लगा जैसे किसी भी सभ्य मनुष्य को परजाति के विषय में कहने योग्य नहीं। कुछ मिनटों के पश्चात् एक दूसरे सभ्य से मेरी भेंट हुई। उसने सभ्यतापूर्वक मेरा स्वागत किया, मिलने से प्रसन्न हुआ, और मुझे समझाया कि "तुम्हें सहायता देने के योग्य मेरी परिस्थिति नहीं।"

दूसरे सभ्य से मिलने की अपेक्षा पहले सभ्य की भेंट में मेरा दूना समय चला गया। इससे मुझे अनुभव हुआ कि असभ्यता से बोलने में जितना समय जाता है उतना सभ्यता से बोलने में नहीं जाता।

संसार का अनुभव प्राप्त करते समय मैं पहले पहल गोरे लोगों से नहीं, किन्तु काले लोगों से ही कुछ बातें सीखा हूं। गोरे लोगों से कायरता और द्वेष से चलनेवाले काले लोगों विषय में मुझे सहानुभूति न समझ पड़ती थी। पीछे जब मैं काले लोगों का अभ्यास करने लगा तो प्रतीत हुआ कि संकुचित वृत्ति तथा द्वेष से उनको कुछ भी लाभ नहीं मिलता। इस रीति से चलना गोरे लोगों को बुरा भी लगता, और वे उसे छोड़ते भी नहीं। परन्तु मैं यह समझ गया कि उलटा गोरे लोगों के विषय में ऐसी वृत्ति हृदय में लाने से उसका प्रत्याघात काले लोगों पर होकर वह अधिक संकुचित और द्वेषपूर्ण बन जाती है। पीछे के प्रकरण में मैंने वृक्ष, पशु आदि भौतिक पदार्थों ही का नहीं, किन्तु मानवी संस्था, राजकारण, समाचारपत्र, शिक्षण-विषय और भिन्न भिन्न सामाजिक प्रश्नों का सम्बन्ध कैसे स्थिर हुआ, इसका विशेष वृत्तान्त दिया है, और ऐसा करते करते मुझे जो शिक्षा प्राप्त हुई, उसका भी दिग्दर्शन कराने का प्रयत्न किया है।

"इस पुस्तक के लिखने से मेरा उद्देश है "आत्मोद्धार" में आरम्भ की हुई शिक्षा की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कथा समाप्त कर देना । टस्कगी-संस्था में वर्तमान में प्रचलित जो शिक्षण-पद्धति हमने निश्चित की, समय समय पर उसका प्रश्न उठाना और अन्त में उन्नति के मार्ग में जानेवाले लोगों की प्रतिकूल परिस्थिति को अनुकूल बनाना, ये बातें अपने जाति-बांधवों के हितार्थ स्पष्ट करना मेरा मुख्य ध्येय रहा है ।

वस्तुओं से मैं कुछ सीखा हूं, यह सत्य है । किन्तु उससे अधिक मनुष्यों से सीखा हूं । मेरे कार्यों से उदार तथा उन्नतमना लोगों के साथ शीघ्र ही मेरा परिचय हो गया । ऐसे सत्पुरुषों से मैंने जो जो सीखा, उसे दिखलाने का प्रयत्न मैंने आगे के प्रकरणों में किया है । गुरुवर्य जनरल आर्मस्ट्रांग की समानता रखनेवाले विलियम एच० बाल्डविन नामक सद्गृहस्थ से मैं सब से अधिक सीखा हूं । उनसे मेरा सम्बन्ध कैसे हुआ, यह प्रकट करने पर उनसे मैंने क्या क्या सीखा, इसका दिग्दर्शन आप ही आप हो जायगा ।

मिस्टर बाल्डविन से मेरी पहली भेंट सब से अच्छी है, किन्तु वह कहां पर हुई, मुझे स्मरण नहीं । उस समय वे सदर्न रेलवे के व्यवस्थापक और उपाध्यक्ष थे, और उनका मुख्य आफ़िस वाशिंगटन में था मैं उनके बड़ों से पत्र लेकर बोस्टन में उनके पास आया था । एक दिन सवेरे मैं वह पत्र लेकर आफ़िस में उनसे दिया । पत्र पढ़ने के बाद "टस्कगी-संस्था और उसके कार्य" पर वार्त्तालाप होने लगा । कुछ मिनटों में मेरा ऐसा सम्मान हुआ कि मानों मैंने सच्चा सुख पा लिया । मुझे प्रतीत होने लगा कि जिसके हृदय में यत्किञ्चित् कपट नहीं ऐसे सत्पुरुष के सामने मैं बैठा हूं । पहली भेंट से मेरा यह निश्चित मत कभी नहीं बदला, और उस समय में उत्पन्न हुए प्रेम में किञ्चित् परिवर्तन नहीं हुआ ।

मिस्टर बाल्डविन ने प्रथम भेंट में टस्कगी-संस्था के काम में कुछ विशेष सहायता नहीं दी । उन्होंने कहा कि "मैं एक बार आकर तुम्हारी संस्था का निरीक्षण करूंगा । यदि देखूंगा कि तुम सचमुच अच्छा काम कर रहे हो तो मैं यथाशक्ति सहायता करूंगा ।"

थोड़े दिनों के बाद उन्होंने अपना वचन पूरा किया । वे एक दिन आये, और संस्था की प्रत्येक शाखा को पूर्णतया देखा । संस्था की रचना और व्यवस्था में उन्होंने कई त्रुटियां निकालीं, किन्तु यह जान लिया कि संस्था कुछ अच्छा काम कर रही है, और सहायता देना निश्चय कर लिया । सहायता देने में उन्होंने कोई बात उठा न रक्खी । संस्था की वृद्धि के लिए वे बड़े उत्सुक थे । नीग्रो जाति की उन्नति पर कड़क कर बोलनेवाला अन्य कोई मनुष्य मैंने नहीं देखा । टस्कगी-संस्था में उनकी अन्तिम भेंट पर मिसेज़ वाशिङ्गटन ने मुझसे कहा कि "ये जब यहां से जायँगे तब बहुत बुरा होगा ।" इसका कारण यह था कि जो लोग संस्था के काम को देखकर असंतोष प्रकट करते थे उनकी बातों को वे सहन नहीं कर सकते थे । उनकी सहानुभूति अत्यन्त सच्ची थी । संस्था के कार्य का महत्व उन्होंने समझ लिया था, और उसकी अड़चनें भी उनसे छिपी न थीं । देखी हुई प्रत्येक बात उनके अंतःकरण में बैठ गई । उनकी बड़ी इच्छा थी कि बाहर जाकर इस संस्था के कार्य पर विचार और उसकी सहायता करूं, किन्तु उसके पहले ही वे रोगग्रस्त हो गये ।

यह कहने में अत्युक्ति नहीं कि मिस्टर बाल्डविन नीग्रो लोगों के सबसे अधिक शुभचिंतक थे । अन्य जातियों के समान हमारी जाति भी संसार में सम्माननीय हो, नीग्रो लोगों की इस महत्वाकांक्षा से उन्हें पूर्ण सहानुभूति थी । जिन लोगों को इनकी सत्यता का पता नहीं था वे प्रसंगानुसार जाति-विषयक प्रश्नों के उद्गारों को सुनकर कहते थे कि नीग्रो लोगों की इस महत्वाकांक्षा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से उनकी पूर्ण सहानुभूति नहीं है। यह सत्य न था। वास्तव में पूछिये तो जो नीग्रो लोग यश-संपादन के लिए मृगतृष्णा के समान दौड़ते थे उनको रोकने के लिए यही सब से अधिक प्रयत्न कर रहे थे। वे नीग्रो लोगों को त्रुटिपूर्ण मार्ग से हटाते थे।

यह कहना अन्याय की बात होगी कि मिस्टर बालडविन नीग्रो लोगों के हितार्थ काम करते रहने के कारण दक्षिण के गोरे लोगों की उन्नति पर ध्यान न देते थे। परम्परागत परिस्थिति से दोनों ही जातियों के बीच किसी अंश में प्रतिबन्ध था, यह सत्य है। परन्तु यह उनका निश्चित मत था कि इसके लिए कोई भी जाति पूर्णरूपेण उत्तरदायी नहीं। एक जाति का हित दूसरी जाति के हित से संलग्न है, यह वे जानते थे। नीग्रो लोगों की शिक्षा पर उन्होंने बहुत खटपट की, यह सच है। किन्तु दक्षिणी गोरे लोगों को सहायता देने से उन्होंने हाथ न रोका।

टस्कगी-संस्था की सुव्यवस्था कर उन्होंने उस संस्था का बहुत कुछ उपकार किया। प्रारम्भ में वे संस्था के ट्रस्टी हुए। उस समय संस्था की व्यवस्था और आय-व्यय की स्थिति अत्यन्त अनिश्चित और असन्तोषजनक थी। वे हमारे पैसों का खर्च और आय-व्यय के लिखने की पुस्तकें बहुत अच्छी तरह से जांचने लगे। संस्था की उन्नति शीघ्रता से होने लगी। नवीन भवनों का निर्माण और मितव्ययिता से व्यय आदि कार्य बड़ी अच्छी तरह चलने लगे।

मि० बालडविन और मैं दोनों काम करते थे। किन्तु वर्ष के अन्त में जब मैं देखता था तो मुझे यह प्रतीत होता था कि वर्ष भर में यदि मेरा समय प्रसन्नता से व्यतीत हुआ है तो उनके बुकलिन के पुस्तकालय में। वहां बैठकर हम दोनों संस्था की बाधाओं पर सांगोपांग विचार करते थे, और कठिन प्रश्नों को हल करते थे। मेरे न्यूयार्क चले आने पर वे अड़ाबड़ बुलाने के लिए आदमी भेजते थे। जाने के बाद हम दोनों पुस्तकालय में तीन तीन चार चार घंटे तक बैठे रहते थे। कभी कभी तो बैठे बैठे अर्द्धरात्रि हो जाती थी।

मि० बालडविन से मैंने कई बातें सीखीं। उनमें से एक यह है कि "क्षुद्र बातों पर ही लोगों में भेदभाव होता है, और बड़े बड़े कामों में लोग एकत्र रहते हैं। जाति, पंथ, स्थान आदि के क्षुद्र विचार मन में न लाकर कर्तव्य-निष्ठता और उदार हृदय से जो पुरुष अच्छा कार्य आरम्भ करता है, और अपनी आयु सत्कार्यों में व्यतीत करता है, उसको संसार में श्रेष्ठ और उत्तम पुरुषों की मित्रता तथा सहायता का लाभ प्राप्त होता है।"

मैं पुनः कहता हूं कि यह मुझे बुरा नहीं लगता कि गुलामों के वंश में मेरा जन्म हुआ है इसी से मेरे जीवन के समक्ष एक विकट प्रश्न उपस्थित हुआ, उसी प्रश्न ने मेरा जन्म सार्थक किया, और दूसरे किसी मार्ग से न मिल सकने वाला सुख मुझे प्राप्त कराया।

अपूर्ण।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षा-कथा ।

[लेखक—श्रीयुत शोभाराम धेनुसेवक ।]

(१)

शिक्षा-समुन्नति का नहीं सा ही यहां विस्तार है ।
जो कुछ हुआ उससे असंभव देश का निस्तार है ॥
क्या लाभ है उस शुष्क शिक्षा से जहां पर धर्म का ।
शिक्षण नहीं, आदर्श भी कोई नहीं शुभ कर्म का ॥

(२)

जो उच्चतम आदर्श अपने से गिराती है हमें ।
जो पाठ केवल पेट पूजा का पढ़ाती है हमें ॥
जो है हमारा रूप सच्चा भी न बतलाती हमें ।
विपरीत उसके जंगली जातें जताती है हमें ॥

(३)

क्या थे हमारे पूर्वज जिससे न लगता है पता ।
रखती तिमिर में जो हमारी आर्य वैदिक सभ्यता ॥
मिलतीनजिससेआत्मिकहमकोअलौकिकशान्तिहै
जो उत्तरोत्तर ही बढ़ाती, नित्य भौतिक भ्रान्ति है ॥

(४)

हम क्या करें लेकर उसे, वे पाठ हम कैसे पढ़ें ?
बढ़ता नहीं जिस ओर उर, उस ओर पग कैसे बढ़ें ?
शिक्षा हमें तो चाहिये निज देश के अनुकूल ही ।
यह सत्य है शिक्षा विदेशी है बढ़ाती शूल ही ॥

(५)

पुनियोकिसीविधिकरपरिश्रम प्राप्त शिक्षा कर चुके
तत्त्वान्वेषण को नहीं, बस नौकरी ही को झुको ॥
उसके लिए भी तो वली या अन्य वारिस चाहिये ।
यदि हो न वारिसयावलीतोफिरसिफ़ारिश चाहिये

(६)

हां, तब कहीं कोई किलर्की मिल सके तो मिल सके,
मुरझी हुई तक़दीर शायद, खिल सके तो खिल सके
बस किलर्की के मार्ग में ही अन्त जीवन का करो ।
ऐसा न हो तो रह भवन में पेट-ज्वाला से भरो ॥

(७)

यदि और भी कुछ शक्ति हो तो और आगे जा सको।
डिगरीबि०ए०कीऔरएम०ए०कीकदाचित् पासको
बस तो महाशय, मान्यवर, श्रीमान् से मिस्टर बनो,
रीडर बनो, लीडर बनो, वाग्वीर वैरिस्टर बनो ॥

(८)

हर बात में चलते इन्हीं के ऐक्ट, ला, क़ानून हैं ।
जल-जोंक से निज देश का ही चूसते जो ख़ून हैं ॥
दो भाइयों को जो लड़ाकर, पाकिटें अपनी भरें ।
मतलब इन्हें निज फ़ीस से वादी जियें चाहे मरें ॥

(९)

क़ानूनबाज़ों की यहां होती अगर बढ़ती नहीं ।
तो पाठ फिर अभियोगबाज़ी का प्रजा पढ़ती नहीं ॥
विद्वेष भाईबन्धु में फिर यों न बढ़ सकता कहीं ।
भारत मुक़दमों की भयंकर आग से जलता नहीं ॥

(१०)

करुणा कथा इन कोर्टों की अब चलाना है वृथा ।
सर्वांश में जिनसे भली थी ग्राम-पंचायत-प्रथा ॥
उन हित-प्रथाओं का यहां जो जन्म हो जावे कहीं ।
तो रंक भारत का प्रचुर धन व्यर्थ व्यय होवे नहीं ॥

(११)

कितनी कठिनताएँ हुईं विद्वान् बनने के लिए ।
बस बाध्य करती हैं हमें जो मूर्ख रहने के लिए ॥
निःशुल्क शिक्षा जो यहां अनिवार्य हो जाती कहीं ।
तो मूर्खता फिर पूर्ववत् इस देश में रहती नहीं ॥

(१२)

शिक्षित हुआ था जो जगत् पाकर सुशिक्षा हिन्द से,
थे विश्वविद्यालय अनेकों ही जहां नालिन्द से ॥
जो हम कभी थे मुफ़्त शिक्षा लोक को देते रहे ।
अब हा! वही हम मूर्खता के वेग में आते बहे ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगमुद्दैयान जातिवालों के रीति-रस्म ।

[लेखिका—श्रीमती हेमन्त कुमारी देवी ।]

यह तामिल ज़िले की एक कृषक जाति है। आचार-व्यवहार में ये लोग भिल्लन जाति के समान हैं। ये लोग तंजोर, मदूरा और तिनेवली ज़िले में देख पड़ते हैं। मरभन, कल्लन और अगमुद्दैयान लोगों में जो सम्बन्ध है, उस विषय में एक आख्यायिका सुनी जाती है। अहिल्या के पिता उसका विवाह ऐसे पुरुष से करना चाहते थे जो हज़ार वर्ष तक जल में रहा हो। इन्द्र पांच सौ वर्ष तक इस भांति रहा, परन्तु गौतम पूरे सहस्र वर्ष रहने पर अहिल्या के स्वामी हुए। इन्द्र अहिल्या के रूप से विमोहित हो उसको अपनी स्त्री बनाना चाहते थे, परन्तु किस भांति वासना सिद्ध हो, इसी के ध्यान में रहते थे। एक दिन इन्द्र कुक्कुट का रूप धारण कर अर्द्धरात्रि में गौतम के मकान में आया, और आवाज़ देने लगा। रजनी प्रभात हुआ समझ गौतम बिस्तर छोड़ स्नान को चले गये। जो कुछ हुआ वह पाठकों से छिपा नहीं। जब तक दो पुत्र नहीं हो गये, तब तक अहिल्या को इन्द्र का छल ज्ञात न हुआ। यही दोनों सन्तान भरभन और कल्लन दोनों जातियों के पूर्व पुरुष हैं। बाद को अहिल्या की तृतीय सन्तान हुई, जिनसे अगमुद्दैयान निकले। अगमुद्दैयान ब्राह्मण पुरोहित रखते हैं, और जन्म, मृत्यु तथा विवाह क्रिया भिल्लन लोगों की भांति करते हैं।

अगमुद्दैयान निम्नलिखित श्रेणियों में विभक्त है, तथा कहिवलिनिन्तन, कोताई पत्तु, मालाई नादू, नानुमंजलं, राजवोजा, राजकुलम्, राज वासल, कल्लन, मरभन, कुलूभन और सर्वैकारन। राज वासल कर्थ में राजा लोगों का भृत्य और कोताईपन्तु से क़िले का बोध होता है। मरभन और अगमुद्दैयन जातियों में विवाह होने से सन्तान अगमुद्दैयान प्रसिद्ध होती है, परन्तु यदि पति धनवान हो तो सन्तान मरभन समझी जाती है। अगमुद्दैयानगण बड़े होने पर विवाह करते हैं परन्तु कल्लन, मरभन और अन्यान्य जातियों में बालक अल्पवयस्क होने पर भी युवती स्त्री के साथ विवाह होता है।

इनके विवाह में विशेष आडम्बर नहीं होता; वर की बहिन कन्या के लिए कपड़ा, गहने, फूल आदि लेकर शुभ दिन में कन्या के घर जाती है। कन्या पूर्व ओर मुखकर दीवार के निकट बैठती है, और लाये हुए कपड़े को पहिनकर एक पाटे पर बैठता है। वर की बहिन कन्या को पान, सुपारी और फूल देती है, जो कन्या अपनी गोद में रख लेती है। हल्दी से रँगा हुआ सूत या माला वर की बहिन कन्या के गले बाँध देती है। इस समय शंख-ध्वनि होती है। उसी दिन कन्या को वर के घर ले जाकर एक भोज दिया जाता है।

धनाढ्य अगमुद्दैयान पुराणों के अनुसार विवाह करते हैं। ज्योतिषी निम्नलिखित विषयों पर विचार कर विवाह स्थिर करते हैं।

(१) वार—जन्म दिन गिनने में शुक्लपक्ष की प्रतिपदा गिना जाता है। जिस दिन कन्या का जन्म हुआ उस दिन से गिनने पर यदि भावी वर के जन्मदिन चतुर्थ, सप्तम, त्रयोदश, षोड़श अथवा सप्तदश दिवस में पड़ें तो वह शुभ समझा जाता है।

(२) गण—तीन गण हैं, यथा मनुष्य, देव और राक्षस। सत्ताइस ग्रहों में—अश्विनी, भरणी आदि—कुछ मनुष्य-जातीय, कुछ देव और कुछ राक्षसगण हैं। अष्टम और स्वांति देव-गण समझा जाता है। इससे जो जन्मे हैं वह लोग देवगण हैं। जो लोग भरणी, रोहणी, पूर्वाफाल्गुणी, पूर्वाषाढ़ तथा उत्तराषाढ़ आदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में जन्मे हैं वे मनुष्यगण हैं। कृतिका, विशाखा आदि राक्षसगणों में समझे जाते हैं। जहां तक सम्भव हो, दम्पति एक ही गण के होने चाहिये। मनुष्य और देव होने से विवाह हो सकता है, परन्तु राक्षस और देव अथवा राक्षस और मनुष्य में विवाह निषिद्ध समझा जाता है।

(३) रमणी की आयु—वर का जन्म दिन कन्या के जन्म दिन से १३ दिन बाद होना चाहिये।

योनि—इसमें पश्वादि योनि विचार किया जाता है। जैसे यदि किसी का जन्म अश्विनी में हुआ है तो वह घोड़ा और उत्तर भाद्रपद में होने से गाय समझा जायगा। वर कन्या यदि पशु योनि हों तो सुख मिलेगा। हस्ती और मनुष्य, अश्व और गाय, कुत्ता और बन्दर, बिल्ली और चूहा आदि होने से दोनों में शत्रुता रहेगी। वर की स्त्री योनि और स्त्री की पुरुष योनि परित्यज्य है।

(५) राशि—कन्या की राशि पंचांग से गिनने पर वर का राशि चक्र ६ से ऊपर होना चाहिये।

(६) राश्याधिपति—राशिचक्र के ग्रहगण, दोनों के, शत्रु न होना चाहिये।

(७) वश्यम्—दम्पति युगल का राशिचक्र उभय के वश में होना चाहिये। यथा मिथुन, कन्या, सिंह और मकर, धन, मीन, तुला और मकर आदि।

(८) रज्जु—चार समानान्तर रेखा तीन त्रिभुजों पर खींचने से २७ नक्षत्र समान भाव में पड़ेंगे। इस रेखा को चरण, उदर और ग्रीवा रज्जु कहते हैं। त्रिभुज का ऊपरी स्थान शीर्ष रज्जु नाम से ख्यात है। दम्पति युगल की राशि एक ही रज्जु में नहीं होनी चाहिये, यदि ग्रीवा देश में हो तो अत्यन्त निषिद्ध समझा जाता है।

(९) वृक्ष—राशिगण किस वृक्ष की होती हैं, उसका विचार किया जाता है, यथाः—

अश्विनी—कुचला
भरणी—आंवला
कृत्तिका—गूलर
पूर्वाफाल्गुनी—ढाक, पलाश
हस्त—चक
आर्द्रा—मदार
उत्तरा भाद्रपद—नीम

कोई कोई वृक्ष दुग्ध जाति के और कोई कोई सूखे होते हैं। वर का वृक्ष शुष्क और कन्या का दुग्धपूर्ण, अथवा दोनों का दुग्धपूर्ण होना चाहिये।

(१०) पक्षी—कोई कोई राशि पक्षी पर भी होती हैं। दम्पति युगल के पक्षी बंधु भाव के होना चाहिये, जैसे मोर और मुर्गा।

(११) जाति—राशिचक्र निम्नलिखित जातियों में विभक्त होते हैं, यथाः—

ब्राह्मण—मीन और धन
क्षत्री—मेष, वृश्चिक
वैश्य—कुम्भ, तुला
शूद्र—वृष, मकर

निम्न जाति मिथुन, सिंह और कन्या होती हैं।

वर कन्या की जाति से उच्च होना चाहिये। दम्पति युगल का नक्षत्र मिल जाने पर वर कोई आत्मीय उत्तर दिशा में कुछ दूर तक जाता है और शुभाशुभ शकुन के लिए प्रतीक्षा करता है। यदि शकुन शुभ हो तो अच्छा है। कोई कोई दूर न जाकर मंदिर में जाते हैं, और देवता के ऊपर फूल चढ़ाकर देखते हैं कि पुष्प किस ओर गिरता है, और देवता के सामने जो फूल जमा है उनमें से एक उठाकर देखते हैं कि शकुन शुभ है या नहीं। जो पुष्प लेता है उसका वर्ण यदि मन में विचार किये हुए वर्ण के साथ मिले तो वह शकुन शुभ है। आदमी जमा होने पर वरपक्ष के व्यक्तिगण उनके सामने अलंकार वस्त्रादि रखते हैं, उनमें एक व्यक्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अलंकारादि की परीक्षा करके लग्नपत्रिका लिखने की आज्ञा देता है। लग्नपत्रिका उसको कहते हैं जिसमें विवाह का दिन नियत किया जाता है, और पुरुषों को निमंत्रण भी दिया जाता है। लग्नपत्रिका को सामने रख कर विघ्नेश्वर अर्थात् गणेशजी की पूजा होती है। फिर पुरोहित विवाह का दिन बताते हैं, और स्त्रीधन के विषय में फ़ैसला होता है। विवाह के लिए एक चबूतरा बनता है, जिसमें एक वेदी भी रहती है। जिस दिन से चबूतरा तैयार होता है उस दिन से विवाह के दिन तक भावी दम्पति युगल को एकत्र अथवा पृथक रहना पड़ता है। हल्दी, तिल का तेल शरीर में लेपन करने का नाम "नलनूडत रच" है। विवाह के दिन दूल्हा हजामत बनवाकर दुलहिन के मकान में जाता है। दुलहिन के नाखून काट दिये जाते हैं। दम्पति युगल कुलदेवता और पितृगण को भात अर्पण करते हैं। वेदी पर हवन होता है, अनेक शाखा प्रशाखा विशिष्ट दीप वेदी की पूर्व दिशा में रक्खे जाते हैं। यह दीप सहस्र नेत्र इन्द्र की मूर्ति माना जाता है। पुरोहित यम की मूर्ति है, और दीप जो दक्षिण कोण में रक्खा जाता है अग्निदेवता की मूर्ति है। रमणीगण निरूति की मूर्ति के स्वरूप दक्षिण-पश्चिम दिशा में रहती हैं। जल देवता वरुण की दिशा पश्चिम है इसलिए दूल्हा पश्चिम की ओर रहता है। जो वायु की मूर्ति है वह उत्तर-पश्चिम कोण में रहता है। धन देवता कुबेर की दिशा उत्तर है, इसलिए एक आदमी थैले में रुपया भरकर उस ओर बैठता है। शिव शक्ति की प्रतिमा स्वरूप चक्की और हथेला उत्तर पूर्व दिशा में रक्खा जाता है, और उसी ओर नौ पात्र अन्न भरकर रक्खे जाते हैं। सप्ति पात्र, चक्की और शाखा प्रशाखा विशिष्ट दीप बीच में सजाये जाते हैं। कोई विवाहित रमणी ७ नदियों का पानी सात ओर से लाकर दीप के सम्मुख स्थित पात्र में रखती है। दूध से भरा घड़ा दीप और पात्रों के बीच में तिपाई पर रक्खा जाता है। यह तिपाई पीपल, बेर और मदार वृक्ष के पत्ते बांधकर रक्खी जाती है और ब्रह्मा, विष्णु और शिव की प्रतिनिधि स्वरूप समझी जाती है। कभी कभी झींगल वृक्ष के पत्ते और बांस का पेड़ उक्त वस्तु के स्थान में व्यवहार किया जाता है। विवाह के अन्त में मदार अथवा झींगल वृक्ष की डाल गाड़ दी जाती है। यदि उसमें से जड़ निकलकर पेड़ बढ़ने लगता है तो शुभ शकुन समझा जाता है। पवित्र अग्नि जलाकर वर का उपनयन और अन्यान्य संस्कार होते हैं। बाद को वर बरात के साथ मकान से विदा होता है, और कन्या का पिता फिर उसको मंडप में लौटा लाता है। कन्या के माता पिता वर के पैर धोते हैं, और पैर की अंगुली में अंगूठी पहिना देते हैं। पुरोहित वर को एक सूत देता है, जिसको वह कन्या के माता पिता से पैर धुलाने के बाद अपनी कलाई में पहिनता है। एक सूत कन्या की बाईं कलाई में बांध दिया जाता है। दम्पति पवित्र अग्नि के सामने बैठकर नान्दी श्राद्ध करते हैं। इस समय दम्पति नये वस्त्र धारण करते हैं। इसके बाद ताली (विवाह-चिह्न) बांध दी जाती है। ताली को हल्दी के रंग में रंगकर नारियल पर रखकर उपस्थित सभासदों में प्रत्येक के निकट लाते हैं, और वे लोग आशीर्वाद देते हैं। बाद को पुरोहित वर को ताली देता है, जिसको वह दुलहिन की गर्दन में बांध देता है। जब ताली बांधते हैं तब वर की बहिन कन्या के पीछे दीप लेकर खड़ी होती है। वर एक गांठ बांधता है, और उसकी बहिन दो गांठ बांधती है। ताली बंधन समाप्त होने पर सोने और तांबे के पत्र दम्पति युगल के कपाल में बांध देते हैं। इस समय कुटुम्बी लोग उन्हें कपड़ा, रुपया, आदि देते हैं। बाद को दम्पति मण्डप की सात प्रदक्षिणा करके चक्की के निकट जाते हैं, और वधू उस पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बांया पैर रखती है। वेदी के ऊपर बैठने पर वर अपने भाई के रांधे हुए चावल लेकर पवित्र अग्नि में आहुति देता है। इस समय जो माला वर और कन्या को दी जाती है वह आपस में ३ या ५ बार बदली जाती है। बाद को रंगीन जल छिड़ककर अष्ट मंगल के साथ मण्डप की प्रदक्षिणा करते हैं। अष्ट मंगल क्या है, यह देखना चाहिये। प्रथम कन्या की सहचरी, द्वितीय वायु देवता की प्रतिनिधि, तृतीय दीप, चतुर्थ जल पात्र, पंचम दर्पण, छठे अंकुश, सप्तम श्वेत चमर, अष्टम छाजा और बाजा। सधारणतः मण्डप की तीन प्रदक्षिणा की जाती है, और प्रथम बार प्रदक्षिणा करने के बाद चक्की के पास जाकर नारियल को तोड़ते हैं, और कन्या से कहते हैं कि चक्की शिव और वर्तनी (डंडा) शक्तिस्वरूप है। उभय के सम्मिलन से अर्द्ध नारीश्वर शिव दुर्गा का आज आविर्भाव हुआ। द्वितीय परिक्रमा में बधू को अरुंधती की कथा सुनाते हैं। अरुंधती वशिष्ठ ऋषि की पत्नी और दाम्पत्य जीवन की आदर्श थी। प्रभात में उदय होनेवाले तारे ही को अरुंधती कहते हैं। पुरोहित तीन वार होम करने के बाद दम्पति को उसी नक्षत्र के दर्शन कराते हैं। विवाह १-२ अथवा ३ दिन में समाप्त होता है।

अगमुदैयान शव को जलाते और गाड़ते हैं। पालकी में शव को रखकर श्मशान या समाधि क्षेत्र में ले जाते हैं। ये लोग शैव हैं, अन्त्येष्टि क्रिया करते हैं। मृत्यु के दो या तीन दिन बाद तक पुत्र और अन्यान्य कुटुम्बी श्मशान या समाधि क्षेत्र में जाकर मृत व्यक्ति के अर्थ आहार देते हैं। एक प्याला पानी उस स्थान में रक्खा जाता है। धनाढ्य लोग जो श्राद्धक्रिया करना चाहते हैं वे लोग १५ दिन तक मृत पुरुष के अर्थ आहार देते हैं, और मृतकक्रिया १६ दिन में करते हैं। ब्राह्मण को दक्षिणा देकर शान्तिजल लेने के बाद वे जब सूतक से पवित्र होते हैं तब कुटुम्ब को भोजन कराते हैं। अगमुदैयान लोगों के साधारण देवताओं के नाम अइपानर, पिदारी और करुपन्न स्वामी हैं।

नरोचित।

[लेखक—श्रीयुत श्रीकान्त 'कुसुमाकर'।]

जिन्हें हठ धर्म की है वह बिगड़कर भी संभलते हैं,
धनी जो बात के हैं वह नहीं कहकर बदलते हैं।
जिन्हें धुन काम की है विघ्न-बाधा से नहीं डरते,
क़दम आगे बढ़ाकर वीर पीछे को नहीं धरते।
जिन्हें प्यारी विजय है चूक अवसर पर नहीं करते,
जिन्हें है कीर्ति प्यारी खाट पर पड़कर नहीं मरते।
कहीं? सच्चे शिकारी भी समय पर हाथ मलते हैं,
धनी जो बात के हैं वह नहीं कहकर बदलते हैं।
जिन्हें साहस प्रबल है वह नहीं बातें बनाते हैं,
ज़बां से जो निकल जाये उसे करके दिखाते हैं।
जो करना है उसे हरदम नहीं कहकर सुनाते हैं,
सफलता प्राप्त हो इस युक्ति की चर्चा चलाते हैं।
अटल सिद्धान्तवाले न्याय ही के पथ पै चलाते हैं,
धनी जो बात के हैं वह नहीं कहकर बदलते हैं।
वृथा है धन जो खाने और देने में नहीं आता,
ये सच्ची बात है अवसर कभी जाकर नहीं आता।
कहीं! सच्चे हुनरवालों के दिन बेकार टलते हैं,
धनी जो बात के हैं वह नहीं कहकर बदलते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यूरोप के इतिहास पर एक दृष्टि।

एथेन्स (ग्रीस) की उन्नति के कारण।

यदि ग्रीस देश के राज्यों में स्पार्टा से भी अधिक प्रसिद्धि किसी राज्य ने पाई थी तो वह एथेन्स ही था। स्पार्टा की प्रसिद्धि केवल स्थल-युद्ध में थी। वह केवल अपनी स्थल-सेना के उत्तम संगठन के कारण ग्रीक राज्यों का प्रधान माना जाता था। परन्तु क्या विद्या, क्या कलाकौशल, क्या व्यापार, क्या युद्ध, एथेन्स की कीर्ति सभी बातों में दिगन्तव्यापिनी थी। परन्तु एथेन्स की इतनी प्रसिद्धि का क्या कारण था? यह जानना परमावश्यक है।

ग्रीस के आर्य आक्रमणकारियों ने जब ग्रीस के ऊपर आक्रमण किया तब उन्होंने एथेन्स पर भी अपना अधिकार जमा लिया। परन्तु उनकी संख्या थोड़ी थी। वह या तो स्पार्टा के भाईबन्धों की तरह एटिका के आदिमनिवासियों को अपना गुलाम बना सकते थे या उनके साथ मिल जुलकर उन्हें अपने बराबर बना सकते थे। परन्तु उन्होंने दूसरे ही मार्ग का सहारा लिया। उन्होंने आदिमनिवासियों का मूलोच्छेदन करके उन्हें अपना भाई-बन्धु बना लिया। अतः उन्हें आदिमनिवासियों से कभी कुछ भय नहीं रहा, जैसा कि स्पार्टन्स को रहता था। एटिका के आदिमनिवासी राज्य के कंटक न होकर एक स्तम्भ हो गये। इस तरह एथेन्सवालों ने अपनी राजनैतिक चतुरता से एक बड़े विघ्न का निवारण कर दिया। वह समझ गये कि जब तक किसी देश के असली बाशिन्दे संतुष्ट न हों, उन्हें किसी प्रकार का कष्ट हो, तब तक उस देश के ऊपर किसी आक्रमणकारी जाति का अधिकार नहीं जम सकता। पूर्णतः अधिकार जमाने के लिए, राज्य की नींव मज़बूत करने के लिए, यह आवश्यक है कि विजेता विजित जाति को सम्पूर्ण अधिकार देकर विजेता और विजित का भेद मिटा दे। अस्तु, अब हम एथेन्स की उन्नति का क्रम देखते हैं। एथेन्स में भी ग्रीस देश के अन्य राज्यों की तरह नियमित शासक का राज्य रहा। इसके अनन्तर सामंतों की बढ़ती कला रही। सामंतों के समय में साधारण प्रजा को बड़ा कष्ट था। सबसे अधिक आर्थिक कष्ट था। एथेन्स की भूमि अधिक उर्वरा न थी। अतः वहां के किसानों को प्रायः महाजनों से ऋण लेना पड़ता था। महाजन लोग उनसे ब्याज बहुत लेते थे। यदि किसान क़र्ज़ा लौटा देने में असमर्थ होते थे तो महाजन लोग उन्हें गुलाम की तरह बेंच डालते थे। अतः प्रजा बड़ी दुखी थी। दूसरे इस समय में राज्य सामंतों के हाथ था।

राज्य-भार सँभालने के लिए तीन मुख्य अफ़सर थे—सेनाध्यक्ष, न्यायाधिकारी और प्रधान पुरोहित। यद्यपि ये सब प्रजा-द्वारा निर्वाचित होते थे, परन्तु सामंत ही होते थे। कालान्तर में छः अप्रधान अफ़सर और चुने जाने लगे। परन्तु ये भी अमीर उमराव ही होते थे। उनकी सहायता के लिए एक कौंसिल बड़े बूढ़ों की थी। अतः साधारण लोगों को न तो देश के शासन का कुछ अधिकार था, न उनकी आर्थिक अवस्था ही अच्छी थी। क्रान्ति के लिए सब मसाला मौजूद था। सामंतों को यह देखकर भय हुआ, और अन्त में उन्हें एक मनुष्य नियुक्त करना पड़ा, जो इनकी दशा देखकर कुछ सुधार करे। उन्होंने सोलन नामी एक उदार सामंत को सुधार करने के लिए नियुक्त किया। सोलन ने निम्नलिखित सुधार किये—

(१) कोई मनुष्य, यदि वह अपना क़र्ज़ वापस न दे सके तो वह, गुलाम बनाकर न बेंचा जाय।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) कोई मनुष्य एक नियत सीमा से अधिक भूमि पर अधिकार न जमा सके।

(३) देश के निवासी अपने धन के अनुसार ४ भागों में विभाजित किये जायँ। सबसे अधिक अमीर जंगी जहाज़ों के बनाने के लिए धन दें और युद्ध के समय घुड़सवार सेना में काम करें। दूसरे और तीसरे क्लास के लोगों को युद्ध में सुसज्जित सेना की तरह लड़ना पड़े। चौथे क्लास के लोग जहाज़ों के मल्लाह बनें या सहायक सेना में सम्मिलित हों। पहिले क्लास के मनुष्यों को ही यह अधिकार हो कि वे राज्य के प्रधान अफ़सर बन सकें। दूसरे और तीसरे क्लास के लोग उनकी सहायक कौंसिल के मेम्बर हो सकें। चौथे क्लासवाले सर्वसाधारण की सभा में वोट दे सकें।

(४) देश के शासन के लिए दो सभाएँ बनाई जायँ। एक ४०० मेम्बरों की, जिसके मेम्बर सर्वसाधारण द्वारा चुने जायँ। दूसरी सर्वसाधारण की सभा। निर्वाचित मेम्बरों की सभा किसी प्रस्ताव पर विचारकर उसे सर्वसाधारण की सभा में पेश करे। सर्वसाधारण की सभा उसे पास करे या रद्द करे। सर्वसाधारण की सभा सब अफ़सरों को निर्वाचित करे। इस तरह से देश के शासन का अधिकार बहुत कुछ सर्वसाधारण के हाथ में आगया। यद्यपि वह स्वयम् प्रधान अफ़सर नहीं बन सकते थे तथापि वही लोग अफ़सरों को चुनते थे। क़ानून भी वही बनाते थे।

परन्तु सोलन ने एक भारी भूल की। एथेन्स के रहनेवालों के तीन दल हो रहे थे। एक सामंतों का दल, दूसरा व्यापारियों का, तीसरा साधारण लोगों का। ये सब अपने अपने स्वार्थ के कारण एक दूसरे के घोर शत्रु थे। सामंत लोग अपने अधिकार नई बढ़तीवाले अमीरों को नहीं देना चाहते थे। व्यापारी अमीर चाहते थे कि वह सामंतों के बराबर अधिकार पायें, और सर्वसाधारण इन दोनों से जलते थे। सोलन को चाहिये था कि वह इन तीनों दलों में समझौता करा देता, परन्तु उसने यह ख़्याल न किया कि इन तीनों में झगड़ा होना अनिवार्य है, और कुछ समझौता न किया। इसका फल यह हुआ कि कुछ वर्षों के बाद इन सब में झगड़ा हुआ, और साधारण लोगों की जय हुई। साधारण लोगों की जय होते ही उनका नेता पैसिस्ट्रेटस स्वयम् ही राजा बन बैठा। साधारण लोगों का परिश्रम वृथा हुआ, बल्कि ऐसा मालूम होता था कि उनके पूर्व के अधिकार भी छिन जायँगे। परन्तु उनके सौभाग्य से पैसिस्ट्रेटस निरंकुश शासक होने पर भी उदार था, और उसने प्रजा को कोई कष्ट नहीं पहुंचाया। ऐसे उदाहरण, उन देशों को—जिन्होंने नवीन स्वतंत्रता प्राप्त की हो—याद दिलाते हैं कि सर्वसाधारण को ऐसे समय में कितनी बुद्धिमानी से काम लेना चाहिये। किसी मनुष्य को अत्यधिक अधिकार न दे देना चाहिये, नहीं तो सम्भव है कि उनका नेता ही उनके सुख-मार्ग में कंटक हो जाय। इस शताब्दी में भी नैपोलियन और यूआन-शी-काई के चरित्र यही शिक्षा देते हैं। अस्तु, एथेन्स में पैसिस्ट्रेटस राज्य करने लगा। उसकी मृत्यु के अनन्तर उसका पुत्र राजा हुआ, परन्तु उसके दोषों के कारण सर्वसाधारण ने उसे निकाल बाहर किया। इससे फिर यही ज्ञात होता है कि ऐसे लोगों का शासन चिरस्थायी नहीं हो सकता।

सर्वसाधारण ने क्लिएस्थिनीज़ नामक मनुष्य को आर्कन चुना। उसने जान लिया कि देश की उन्नति तब तक असम्भव है जब तक कि घर में फूट विद्यमान है। उसने समस्त एथीनियन्स को बराबर अधिकार देकर उन्हें संतुष्ट कर दिया। सर्वसाधारण की सभा के अधिकार बहुत बढ़ा दिये। सब क़ानून वही बनाती थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुक़दमों का फ़ैसला करने के लिए सर्वसाधारण की सभा से कुछ मनुष्य चुने जाते थे। इस तरह से राज्य-शासन का समस्त अधिकार प्रजा के हाथ में आगया।

ऐथेन्स की समस्त उन्नति के मूल यही सोलन और क्लिएस्थिनीज़ के सुधार थे। जब सर्वसाधारण के हाथ में राज्य की बागडोर हो, ऊंच-नीच, अमीर-ग़रीब का कुछ भेद न हो, शासन-सम्बन्धी कोई कष्ट न हो तो राज्य क्यों न उन्नति करे, राज्य का प्रत्येक मनुष्य राज्य पर क्यों न भक्ति रक्खे, और उसके लिए लड़ने मरने को क्यों न तैयार रहे? इन सुधारों से ऐथेन्सवालों को निम्नलिखित मुख्य मुख्य फल मिले।

(१) राज्य के प्रधान बनने के लिए कोई आर्थिक या दूसरे प्रकार की अड़चन न होने और जन-संख्या कम होने के कारण प्रत्येक मनुष्य को अवसर था कि वह राज्य का अफ़सर बन सके। इसलिए सभी चतुर मनुष्य इस बात का यत्न करते थे कि वे उस पद पर पहुँच जायँ, और इसलिए उस पद के योग्य योग्यता प्राप्त करने का यत्न करते थे।

(२) सर्वसाधारण की सभा में प्रत्येक मनुष्य को बोलने का अधिकार था और सर्वसाधारण की सभा ही राज्य की मुख्य सभा थी। इसलिए किसी अच्छे व्याख्यानदाता को पूर्ण अवसर मिलता था कि वह व्याख्यान देकर देश के ऊपर बहुत कुछ प्रभाव डाल सके। अतएव ऐथेन्स के प्रायः सभी महत्वाकांक्षी मनुष्य अच्छे व्याख्यानदाता बनने का यत्न करते थे, और उसके लिए यथोचित विद्याध्ययन करते थे।

(३) ऐथेन्स के समस्त वयस्क मनुष्यों को सर्वसाधारण की सभा में जाना होता था, इसलिए वे सदैव राजनैतिक प्रश्नों पर बड़े बड़े राजनीतिज्ञों की स्पीचें सुना करते थे। अतः वे राज्य-शासन कार्य में बहुत कुछ दक्ष हो जाते थे।

(४) सर्वसाधारण की सभा में से ही जज चुने जाया करते थे। ऐथेन्स के न्यायालयों में एक जज नहीं होता था, प्रायः ५०० मनुष्य एक मुक़दमे पर विचार करते थे, और अपने वोटों से उसका फ़ैसला करते थे। अतः बहुत से मनुष्य क़ानून में भी दक्ष हो जाते थे।

(५) ऐथीनियन्स नियमों से जकड़े न थे। अतः उनके विचार संकुचित न होकर स्वतंत्र थे। फिर उन्हें उपरोक्त कामों के कारण बेपढ़े लिखे भी बहुत कुछ शिक्षा मिल जाती थी। इसलिए ऐथेन्स में ही सब से अधिक चतुर मनुष्य होते थे। ऐथेन्स ने ही बड़े बड़े चतुर राजनीतिज्ञ, कार्यपटु, मूर्तिकार और तत्त्वदर्शी पैदा किये, जिसके कारण ऐथेन्स की कीर्ति दिगन्त-व्यापिनी हो गई। ऐथेन्स समस्त ग्रीस का विश्वविद्यालय बन गया। कुछ तो ऐथेन्स की स्वच्छ वायु के कारण और विशेषतः उपर्युक्त कारणों से ऐथेन्स ग्रीस देश की नाक हो गया। उसके राज्य की उन्नति हुई और फिर घटती हुई। वह परतंत्रता की बेड़ियों से भी जकड़ा गया, परन्तु विद्या में और कलाकौशल में वह यूरोप के सब देशों का शिरमौर बना रहा। विजेता रोमन्स भी ऐथेन्स का मान करते थे, और इन्हीं गुणों के कारण ऐथेन्स के इतिहास का स्थान संसार के इतिहास में ऊँचा है। अन्यथा यों तो सैकड़ों राज्यों ने उन्नति की और अवनत हुए।

ग्रीस पर फ़ारस का आक्रमण।

जब ऐथेंस और स्पार्टा उन्नति के पथ पर चल चुके तब उन्हें एक प्रबल बाहरी शत्रु का सामना करना पड़ा। यह शत्रु फ़ारस था। ग्रीस देश के कुछ निवासी एशियामाइनर के तट पर जा बसे थे। वहां उन्होंने व्यापार-द्वारा बहुत धन एकत्रित किया था, और सब तरह सम्पति-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शाली थे। फ़ारस के महाराज दारा ने उनके ऊपर आक्रमण कर उन्हें जीत लिया; और कर देने को बाध्य किया। स्वतंत्रताप्रिय ग्रीकों को यह बहुत असह्य प्रतीत हुआ, वे उस समय कुछ कर न सके। परन्तु वे सदैव ही अपनी पराधीनता की बेड़ियां काटने को उत्सुक रहते थे। एक बार उन्होंने अनुकूल समय देखकर फ़ारस के विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया। मुख्य ग्रीस की ऐथेन्स और दूसरी कई छोटी रियासतों ने भी उन्हें कुछ सहायता दी, परन्तु वे फ़ारस के विरुद्ध कुछ कर न सके। कुछ ही समय के अनन्तर वे फिर परास्त हुए। यह युद्ध इस बात का एक बड़ा अच्छा दृष्टान्त है कि जब घर ही में फूट हो तब किसी जाति के किये कुछ भी नहीं हो सकता। ग्रीस के निवासी स्वतंत्रताप्रिय अवश्य थे, परन्तु उन सब में एक बड़ा दोष था जो बहुत कुछ उनके देश के प्राकृतिक संगठन के कारण था। ग्रीस देश पर्वतमालाओं से अनेक भागों में विभक्त है, जिसके कारण उस देश में बहुत से छोटे छोटे राज्य हैं। इन राज्यों में से अधिकांश की भूमि अधिक उपजाऊ नहीं है, अतः अन्न की कमी से पीड़ित हो ये आपस में भूमि के लिए प्रायः लड़ा करते थे। फिर इन पर्वतमालाओं के कारण एक विभाग के निवासी दूसरे विभाग के निवासियों से अधिक मिलते जुलते न थे। अतः यद्यपि ग्रीक बड़े स्वतंत्रताप्रिय थे, तथापि वे केवल अपने नगर की भक्ति रखते थे। उनका नगर ही उनका देश था। आपस में मिलकर काम करना ये न जानते थे। इस युद्ध में भी ऐसा ही हुआ। प्रत्येक एशिया-माइनर-तटस्थ नगर अपनी स्वाधीनता के लिए जी तोड़कर लड़ा, परन्तु एक ने दूसरे को उचित सहायता न दी। जिसके कारण पारसीक सेना ने एक एक करके सब नगरों पर अपना अधिकार जमा लिया। अस्तु, दारा को ऐथेन्स पर बड़ा क्रोध आया। उसने अपनी सेना के एक अंश को ऐथेन्स के विरुद्ध भेजा, परन्तु ऐथेन्सवासियों ने पारसीक सैन्य को परास्त कर भगा दिया। तब दारा के पुत्र ने एक बहुत बड़ी सेना लेकर ग्रीस देश पर प्रचंड आक्रमण किया। परन्तु सम्मिलित ग्रीस ने उस सेना को भी परास्त किया, और अन्त में उसे भी लौट जाना पड़ा।

हमें युद्ध की प्रत्येक घटना जानने की कोई आवश्यकता नहीं है। हमें केवल यह जानना है कि इतनी बड़ी फ़ारस की सेना ग्रीस की छोटीसी सेना से क्योंकर पराजित हुई। इसमें सन्देह नहीं कि ग्रीकों की विजय के निम्नलिखित कई कारण थे,—

(१) पहिले तो पारसीक सेना के शस्त्रास्त्र इतने अच्छे न थे जितने ग्रीक सैन्य के।

(२) पारसीक सेना अपने घर से बहुत दूर लड़ रही थी। इसलिए उसको अन्न-कष्ट भी था। ऐसे ही और भी कई कारण थे। परन्तु इस जीत का मुख्य कारण और ही था। बात यह थी कि ग्रीस देश के निवासी अपनी मातृभूमि के लिए लड़ रहे थे। वे मातृभूमि से प्रेरित थे, और पारसीक सैन्य उत्साह-रहित थी। उसमें अधिकतर संख्या उन लोगों की थी जो फ़ारस के अधीन देशों के निवासी थे। वे फ़ारस से असंतुष्ट थे। जब वे अपने स्वामी से संतुष्ट नहीं तब उसके लिए उत्साहपूर्वक क्यों लड़ने लगे। वह केवल दंड-भय से लड़ते थे, और जब सेना में उत्साह नहीं तब वह भलीभांति लड़ भी नहीं सकती। यदि एक बार पराजित हुई तो फिर उसके पैर नहीं टिकते। अतः यह स्पष्ट है कि उत्साह से पूर्ण एक छोटी सेना भी उत्साह-रहित एक बड़ी सेना से श्रेष्ठ है। इस आक्रमण से यह भी सूचित होता है कि यद्यपि अधिकतर युद्ध हानिकारक होते हैं, तथापि उनसे अनेक लाभ भी होते हैं। यदि इस आक्रमण से ग्रीस को बड़ी हानि पहुंची तो उससे कुछ ऐसे लाभ भी हुए जिनके देखते वह हानि-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ भी नहीं है । प्रथम तो इतिहास में प्रथम बार ग्रीस की अधिकतर रियासतें सम्मिलित होकर किसी कार्य में लगीं। इससे यदि कुछ और नहीं तो इतना तो हो गया कि उनमें आपस में भ्रातृभाव पैदा हो गया । फिर इस आक्रमण को सर्वसाधारण ही ने रोका था, अमीर उमरावों ने नहीं । अतः युद्ध के अनन्तर सर्वसाधारण के हाथ में बहुत कुछ राज्य-शासन आगया, और बहुत से नगरों में आंतरिक कलह शान्त हो गई ।

"राम"

स्वभाग्य-निर्णय का अधिकार ।*

[व्याख्यानदाता—पं० कृष्णकान्त मालवीय ।]

मुझको बोलने का अभ्यास नहीं, मैं वक्ता नहीं । जिस समय मेरे मित्रों ने मुझे यहाँ आने को लिखा था मैंने लिख दिया था मुझको बोलना नहीं आता । मित्रों के हठ के कारण मुझको आना पड़ा और इस समय मुझसे कहा गया है कि मैं भी कुछ बोलूं । विषय है स्वभाग्य निर्णय । मुझको स्वयम् स्वभाग्यनिर्णय का अधिकार नहीं, मुझसे कहा जाता है बोलो किन्तु बोलना है या नहीं यह निर्णय करने का अधिकार मेरे हाथों में नहीं, मेरे भाग्य के विधाता मेरे मित्र ही हैं जो कम से कम इस समय मेरी इच्छा के विरुद्ध काम कर रहे हैं । ऐसी अवस्था में आप सहज ही में समझ सकते हैं कि स्वभाग्य-निर्णय के सम्बन्ध में मेरी राय क्या हो सकती है । अपनी ओर से मैं इतना ही कहना अलम समझता हूं कि स्वभाग्य निर्णय का सिद्धान्त बहुत ही उचित है, इससे सब लोगों को सुख ही सुख की प्राप्ति हो सकती है और किसी को किसी तरह की हानि नहीं पहुंच सकती । यदि स्वभाग्य-निर्णय का अधिकार मेरे हाथों में होता तो आप समझ सकते हैं कि मैं कदापि इस समय न बोलता मुझको सुख मिलता । मेरे मित्रों को भी हानि न पहुंचती । स्वार्थवश सम्भव है हानि की आशंका उनको कुछ समय तक सताती किन्तु कुछ समय के बाद ही उन पर यह प्रकट हो जाता कि वे भ्रमजाल में थे । इसी छोटीसी साधारण बात को आप संसार के बड़े बड़े प्रश्नों में घटाकर देख लीजिये और आपको विश्वास हो जायगा कि स्वभाग्य निर्णय का सिद्धान्त बहुत ठीक और न्यायोचित है और इससे समस्त प्राणियों को सुख प्राप्त हो सकता है । इस सम्बन्ध में मैं इतना अवश्य यहाँ पर कह देना चाहता हूं कि स्वभाग्य निर्णय के अधिकार की प्राप्ति की चर्चा करते हुए हम केवल उन लोगों को ध्यान में रखते हैं जिनका मस्तिष्क ठीक है, जो पागल या सिड़ी नहीं हैं, जो बालिग़ हैं और जो अपने हित अहित की बातों को समझ सकते हैं । इसके साथ ही साथ हम यह भी कह देना चाहते हैं कि यह असंभव नहीं कि हमको जो सलाह देने को उतावला हो, वह हमसे चतुर हो, हमसे अधिक पढ़ा लिखा हो—जैसे कि हमारे मित्र जिन्होंने हमको बोलने पर बाध्य किया है,—हैं—किन्तु उस दशा में भी हम अपना स्वभाग्य-निर्णय का अधिकार अपने हाथों से नहीं जाने देना चाहते। इसका कारण है। पहिले तो हमारा यह विश्वास है कि संसार में कोई जाति या मनुष्य परोपकार दृष्टि से ही प्रेरित होकर कामों को नहीं किया करता इसलिए कोई भी मनुष्य

* १५ दिसम्बर को कानपुर की स्वराज्य सभा में दिया हुआ व्याख्यान । कृ० म० ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह हमारा कैसा ही अनन्यतम मित्र क्यों न हो हमारी हितचिन्ता के साथ ही साथ किसी न किसी रूप में अपने स्वार्थ को भी सिद्ध करना है और इसी कारण से वह मित्र, परामर्श-दाता, या सलाही बनने को लालायित रहता है। दूसरे हमारा विश्वास यह भी है कि भूलों से मनुष्य शीघ्र ही सबक सीखता है, असफलताओं की वेदी पर ही सफलता के स्तम्भ की नींव स्थापित होती है और यह कि किसी काम को अपने सहारे करने से ही उसमें दक्षता प्राप्त होती है। सम्भव है हमारे मित्र हृदय से हमारे शुभचिन्तक हों और वे हमको नेकसलाह भी दें किन्तु यह असंभव नहीं कि मित्रों की देख-रेख उनकी सलाह रूपी लाठी के सहारे चलते चलते हम उसके आदी हो जायँ, हमारी कमर सदा झुकी ही रहे या यह कि हमारे पैरों में शरीर को सम्हाले रखने की शक्ति आवश्यक समय से अधिक में आवे। हम उन पुरुषों में हैं जिनकी धारणा या विश्वास यह है कि माता को भी बच्चों या बालकों को तब तक मना करने, या रोकने या डांटने का अधिकार नहीं जब तक अग्नि में, कूप में या ऐसे ही भयंकर स्थानों में उनके पहुंच जाने की अधिक संभावना न हो। हमारी राय में जो बालक गिरता पड़ता लोटता हुआ चलने फिरने की कोशिस करता है उस बालक से मज़बूत और शीघ्र चलना सीखता है जो नौकरों की गोद में हवा खाने को जाता है या जो गाड़ियों और नौकरों के सहारे चलना सीखता है। इस कारण से भी हमारी तबियत शुभचिन्तकों से घबराती है। सर्वथा अच्छे होते हुए भी वे हमारे विकाश के मार्ग में बाधक हो सकते हैं, हमारी नाबालगी के समय को निरर्थक बढ़ा सकते हैं और हमारी स्फूर्ति के मार्ग में कंटक हो सकते हैं।

यह हमारी कल्पना मात्र ही हो सो भी नहीं है। आप ही सोचिये संसार में सर्वोत्तम नियम क्या है? नियमों का अभाव या जिसमें कम से कम नियमों का पालन आवश्यक हो। सब से अच्छी शासनप्रणाली कौन है जिसमें शासन का कार्य सब से कम होता हो। आपको ईश्वर में विश्वास है! आप उसको सर्वशक्तिमान और सब से चतुर समझते हैं। आपका विश्वास है कि उसका साम्राज्य भी समस्त संसार में है। उसने अपना शासनक्रम कैसा बना रक्खा है? किसी समय क्षण भर के लिए भी आप इस बात का अनुभव करते हैं कि कोई शासन कर रहा है? संसार का, सृष्टि का काम हज़ारों वर्षों से चला आरहा है और योंही सदा चलता रहेगा। सोचिये तो प्रकाण्ड चतुरता से उसने अपनी सृष्टि, अपने साम्राज्य का शासन क्रम क्या बना रक्खा है? एक शब्द में और पूर्ण रूप से कह देने के लिए इतना कहना काफी होगा कि उसका शासनक्रम समस्त प्राणियों को स्वभाग्य-निर्णय के अधिकार का दान है। सृष्टि को देखने और विचार करने से आप पर यह प्रकट हो जायगा कि समस्त प्राणी स्वभाग्य-निर्णय का अधिकार भोग रहे हैं, सब अपने कर्त्तार हैं, अपने अपने कर्मों के सभी करने और बताने-वाले विधाता हैं, सब अपनी इच्छा के अनुसार कर्म करते हैं, फल भोगते हैं और उसी के अनुसार थोड़े या बहुत काल में निर्वाण या मुक्ति प्राप्त करते हैं। शासन के नियम भी उसके साधारण हैं और अनेक नहीं। इतने कानून ही उसने नहीं बनाये कि उनका याद रखना, उनका अर्थ लगाना कठिन हो। भाषा भी ऐसी जटिल या सर्वग्राही नहीं कि दो मनुष्य दो प्रकार से उसका अर्थ कर लें या टीकाकारों में ही मतभेद हो जाय। उसके कानून की भाषा भी इतनी लचीली नहीं कि आवश्यकता के अनुसार या समयानुसार उसमें कम या अधिक मानी पहराये जा सकें। उदाहरण के लिए उसके नियम हैं आग जलायेगी, पानी ठंढा करेगा आदि किसी कानून की पुस्तक की इनके लिए आवश्यकता नहीं। कोई इन्हें भूल भी नहीं सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप पूंछ सकते हैं कि आज के पहिले स्वभाग्य-निर्णय का सिद्धान्त कहां था ? इसका उत्तर यह है कि आधुनिक समय में इस सिद्धान्त के जन्म का श्रेय युद्ध को प्राप्त है । वह पहले भी था किन्तु अब उसका पुनर्जन्म हुआ है ।

यूरोप सभी बातों में बहुत चढ़ बढ़ गया था, विद्या, कला-कौशल जिस ओर देखिये वही दिखाई देता था । उन्नति के मद में वह आपे से बाहर हो गया, अपने ही को नहीं वरन् वह ईश्वर को भी भूल बैठा, अपने ही को वह दूसरों की किस्मत का फैसला करनेवाला और ईश्वर समझने लगा । इसके दर्प का ठिकाना न रहा । स्वार्थ की सिद्धि ही उसका एकमात्र लक्ष्य हो गया । जातियों का, संसार के प्राणियों का स्वभाग्य निर्णय का अधिकार एक प्रकार से लोप हो गया । अस्तु । युद्ध हुआ, भीषण युद्ध हुआ । संसार के मनुष्य, राजनीतिज्ञ भीषण रक्तपात देखकर सिहर उठे और उन्होंने विचार सागर का मंथन शुरू किया । वे ढूंढ़ने लगे कि किस प्रकार युद्ध बन्द किया जा सकता है, भयङ्कर रक्तपात भविष्य में कैसे रोका जा सकता है । वे सोचने लगे कि संसार के समस्त प्राणी किस प्रकार सुखी हो सकते हैं, यह कैसे सम्भव हो सकता है कि बली निर्बल को न सतावें, धनी गरीब को न पीसें और संसार में प्रेम का प्रचार हो जाय । सोचते सोचते उन्होंने ईश्वर की सृष्टि की ओर आँख फेरी और विचार किया । उनकी समझ में आगया कि साम्राज्य तभी स्थायी हो सकता है, संसार तभी सुखी हो सकता है जब वह सृष्टि के नियम के अनुसार चलाया जाय अर्थात् जब उसमें स्वभाग्य-निर्णय का अधिकार जातियों और राष्ट्रों को प्राप्त हो । आपको विदित होगा कि युद्ध के आरम्भ में उसका उद्देश्य निश्चित न था किन्तु समाप्त होते होते सभी राष्ट्रों ने यह मान लिया कि युद्ध का एकमात्र उद्देश्य जातियों और राष्ट्रों को स्वभाग्य-निर्णय का अधिकार देना है, उनमें समता का प्रचार करना है, उनकी स्वतंत्रता की रक्षा करना है । हम लोगों से यह भी नहीं छिपा है कि इन्हीं उद्देश्यों की सिद्धि के लिए शीघ्र ही सन्धि परिषद् की बैठक होनेवाली है । उसमें यूरोपीय राष्ट्रों के ही नहीं वरन् हमारे आपके भाग्य का भी फैसला होगा । आश्चर्य की बात है कि हम बालिग हैं, अपने हित अहित की बातों को भी समझ सकते हैं, किन्तु अपने भाग्य के फैसले में हमको अधिकार नहीं । सर एस० पी० सिंह भारतीय हैं, विद्वान् हैं, देशभक्त भी हैं किन्तु वे हमारे प्रतिनिधि नहीं, हम लोगों ने उनको नहीं चुना और फिर यह भी कहा जा सकता है कि वे भारत सरकार के हितों की रक्षा के लिए प्रयत्न करेंगे या हमारे ? संधि-परिषद् में हम नहीं बोलाये गये न सही, हम वहां नहीं जा सकते किन्तु हमारी आवाज़ वहां गूंज सकती है, यदि हममें दम हो, शक्ति हो और हम एक हृदय से, एक स्वर से कुछ करना चाहें या चिल्लायें । कहिये इसके लिए आप क्या तैयारी कर रहे हैं ? प्रश्न है कि हम लोग भी स्वभाग्य-निर्णय का अधिकार चाहते हैं या नहीं ? आप जानना चाहते होंगे कि इस अधिकार को हम क्यों चाहते हैं । सुनिये, कारण यह है और हमारे पक्ष में दलीलें ये हैं क्योंकि यद्यपि अभी ही रक्तपात हो रहा था किन्तु कहने को यह दलीलों का ही युग है । आपसे छिपा नहीं कि हम स्वतंत्र नहीं, आप चाहें तो कह सकते हैं कि दयालुता से प्रेरित नौकरशाही हमारे भाग्य का फैसला किया करती है । हमारा कहना है कि ईश्वर ने हमको स्वतंत्र पैदा किया है और हम स्वतंत्र रहना चाहते हैं । हमने मनुष्य योनि में जन्म लिया है हम मनुष्य के अधिकार चाहते हैं । हमारा विश्वास है कि ईश्वर ने हमको स्वभाग्य-निर्णय का अधिकार देकर अपनी विशेषता का परिचय दिया था, हम उस अधिकार को अपना जन्मस्वत्व समझते हैं, इसे खोने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को हम तैयार नहीं, साथ ही ईश्वर की बुद्धि को हम सबसे अच्छी समझते हैं इसलिए हम समझते हैं कि ईश्वर-प्रदत्त स्वत्वों को जो हमसे छीनता है वह हमको हमारे हितों से दूर करता है। दूसरे यह भी है कि हम देखते हैं कि संसार की सभी जातियों को यह अधिकार प्राप्त है, हम अपनी जाति को किसी जाति से हीन नहीं समझते, अन्य जातियों के मनुष्य हमारी जाति के मनुष्यों से अच्छे नहीं, कम से कम हम लोग अन्य लोगों से किसी बात में कम नहीं. ऐसी अवस्था में हम यह समझ ही नहीं सकते कि दूसरी जातियों को यह अधिकार प्राप्त हो और हमको नहीं। तीसरा कारण यह भी है कि हम देख रहे हैं कि हेजाज़, अरबों, मेसोपोटामिया के निवासियों और दक्षिण एफ्रिका के जर्मन उपनिवेशों के हबशियों को यह अधिकार दिया जा रहा है, यह सब टर्की और जर्मनी के अधीन थे। हम यह मानने को तैयार नहीं कि जर्मनी और टर्की का शासन इतना अच्छा था कि उनसे शासित मनुष्य इस योग्य हो गये कि वे इस स्वभाग्य-निर्णय के अधिकार को प्राप्त कर लें और ब्रिटिश शासन इतना खराब रहा कि १५० वर्षों तक शासित होने पर भी हम अयोग्य ही बने रहे।

हमारा कहना यह भी है कि हेडाज जाति को स्वभाग्य-निर्णय का अधिकार दान देने के लिए लंदन निवासियों से अपील करते हुए विलायत के "टाइम्स" ने लिखा था कि इनकी सभ्यता बहुत पुरानी है, इनके पूर्वजों ने बड़े बड़े साम्राज्यों का संगठन और संचालन किया था, ये बड़े बाप के बेटे हैं, आज इनकी दशा खराब है किन्तु अवसर मिलते ही यह अपनी पुरानी योग्यता प्राप्त कर लेंगे। हमारा कहना है भारत बहुत पुराना राष्ट्र है, बलदर्पी और सभ्यताभिमानी होते हुए भी कितने ही राष्ट्र मिट्टी में मिल गये। इतिहास के पन्नों में ही उनका अस्तित्व शेष रह गया है किन्तु भारत अभी जीवित है, इसकी धमनियों में जीवन-रक्त अब भी बह रहा है ऐसी दशा में यह अधिक संभव है कि अवसर मिलने पर वह अपने पुराने शिखर पर चढ़ जाय! अन्तिम किन्तु वास्तव में सब से ज़बर्दस्त कारण यह है कि १५० वर्षों से हम लोगों ने अपने भाग्य का निर्णय अपने मित्र अङ्गरेज़ों के हाथ में दे रक्खा था। हमारे अँगरेज़ मित्रों ने हज़ारों कोसों की दूरी से आकर हमारे लिए अनेक कष्ट उठाये, हर तरह से उन्होंने हमारी भलाई का प्रयत्न किया, वे कुछ अंशों में सफल भी हुए किन्तु मि० मान्टेगू और लार्ड चेम्सफोर्ड ने जैसा कहा है हमारी दशा अब भी बहुत हीन है, हममें शिक्षा का समुचित प्रचार नहीं, उद्योग-धंधा, कलाकौशल किस चिड़िये का नाम है हम नहीं जानते। गरीबी हमारी वर्णन के परे है। अकाल रोज़ ही देश में मुंह बाये खड़ा रहता है। १५० वर्षों के पहिले हमारे उद्योग-धंधों की यह दशा न थी, उस समय गरीबी नहीं वरन् हमारी अमीरी वर्णन के परे थी।

यह सब १५० वर्षों में हमने खोया है और इस काल में हमारे भाग्य का फैसला ब्रिटिश सरकार के हाथों में था। हमारा कहना यह है कि अब थोड़े दिनों के लिए अपने भाग्य का फैसला हम अपने हाथों में लेना चाहते हैं। हम अपना प्रबन्ध स्वयम् करना चाहते हैं, अपने पैरों हम आप खड़ा होना चाहते हैं और देखना चाहते हैं कि वास्तव में क्या ब्रिटिश शासन से जर्मन और टर्की का शासन इतना अच्छा था कि उससे शासित लोग योग्य हो गये और हम अयोग्य? हमारी अङ्गरेज़ सरकार से यही विनीत प्रार्थना है यदि उसकी राय में हम भूलें करके अपना नाश करेंगे तो वह हमको अपने हाथों अपना नाश सम्पादन करने दे, यह दुखदायी न होगा। राष्ट्र-संघ (League of Nations) का संगठन हो रहा है, बली राष्ट्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हीन दशा में हमको सता न सकेंगे, राष्ट्र-संघ में हमारा भी स्थान होगा और हमारा यह स्वत्व होगा कि किसी राष्ट्र से सताये जाने पर राष्ट्र-संघ की सहायता हम प्राप्त करें। राष्ट्र-संघ का संगठन यदि न हुआ तो भी आप तो हमारे शुभचिन्तक हैं ही। हमारा विश्वास है कि बिना हमारे भाग्य को अपनी मुट्ठी में बन्द किये हुए भी संकट के समय में हमारी सहायता आप करेंगे। ऐसी अवस्था में हमको स्वभाग्य-निर्णय का अधिकार प्राप्त करने दीजिये, गिरते, पड़ते हम चलना सीख ही लेंगे।

आप लोगों से इतना ही कहना है कि यदि आप हमारे सिद्धान्तों से सहमत हैं, यदि आप समझते हैं कि आप सब प्रकार से उन्नति तभी कर सकते हैं, सुखी तभी हो सकते हैं जब अपने भाग्य का फैसला आपके हाथों में हो तो उसके लिए, उस अधिकार की प्राप्ति के लिए आन्दोलन करिये, सुधार-स्कीम के विस्तार के झगड़ों के चक्कर में न पड़िये, इसने व्यर्थ में माता के सेवक दल में दल-बन्दी करा दी है यह उस युग की है जब संसार में शक्ति का प्राधान्य था, जब जिसकी लाठी उसकी भैंस के सिद्धान्त की धूम थी, जब विकट महाभारत संसार संकट नहीं समाप्त हुआ था, भूमि रक्त से रंगी नहीं गई थी, अब हम लोग दूसरे युग में हैं, यह प्रेम प्रचार का युग है, यह युग है आत्मशक्ति के प्रकाश का, सिंह और बकरी के एक घाट पानी पीने के प्रबन्ध का, ऐसी दशा में हम—बकरी ही सही—क्या सिंह के साथ एक घाट पानी नहीं पियेंगे? जागो भाइयो जागो, आंखें खोलो, देखो, प्रभात का सूर्य उदय हो गया है, उठो और अपने वर को प्राप्त करो।

बड़ौदा राज्य में अनिवार्य शिक्षा।

[लेखक—श्रीयुत सन्त निहाल सिंह।]

भारत-सरकार द्वारा भारत में अनिवार्य शिक्षा के प्रचार का विरोध होना मुझे उस बात चीत का स्मरण कराता है, जो कई वर्ष पहिले मुझसे और महाराजा बड़ौदा से हुई थी। मैं अतिथि की नाईं महाराज के राज्य में, कथियावर नामक स्थान में, यात्रा कर रहा था। भारत में प्राथमिक शिक्षा के प्रचार करने का उद्योग पहिले पहिल उसी स्थान में हुआ था। अतः मैंने महाराज से पूंछा—"आपने अमेरेली के एक सब-डिवीज़न को इसके लिए क्यों चुना?"

रुकावटों का अन्दाज़ा।

महाराज के उत्तर ने मेरे हवास उड़ा दिये। उन्होंने कहा—"२०–२५ वर्ष पहिले मेरे राज्य में अमेरेली सब से असभ्य तथा अशिक्षित स्थान था। मैंने अपने प्रयोगों को उस स्थान में अनुभव करने का विचार किया। इसमें बहुत सी रुकावटें पड़ीं। मैंने सोचा कि महाराज को अपने राज्य के सब से उन्नतिशील स्थान से इसका आरम्भ करना चाहिये था, जिससे सफलता-प्राप्ति की अधिक आशा होती। महाराज ने कहा कि 'यह उपाय भी बहुत अच्छा था, किन्तु मैंने उस मार्ग का अवलम्बन उन मनुष्यों के कहने पर किया था, जिनसे मैंने राय ली थी'। यदि इस मार्ग का अवलम्बन करने से उन्हें अधिक सफलता प्राप्त होती तो उन्हीं प्रयत्नों-द्वारा अन्य असभ्य तथा अशिक्षित प्रान्तों में उन्हें सफलता प्राप्त करने की आशा नहीं थी। यदि अशिक्षित तथा असभ्य मनुष्य अपने बच्चों को शिक्षा देने के लिये प्रस्तुत हों तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभ्य मनुष्य भी अपने बच्चों को शिक्षा देने को प्रस्तुत होंगे, अतः उन्होंने अपने कार्य के लिए कंकरीले मार्ग ही से यात्रा करना उचित समझा। किन्तु महाराज के तर्कशास्त्र तथा धैर्य से हम सन्तुष्ट नहीं हुए।

इस कार्य पर महाराज ने २५-३० वर्ष पहिले ही विचार किया था। अनुभव के लिए कार्य होना आरम्भ हो गया। सार्वजनिक शिक्षा के प्रबन्धकर्ता को महाराज ने अमेरेली सब-डिवीज़न में जाने तथा ग्राम ग्राम में घूमकर अनिवार्य शिक्षा के लाभों को समझाने की आज्ञा दी। मिस्टर जे० ए० दलाल ही के माथे सब से अधिक कठिन कार्य सौंपा गया था। आप अत्यंत उत्साही और शिक्षित सज्जन हैं। उन्होंने अपना कर्तव्य तन, मन से पालन किया। उन्हें इसमें बहुतसी कठिनाइयाँ झेलनी पड़ीं।

लघु आरम्भ।

पहिले वर्ष में यह रीति दस ग्रामों में प्रचलित की गई। प्रति वर्ष दस ग्राम बढ़ा दिये जाने लगे। १८६८—६६ तक अनिवार्य शिक्षा ने सारे सब-डिवीज़न पर अपना सिक्का जमा डाला, और आप सारे राज्य में अनिवार्य शिक्षा का प्रचार करने के लिए बल करने लगे। अपनी अभिलाषा पूर्ण करने के लिए महाराज को स्कूलों की संख्या बढ़ानी पड़ी। उन्हें स्कूलों के लिए अच्छे शिक्षकों की भी आवश्यकता हुई। धन की आवश्यकता दोनों ही में अधिक थी, किन्तु शिक्षकों की अपेक्षा वे स्कूलों के लिए अधिक दे सकते थे। उदाहरणार्थ मैं थोड़ीसी बातें यहां देता हूं :—१६००-०१ के अन्त में ८,००० वर्गमील की २०,००,००० की आबादी के बड़ौदा राज्य में सिर्फ़ १,२०० शिक्षालय थे। उस समय लगभग २,००,००० लड़के स्कूल में जाने योग्य थे, जिसमें केवल २६,५०० शिक्षा पाते थे। सब लड़कों को शिक्षा देने के लिए दुगने—शायद तिगुने—स्कूलों की आवश्यकता थी। महाराज को दो तीन हज़ार शिक्षकों का प्रबन्ध करना पड़ा। शिक्षा-विभाग में प्रत्येक वर्ष ४,००,००० रुपये ख़र्च होते थे, और थोड़े ही काल में दुगने या तिगुने रुपयों की आवश्यकता थी।

ये कठिनाइयाँ तो साधारण थीं। महाराज जानते थे कि अशिक्षित मनुष्य, जो अनिवार्य प्रारम्भिक शिक्षा के महत्व को नहीं समझते हैं, केवल विरोध ही नहीं वरन् राज्य में अशान्ति फैलाने की चेष्टा करेंगे। अतः महाराज बहुत धीरे २ कार्य कर रहे थे, जिसमें जल्दबाज़ी से काम बिगड़ न जाय।

कई वर्षों की तैयारियां।

अमेरेली के अनुभवों के कुछ वर्षों बाद प्रत्येक मनुष्य केवल एक ही वस्तु पाता था। बड़ौदे का कोई भी मनुष्य शीघ्र ही यह कह देता था कि महाराज सारे राज्य में अनिवार्य प्रारम्भिक शिक्षा का प्रचार करने में लगे हैं। महाराज ने कालेजों के शिक्षकों को सिखाने पर जो ध्यान दिया था, वह भी आश्चर्यजनक ही था।

एक उत्तम उपाय।

मैं समझता हूं कि १६०५-०६ में महाराज अमेरिका के संयुक्त राज्य में भ्रमण कर रहे थे। उसी समय आपने सोचा कि बड़ौदे में अनिवार्य प्रारम्भिक शिक्षा के प्रचार करने का समय आ गया है। जब महाराज अमेरिका गये थे तो राज्य का प्रबन्ध कार्यकारिणी कौंसिल के हाथ में था। कौंसिल का ध्यान शिक्षा पर सदा रहता था। उसी समय महाराज ने तार दिया कि शिक्षा का कार्य शीघ्र आरम्भ होना चाहिये। १,२०० स्कूल शीघ्र ही खोल दिये जायँ और उनके निमित्त ३०,००,०००) रुपये व्यय किये जायँ। काम तुरन्त ही आरम्भ हो गया। इसकी नियमावली में ये बातें थीं :—

प्रत्येक बालक तथा बालिका को, जो ६ वर्ष की उम्र समाप्त कर चुके हैं, स्कूल में आकर पढ़ना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगा, जब तक वे तीसरी कक्षा पास न कर चुकें। प्रत्येक अवस्था में अनिवार्य शिक्षा का समय बालकों के लिए १२ तथा बालिकाओं के लिए १० वर्ष रक्खा गया। जो अति निर्बल थे, जिनके बिना घर नष्ट होने की सम्भावना थी, जिनकी उपस्थिति घर पर बहुत ही आवश्यक थी, जिनके घर से एक मील के भीतर कोई स्कूल न था और जो जातिपाँति के विचार से किसी ख़ास स्कूल ही में पढ़ सकते थे उन-पर अनिवार्य शिक्षा का क़ानून नहीं चलाया जाता था। इन सब बातों का प्रमाण देना डिप्टी-एजुकेशनल इन्सपेक्टरों का काम था।

उन बालकों के पिताओं को, जो उक्त नियम के भीतर न आते थे, अपने बच्चों को शिक्षा की उम्र में आते ही स्कूलों में भर्ती कराना पड़ता था। नियम के अनुसार आज्ञा जारी होने के दिन से एक महीने तक यदि माता-पिता अपने बालकों को स्कूल न भेजें तो उन्हें जुर्माना देना पड़ता था। अनुपस्थिति की छुट्टी दो मास तक मिल सकती थी; किन्तु यदि कोई बालक बिना छुट्टी लिये १० दिन तथा १० दिन से अधिक अनुपस्थित रह जाता तो उसके पिता को जुर्माना देना पड़ता था। यह जुर्माना दो आने से लेकर एक रुपये तक होता था। जुर्माने का रुपया शिक्षा में ही व्यय किया जाता था।

अनिवार्य कक्षाओं में शिक्षा मुफ़्त दी जाती थी। स्कूल का समय इस प्रकार रक्खा गया था, जिसमें किसानों के लड़कों को खेती के समय स्कूल न जाना पड़ता था। इस प्रकार महाराज ने किसानों को दोषारोपण करने का अवसर तक नहीं दिया। ऐसे समय में शिक्षा दी जाती थी कि बालकों के घराऊ कार्य में ज़रा भी असुविधा न होती थी।

दुःखों की परीक्षा।

यद्यपि महाराज ने अनिवार्य प्रारम्भिक शिक्षा से उत्पन्न हुए प्रत्येक दोष तथा दुःख को दूर करने का यत्न किया, तथापि शिकायतें होने लगीं। शिक्षा के दोष निकालनेवाले कहने लगे कि महाराज अपनी प्रजा के बालकों को अनिवार्य शिक्षा के लिए—उस समय जब कि दूसरे रजवाड़े या अँगरेज़ी राज्य ने भी ऐसा नहीं किया है—क्यों तंग कर रहे हैं? अमरयों का कहना था कि युवाओं से जुर्माना लेने का यह एक ढंग निकाला गया है। कोई कोई कहते थे कि जुर्माने से राज्य में अन्याय किया जायगा, कुछ का कहना था कि शिक्षित शिक्षकों तथा स्कूल-भवनों के अभाव से महाराज अकृतकार्य होंगे।

किन्तु महाराज इस आन्दोलन को पहिले ही से जान गये थे। वे जानते थे कि ये बातें बिलकुल निःसार हैं, और यदि वे दृढ़ रहेंगे तो सारी अड़चनें दूर हो जायँगी। साथ ही महाराज को यह भी चिन्ता थी कि प्रजा वास्तव में दुःख में न पड़े। अतः उन्होंने आवश्यक विषयों पर विचार करने के लिए एक कमीशन नियुक्त किया। कमीशन ने अपने कार्य को जुलाई, १९०२, में आरम्भ किया। बहुत सी गवाहियाँ लेने के बाद महाराज के पास एक रिपोर्ट भेजी गई।

कमिश्नरों ने अनुमति दी कि अनिवार्य शिक्षा की प्रथा जारी रक्खी जाय और बालिकाओं की उमर अनिवार्य शिक्षा के लिए १० की जगह ११ कर दी जाय। अनिवार्य शिक्षा की कक्षाएँ तृतीय से चतुर्थ तक की जायँ। स्कूल से बिना छुट्टी के अनुपस्थिति का समय, जिसमें माता-पिताओं को जुर्माना देना पड़ता है, १० दिन से घटाकर ६ दिन कर दिया जाय। स्कूल में उपस्थिति का समय सप्ताह में ३२ घंटे से २६ घंटे कर दिया जाय। इसके साथ ही नियमों पर विचार करने, नये स्कूल खोलने, शिक्षकों का वेतन बढ़ाने तथा स्कूल-भवन तैयार कराने की अनुमति भी दी गई। कमीशन ने महाराज को और अध्यापिकाओं के नियुक्त करने और अन्य अध्यापिकाओं के वेतन बढ़ाने की भी सलाह दी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रमिक उन्नति ।

समय २ पर महाराज अपनी प्रजा के दुःख को दूर करने तथा कक्षाओं को बढ़ाने के विचार से अपने नियमों में हेर फेर किया करते थे। बालकों के लिए अनिवार्य शिक्षा का समय धीरे २ सात से चौदह और बालिकाओं के लिए ६ से १२ घंटे कर दिया गया। वे पूर्वी कक्षा तक (जो शीघ्र ही छठी होनेवाली है) शिक्षा पाते थे। जुर्माना करने का कार्य कुछ वर्षों तक म्युनिसिपैलिटियों तथा अन्य स्थानिक संस्थाओं के हाथ में था। किन्तु जहां नीच तथा असभ्य जातियाँ रहती थीं, वहां रेविन्यू आफ़िसर ही जुर्माना करते थे।

परिणाम ।

बड़ौदा राज्य में प्रारम्भिक शिक्षा के अनिवार्य होने के लगभग १० वर्ष बाद अत्यन्त आश्चर्यमय फल दिखाई देने लगा। १९१४-१५ में स्कूल जाने योग्य १०० में १०० बालक तथा १०० में ८१.६ बालिकाएँ स्कूलों में शिक्षा पाती थीं। १९१४-१५ के अन्त में ३,००० स्कूल थे, जिनमें २,५०,००० विद्यार्थी पढ़ते थे। इस वर्ष शिक्षा के निमित्त २०,००,०००) रुपये व्यय किये गये। गत वर्षों की रिपोर्ट को देखने से इन अंकों के मूल्य का पता लगता है। उदाहरणार्थ १५ वर्षों ही में विद्यार्थियों और स्कूलों की संख्या तिगुनी हो गई, और व्यय भी अढ़ाई गुना बढ़ गया। बड़ौदे में अनिवार्य शिक्षा इन दो नियमों के कारण सफल हुई है :—

(१) महाराज को शिक्षा के लिए रुपया व्यय करने में ज़रा भी संकोच नहीं होता था। वह शिक्षा के लिए प्रति वर्ष अपने राज्य की आमदनी का दसवां हिस्सा ख़र्च करते थे। (२) महाराज ने दृढ़ होकर प्रजा के लाभार्थ अनिवार्य शिक्षा का मसौदा तैयार किया। उन्होंने नियमों को इस प्रकार बनाया कि प्रजा को ज़रा भी दुःख न पहुंचे।

यदि भारत-सरकार के कार्यकर्ता-गण बड़ौदा-राज्य की तरह व्यय का प्रबन्ध करके अनिवार्य शिक्षा का प्रचार करने की चेष्टा करें तो वे भी सारी बाधाओं को जीत कर भारत से अशिक्षा को दूर करने में समर्थ हो सकते हैं।

भारत-गीत ।

बिछुड़ने वाले यों बिछुड़े। पिछुड़ने वाले यों पिछुड़े

(१)

हमें है सारा क़िस्सा याद। पुराना सुना हुआ संवाद
भरे हैं उससे वेद पुरान। करैं हैं सभी गुनी जन गान
ध्यान दो करके कान खड़े
बिछुड़ने वाले यों बिछुड़े
बिछुड़ने वाले यों बिछुड़े। पिछुड़ने वाले यों पिछुड़े

(२)

हमारा प्यारा हिन्दुस्तान। पुराना है आर्यों का स्थान
कभी था जग में यही प्रधान। कहैं हैं ऐसा सभी सुजान
जगत में थे वह आर्य बड़े
बिछुड़ने वाले यों बिछुड़े
बिछुड़ने वाले यों बिछुड़े। पिछुड़ने वाले यों पिछुड़े

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३)

प्रेम का था यह आदि निवास। सभ्यता, विद्या का घर ख़ास
प्राप्त था सब सुख बिना प्रयास। व्याप्त था विक्रम-विमल विकास

द्रोह के बस में नहीं पड़े
बिछुड़ने वाले यों बिछुड़े
बिछुड़ने वाले यों बिछुड़े। पिछुड़ने वाले यों पिछुड़े

(४)

सोम-रस का करते थे पान। साम-पद का करते थे गान
होम और यज्ञों की थी बान। सत्व और स्वत्वों का था मान

कृत्य पर बीसों बार लड़े
बिछुड़ने वाले यों बिछुड़े
बिछुड़ने वाले यों बिछुड़े। पिछुड़ने वाले यों पिछुड़े

(५)

उन्होंने लेकिन् यह क्या किया। किये पर एकदम चौका दिया
सोम-रस छाड़ द्रोह-मद पिया। प्रेम का गला घोट बिस दिया

गिरे हो औंधे, खोद गढ़े
बिछुड़ने वाले यों बिछुड़े
बिछुड़ने वाले यों बिछुड़े। पिछुड़ने वाले यों पिछुड़े

(६)

शीघ्र ही बढ़ा देश का क्लेश। बदल गयी सूरत, बिगड़ा वेश
मेल का नाम हुआ निःशेष। फूट का धाम हो चला देश

पुण्य के फिसल पाँव पिछुड़े
बिछुड़ने वाले यों बिछुड़े
बिछुड़ने वाले यों बिछुड़े। पिछुड़ने वाले यों पिछुड़े

(७)

मोद का मेला टूट गया। प्रीति का पैंदा फूट गया
एक दम बिधना रूठ गया। क़ौम का पौधा ठूंठ भया

जो मिलने वाले थे बिछुड़े,
जो चलने वाले थे पिछुड़े,
जो उठने वाले थे उखड़े,
जो बनने वाले थे बिगड़े,

बिछुड़ने वाले यों बिछुड़े। पिछुड़ने वाले यों पिछुड़े

श्रीपद्मकोट,
प्रयाग, ८-१२-१६१८

—श्रीधर पाठक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थायी-शान्ति कब हो सकती है ?

[लेखक—श्रीयुत वासुदेव शास्त्री ।]

यह प्रश्न प्रायः सबकी ज़बान पर है। मनुष्य क्या जीवमात्र सभी शान्ति के अभिलाषी हैं। इसी शान्ति की खोज में योगी, यती, संन्यासी घरबार छोड़ त्यागी हो जाते हैं। गृहस्थ इसी शान्ति की खोज में सब कुछ सहते और मरते हैं। इसी शान्ति की प्राप्ति के लिए मानव-समाज नये नये रीति रस्म, नई सभ्यता और कितनी ही नई बातों की खोज किया करता है, किन्तु समय समय पर बड़े २ महाभारतों के होने से, चिरप्रतिष्ठित सभ्यता के नाश और नई सभ्यता के विकाश से विदित होता रहता है कि अभी तक मानव दिमाग़ ने शान्ति की कीमिया को नहीं ढूंढ़ निकाला है। समय के आदि से मानव दिमाग़ इसी शान्ति की प्राप्ति के लिए उपायों की रचना करता आया है, कुछ समय के लिए सफलता प्राप्त भी दिखाई दी है, किन्तु फिर समय ने बड़े बड़े विकराल उलट फेरों से यह साबित कर दिया है कि उपाय सच्चे नहीं हैं, उनमें कुछ त्रुटियां हैं और सुधार तथा कुछ नई बातों का समावेश आवश्यक है।

समय समय पर जो बड़े बड़े महाभारत होते हैं वे इसी बात को साबित करते हैं कि वर्तमान सभ्यता, जो वास्तव में शान्ति प्राप्ति के उपायों का एक सूक्ष्म नाम है, पोली है और उसमें परिवर्तन आवश्यक है।

ज़र, ज़मीन, ज़न।

उर्दू में एक कहावत है कि संसार में जितने झगड़े होते हैं उन सबका आदि कारण "ज़र, ज़मीन, ... ज़न" इन तीनों में से एक होता है। इस कहावत की सत्यता की आँच हम लोगों के सामने रोज़ होती रहती है और प्रायः लोग इस बात में सहमत होंगे कि व्यक्तिगत झगड़े (शान्ति के मार्ग में बाधा) ज़र, ज़मीन या ज़न के कारण होते हैं।

मानव समाज।

मानव समाज मनुष्यों का, व्यक्तिगत पुरुषों का, ही समाज है। राष्ट्र भी मनुष्यों का या मनुष्य की एक दो बड़ी २ जातियों का समाज है, इस कारण जिस प्रकार व्यक्तिगत पुरुषों के झगड़े ज़र, ज़मीन, ज़न के कारण होते हैं उसी प्रकार राष्ट्रों के झगड़े भी ज़र, ज़मीन, ज़न ही के कारण हुआ करते हैं। यदि ज़र, ज़मीन, ज़न कोई ऐसी वस्तु होतीं जिनका मनुष्य को लालच न होता या कम से कम जिनके लिए मनुष्य सब संकटों को भी झेल लेने को तैयार न होता, जिनके ख़याल में मनुष्य अपने को भूल न जाता, या यदि ज़र, ज़मीन, ज़न की कुछ ऐसी व्यवस्था होती कि उनके कारण मनुष्य को लड़ मरना उचित न दिखाई देता तो यह संभव था कि झगड़े का संसार से नाम उठ जाता और संसार में स्थायी शान्ति स्थापित हो सकती।

इतिहास।

समय के आदि से देखिये, मानव-समाज सदा से शान्ति स्थापित करने के लिए प्रयत्न करता चला आ रहा है और शान्ति के लिए सदा वह इसी ज़र, ज़मीन और ज़न की पहेलिका को अपने सामने रखता चला आया है। इसी पहेली को हल करने के लिए कितने ही उपाय मानव दिमाग़ ने ढूंढ़ निकाले। ये ही उपाय अपने अपने समय में आर्य सभ्यता, रोमन सभ्यता, ग्रीक सभ्यता, मुसलिम सभ्यता और पश्चिमीय सभ्यता के नाम से प्रसिद्ध हुए, किन्तु ये उपाय वास्तव में पूर्ण न थे, ये सच्चे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

न थे, समय की कसौटी पर कसे जाने पर ये पूरे न उतरे और मानव दिमाग़ को यह मालूम होते ही कि उसके सोचे हुए उपाय ठीक नहीं हैं वे काल के गर्भ में समा गये, उनका नामो-निशान दुनियां में न रह गया, उन्हीं पिछले उपायों में छिद्रान्वेषण शुरू हुआ और बहुत कुछ परिवर्तन के बाद उन्हीं उपायों का नूतन विकाश या नूतन सभ्यता के नाम से संसार में फिर प्रचार हुआ।

पूर्वीय महाभारत।

पूर्वीय महाभारत के समय में आर्य सभ्यता बड़े ऊँचे आसन पर पहुंच चुकी थी, किन्तु उस समय में भी ज़र, ज़मीन, ज़न की पहेली वास्तव में हल नहीं हो चुकी थी और इस कारण से महाभारत का होना आवश्यक हो गया। महाभारत के समय में सभ्यता नैतिक नियमों से जकड़ी हुई थी। उस समय के मानव दिमाग़ ने ज़र, ज़मीन और ज़न की पहेली के हल करने का उपाय यह सोचा था कि लोग नैतिक नियमों (moral-codes) के बन्धन से जकड़े रहें और स्त्री सर्वथा मनुष्य के अधीन रहे। इसमें सन्देह नहीं कि बहुत कुछ झगड़े इन नियमों के कारण नहीं उठ सकते थे, किन्तु मानव दिमाग ने उस समय एक भीषण भूल की थी और वह ज़न (स्त्री) सम्बन्धी थी। उस सभ्यता ने यह नहीं स्वीकार किया था कि ईश्वर ने जब स्त्रियों की सृष्टि की है तब स्त्रियों का भी कोई स्वतन्त्र उद्देश्य अवश्य होगा। उस सभ्यता ने यह मानकर भूल की थी कि गौ, बकरी, सोना, पैसा की भांति स्त्री भी एक वस्तु है, जिस पर मनुष्य का पूरा अधिकार है और वह अपनी इच्छा के अनुसार जिस भांति चाहे उसका उपयोग या भोग कर सकता है। स्त्री, दन्तकथा में सर्वोपरि रत्न मानी जाती थी, बात भी ठीक थी, क्योंकि सोना, चाँदी की भाँति वह निर्जीव नहीं थी, किन्तु इससे अधिक स्त्रियों का मान न था। उस सभ्यता ने यह स्वीकार नहीं किया था कि मनुष्य की भांति स्त्री के भी आत्मा है और जिस तरह से मनुष्य इसलिए पैदा हुआ है कि वह अपनी आत्मा का विकाश करे उसी भांति स्त्री भी इसलिए पैदा की गई कि वह भी अपनी आत्मा का विकाश और अपने जीवन के उद्देश्य को स्वतन्त्रतापूर्वक सिद्ध करे। अस्तु। महाभारत में आदि ही से इस भूल का आरंभ दिखाई देता है।

द्रौपदी

एक ऐसी वस्तु है जिस पर उसके पिता का पूर्ण अधिकार है और जिसे वह अपनी इच्छा से, एक खेल खेलकर और एक खेलाड़ी पर खुश हो उसे दे सकता है। यह साफ साफ वैसी ही बात है जिस प्रकार हम अपने निर्जीव रुपये या पैसे को, या ज़बान न हिला सकनेवाले गोरू, बैल या कुत्ते को अपनी इच्छानुसार जिसे चाहें दे देते हैं। यह देखने की बात है कि उस समय में यह नहीं स्वीकार किया जाता था कि स्त्री के भी आत्मा है, उसके भी बुद्धि है और कुछ अपना भला बुरा सोचने की शक्ति उसमें भी है। अच्छा तो फिर खेलाड़ी अर्जुन ने द्रुपद को खुश कर लिया, फल-स्वरूप उसे द्रौपदी मिल गई। खेलाड़ी खुश हो घर लौटा, उसने माता से कहा मैं एक चीज़ लाया हूं। माता ने समझा मिठाई होगी, कह दिया, पांचो भाई बाँट खाओ। यहां पर देखने की बात यह है कि यह मालूम होने पर भी कि लड़का लड्डू नहीं वरन् स्त्री लाया है यही बात तय रही कि पांचो भाई हक़दार हैं। ठीक ही था स्त्री आख़िर एक रक्त-मांस-पिण्ड-युक्त सजीव रत्न हो तो थी और फिर अर्जुन का उसपर पूरा स्वत्व था। ऐसी अवस्था में अर्जुन को उसपर पूरा अधिकार था कि जिस तरह से वह चाहे उसका उपयोग करे। कहने सुनने में यह बात कटु मालूम होती है, हमारे धर्म के नाम पर कूदनेवाले लोग अब्रह्मण्यं, अब्रह्मण्यं, नास्तिक, नास्तिक,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कह कर कानों, अँगुली देंगे, किन्तु क्या हम पूछ सकते हैं कि कब स्त्री इसके सिवा और कुछ मानी गई थी ? हम जानते हैं कि स्त्री के सारे उद्देश्य का यहीं पर अन्त था कि वह पति की खिलौना हो, जिसे वह अपनी इच्छानुसार उछाल कुदा ले या मिट्टी में मिला दे। एक युग और ऊपर चलकर देखिये "सीता" क्या थीं ? राम के हाथ में एक मिट्टी का खिलौना, जो समय २ पर अपनी ज़बान और आँख हिला कर उनकी इच्छानुसार उन्हें प्रसन्न कर सकता था। यदि बात यह न होती, यदि राम यह समझते कि सीता के भी आत्मा है तो वे उस निष्ठुरता से अग्निपरीक्षा न करते और न फिर उस अग्निपरीक्षा के बाद यों एक धोबी के बक देने से उसका त्याग ही करते। किन्तु बात तो यह थी कि सभ्यता यही कहती थी कि स्त्री सब प्रकार से मनुष्य के अधीन है और मनुष्य स्वार्थी और सुख का चाहनेवाला, उसका नाममात्र को पति, नहीं नहीं, असल में उसका

स्वामी

है। सीता के लिए हम इस विजयादशमी पर कुछ अधिक कहना नहीं चाहते। द्रौपदी ही को सामने रखिये। एक दिन जुवा आरम्भ हुआ और जुए में अन्य चीज़ों की भांति अर्जुन नहीं वरन् युधिष्ठिर उसे हार गये, और हारे कैसे इस तरह से कि जीतनेवाले दुर्योधन को यह अधिकार हो गया कि वह उसे भरी सभा में नंगी कर दे। इतने ही से यह भली प्रकार विदित हो जाता है कि ज़न (स्त्री) की पहेली उस समय में किस तरह से हल हुई थी। यह उचित न था। जिस उपाय (सभ्यता) में एक हाथ काम करता है दूसरा अलग रहता है, एक मज़बूत रहता है दूसरा कमज़ोर, एक सजीव रहता है दूसरा देखने में सजीव किन्तु वास्तव में निर्जीव (आत्मारहित) वह उपाय (सभ्यता) उद्देश्य की सिद्धि नहीं प्राप्त करता। इसी कारण आर्य सभ्यता समय की कसौटी पर कसी जाने से पूरी नहीं उतरी और उसका अन्त हुआ। राजघराने लड़ गये, प्रजा का नाश हुआ, दोनों कुलों का संहार हुआ और एक बालक सिंहासन पर बैठाया गया। इस प्रकार से सभ्यता के एक युग का चक्र घूमा। मालूम हुआ कि पुरानी प्रणाली में कहीं छिद्र है, पुरानी त्रुटियों को दूर करना, संशोधन करना, नई बातों का समावेश करना आवश्यक है। फिर सभ्यता का चक्र पुरानी ग़लतियों को दूर करना हुआ, पुरानी चट्टानों से बचता हुआ आगे चला।

पृथ्वीराज और जयचन्द

के समय में फिर मालूम हुआ कि उपाय (सभ्यता) ठीक नहीं है। उस समय फिर मानव दिमाग़ यह समझ रहा था कि स्त्री के कोई स्वतंत्र आत्मा नहीं है और स्त्री के अधिकारी को अधिकार है कि वह अपनी इच्छानुसार उसे जिसे चाहे दे दे। यदि स्त्री आत्मा की कोई वास्तव में स्वतंत्र स्थिति मानी जाती होती, यदि मानव समाज ने यह तय कर लिया होता कि जयचन्द को संयुक्ता के विवाह के सम्बन्ध में कोई अधिकार नहीं था तो फिर पृथ्वीराज और जयचन्द में युद्ध न होता, जयचन्द समझ लेता कि संयुक्ता स्वतंत्र है और उसे कोई अधिकार न था कि वह पृथ्वीराज से उसका सम्बन्ध रोकने की चेष्टा करता। अस्तु।

मुस्लिम सभ्यता।

अब मुसलिम सभ्यता को भी परख देखिये। इस सभ्यता में स्त्रियों को बहुत से अधिकार प्राप्त हुए। इन अधिकारों की देन लेन करनेवाले महाजन ख़ूब जानते हैं, किन्तु इस सभ्यता में भी यह त्रुटि रही गई कि वास्तविक स्त्री की अपेक्षा नक़ली स्त्री को अधिक आदर मिला। यह सभ्यता स्त्रियों की आत्मा की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपेक्षा उनके शरीर (रूप) का अधिक आदर करती थी। रूप; (आत्मा नहीं शरीर) जो कमलपत्र पर पड़े हुए ओसबूंद की भांति लोभावना और क्षणभंगुर था, उसी रूप में मनुष्य लीन होगया। दलित-आत्मायुक्त स्त्री अपने वास्तविक गुणों को भूलकर, जिनसे वह सदा के लिए भागते हुए मनुष्य के स्वार्थी और सुख के दीवाने मन को बाँध सकती थी, स्वप्न के पीछे दौड़ी। दिनरात वह अपने शरीर, अपने क्षणभंगुर रूप की सेवा में निरत रहने लगी। असली गुणों का, आत्मा का, विकाश दिन दिन हीन होने लगा। रूप रूपी सुवर्णमृग के पीछे वह भागने लगी। इसका हस्तगत होना, इसका हाथ में आ जाना कठिन था। यह ठहर न सका उधर आत्मा भी निश्चेष्ट और चमकहीन होगई। फल हुआ, प्रेम के प्याले में स्त्री और पुरुष दोनों का नाश। पाठकों को यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि मुस्लिम सभ्यता ने पुरानी भूलों में कितना सुधार कर लिया था। इस सभ्यता ने यह स्वीकार कर लिया था कि उसे ख़र्च की ज़रूरत होती है, किन्तु इसमें हीनता इतनी थी कि यह समझा जाता था कि स्त्री रुपये से मोल ली जा सकती है, उसे ख़र्चने को रुपया देदो बस इससे अधिक की उसे आवश्यकता नहीं।

आर्य सभ्यता धर्म और नैतिक नियमों के नाम पर स्त्रियों से पशुवत् व्यवहार करती और उन्हें गुलाम बनाती थी। मुस्लिम सभ्यता उसे रुपये के ज़ोर से गुलाम बनाना चाहती थी। यह भी कसौटी पर पूरी नहीं उतरी और इसका भी अन्त हुआ। चक्र घूमा।

पश्चिमीय सभ्यता
और
पश्चिमीय महाभारत।

घूमते २ चक्र उलट गया और सभ्यता ने अपना रूप बिलकुल बदल दिया। परलोक के सुख नहीं वरन् आंख से दिखाई देते हुए जीते जागते सुख के चट्टान पर उसकी नींव पड़ी। सब प्रकार से वह उन्नति के पथ पर अग्रसर हुई। ईश्वर को न मान कर वह स्वयम् ईश्वरीय काम कर दिखाने लगी। अवस्था बहुत कुछ सुधरी, किन्तु तब भी ज़र और ज़न स्त्रियों का प्रश्न (Women's problem) और भोजन living, property (ज़र) का प्रश्न पूर्ण रूप से हल नहीं होसका। सभ्यता चकाबू में पड़ गई। मानव दिमाग़ सब देख रहा था, उसने साम्यवादी पैदा किये, किन्तु ग़रीबी और भोजन living and property के चट्टान से सभ्यता का जहाज़ कौरव पांडव की भांति एक ही वृक्ष की दो शाखों में टकराने से उलट गया और अब फिर वह पुरानी ग़लतियों को बचाता हुआ आगे बढ़ेगा।

यह सभ्यता का चक्र सदा यौंही घूमा करता है। इन्हीं चक्रों के बीच डोलने और झटका खाने का नाम इतिहास है। इसी चक्र के एक चक्कर का नाम युग है। प्रत्येक वंश-श्रेणी यही समझती है कि वह उन्नति कर रही है क्योंकि वह स्वयम् पुरानी गलतियों को दूर करती रहती है।

"चक्र यौंही घूमा करता है, मानव दिमाग को इस युगों के परिवर्तन से न कष्ट पहुंचता है, न सुख। यह ठीक उसी तरह से है जैसे बारबार स्वर्ग से नर्क में परिवर्तन दुःखद नहीं हो सकता और न बारबार नर्क से स्वर्ग में जाना ही मुक्ति हो सकता है। कुछ समय बाद जहां मानव दिमाग को इस समय सुधार, उन्नति, मनुष्यों का सदा अपनी ही भूत आत्माओं पर पैर रख कर ऊपर चढ़ना दिखाई देता है वहां पर उसे सिवाय एक मज़ेदार रसभरे मायाजाल और भ्रमजाल के और कुछ नहीं दिखाई देता है, और वह स्वीकार करने लगता है कि संसार में कोई चीज़ नूतन नहीं है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानव दिमाग सदा त्रुटियों को दूर करता हुआ आगे बढ़ने का प्रयत्न करता रहता है। इसी मानव दिमाग़ की पुरानी ग़लतियों के सुधार, पुराने चट्टानों से टकराने से बचने के प्रयत्न को हम विकाश समझते हैं, इसी पुरानी ग़लतियों से रहित मार्ग को या त्रुटियों को दूर रखने के प्रयत्न को हम नूतन विकाश या नूतन सभ्यता के नाम से पुकारते हैं।

क्या हो रहा है ?

यह पश्चिमीय महाभारत नहीं छिड़ा था तभी से मानव दिमाग वर्तमान सभ्यता की त्रुटियों को दूर करने के प्रयत्न में लगा हुआ था। वह यह सोच रहा था कि ज़र, ज़मीन और ज़न के झगड़े कैसे दूर किये जा सकते हैं, वर्तमान सभ्यता में क्या परिवर्तन होने चाहिये, किस प्रकार से युद्ध रोका जा सकता है और किस रज्जू के सहारे लाने से सभ्यता का जहाज़ लोभ, मोह, द्वेष, ईर्षा विकृत मनुष्य निर्मित ईर्षा द्वेष, आदि की चट्टानों से टकराने से बच सकता है ? इन्हीं सवालों का हल करना, इन्हीं दिक़्क़तों को मार्ग से दूर करना, नूतन नहीं वरन् भावी सभ्यता या विकाश का, काम होगा। इस सभ्यता का, विकाश का, रूप निश्चित करना हमारा आपका और वर्तमान मानव-समाज का काम होगा। इस समय में भी प्रथम प्रश्न जो हम लोगों के सामने आता है वह यह है कि—

युद्ध कैसे बन्द हो ?

समय के आदि से ही युद्ध होता आया है देवासुर संग्राम की गाथा सभी को मालूम है। आज तक मानव दिमाग ने ऐसा कोई उपाय नहीं ढूंढ़ निकाला जिससे युद्ध का होना बन्द हो सकता।

बहुत से विद्वानों ने इस ओर ध्यान दिया है, बहुत सी बातें इस सम्बन्ध में कही भी जा चुकी हैं, किन्तु अभी तक या तो वे जनता तक पहुंची नहीं हैं और या जनता ने उन्हें स्वीकार नहीं किया है।

दो रत्न।

संसार में रत्न ही के लिए सब कुछ होता है। रत्न वास्तव में दो हैं। एक गृहलक्ष्मी और एक लक्ष्मी (धन)। इन दोनों रत्न-सम्बन्धी पहेलियों के हल हो जाने पर, हमारा विश्वास है, संसार में शान्ति विराजेगी। अन्तिम दिनों में पश्चिमीय सभ्यता के गर्भ में भी वास्तव में यही Women's Problem (गृहलक्ष्मी का प्रश्न) और Living (भोजन-लक्ष्मी) का प्रश्न था।

गृहलक्ष्मियों के सम्बन्ध में अपनी कौनसी गलतियों को हमें सुधारना है, उनका भविष्य-काल में स्वरूप क्या होगा; इस सम्बन्ध में भी विचार होरहा है। संसार के कितने ही विद्वान् इस पहेली को हल कर रहे हैं। पूर्वीय दिमाग ने रवीन्द्र बाबू के सहारे "चित्रों" के द्वारा एक चित्र सामने रक्खा है। पश्चिमीय दिमाग भी बरनार्ड शा और कितने ही अन्य विद्वानों के द्वारा अपनी मनसा प्रकाशित कर रहा है। अन्त में क्या तय होता है, भविष्य में, भावी सभ्यता के युग में, नई शताब्दि के राज-कुल में गृहलक्ष्मियां क्या होंगी यह तय होरहा है। इस सम्बन्ध में हम कुछ नहीं लिखना चाहते, दशा का पूर्ण अनुमान अभी विद्वानों ने भी नहीं तय कर पाया है।

लक्ष्मी का प्रश्न।

"Money is the Counter that enables life to be distributed socially, it is life as truly as sovereigns and bank notes are money."

Bernard Shaw.

इस संबंध में हमें केवल इतना ही कहना है कि संसार में सब से नाशकारी बुराई और सब से जघन्य पाप "गरीबी" है। प्रथम कर्तव्य मनुष्य का यह है कि वह गरीब न रहे। यदि सब से भयानक उपद्रव को पैदा करने-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खाली गरीबी लोगों के सर पर नाचा करेगी तो विकाश या सभ्यता की पहिली आवश्यक वस्तु निर्भयता, परित्राण और सुरक्षितत्व की स्थिति असंभव है। "जिस विकाश में, जिस सभ्यता में सुरक्षा पुलिस पर निर्भर है, जिसका वास्तव में काम यह है कि वह गरीब मनुष्यों को बाध्य करे कि वह देखें कि उनके बालबच्चे भूखों मरें जब काहिल बड़े आदमी अपने कुत्तों को इतना खिलावें और पहिनावें जिससे एक गरीब के कुटुम्ब का पालन हो सके, वह सभ्यता चिरस्थायी नहीं रह सकती। जिस सभ्यता में एक मनुष्य भूखों मरे और दूसरा सोने के पलनों पर झूले वह सभ्यता कभी चिरस्थायी नहीं हो सकती। जिस सभ्यता में जेलखाने मौजूद हों, जिस सभ्यता में ज़रा सी भूल के कारण लोग जेलों में ठूंस दिये जायँ, जहां से प्रायः वे अधिकतर पापी होकर निकलते हैं, वह सभ्यता चिरस्थायी नहीं हो सकती। जब हम लोगों ने तनिक सी भूल के लिए जेल की सज़ा, बेत की सज़ा, कालकोठरी आदि गरीबों को सताने के लिए कितने ही यंत्र ढूंढ़ निकाले हैं उसी समय में हम लोग गरीबों की गरीबी दूर करने के ख्याल से कोसों दूर हैं, मानो गरीबी मनुष्यों के लिए कोई पुष्टिकरण औषधि, सद्गुण, साधुशीलता, सदाचार या सुलक्षण है। एक तरफ से यह कहा जाता है कि अयोग्यों के लिए कुछ नहीं है, उन्हें "गरीब रहने दो"। दूसरी ओर से मानो उनकी हँसी उड़ाने को उसी समय कहा जाता है कि गरीब धन्य हैं क्योंकि ईश्वर उन पर प्रसन्न होगा।

अर्थ क्या है ?

हम लोगों को देखना चाहिये कि "गरीब रहने दो" का वास्तव में अर्थ क्या है ? इसका अर्थ यह है कि उसे कमज़ोर रहने दो, उसे मूर्ख रहने दो, उसे गन्दा रहने दो और समस्त बीमारियों का उसे केन्द्र रहने दो इसके मानी ये हैं कि वह अपनी गरीबी के कारण कम मज़दूरी पर काम करेगा, साथ ही साथ अन्य मज़दूरों को अपनी मज़दूरी उसी के बराबर करनी होगी।

फल क्या होगा ?

अयोग्य और भी अयोग्य होंगे। उनके निवासस्थान जीती जागती, चलती फिरती बीमारियों के घर होंगे, नतीजा यह होगा कि गरीब और भी गरीब होंगे, किन्तु साथ ही साथ अमीर स्वर्ग में ख़ज़ाना नहीं एकत्र करेंगे वरन् अपने लिए पृथ्वी पर वे विकराल नर्क उत्पन्न कर लेंगे। भावी सभ्यता का, वर्तमान मानव दिमाग का यह कर्तव्य है कि वह संसार से इस पापमय गरीबी को दूर करे। एक स्थान पर अमीरी दूसरे स्थान पर गरीबी इन ऊँचे ख़ाली खड्डों में तैरता हुआ सभ्यता का जहाज़ बिना उलटे नहीं रह सकता। स्थायी शान्ति के लिए यह आवश्यक है कि संसार में कोई अमीर और कोई गरीब न हो।

यह मसला भी तय होरहा है। साम्यवादी इस विचार को फैला रहे हैं और सभ्य समाज में अब यह बहुत कुछ आदर की दृष्टि से देखा जाने लगा है। बृटिश मंत्रिमंडल के नरपुङ्गव लायड जार्ज ने लक्ष्मी (Living) के प्रश्न को बहुत कुछ उस दिन तय कर दिया था जिस दिन संसार के सामने उन्होंने Universal old age Pension और Legal minimum wage का प्रस्ताव पेश किया था। किन्तु कुछ विद्वानों की राय है कि यह गरीबी का प्रश्न उसी दिन पूरी तौर से हल होगा जिस दिन कोई राजनीतिज्ञ "Universal Pensions for life" का प्रस्ताव पास करा लेगा उस दिन दुनियाँ से गरीबी जाती रहेगी। स्टेट, सरकार का यह कर्तव्य होगा कि वह अपनी जनता को खर्च दे और देखे कि कोई गरीबी के बोझ से तो नहीं दब रहा है। अभी एक गरीब मनुष्य से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम कह बैठते हैं तुम्हें रुपये की ज़रूरत है। मेहनत करो, पैदा करो, मानो उसके पैदा करने न पैदा करने का फल उसी को भोगना पड़ेगा। हम उसको पैदा करने में मदद नहीं देते। हम उसको अवसर नहीं देते कि वह परिश्रम कर पैदा कर सके। हममें न इतनी दुनियवी अक्ल है कि हम सोचें कि वह भूखों मर नहीं सकता लाचार वह चोरी या चंडाली करेगा और न हमारे नैतिक भाव इतने प्रबल हैं कि हम सोचें कि वास्तव में यदि हमारी जान में कोई भी भूखों मर रहा है तो उसके भूखों मरने का पाप हम पर भी है और एक न एक रूप में उस पाप का प्रायश्चित्त हमें करना ही होगा।

The crying need of the humanity is not for better morals, cheaper bread, temperance, liberty, culture, redemption of fallen sisters and erring brothers, nor the grace, love and fellowship, of the Trinity, but simply for enough money. And the evil to be attacked is not sin, suffering, greed, priestcraft, kingcroft, demagogy, monopoly, ignorance, drink, war, pestilence, nor any other of the scepegoats which reformers sacrific:, but simply poverty.

"Bernard Shaw',

जिस दिन संसार से गरीबी का प्रश्न उठ जायगा, जिस दिन संसार में समता, कहने को नहीं, वरन् वास्तव में स्थापित हो जायगी, उस दिन संसार से (living) लक्ष्मी का प्रश्न उठ जायगा। संसार की शान्ति के लिए अनेक राजाओं का न होना भी अवश्यम्भावी है। यदि आज समस्त यूरोप का राजा एक होता, बाकी समस्त राष्ट्र छोटे छोटे स्वतन्त्र अधीन राष्ट्र होते और वे भाई बन्दों की भांति साम्राज्य में मिले होते, किसी भी राष्ट्र में कोई ऐसा हीन दरिद्र मनुष्य न होता जो उदर-पालन के हेतु अपने भाइयों की हत्या करने का बीड़ा ले सेना में नौकरी कर उदर पालन करता तो संभव न था कि आज यूरोप को यह दिन देखना पड़ता। इस प्रकार से संसार में जितने कान्टीनेंट्स हैं उतने ही राजा हो सकते किन्तु कौन कह सकता है कि भविष्य में फिर किसी चक्र को यह निर्धारित न करना पड़ेगा कि संसार में एक ही राजा हो सकता है और मानव समाज सब उसी की प्रजा हो सकती है। इस राज्य में सभी के स्वत्व बराबर होंगे, कोई बड़ा छोटा न होगा और न कोई अमीर या गरीब ही होगा। हमारी समझ में ज़र और ज़न सम्बन्धी कुछ ऐसी ही व्यवस्था होने पर चिरस्थायी शान्ति संसार में विराजेगी। अब पाठक स्वयम् विचारें और देखें कि बात कहां तक ठीक है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय टिप्पणियाँ ।

स्थायी-शान्ति

की पहेलिका इस समय संसार के सामने है। संसार के राजनीतिज्ञ इसी को हल करने में लीन हैं। आधुनिक समय के नरतत्त्व तीन क्रियाओं से इस पहेलिका को हल करना चाहते हैं। क्रियाओं का नाम (१) समुद्रों की स्वतंत्रता, (२) राष्ट्र-संघ और (३) स्वभाग्य-निर्णय का अधिकार है। राजनीतिज्ञों का कहना है कि यदि राष्ट्र-संघ का निर्माण हो जाय, स्वभाग्य-निर्णय का अधिकार छोटी और बड़ी जातियों को प्राप्त हो जाय और साथ ही में समुद्रों में शान्ति और युद्ध के समय में भी आने जाने और व्यापार करने की सब को एक समान स्वतंत्रता प्राप्त हो तो फिर संसार से युद्ध का नाम उठ जायगा। यूरोपीय राजनीतिज्ञों की आजकल यह सम्मति है, किन्तु 'मर्यादा' के एक आदरा-स्पद लेखक श्रीमान् वासुदेव शास्त्रीजी ने युद्ध के आरम्भ के दिनों में ही 'मर्यादा' (भाग ८ अगस्त) में स्थायी-शान्ति के मसले पर विचार किया था। संभव है उस समय लोगों ने समुचित ध्यान उस लेख पर न दिया हो इसी कारण से उस लेख को 'मर्यादा' की पुरानी फाइलों से निकालकर हमने इस संख्या में उद्धृत किया है। लेख को पढ़ने के बाद पाठकों को विदित होगा कि एक भारतीय राजनीतिज्ञ ने दो तीन वर्ष पहिले ही उन बातों को कह दिया था जिनकी पुष्टि आज प्रेसीडेन्ट विलसन की अध्यक्षता में यूरोपीय राजनीतिज्ञ कर रहे हैं। यह सच है कि उसमें League of Nations, Self Determination, राष्ट्र-संघ या स्वभाग्य-निर्णय के शब्द नहीं आये हैं, किन्तु प्रस्तावों की तह तक घुसने पर ये सब भाव शास्त्री जी की बातों में दिखाई देंगे। स्त्रियों का आदर बढ़ गया है, उनको राजनैतिक अधिकार भी मिल गये हैं, राष्ट्रों के संचालन में उनका हाथ होगा यह सब तय हो चुका है। गरीबी का मसला हल हो रहा है। इंगलैंड के प्रधान सचिव गरीबों, सैनिकों और कृषकों के लिए विशेष प्रबन्ध करनेवाले हैं। मज़दूर दल और साम्यवादी यूरोप से गरीबी का नामोनिशान उठाने की क़सम सी खाये बैठे हैं। समुद्रों की स्वतंत्रता का प्रश्न शास्त्रीजी ने नहीं उठाया था। इस ओर उनका ध्यान कदाचित् इसीसे नहीं गया कि वे संसार की शान्ति के प्रश्न पर विचार कर रहे थे न कि यूरोप की। समुद्रों का यूरोप से ही घनिष्ठ सम्बन्ध होने के कारण भी संभव है उनका ध्यान उस ओर आकृष्ट न हुआ हो। यह भी संभव है कि उन्होंने समझा हो कि उनकी प्रस्तावित बातों के कार्यरूप में परिणत हो जाने के बाद समुद्र की अस्वतंत्रता भी संसार की शान्ति को विचलित न कर सके। शास्त्रीजी ने लिखा था "संसार की शान्ति के लिए अनेक राजाओं का न होना भी अवश्यम्भावी है।" (आज दिन यूरोप में कुछ इसी तरह के भाव ज़ोर पकड़ रहे हैं) "यदि आज समस्त यूरोप का राजा एक होता, बाकी समस्त राष्ट्र छोटे छोटे स्वतंत्र अधीन राष्ट्र होते और वे भाईबन्दों की भांति साम्राज्य (संसार-साम्राज्य) में मिले होते (राष्ट्र-संघ कुछ इसी प्रकार का होगा) किसी भी राष्ट्र में कोई ऐसा हीन दरिद्र मनुष्य न होता जो उदर पालन के हेतु अपने भाइयों की हत्या का बीड़ा ले सेना में नौकरी कर उदर पालन करता तो संभव न था कि आज यूरोप को यह दिन देखना पड़ता" (लायड जार्ज प्रभृति राजनीतिज्ञ अब प्रयत्न कर रहे हैं कि स्थायी सेना, अनिवार्य सैनिक शिक्षा या सेवा राष्ट्रों में न रहे, लड़ाई के सामानों को विशेष रूप से कम कराने की चेष्टा प्रे० विलसन कर रहे हैं, राष्ट्र-संघ के राष्ट्रों को यह सब करना होगा। शास्त्रीजी के लेख को हमने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्धृत किया है और हम आशा करते हैं कि पाठक उस पर विचार करेंगे।

स्वनामधन्य अरविन्द घोष की पत्नी मृणालिनी देवी के २८ वर्ष की अवस्था में ही स्वर्गारोहण का दुःखद समाचार कलकत्ते से आया है। दुःख से कहना पड़ता है कि ऐसी देवी को भी अन्त समय में पति के मुखारविन्द देखने का सौभाग्य नहीं प्राप्त हुआ। पाठकों से छिपा नहीं कि अरविन्द बाबू पाँडीचेरी में प्रायः ७ वर्ष से देशनिर्वासित की भाँति रह रहे हैं।

१५ दिसम्बर को कानपुर में बड़े ज़ोर शोर से स्वराज्य सभा का साधारण अधिवेशन हुआ। कांग्रेस के लिए प्रायः १५० प्रतिनिधि चुने गये, स्वभाग्य-निर्णय तथा और भी अनेक महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास हुए। मुं० ईश्वर शरण, महाशय काशीनाथ, श्री० गणेशशंकर विद्यार्थी, पं० कृष्णकान्त मालवीय आदि व्याख्यानदाताओं के व्याख्यान हुए। स्वभाग्य-निर्णय के सम्बन्ध में प्रान्त में पहली सभा करने का श्रेय कानपुर को प्राप्त है और इसके लिए कानपुर निवासियों को हम बधाई देते हैं। सभापति का आसन डा० मुरारीलाल ने सुशोभित किया था।

प्रान्तीय व्यवस्थापक सभा की पिछली बैठक में गोरखपुर गोडैत बिल पास हो गई। अब तक ग्रामों में गोडैत ज़मीन्दार की ओर से रहते थे, ज़मीन्दार की तरफ से उनको ज़मीन जोतने बोने को मुफ़्त मिलती थी। अब गोडैत सरकारी होंगे। सरकार उनको नियुक्त किया करेगी। पुराने गोडैत जिसमें बेकार न हो जायँ और उनकी जीविका का भी प्रबन्ध बना रहे यह तय हुआ है कि ज़मीन्दारों से जो ज़मीन उनको मिली थी उसीको वे जोतें बोयें किन्तु उसके लिए अब उनको ज़मीन्दार को लगान देना होगा। लगान सरकारी अफ़सर द्वारा तय होगा। दूसरी महत्वपूर्ण बात यह हुई कि राय आनन्दस्वरूप ने प्रारंभिक शिक्षा बिल उपस्थित की। सरकारी अफ़सरों ने विरोध नहीं किया। सिलेक्ट कमेटी निर्वाचित की गई है और डेढ़ मास के भीतर ही वह अपनी राय इस संबन्ध में प्रकट करेगी। महँगी के संबन्ध में भी विचार किया गया। सरकार की ओर से मि० चटर्जी ने कहा कि सरकार यथाशक्ति प्रयत्न कर रही है। सस्ते गल्ले की दूकानें म्युनिसिपैलिटियां और दीन दुःख निवारणी संस्थाएँ खोल रही हैं, प्रान्त से गल्ला बाहर नहीं भेजा जाने पाता है, साथ ही अन्य प्रान्तों से गल्ला मँगाया जा रहा है। कपड़े के संबन्ध में मि० चटर्जी ने कहा कि विलायत से कपड़ा मँगाने का प्रबन्ध होरहा है। कम वेतन पानेवाले सरकारी नौकरों की वेतन-वृद्धि के संबन्ध में भी विचार होरहा है। अन्त में राजा जहाँगीराबाद ने यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि वाइसराय महोदय के द्वारा सम्राट् के पास युद्ध के अन्त होने की बधाई का तार भेजा जाय। उपस्थित सदस्यों ने मुक्तकंठ से प्रस्ताव का अनुमोदन किया। छोटे लाट ने इस प्रस्ताव पर बोलते हुए कहा कि भारतीयों की यह आशंका व्यर्थ है कि लंडननिवासी २० अगस्त १९१७ को दिये हुए अपने वचन से पराङ्मुख होने की चेष्टा करेंगे।

प्रेसीडेन्ट विलसन ने पेरिस में व्याख्यान देते हुए कहा है कि मेरी राय में कोई ऐसा उपाय इस समझौते में करना होगा जिससे दुष्टों, अत्याचारियों और व्यर्थ की लूट मार करनेवालों को यह मालूम हो जाय कि बिना दंड पाये ऐसे कामों के करने पर वे बच नहीं सकते। लोगों की यह राय है कि प्रेसीडेन्ट विलसन की इस बात से यह प्रत्यक्ष है कि जर्मनी और क़ैसर को किये का फल भोगना होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इङ्गलैंड में पार्लमेंट के सदस्यों का चुनाव आरम्भ होगया है। अधिकतर प्रतियोगिता कालिशन (गंगा यमुनी मिश्रित) दल और मजदूर दल में है। गंगा यमुनी दल जनता की सामयिक भावुकता को खूब अपना रहा है। कैसर को युद्ध के लिए सज़ा देने, उनको उत्तरदायी ठहराने और जर्मनी से क्षतिपूर्ति की रकम लेने की वह नित प्रति क़समें खारहा है। मि० वालटरलाङ्ग यही चिल्लाते फिर रहे हैं कि दक्षिण-अफ्रिका के जर्मन उपनिवेश जर्मनी को नहीं लौटाले जायँगे। इस दल की नीति इस समय कुछ ऐसी है कि वोट हमारे पक्ष में दो, जो कहोगे वही करेंगे। मज़दूर दल की नीति बिलकुल विपरीत है। मैंनचेस्टर गार्डियन का कहना है कि क्षति-पूर्ति की रकम को जर्मनी से लेने का अर्थ यह होगा कि जर्मन जनता मित्र राष्ट्रों की बहुत दिनों तक गुलाम बनी रहे। आधुनिक संसार में गुलामी के लिए स्थान नहीं है। यह भी कहा जाता है कि यदि समझौता के कारण दिलों में दाग रह गया तो फिर कुछ दिनों बाद युद्ध छिड़ेगा। जर्मनी ने फ्रान्स से क्षति पूर्ति का रुपया लिया था उसी के कारण इतने दिनों बाद युद्ध हुआ-अब मित्र राष्ट्रों को यही भूल न करनी चाहिये।

❀

सन्धि-कानफरेंस में हमारे राष्ट्रीय प्रतिनिधि की आवश्यकता।

संसार में एक नये युग का आरम्भ है। स्वाधीनता और समानता की लहर ज़ोरों पर बह रही है। प्रत्येक राष्ट्र भविष्य की चिन्ता में संलग्न है। इंगलैंड, जर्मनी, फ्रांस, एमेरिका, आस्ट्रिया हंगरी, रूमानिया, बलगेरिया, टर्की, मांटीनिग्रो तथा बेलजियम आदि सभी देशों में स्वभाग्य-निर्णय का प्रश्न आन्दोलित होरहा है। बड़ी जातियों का तो कहना ही क्या, छोटी २ जातियां स्वतंत्र होने की चेष्टा कर रही हैं। राज्य-संगठन किस प्रकार का हो और शासन-प्रणाली किस ढङ्ग की हो, इसी उद्देश्य, इसी भावना से प्रेरित होकर वे अपने २ प्रतिनिधियों को सन्धि-कानफरेंस में भेज रही हैं। भारतवर्ष से भी गवर्नमेंट ने दो प्रतिनिधि भेजे हैं। एक तो सर एस० पी० सिनहा और दूसरे महाराजा बीकानेर। पहिले सज्जन बृटिश भारत की ओर से और दूसरे देशी राज्यों की ओर से। इसमें सन्देह नहीं कि ये दोनों महानुभाव योग्य हैं, किन्तु इनका चुनाव जिस प्रकार से हुआ है उसे देखते हुए हमें सन्तोष नहीं। सन्तोष न होने का मुख्य कारण यह है कि इन्हें भारतीय जनता ने नहीं चुना है वरन् चुना है भारत सरकार ने, जिसका स्वार्थ और हित हमसे भिन्न है। अस्तु, यह अनुमान नहीं किया जा सकता कि सन्धि-कानफरेंस में भारत के लोकमत का वास्तविक चित्र खींचा जा सके। इसी लिए हम चाहते हैं कि हमारी जातीय महासभा में से चुने हुए किसी ऐसे सज्जन को कानफरेंस में स्थान मिले जो हमारी आवश्यकताओं को भली भांति दिखला सके, अन्यथा भारत को हानि पहुंचने की बहुत बड़ी सम्भावना है।

❀

धन्यवाद।

'मर्यादा' के विगतांक में गढ़वाल में कम्बलों की सहायता के लिए एक अपील छपी थी। प्रसन्नता की बात है कि भरवारी, प्रयाग के श्रीयुत कन्हैयालाल-राधाकृष्ण, श्रीयुत भैरव-प्रसाद-रामभरोस, श्रीयुत मोतीलाल-रामकुमार, श्रीयुत मोती चौधरी और श्रीयुत रामसहाय-रामरत्न आदि सज्जनों ने श्रीयुत बाबूलालजी के मार्फत हमारे पास ७०) रुपये की रकम भेजी है। दानी महाशयों को उनकी इस दानशीलता पर धन्यवाद। दान का यह रुपया स्थानीय सेवासमिति के दफ़्तर में भेज दिया गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारी राष्ट्रीय संख्या

शीघ्र ही प्रकाशित होगी। पाठकों को यह सुनकर प्रसन्नता होगी कि 'मर्यादा' का एक नूतन प्रबन्ध हो रहा है और संभव है अब से नये सजधज से वह पाठकों की सेवा में उपस्थित हुआ करे। उसका कागज़ अच्छा होगा, उसकी छपाई अच्छी होगी, और उसमें चित्र भी रहा करेंगे। मूल्य भी उसका कदाचित् कुछ बढ़ जायगा। संभव है इन कारणों से जनवरी की संख्या के प्रकाशन में कुछ विलम्ब हो जाय। जनवरी की संख्या में प्रायः निम्नलिखित विषय प्रकाशित होंगे:—

१—मज़दूरों का आन्दोलन, उसकी शक्ति और क्रियाशीलता एवम् भावी सभ्यता पर उसका प्रभाव।

२—राष्ट्रीय-संघ, उसके सिद्धान्त और उनके प्राप्त करने का उपाय।

३—क्या फिर युद्ध होगा?

४—सामुद्रिक स्वतंत्रता, उसके अर्थ क्या हैं क्या यही दूसरे झगड़े की नींव होगी।

५—प्रजातंत्रवाद और उसका भविष्य।

६—क्या राजाओं ही के कारण युद्ध हुआ करते हैं?

७—प्रेसीडेंट विलसन की सन्धि-सम्बन्धी चौदह शर्तें और उनका उद्देश्य?

८—स्वभाग्य-निर्णय के सिद्धान्त और भारत सरकार के भावी संगठन पर उसका प्रभाव।

९—सुधार-योजना में आर्थिक दायित्व।

१०—स्वभाग्य-निर्णय का सिद्धान्त और उसका लक्ष्य?

११—अन्तर्जातीय स्थिति और भारतवर्ष के लिए स्वराज्य।

१२—भारतवर्ष को स्वराज्य मिलने पर शिक्षा में कौन २ सा सुधार होना चाहिये।

१३—वोट देने के लिए वोटाधिकार देनेवाली कमेटी को किन २ सिद्धान्तों पर चलना चाहिये?

१४—औद्योगिक कमीशन की रिपोर्ट।

१५—नवीन रूस का जन्म।

१६—कर्तव्य-निर्धारिणी कमेटी के उद्देश्य।

१७—हमको क्या करना चाहिये।

लेखकों में

स्वनामधन्य श्रीमती एनी बीसेंट, श्रीयुत एन० एम० मजूमदार, श्रीयुत पी० के० तैलङ्ग, श्रीयुत मुन्शी ईश्वरशरण, श्रीयुत श्रीप्रकाश, श्रीयुत ताराचन्द, श्रीमती उमादेवी नेहरू, श्रीयुत बी० पी० वाडिया, श्रीयुत देवले, श्रीयुत शिवप्रसाद, श्रीयुत राजेन्द्रप्रसाद, श्रीयुत पुरुषोत्तमदास टंडन, श्रीयुत मंज़रअली सोख़्ता, श्रीयुत इक़बाल नारायण गुर्टू, श्रीयुत वेणीप्रसाद, पं० कृष्णराम मेहता, पंडित काशीप्रसाद पांडेय, पंडित अम्बिकाप्रसाद बाजपेयी, श्रीयुत गणेशशङ्कर विद्यार्थी और श्रीयुत स्नेही जी आदि हैं।

करामात तैल कान बहने, कम सुनने, निपट बहरेपन शब्द होने, परदों की कमज़ोरी व कान के सर्व रोगों की अनुभवी रामबाण दवा है। मूल्य फ़ी शीशी १।)।

बल्लभ ऐण्ड को०, पीलीभीत यू० पी०।

अभ्युदय प्रेस, प्रयाग में बद्रीप्रसाद पाण्डेय के प्रबन्ध से छपकर प्रकाशित हुई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मर्यादा

मासिक पत्रिका।

सोलहवां भाग।

जुलाई—दिसम्बर

१९१८

वार्षिक मूल्य साढ़े तीन रुपया।

अभ्युदय प्रेस, प्रयाग।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्णानुक्रमिक विषय-सूची।

विषय	पृष्ठ से पृष्ठ तक
१-अगमुद्दैयान जातिवालों की रीति-रस्म-श्रीमती हेमन्त कुमारी देवी	२४१-२४४
२-इतिहास और उसका अध्ययन-जीवनशङ्कर याज्ञिक	११०-११६
३-उद्बोधन (कविता)-कन्हैयालाल जैन "कस्तला"	७८-८०
४-उद्बोधन (कविता)-श्रीकान्त 'कुसुमाकर'	१४४
५-ऊषा का स्वागत (कविता)-इलाचन्द्र जोशी	७५
६-एक तुलना	२१७-२२०
७-कोरिया या वृहत्तर जापान-प्रवासी भारतवासी	६५-७०
८-कोरिया या वृहत्तर जापान-प्रवासी भारतवासी	१६६-१७८
९-गेय-गीत-श्रीयुत लक्ष्मणसिंह क्षत्रिय "मयङ्क"	१८७
१०-छत्रपति महाराज शिवाजी की श्रेष्ठ योग्यता-श्रीयुत लक्ष्मी-सहाय माथुर	२१५-२१६
११-जाति मानस शास्त्र और सार्व-जनिक आन्दोलन-श्रीयुत कृष्ण-दत्त शर्मा पालीवाल	१७८-१८६
१२-नरोचित कविता)-श्रीयुत श्रीकान्त "कुसुमाकर"	२४४
१३-प्रोत्साहन (कविता)-पं० नृसिंह-नाथ त्रिपाठी	१०
१४-प्राचीन भारत में प्रजासत्ता-वाद-श्रीयुत विनयकृष्ण रोहतगी	७१-७५
१५-प्राचीन भारत में प्रजासत्ता-वाद-श्रीयुत विनयकृष्ण रोहतगी	१४१-१४४
१६-फूल (कविता)-श्रीयुत विष्णु-प्रसाद दीक्षित 'उपेन्द्र'	२०६
१७-बिछुड़नेवाले यों बिछुड़े (कविता)-'सनेही'	१८६
१८-बड़ौदा राज्य में अनिवार्य शिक्षा-श्रीयुत सन्त निहालसिंह	२५३-२५६
१९-भारतवर्ष के शिला लेख-श्रीयुत भवानीशङ्कर याज्ञिक	२-१०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय	पृष्ठ से पृष्ठ तक
२०-भारतीय शासन-सुधार	११-१८
२१-भारत कहां है ?-अनन्त	७६-७८
२२-भारत पर हमने विजय कैसे प्राप्त की ?-श्रीयुत रामचन्द्र टंडन	१५०-१५६
२३-भारत में डाक लेजाने की रीति-श्रीयुत कृष्णविहारी मिश्र	१५७-१६२
२४-भारतीय शिक्षा का प्रश्न-श्रीयुत भगवन्नारायण भार्गव	१६२-१६७
२५-भारत-प्रशस्ति (कविता)-श्रीयुत रामराज्य सिंह	२१६-२१७
२६-भारत-गीत (कविता)-पं० श्रीधर पाठक	२२६
२७-भारत-गीत (कविता)-पं० श्रीधर पाठक	२५६-२५७
२८-मांटेगू चेम्सफोर्ड सुधार-स्कीम 'अभ्युदय'	२४-२८
२६-मजाल होता (कविता)-श्रीकान्त कुसुमाकर	३४
३०-मांटेगू सुधार व्यवस्था-'मराठा'	३५-३८
३१-मांटेगू-चेम्सफोर्ड स्कीम-श्रीयुत सी० पी० रामस्वामी ऐयर	६१
३२-महायुद्ध और कृषि-उन्नति-श्रीयुत विष्णुमनोहर राशिणकर	८०-८४
३३-मांटेगू-चेम्सफोर्ड-स्कीम-'पालिटिक्स'	११६-१२२
३४-माता की गोद-'ग्रामीण'	१२२-१२४
३५-मूल-मंत्र (कविता)-श्रीयुत श्रीकान्त "कुसुमाकर"	१४६
३६-मेरी व्यापक शिक्षा-नररत्न बुकर टी० वाशिङ्गटन	२३३-२३४
३७-मैं कौन हूं ?-श्रीयुत रुद्रदत्त भट्ट	२०७-२०८
३८-यूरोप के इतिहास पर एक दृष्टि-'राम'	२०६-२१५
३६-यूरोप के इतिहास पर एक दृष्टि-'राम'	२४५-२४६
४०-राजभक्ति की विलायती परिभाषा-पं० माधवराव सप्रे बी० ए०	२३०-२३३
४१-विलायती अबलाओं का बल-मुकुन्दीलाल वर्मा	१६०-१६२
४२-व्यर्थ है (कविता)-श्रीकान्त "कुसुमाकर"	१
४३-वही लोकप्रिय होते हैं (कविता)-मालव मयूर	७१
४४-वर्तमान महाभारत की एक विचित्र घटना	१३३-१४०
४५-विचित्र दशा (कविता)-श्रीकान्त कुसुमाकर	१६६
४६-शासन-सुधारों की स्कीम-'भारत-मित्र'	१८-२४
४७-शासन-सुधार-"प्रताप"	२६-३४
४८-शासन-सुधार-स्कीम	३८
४६-शिक्षा-कथा-श्रीयुत शोभाराम 'धेनुसेवक'	२५१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय	पृष्ठ से पृष्ठ तक
५०-सुधार-योजना पर श्रीयुत गांधी जी	३९-४०
५१-सुधारों पर मा० डा० तेज-बहादुर सप्रू	४१-४२
५२-सुधारों पर मा० श्रीनिवास शास्त्री	४३-४५
५३-सुधारों पर डा० सुब्रह्मण्य ऐयर	४५
५४-सुधारों पर माननीय मालवीय जी की सम्मति	४५
५५-सुधारों पर लोकमान्य तिलक	४६
५६-सुधारों पर श्रीमती बीसेंट	४६
५७-सम्पादकीय टिप्पणियां	४७-६०
५८-सुधार-योजना	८४-९२
५९-सच है (कविता)-श्रीकान्त "कुसुमाकर"	९२
६०-सम्पादकीय टिप्पणियां	९३-१००
६१-सान्त्वना (कविता)-श्रीयुत भगवतीप्रसाद वाजपेयी	१०६
६२-सुधार-योजना	१२५-१३२
६३-स्वायत्त-शासन की योग्यता-बाबू रामानन्द चटर्जी एम० ए०	१४५-१४८
६४-स्वायत्त-शासन की योग्यता-बा० रामानन्द चटर्जी एम० ए०	१६७-१६९
६५-समर्पण (गल्प)-पं० विश्वम्भरनाथ शर्मा "कौशिक"	२००-२०६
६६-सम्पादकीय टिप्पणियां	२२६-२२८
६८-स्वभाग्य-निर्णय का अधिकार-कृष्णकान्त मालवीय	२४९-२५३
६९-स्थायी-शान्ति कब हो सकती है ?-श्रीयुत वासुदेव शास्त्री	२५८-२६४
७०-सम्पादकीय टिप्पणियां	२६५-२६८
७१-हमारा पुस्तकालय	१८८
७२-हिन्दू और हिन्दी-श्रीयुत शालिग्राम एम० एस० सी०	१९३-१९९
७३-हालते चमन (कविता)-श्रीयुत विश्वम्भरनाथ शर्मा "कौशिक"	२२०-२२१
७४-क्षणिक-संधि की शर्तें	२२१-२२६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२००) रुपये दूंगा

बिना औषध के जन्मभर को रोग दूर।

स्वप्नदोष और शीघ्रपतन बड़े भयङ्कर रोग हैं। स्वप्नदोष नौजवानों के शरीर और दिमाग़ को मिट्टी कर देता है, याददाश्त का तो यह दुश्मन है। शीघ्रपतन गृहस्थों का घातक है, समय पर लज्जित होने से लोग मर जाना अच्छा समझते हैं, सन्तान भी नहीं होती। मुझे एक ऐसी क्रिया-विधि प्राप्त हुई है जिससे ये दोनों रोग जन्मभर के लिए जाते रहते हैं। यह कोई दवाई नहीं केवल एक साधन है इस पर भी यदि प्रयोग करने पर रोग दूर न हो तो २००) रु० दंड दूंगा जोकि आप अदालत द्वारा मुझसे वसूल कर सकते हैं। इसके बताने की फ़ीस राजाओं से १००) धनवानों से ५) सर्वसाधारण व विद्यार्थियों से २) रु०। डाक मह०।) आना।

नोट—उक्त क्रिया पत्रद्वारा लिखकर बताई जायगी, साथ ही एक बूटी भी भेजी जायगी जिसका सेवन एक सप्ताह तक आवश्यक है।

प्रकाशक—

चन्द्रशेखर शर्मा धर्मोपदेशक,

(नं० २) पो० जलाली ज़ि० अलीगढ़।

उदरामृत।

अगर आपको भूख कम लगती हो अथवा मन्दाग्नि, अजीर्ण, पेट दर्द, जी मचलाना, खट्टी या जली हुई डकारों का आना, बवासीर, तिल्ली, हैजा, आदि पेट का कोई भी रोग हो तो हमारा जगत् प्रसिद्ध स्वादिष्ट उदरामृत चूर्ण व्यवहार कीजिये; तत्काल गुण दिखाता है। मूल्य फी शीशी ॥=) दर्जन ५॥।) डा० म० दो तक ।-) १२ पर ॥-)

पता--ब्राह्मी औषधालय

(डी ब्रांच) पो० जलाली, ज़िला अलीगढ़।

महात्माओं के चित्र।

हमने बड़े प्रयत्न से भारत के मान० नेताओं देशभक्त महिलाओं तथा चिरस्मरणीय महानुभावों के चित्र तैयार किये हैं। लीजिये, इन आदर्श महात्माओं के चित्रों से घरों को पावन और सुशोभित कर नेत्रों को सफल कीजिये। चित्रों की सूची निम्नलिखित है :—

देशोद्धारक स्वर्गीय मि० गोखले।
मान० पं० मदनमोहन मालवीय।
भारत के वयोवृद्ध ऋषि दादाभाई नौरोजी।
सर फ़ीरोजशाह मेहता।
लोकमान्य मि० तिलक।
देश के सच्चे सपूत महात्मा गांधी सपत्नीक।
श्रीमती एनी बीसेन्ट।
प्रसिद्ध विदुषी श्रीमती सरोजनी नायडू।
महात्मा गांधी के प्रिय शिष्य भारत के शुभ-चिन्तक मिस्टर पोलक।
साहित्य-सम्राट् श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुर।
स्वर्गीय महादेव गोविन्द रानाडे।
विद्यानुरागी स्वर्गीय सर सैयद अहमद खां।
मान० विशुननारायण दर।
मान० गोकर्णनाथ मिश्र।
श्रीमान् बाबू गङ्गाप्रसाद वर्मा।
मि० अरंडेल। मि० वाडिया।
श्री० डा० सतीशचन्द्र। सर सुब्रह्मण्य ऐयर।
श्रीकृष्णस्वामी ऐयर। मि० वोमन जी।
लाला लाजपत राय — सुरेन्द्रनाथ बनर्जी।

इन सब चित्रों का इनलार्जमेंट १०×१२. माउन्टेड १४×१८ दाम प्रत्येक का १०)।

केबिनट साइज़ के प्रत्येक चित्र का दाम ॥।) मर्यादा के ग्राहकों से डाकखर्च और पैकिंग माफ़। औरों से नहीं।

पता=पी० एन० वर्मा एन्ड कंपनी,

मेडेलिस्ट फोटोग्राफर्स, जानसेनगंज, इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंचकोन रूपा सितारा रजिस्ट्री किया ट्रेडमार्क

SKB

कलकत्ते के नामी।

डाक्तर एस, के, बर्म्मन की

३२ वर्ष की प्रसिद्ध

गुणकारी पेटेंट दवाएं।

सावधान!

स्त्री रोग की दवा।

यह सब प्रकार के स्त्री रोग की दवा है। दुर्बल गर्भाशय को शुद्ध व पुष्ट करती है; इसलिये गर्भस्थान के सब रोगों में काम देती है। मासिक धर्म वा ऋतु के से बिकार अधिक वो कम दिनों में महीना होना, कमर, पेड़ू, जांघ में दर्द होना, शिर दर्द, जी मिचली आदि मिटते हैं।

प्रदर दोष जिससे सफेद वा लाल पानी (मवाद) जाता है, खून पतला वा जमा हुआ ज्यादा या कम जाना साथ दर्द आदिक क्लेश होना इस दवा से मिटते हैं।

गर्भ के शिथिल पड़ जाने से गर्भ अकाल में नष्ट हो जाता है, हमल के तीसरे चौथे महीने गिर जाता है। इस हालत में इस दवा के कुछ दिन सेवन से गर्भ पुष्ट होकर ठहर जाता है। यह दवा गर्भ के दोषों को मिटा के दुर्बल शरीर को पुष्ट करती है। मूल्य १।) सवा रुपया शीशी (१६ खुराक) पेकिंग व डाक महसूल ॥) आठ आना।

प्लेग रोकनेवाली गोली।

प्लेग के साथ एक प्रकार अति सूक्ष्म जीव वा कीड़ों का सम्बन्ध प्लेग रोगी के खून में, स्वास में, थूक में वो मल में ये पाये जाते हैं। यही खून में विकार पैदा करते हैं; जिससे आदमी जल्द मर जाता है। इनका असर पहुंच जाने पर फिर रोगी का बचना कठिन है; इसलिए कहीं प्लेग का डर होते ही जहां तक जल्द होवे "प्लेग रोकनेवाली गोली" मंगा रक्खो। इस गोली का शरीर के खून पर ऐसा असर होता है कि जिससे प्लेग के कीड़े फिर वहां ठहर नहीं सकते न अपना विष फैला सकते हैं। समय रहते इस गोली के सेवन से सैकड़ों आदमी प्लेग के बिपद से बचे हैं। आप भी न चूकें। मौताज—१ गोली रोज ठण्डे पानी से निगल जाना। बच्चों को आधी वा चौथाई। मूल्य—३६ गोलियों की डिबिया ॥) आठ आने। १ डिबिया डा० म० ।–) ६० गोलियोंकी बड़ी डिबिया ॥।) बारह आने, डा० म० ।–) पांच आने।

डा: एस. के. बर्म्मन ५. ६. ताराचंद दत्त स्ट्रीट, कलकत्ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

गृहस्थमात्र के [illegible] फ़ायदा करनेवाली अमूल्य दवा

वर्षों से दुनियाँ में विख्यात सरकार से रजिस्टरी की हुई हज़ारों प्रशंसापत्र प्राप्त।

सिर से लेकर पांव तक किसी रोग में देदो, जादू का असर करती है बूढ़ों, बच्चों, जवानों, पुरुषों तथा स्त्रियों के कुल रोगों को जो घरों में होते रहते हैं तत्काल फायदा करती है बल्कि पशु पांछयों के रोगों का भी अच्छा करती है। की० १) रु० । बड़ी शीशी १॥।) वी० पी० ।) । तीन लेने से वी० पी० माफ । १२ लेने से ६) रु० । बड़ी शीशी १५॥।) रु० । वी० पी० माफ । २४ लेने से रोशनी वाच इनाम।

ख़िज़ाब ! ख़िज़ाब !!

न्यू ईजाद मनमोहन केशकल्प ।

एक दफ़े के लगाने से भूरे और सफेद बाल भौंरे के रंग के समान काले चमकीले हो जाते हैं। जिल्द पर धब्बा नहीं आता । हाथ काले नहीं होते । विशेष तारीफ यह है कि एक दफा लगाने से जो बाल काले हो जायँगे फिर वह उमर भर सफेद नहीं होंगे । बराबर इस्तेमाल कीजिये । कीमत १।) वी० पी० ।-) । तीन लेने से ४) वी० पी० माफ ।

गोरे और ख़ूबसूरत बनने की दवा

सुगंधित फूलों का दूध ।

यह दवा विलायती खुशबूदार फूलों का अर्क़ है । इसे विलायत के एक प्रसिद्ध डाक्टर ने बनाकर अभी भेजा है । इसको ७ दिन बदन और चेहरे पर मालिश करने से चेहरे का रंग गुलाब के समान हो जाता है । बदन से खुशबू निकलने लगती है । गालों के स्याह दाग, मुहासे, छीप, झुर्रियां, फोड़ा फुन्सी, खुजली आदि दूर होकर एक ऐसी खूबसूरती आजाती है कि काली रंगत चांद सी चमकने लगती है । जिल्द मुलायम हो जाती है । लगाकर देखो, अपनी प्राणप्यारी को चन्द्रमुखी बना लो । दाम एक शीशी १।) वी० पी० ।-) तीन लेने से ४) रु० वी० पी० माफ़ ।

सुगंधित बालों को उड़ानेवाला साबुन ।

बिना किसी तरह के कष्ट के बालों को ५ मिनट में उड़ाकर साफ कर देता है । की० ३ बट्टी के १ बक्स का ॥।) वी० पी० ।) । १२ लेने से ३) वी० पी० माफ । तीन दर्जन लेने से रोशनी वाच इनाम ।

पता—जसवन्त ब्रादर्स नं० २, मथुरा ।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुप्रसिद्ध डोंगरे का बालामृत पीने से

छोटे बच्चे ताकतवान् होके उनका वज़न बढ़ जाता है] और [वह मधुर होने के कारण बच्चे बहुत खुशी से पीते हैं।

शीशी का दाम १२ आना, डाक म० ६ आना।

इलाहाबाद एजेन्टः—बलदेवप्रसाद एन्ड ब्रदर्स।

के० टी० डोंगरे कं०, गिरगाँव–बम्बई।

हिन्दी में स्वराज्य।

स्वराज्य-सम्बन्धी पुस्तकें, साहित्यिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक, जीवनी, उपन्यास, जिस प्रकार की पुस्तकों की आपको आवश्यकता हो "मर्यादा पुस्तक-भंडार" को लिखिये, हिंदी की सभी प्रेसों की प्रसिद्ध पुस्तकें घर बैठे आपको पहुंच जायँगी। कुछ पुस्तकों के नाम :—

गोखले के व्याख्यान	१।)	स्वराज्य-माला	२)
जापान रहस्य	॥=)	चतुर जापानी	१॥≥)
कर्मक्षेत्र	।॥=)	अरण्य-बाला	१।)
लो०तिलक की जीवनी	≡)	मोहिनी	॥=)
देवी एनी बेसेन्ट	।=)	आर्थिक सफलता	।=)

तिलक के १२ व्याख्यान १)

'मर्यादा पुस्तक-भंडार,' प्रयाग।

बाटलीवाले की स्वदेशी।

असली कुनैन की १ ग्रेनवाली १०० गोलियों की शीशी, असली कुनैन की २ ग्रेनवाली २०० गोलियों की शीशी बुखार, मैलेरिया और जुक़ाम के लिए, एग मिक्सचर, कमज़ोर और थके हुए लोगों के लिए ताकत की गोलियाँ दांतों की जड़ को मज़बूत करनेवाला दन्तमंजन, दाद और खुजली का मलहम, ये दवाएँ सब दवाफरोशों से या डाकृर एच० एल० बाटलीवाला सन्स एन्ड० को० लिमिटेड वारली, १८ बम्बई से मिल सकती हैं।

Dr. H. L. Batliwalla Sons & Co. Ltd
Warli, 18 Bombay,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

141168

अपूर्व वैज्ञानिक आविष्कार।

रोगी निरोगी सब के लिये आशिर्वाद समान।

अत्युत्तम पुष्टिकर व प्रचंड बल एवं बीर्योत्पादक

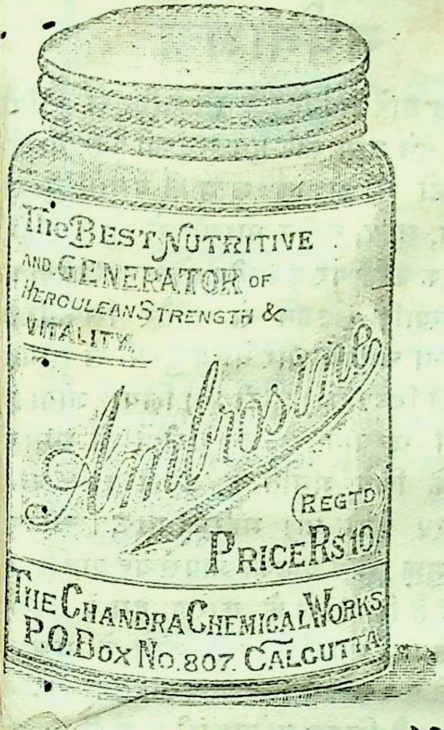

॥ एम्ब्रोसीन ॥

एम्ब्रोसीन—सेवन करने से सब प्रकार की शारीरिक तथा मानसिक निर्बलता दूर होकर मेधा, स्मृति, बल, वीर्य और क्रान्ति की वृद्धि होती है।

एम्ब्रोसीन—वीर्य-सम्बन्धी समस्त रोगों को मिटा, कर नष्ट हुई पुरुषत्वशक्ति को पुनः सञ्जीवित करता है।

एम्ब्रोसीन—स्त्रियों के लिए भी वैसा ही उपयोगी है जैसा कि पुरुषों के लिये। निर्बल तथा प्रदर रोग से पीड़ित महिलाओं के लिये यह विशेष उपकारी है।

एम्ब्रोसीन—अधिक शारीरिक तथा मानसिक परिश्रम से उत्पन्न हुई शिथिलता को शीघ्र मिटाकर मस्तिष्क को सुशोतल रखकर तरावट देता है। इसलिए यह विद्यार्थी तथा अन्यान्य मस्तिष्क परिचालकों के लिये आशीर्वाद के समान है। मूल्य १ शीशी का १०) पैकिङ्ग और डाक-व्यय पृथक। कृपया अवश्य परीक्षा कीजिये।

चन्द्र केमिकल वर्कस पोस्ट बकस नं० ८०७ (म) कलकत्ता।

क्या आतंकनिग्रह औषधालय आपने सुना है?

१—न सुना हो तो सूचीपत्र मंगाकर देखो, अगर न पढ़ा हो आज ही आज "कामशास्त्र" नामक पुस्तक मंगाकर जीवन की महत्ता और संरक्षण के नियम देखलो।

२—उक्त औषधालय में तय्यार होनेवाली "आतंक निग्रह गोलियां" अस्वस्थ को स्वस्थ बनानेवाली, निर्बल को बल देनेवाली, कम पुरुषत्व वाले को पुरुषत्व देनेवाली और स्वस्थ को विशेष बलवान, पुष्ट और दीर्घायु करनेवाली है।

मूल्य गोली ३२ की डिब्बी १ का १) एक रुपया।

वैद्यशास्त्री मणिशंकर गोविन्द जी,

आतंक निग्रह औषधालय,

जामनगर—काठियावाड़।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नक्कालों से सावधान रहिये

सुधासिंधु

यह सरकार से रजिस्ट्री की हुई एक स्वादिष्ट सुगंधित दवा है जो केवल पानी में डालकर पीने ही से कफ, खांसी, हैजा, वमन, शूल, संग्रहणी, अतिसार, बालकों के हरे पीले दस्त, कै करना, दूध पटक देना आदि रोगों को एक ही खुराक में फायदा दिखाती है। कीमत फी शीशी ॥) डा० ख० १ से ६ तक ≡)

दद्रुगजकेसरी

बिना किसी जलन और तकलीफ के दाद को जड़ से खोनेवाली यही एक दवा है। कीमत फी शीशी ।) १२ लेने से २) में घर बैठे देंगे।

बालसुधा

यदि आपको दुबले पतले और सदैव रोगी रहनेवाले बच्चों को मोटा ताजा और तन्दुरुस्त बनाना है तो हमारी इस जायकेमन्द दवा को मंगाकर पिलाइये कीमत फी शीशी ॥) डा० ख० ।≈)

पूरा हाल जानने के लिए चार धाम का चित्र सहित सूचीपत्र मुफ़्त मंगाकर देखिये।

मंगाने का पता—

सुखसंचारक कम्पनी, मथुरा।

रोजगार या विज्ञापनबाजी हमारा काम नहीं
केवल परोपकार के लिये

स्वदेशी जड़ी बूटियों की अद्भुत शक्ति

सर्पनाशक

बिना मारे अपनी अद्भुत शक्ति से सांपों को भगा देने तथा काटे हुए मनुष्यों और पशुओं को मिन्टों में अकाल मृत्यु से बचाने वाली महौषधि, मूल्य, गरीब भाइयों से कुछ नहीं, केवल एक कार्ड पर स्थानीय पोस्टमास्टर-नंबरदार इत्यादि सज्जन से बतौर सिफारिश लिखा देना चाहिये और योग्य पुरुषों से लागत मात्र बड़ी डिब्बी ॥) छोटी ।=) लिया जाता है और जो धनवान सज्जन ग़रीबों को धर्मार्थ बांटने के लिये मंगाते हैं उनसे दर्जन बड़ी ६।॥), १५ छोटी ४।) महसूल माफ़। नोटिस इत्यादि मुफ़्त। प्रिय पाठको आपसे यह बात छिपी हुई नहीं है कि सांपों के कारण हमारे लाखों भाई प्रति वर्ष अकालमृत्यु से काल के मुख में चले जाते हैं इसलिये प्रत्येक देशहितैषी सज्जन को उचित है कि इस परोपकारी कार्य में [illegible] हाथ बटा कर पुण्य के भागी बनें। आशा [illegible] आप इसको विज्ञापन नहीं बल्कि एक ध[illegible] समझ कर दूसरे अनपढ़ ग़रीब भाइयों को भी सुना देंगे ताकि वह लोग मुफ़्त मंगा सकें। एजेन्टों को कमीशन से अलग २०-२५ रु० मासिक वेतन भी मिलता है)॥ का टिकट भेज नियम मंगाकर देखो। (नोट) हमारे प्रत्येक ग्राहक को उचित है कि चाहे जिसको कैसा ही विषधर सांप क्यों न काट गया हो हताश न होकर औषधी दें परमात्मा की कृपा से अन्तिम समय तक भी यह औषधी अपना अमृत रूपी गुण दिखाये बग़ैर न रहेगी। प्रत्येक सज्जन से प्रार्थना है कि हर समय १ डिब्बी अमूल्य औषधी को पाकेट में रक्खें।

पता—सर्पनाशक, ब्रांच नं० ५ राय साहब पं० कुन्दन लाल, जगाधरी (पञ्जाब)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'बर्म्मन प्रेस' कलकत्ताकी

सर्वोत्तम पुस्तकें

कोहेनूर—अगर आप राजपूतों और मुसलमानोंकी भयानक लड़ाइयां, इतिहास-प्रसिद्ध अरावली पर्वतका घोर संग्राम, क्षत्रिय ललनाओंकी अपूर्व वीरता और आदर्श पति-भक्ति, राठोरवीर "दुर्गादास" का अद्भुत् पराक्रम, तथा १६ वर्षके राजकुमार अमरसिंहकी असाधारण वीरता देखना चाहते हों, तो इसे अवश्य पढ़ें। इसमें हाफटोन फोटोके छपे सुन्दर सुन्दर ५ चित्र भी दिये गये हैं। दाम सिर्फ १) रु०

घटना-चक्र—यह बड़ा ही अद्भुत, बड़ा ही आश्चर्य्यजनक और बड़ा ही कौतूहलवर्धक सचित्र जासूसी उपन्यास है। एकबार इसे हाथमें उठा लेनेपर फिर बिना पूरा पढ़े छोड़नेकी इच्छा ही नहीं होती। दाम सिर्फ १॥=), सुनहरी जिल्द बंधीका २) रु०

जासूसी-चक्कर—यह उपन्यास बड़ा ही विचित्र और हृदयग्राही है। खून, चोरी, जाल, जुआचोरी, प्रेम, फजीहत सभी बातें इसमें बड़ी खूबीसे दिखलाई गयीं हैं। साथ ही हाफटोन फोटोके छपे उत्तमोत्तम ५ चित्र देकर पुस्तककी शोभा चौगुनी कर दी गयी है। दाम सिर्फ १।) रु०

भीषण डकैती—जासूसी ढङ्गका यह बड़ा ही अनूठा, उलझनदार और हृदयग्राही सचित्र उपन्यास है। इसमें बम्बईकी एक सम्भ्रान्त पारसी रमणीको चुरा ले जानेका ऐसा अद्भुत रहस्य खोला गया है, कि बिना पुस्तक समाप्त किये छोड़नेकी इच्छा ही नहीं होती। मिसेस तोरावजी नाम्नी एक पारसी सुन्दरीका तिनरङ्गा चित्र देखकर आप मोहित न हो जायं तो दाम वापिस। दाम सिर्फ १) रु०

राजसिंह—इसमें वीर शिरोमणि महाराणा राजसिंह और हिन्दू-द्रोही सम्राट "औरङ्गजेब" के जगत्‌प्रसिद्ध युद्धका वर्णन ऐसी ओजस्विनी भाषामें किया गया है, कि पढ़कर तबियत फड़क उठती है। चञ्चल कुमारीकी अपूर्व पतिभक्ति, माणिकलाल तथा निर्मलकी अद्भुत वीरता, बुद्धिमत्ता तथा स्वामी-भक्ति आदि देखकर आप अवाक न रह जायं, तो दाम वापिस। दाम १) सुनहरी जिल्द बन्धीका १।) रु०

शोणित-चक्र—जासूसी उपन्यासके शौकीनो, अगर आप उपन्यासका सच्चा शौक रखते हों, तो इसे अवश्य पढ़ें। इस उपन्यासमें "शोणित-चक्र" नामक एक अद्भुत रहस्यका ऐसा अनूठा भेद खोला गया है, कि पढ़कर आप दङ्ग हो जायंगे और बार बार ऐसे ही उपन्यास पढ़नेकी इच्छा प्रकट करेंगे। छपते न छपते इसकी २००० प्रतियां बिक चुकी हैं। दाम १।=)

डबल जासूस—यह उपन्यास घटनाका समुद्र आश्चर्य्यका खजाना, कौतुकका आगार और जासूसी करामातोंका भण्डार है। इसमें जोड़ा-जासूसोंकी ऐसी अद्भुत, आश्चर्य्यजनक जासूसियोंका वर्णन आया है, कि पढ़कर आप "वाह वाह!", करने लगेंगे। इसमें हाफटोन फोटोका १ रङ्गीन और ३ सादे चित्र भी दिये गये हैं। दाम सिर्फ १) रु०

महाराष्ट्र-वीर—यदि आपको महाराष्ट्र-कुलभूषण सच्चे देशभक्त छत्रपति महाराज "शिवाजी" की भयानक लड़ाइयों, अद्भुत पराक्रमों और विचित्र चतुराइयोंका आनन्द लेना हो, तो इसे अवश्य पढ़िये, पढ़कर फड़क उठियेगा। दाम सिर्फ ॥=) आ०

आर० एल० बर्म्मन एण्ड को०, ४०१२, अपर चीतपुर रोड, कलकत्ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Reg. No. A. 533.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सौन्दर्य्यप्रभा पमेटम !

111168

शौकीनोंकी जान ! सभ्यताकी खान !

“सौन्दर्य्यप्रभा पमेटम”—रमणियोंकी प्यारी वस्तु है। इसके लगानेसे चेहरेकी खूबसूरती बढ़ जाती है, गालोंपर गुलाब सी रंगत छा जाती है, ओठोंका फटना, चेहरेकी रुखाहट, झाँई, मुंहासे तथा शीतलाके दाग जड़से छूट जाते हैं और काला-कलूटा चेहरा भी एकबार गुलफाम सा चमकने लगता है।

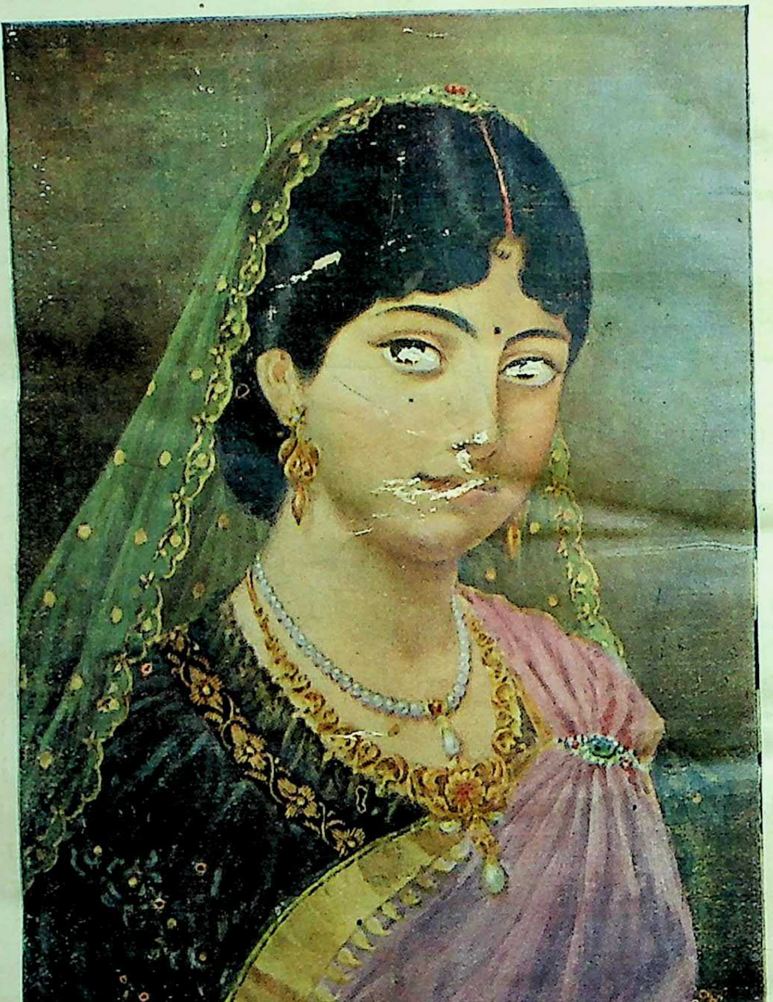

“सौन्दर्य्यप्रभा पमेटम”— में सबसे बढ़कर खूबी यह है, कि इसके लगानेसे अंगरेजी, बंगला, या पारसी किसी फैशनकी अलबर्ट (मांग) बड़ी आसानीसे निकाली जा सकती है और जबतक बाल धोये न जायं, मांग ज्योंकी त्यों बनी रहती है, बाल बिखरनेका डर जरा भी नहीं रहता।

“सौन्दर्य्यप्रभा पमेटम” से छितराई हुई मूछें भी मन मुताबिक ऐंठ कर टेढ़ी, सीधी और खड़ी बनाई जा सकती हैं। [illegible] ही तरह तरहकी मनोहारिणी खुशबूसे तबीयत फड़क उठती है। दाम १ शीशी ।।), दर्जन ५) रु०।

पता—आर० एल० बर्म्मन एण्ड को०, कलकत्ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Cover Printed at the Burman Press, Calcutta.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Compiled
1999-2000

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri